अनुक्रमणिका / Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल 06

03. सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 07

04. निर्णायक मण्डल 08

05. प्रवक्ता साथी 10

(Science / विज्ञान)

06. Cyber Attack And Retection Techniques (Gurutva Singh) 12

07. Opium, Chemical And Physiological Properties 14
(Prof. Shailendra Sisodiya, Prof. B.K. Rawat)

08. Some Zoosporic Fungi In River Narmada At Hoshangabad (M.P.) (Ranjana Singh) 17

09. Giloy (Amrita)- The Nector Of Immortality (Dr. Renu Rajesh) 19

10. Fungal Deterioration Of Sunflower (HELIANTHUS ANNUUS L.) Seeds During Storage 21
Conditions With Special Reference To Oil Quality (Dr. Shobha Shrivastava)

11. A Study On Grassland In Relation To Seasonal Changes And Biotic Interference 25
(Mukta Shrivastava)

12. Dynamics Of Dry Matter Production In *Diospyros Melanoxylon Roxb* (Mukta Shrivastava) 27

13. Banthic Fauna Of Yeshwant Sagar Reservoir - Indore (M.P) (Archana Sharma) 29

14. लुप्तप्राय प्रजाति, कडकनाथ (अयम सेमानी) सामान्य अध्ययन (डॉ. ओमप्रकाश सोलंकी) 32

15. भारतीय परम्पराओं और साहित्य में पर्यावरण एवं जैव विविधता संरक्षण (डॉ. सुधा श्रीवास्तव) 34

(Home Science / गृह विज्ञान)

16. A study on problems experienced by adolescents in slum areas of udaipur city 36
(Dr. Suman Audhicya, Ranveer Kour)

17. Personality Differences In Adolescents Of Normal And Broken Families 38

(Dr. Abha Tiwari, Krishna Choudhary)

18. प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाओं के पहनावे के चयन का अध्ययन (डॉ. आभा तिवारी, वीणा श्रीवास्तव) 40

19. किशोर बालक-बालिकाओं के इंटरनेट का उपयोग करने में लिंग भिन्नताओं का अध्ययन 43
(डॉ. आभा तिवारी, निरंजना धोटे)

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

20. Conflict Management Proficiency Among The Managers Of Hotel Industry 45
(Vinod Kumar Singh Bhadauria)

21. Development Of Banking In India : Major Issues (Namrata Ganguly, Priyanka Kurup) 47

22. India's balance of trade (Dr. Satish Maheshwari, Trapti Maheshwari) 50

23. Business Ethics And Corporate Social Responsibility- A Need For Today 52
(Dr. Vimmi Behal, Dr. Anil Shivani)

24. An Analytical Study Of Importance Of Business Process Management 54
(BPM) With Cloud Computing (Dr. Vimmi Behal, Dr. O.P. Sharma)

25. 100 Million Facebook Users In India Are Valuable For Any Marketer 55
(Dr. Pradeep Kumar Sharma, Vishwas Sharma)

26. Socio Economic Impact Of Displacement On Tribal's Of Chhattisgarh 57
(Dr. Prabhakar Pandey, Jainendra Kumar Patel)

27. कृषि उत्पाद पर आधारित उद्योगों का लागत-लाभ विश्लेषण : (उज्जैन जिले की दाल मिलों के विशेष संदर्भ में) 61
(डॉ. बी.एस. मक्कड़, डॉ. ऋतु पोरवाल)

28. डाकघर की अल्पबचत योजनाऐं - एक अध्ययन (उज्जैन जिले के विशेष संदर्भ में) 64
(डॉ. बी.एस. मक्कड़, डॉ. सोनी व्यास)

29. देवास जिले के ग्रामीण विकास हेतु राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक की योजनाओं के लक्ष्य एंव 66
क्रियान्वयनका मूल्याकंन एक अध्ययन (वर्ष 1999-2000 से 2005-2006) (डॉ. सचिन दास)

30. भारतीय अर्थव्यवस्था में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की भूमिका (डॉ. सचिन दास, डॉ. एल. एन. शर्मा) 69

31. जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित खरगोन की नवीन ऋण नीति का समीक्षात्मक अध्ययन (डॉ. गणेश प्रसाद दावरे) 71

32. भारतीय कृषि में यंत्रीकरण (डॉ. एम. आर. महाले) 73

33. भारतीय उपभोक्ताओं में ऑनलाइन बाजार की प्रवृत्ति (डॉ. हरवंश मरावी) 74

34. भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल में श्रमिक प्रेरणाओं का मूल्यांकन (डॉ. इफ्फत खान) 76

35. डोलोमाइट उद्योग में डोलोमाइट की उत्पादन क्षमता व वास्तविक उत्पादन का विश्लेषणात्मक अध्ययन 78
(अलीराजपुर जिले के डोलोमाइट उद्योग के विशेष संदर्भ में) (डॉ. नटवर लाल गुप्ता, डॉ. रामेश्वर गुप्ता)

36. भारतीय अर्थव्यवस्था में गरीबी के कारण एवं प्रभाव का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (राकेश बघेल) 81

37. विकास खण्ड स्तरीय उत्कृष्ट विद्यालय की कार्यप्रणाली का अध्ययन (बदनावर ब्लाक के संदर्भ में) 84
(डॉ. सतीश माहेश्वरी, मोहनसिंह वास्केले)

38. म.प्र. लोकसेवा आयोग की प्रतियोगी परीक्षा में ग्रामीण छात्रों को आने वाली समस्याओं का सर्वेक्षणात्मक अध्ययन 86
(डॉ. सतीश माहेश्वरी, मोहनसिंह वास्केले)

39. कृषि उत्पादकता का ग्रामीण जीवन पर सामाजिक - आर्थिक प्रभाव का अध्ययन 88
(डॉ. सतीश माहेश्वरी, मोहनसिंह वास्केले)

40. प्रधानमंत्री जन-धन योजना (डॉ. अंतिम बाला जैन) 90

41. उद्यानिकी का ऐतिहासिक महत्व (म.प्र. के संदर्भ में) (डॉ. सतीश माहेश्वरी, तृप्ति माहेश्वरी) 91

42. उद्यानिकी उत्पादन की समस्याएँ (म.प्र. के संदर्भ में) (डॉ. सतीश माहेश्वरी, तृप्ति माहेश्वरी) 93

(Economics / अर्थशास्त्र)

43. छत्तीसगढ़ में साक्षरता एवं आर्थिक विकास (डॉ. आर. पी. सहारिया) 94

44. छत्तीसगढ़ राज्य में वन स्थिति एवं अराष्ट्रीयकृत औषधीय वनोपज के उत्पादन एवं विपणन का अध्ययन 99
(राकेश कुमार गुप्ता)

45. बैतूल जिले में जैविक खेती की संभावनाएँ (सुरेखा यादव) 102

46. मध्यप्रदेश के विकास में पर्यटन का योगदान (डॉ. दीपाली बेहेरे) 104

47. विदेशी सहायक और भारत का आर्थिक विकास (डॉ. अशोक शर्मा, डॉ. अरुणा शर्मा) 106

48. बदलते परिवेश में भारतीय कृषि की दशा व दिशा -एक अवलोकन (डॉ. आभा दीक्षित) 108

49. महिला उद्यमिता महिला सशक्तिकरण के लिए अत्यन्त आवश्यक (डॉ. आभा दीक्षित) 111

50. म.प्र. में कपास उद्यमियों की समस्याओं का अध्ययन(बड़वानी जिले के सन्दर्भ में) 112
(डॉ. पवन कुमार जायसवाल, डॉ. आशा साखी गुप्ता)

51. ग्रामीण गरीबी एवं निवारण (प्रेमलता एक्का) 115

52. छत्तीसगढ़ राज्य में वन स्थिति एवं अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय वनोपज के उत्पादन एवं विपणन का अध्ययन 117
(डॉ. के. के. शर्मा, राकेश कुमार गुप्ता)

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

53. Women Empowerment Through NGOs In Rural Areas 121
(A Case Study Of Kota Block Of Bilaspur District) (Dr. G.S. Dhurwe)

54. महिला सशक्तिकरण का बदलता स्वरुप : एक अध्ययन (कमला चौहान) 125

55. मध्यप्रदेश की राजनीति में जनजातीय वर्ग का प्रतिनिधित्व (डॉ. सीताराम गोले) 127

56. संविधान का मौलिक स्वरूप एवं समय की मांग है संविधान संशोधन (डॉ. अनिल दीक्षित) 129

57. पर्यावरण कानून (डॉ. वन्दना मालवीया) 131

(Sociology / समाजशास्त्र)

58. महिलाओं में बच्चों के समाजीकरण के प्रति बढ़ती अभिवृतियाँ (डॉ. कविता जैन) 133

59. महिला और मानवाधिकार (डॉ. गीता मेहरा) 134

(Psychology / मनोविज्ञान)

60. Role Of Emotional Intelligence In Teaching Effectiveness 136
(Tarannum S. Dani, Dr. J.C. Ajawani)

61. Study Of Cognitive Abilities And Emotional Stability In Relation To Age 138
(Sunita Dhenwal, Preeti Mathur)

62. जे. कृष्णमूर्ति के क्रांति - दर्शन में गुरू का स्थान(डॉ. आशा चौधरी) 140

(Geography / भूगोल)

63. बड़वानी जिले के सन्दर्भ में प्राकृतिक पर्यावरण संसाधनों का संरक्षण एवं प्रबंधन (सुरेश अवासे) 142

64. गरीबी का आंकलन, मापदण्ड तथा उत्तरदायी कारक का विश्लेषण (डॉ. अम्बालाल कटारा) 144

(History / इतिहास)

65. छत्तीसगढ़ी लोक नाट्य: प्राचीन एवं समृद्ध परम्परा(डॉ. मोना जैन) 148
66. देवर बीजा : कलात्मक मूर्तिशिल्प (डॉ. मोना जैन) 150
67. शिवरीनारायण : छत्तीसगढ़ का काशी (डॉ. मोना जैन) 152
68. मध्यकालीन भारतीय इतिहास लेखन का स्वरुप (डॉ. कृष्णा मोरे) 154

(Drawing / चित्रकला)

69. मुखौटो का जादुई संसार (सोनम सिकरवार, डॉ. रेखा श्रीवास्तव) 156
70. देवलाल पाटीदार की कलाकृति में लालटेन (सोनम सिकरवार, डॉ. रेखा श्रीवास्तव) 158

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

71. मालवी कहावतों में स्वास्थ्य (डॉ. वन्दना जैन) 160
72. युगीन संदर्भो में कामायनी का मूल्यांकन (डॉ. कुवर सिंह बघेल) 162
73. मानवीय स्वभाव को अभिव्यक्त करती कहावतें (डॉ. वन्दना जैन, रचना जैन) 163
74. मानवीय संवेदना के कवि पं. अटल बिहारी वाजपेयी (डॉ. गायत्री वाजपेयी) 165
75. लोकगीत एक विश्लेषण (डॉ. प्रेमलता तिवारी) 168
76. प्रगतिवादी कविता के मानवीय स्वर (डॉ. सरोजनी अग्रवाल) 170
77. युग पुरूष (महाकाव्य) में "आज" : एक अनुशीलन (डॉ. वीरेन्द्र कुमार दीक्षित) 172
78. समाज का विद्रूप चेहरा "अभिनंदन" - आशापूर्णा देवी (डॉ. संध्या खरे) 174
79. ई-गवर्नमेंट और ई-गवर्नेस परिभाषा चरण एवं भारत में ई-गवर्नेस की समस्यायें (डॉ. सारिका मिश्रा) 176

(Sanskrit / संस्कृत)

80. कालिदास कृत मेघदूत में वर्णित भौगोलिक शब्दों का अध्ययन (डॉ. भावना श्रीवास्तव) 179

(Education / शिक्षा)

81. A Comparative Study Of Professional Ethics Of School Teachers Of Uttar Pradesh (Sagheer Ahmad) 181
82. Pedagogical Reforms In Teacher Education : Need Of The Hour (Dr. Rashmi Sharma) 184
83. The Impact Of Madhaysth Darshan Based Value Education In Human (Heena Chawda) 187
84. The Study Of Mental Health Among Secondary School Students Belonging To Joint And Single Families (Deepak Pancholi) 191

85. A Comparative Study Of Mental Stress And Academic Achievement Of Children Of Divorced And Non-Divorced Parents (Deepak Pancholi) 193
86. प्राथमिक स्तर पर गणित शिक्षण में बाल-केन्द्रित एवं विषय-वस्तु केन्द्रित विधि का तुलनात्मक अध्ययन (सज्जन लोढ़ा) 195
87. परम्परागत एवं अन्य प्रायोगिक शिक्षण विधियों पर किये गए शोध कार्य (सज्जन लोढ़ा) 197
88. बुनियादी और सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों में मूल्यों का एक अध्ययन (अमित शर्मा) 199
89. बुनियादी और सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों में वैज्ञानिक अभिक्षमता का एक अध्ययन (अमित शर्मा) 202
90. उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यालयों की कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी की तुलना (डॉ. अर्चना श्रीवास्तव, सोनाली सूर्ये) 205

(Physical Education / शारीरिक शिक्षा)

91. शारीरिक शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न समस्याओं से जुझता एक अध्यापक की सोच (युवराज श्रीवास्तव, जय शंकर यादव) 207
92. A Comparative Study Of Personality Characteristics Between Sports Person And Non-Sports Person Of Degree College Of Physical Education (Prashant Kumar) 209
93. Resistance In Achieving Good Mental Health: (A Comparative Study Of College Athletes And Non Athletes)(Dr. Hitesh Chandra Rawal) 211
94. AComparative Study Of Cardiovascular Fitness Between Sportswomen And Non Sportswomen (Dr. Gajender Singh Saroha) 216
95. Relationship Between Upper Body Anthropomertic Parameteres And Throwing Performance Of Handball Players In Inter Collegiate Competition (Dr. Jogendra Singh, Amit Ganshyam Bhai Upadyay) 218

(Law / विधि)

96. Grundnorm Theory Vis-A-Vis Basic Structure Doctrine (Poorva Jadhav) 220
97. Jurisprudential Aspects Of Shareholders Agreement And Its Impact (Poorva Jadhav) 222
98. गुप्त सामराज्य में न्याय व्यवस्था(डॉ. गुलाब सिंह मेवाड़ा) 224

(Others / अन्य)

99. सेमेस्टर पद्धति का मूल्यांकन (डॉ. मधुमती नामदेव) 226
100. मीडिया और साहित्य के मध्य रिश्तों की पड़ताल (डॉ. शाजिया खान) 229
101. To Identify The Uses Of Quality Cantrol In Readymade Garment Manufacturing Units In Indore Region (Dr. Sonal Bhati) 231
102. Economic Growth and Its Impact on Environment (Dr. Pushpanjali Arya, Dr. Ashok Kumar) 234
103. Preliminary study on environmental awareness of students with the implementation of the environmental education in schools in district Rudraprayag, Uttarakhand: A case study (Dr. Mahendra Singh Panwar) 238
104. Congruence in Celebrity and Product Attributes and Its Impact Upon Consumer Perception of Quality (Sharad Maheshwari) 241
105. Emotional and Psychological Trauma: A Lone Journey (Dr. Sarita Mathur) 244
106. शिक्षा के विकास हेतु संवैधानिक प्रावधान (डॉ. सोनम शर्मा) 246
107. अलवर के प्रसिद्ध स्थल (सुमित मेहता) 248
108. Impact of Krishi Darshan Programme Telecast Among Viewers in Knowledge and Adoption Gain of Agricultural Technology (Dr. Govind Prakash Acharya) 250
109. Unchallengeable Authority of Mirza Ghalib as the Greatest Urdu Poet (Dr. Arshad Siraj) 252
110. Comparative Study of Data Mining and MRDM (Rajesh Soni) 255

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) श्री अशोककुमार ..... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(02) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी ..... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(03) डॉ. मनीषा ठाकुर ..... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(04) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव ..... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(06) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(10) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम ..... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(13) प्रो. डॉ. संजय खरे ..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय ..... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. अखिलेश जाधव ..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(17) प्रो. डॉ. कमल जैन ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(18) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(19) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(20) प्रो. डॉ. शिव कुमार दुबे ..... प्राध्यापक, भूगोल, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(23) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(24) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया ..... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(25) प्रो. डॉ. विवेक पटेल ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(26) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी .... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा ..... प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(29) प्रो. डॉ. आर.पी. सहारीया ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय तख्तपुर जिला,बिलासपुर (छ.ग.) भारत
(30) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(31) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्डरे ..... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(32) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्याय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(33) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा ..... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार .... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(36) प्रो.डॉ. के.एल. साहू ..... प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(37) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन ..... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत

****

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव .....प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत
(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत .....निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर (म.प्र.) भारत
(03) प्रो. डॉ. संजय जैन .....नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल भोपाल (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी .....प्राचार्य, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय रतलाम (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय .....प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टा महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. अशोका श्रीवास्तव .....प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल .....प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर .....प्राचार्य, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र .....प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट .....प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा .....प्राचार्य एवं संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेंधवा (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड .....संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी.....अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय भोपाल (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. बी.के. मेहता.....अध्यक्ष, रसायन एवं जैविक रसायन अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल .....अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय महिदपुर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ. मंजु दुबे.....संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी .....प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(18) प्रो. डॉ. के.एल. जाट.....प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, भौतिकी विभाग शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

नवीन शोध संसार के बढ़ते कदम

मध्यप्रदेश उच्च शिक्षा के नये आयाम–विशेषांक का विमोचन करते हुए
माननीय श्री दीपक जोशी (उच्च शिक्षा राज्य मंत्री) म.प्र. शासन, माननीय श्री ओमप्रकाश सकलेचा (विधायक) जावद, (म.प्र.) आशीष शर्मा (सम्पादक) नवीन शोध संसार, नीमच (म.प्र.)

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

*** विज्ञान संकाय ***

गणित:- .... **(1) प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:- .... **(1) प्रो. डॉ. एन.के. डबकरा,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) प्रो.डॉ. रवि कटारे, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:- .... **(1) प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:- .... **(1) प्रो. डॉ. बी.के. दानगढ़,** समन्वयक राष्ट्रीय इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय, केन्द्र नीमच (म.प्र.)

वनस्पति:- .... **(1) प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)
(2) प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:- .... **(1) प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)
(2) प्रो. डॉ. अमृता खत्री, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:- .... **(1) प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:- .... **(1) प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:- .... **(1) डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:- .... **(1) प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. वी. कुलश्रेष्ठ, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:- .... **(1) डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

*** वाणिज्य संकाय ***

वाणिज्य :- .... **(1) प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल , शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

*** प्रबंध संकाय ***

प्रबंध :- .... **(1) प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी , शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:- .... **(1) प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

*** व्यवसाय प्रशासन संकाय ***

व्यवसाय प्रशासन:- .... **(1) प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा ,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

*** विधि संकाय ***

विधि:- .... **(1) प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

*** कला संकाय ***

अर्थशास्त्र:- .... **(1) प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. कमलेश श्रीवास्तव, विजयाराजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय मुरार, ग्वालियर (म.प्र.)

राजनीति:- .... **(1) प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव, शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:- .... **(1) प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्रः- .... **(1) प्रो. डॉ. आशुतोष व्यास,** राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राज.)
(2) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन , शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)

हिन्दीः- .... **(1) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा (प्रोक्टर),** विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(3) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

अंग्रेजीः- .... **(1) प्रो. डॉ. प्रशांत मिश्रा**, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृतः- .... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहासः- .... **(1) प्रो. डॉ. मदनलाल पंवार,** पूर्व प्राचार्य शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोलः- .... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डी.डी. विश्वकर्मा, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

मनोविज्ञानः- .... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकलाः- .... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीतः- .... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** सुभारती विश्व विद्यालय मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

****** गृह विज्ञान संकाय ******

आहार एवं पोषण विज्ञानः- .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकासः- .... **(1) प्रो.डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो.डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंधः- ... **(1) प्रो.डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो.डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

****** शिक्षा संकाय ******

शिक्षा .... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** प्राचार्य, अरावली शिक्षा महाविद्यालय, फरीदाबाद (हरियाणा)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. अर्चना श्रीवास्तव, बी.सी.जी. शिक्षा महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)

****** शारीरिक शिक्षा संकाय ******

शारीरिक शिक्षा .... **(1) प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

****** ग्रन्थालय विज्ञान संकाय ******

ग्रन्थालय विज्ञान .... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. आर.के. गुजेटिया .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत .....ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर .....शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी .....शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डी.एस. फिरोजिया .....शासकीय महाविद्यालय, रामपुरा, जिला नीमच (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा .....कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला- नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ.पी.डी. ज्ञानानी.....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित .....जैन कला-वाणिज्य-विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार .....शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा .....शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक .....शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान.....शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ.गेंदालाल चौहान .....शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र .....शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन .....शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. अरूणा दुबे .....शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. आभा दीक्षित.....शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी .....शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी .....स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित.....शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित .....शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता .....शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. कहकशा खान .....शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे .....पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) डॉ. भारती जोशी .....अजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट .....शासकीस एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद .....शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर .....सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल .....शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला - झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नीतिन साहारिया .....शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी .....शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल वाला गाँधी .....महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा.....श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव .....शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे .....शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान.....शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता.....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर .....शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. नटवरलाल गुप्ता .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. हेमसिंह मण्डलोई .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला- सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार .....शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला-सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश .....शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला-विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. श्रीमती भारती खरे .....एस.एस.एल. जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, विदिशा (म.प्र.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी .....शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे .....शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर-मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी .....शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल .....शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल .....शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरकुमार जैन .....शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे .....शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा .....शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव .....शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला .....शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया .....शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला-छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल .....शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला - शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल .....शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान .....शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला-शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा .....शासकीय महाविद्यालय, मऊगंज, जिला- रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा .....शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी .....शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान .....शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर .....शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. रामचन्द्र चौहान .....पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश .....शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित .....छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा .....एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री .....सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला .....शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. डॉ. अनूप परसाई .....शासकीय छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(88) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन .....इन्दिरा गाँधी खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(89) श्रीमती सुमन वशिष्ठ .....राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ .....राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख .....एस.एस.जी. पारीख पी.जी. कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा .....पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया .....हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला- प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह .....केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल .....शोध सलाहकार, नई दिल्ली

Cyber Attack And Retection Techniques

Gurutva Singh *

Abstract - This paper introduced and discussed different cyber attacks strategies. Cyber attack techniques have been improved past few years. Cyber terror attacks and cyber crime attacks may move over virtual net works and get every home. Cyber attack detection area the highest priority in our research.

Introduction - Cyber attach is any type of offensive maneuver employed by individuals or whole organizations that targets computer information systems, infrastructures, computer net works, and / or personal computer devices by various means of malicious acts usually originating from an anonymous source that either steals, alters, or destroys a specified target by "HACKING" in to a susceptible system.

These can be labeled as either a CYBER COMPAIGN, CYBER WARFARE or CYBER TERRORISM in different context. Cyber-attacks can range from installing SPYWARE on a PC to attempts to destroy the infrastructure of entire nations.Cyber-attack have become increasingly sophisticated and dangerous as the STUXNET worm recently demon strated.

Factors for Cyber Attacks – Three factors contribute to why cyber attacks are launched against a state or an individual, the fear factor, spectacular factor, and vulnera billity factor.

Fear Factor – The most common, fear factor, a cyber terrorist will create fear amongst individuals, groups, or societies. The bombing of a Bali night club in 2002 created fear amongst the foreign tourists who frequently visited the venue. Once the bomb went off and causalities ensued, the influx of tourists to Bali significantly reduced due to fear or death.

Spectacular factor – With spectacular factors, it is the actual damage of the attack, meaning the attacks created direct losses and gained negative publicity. In 1999, a denial of service attack rendered Amazon experienced losses because of suspended trading and it was publicized world wide.

Vulnerability factor – Vulnerability factor exports now easy an organization or government establishment is vulnerable to cyber attacks. An organization can easily be vulnerable to a denial of service attack or a government establishment can be defaced on a web page. A computer net work attack disrupts the integrity or authenticity of data, usually through malicious code that alters program logic that controls data, leading to errors in output.

Professional hackers to cyber terrorists – Professional hackers either working on their own or employed by the Government or military service can find computer systems with vulnerabilities lacking the appropriate security software, once found, they can infect systems with malicious code and then remotely control the system or computer by sending commands to view content or to descript other computers. There needs to be a pre-existing system flow within the computer such as no antivirus protection or frailly system configuration for the viral code to work many professional hackers will promote themselves to cyber terrorists where a new set of rules govern their actions.

Cyber terrorists hare premeditated plans and their attacks are not born of range. They need to develop their plans step-by-step and acquire the appropriate.

Software to carry out an attack. They usually have political agendas, targeting political structures.

Cyber terrorists are hackers with a political motivation, their attacks can impact political structure through this corruption and destruction.

They also forget civilians, installations. As previously stated cyber terrorists attack persons or property and cause enough harm to generate fear.

Syntactic attacks and semantic attacks – in details, there are a number of techniques to utilize in cyber attacks and a variety of ways to administer them to individuals or establishments or a broader scale.

Attacks are broken down in to two categories, syntactic attacks and semantic attacks. Syntactic attacks are straight forward, it is considered malicious software, which includes viruses, worms, and Trojan horses.

Viruses - Viruses are a self replicating program that can attach it self to another program or file in order to reproduce, the virus can hide in unlikely locations in the memory of a computer system and attach it self to whatever file it sees fit to execute its code. It can also change its digital foot print each time it reproduces making it even harder to track down in the computer.

Worms - Worms does not need another file or program to copy it self, it is a self, it is a self-sustaining running program. Worms replicate over a net work using protocols.

The latest incarnation of worms make use of known

* **Research Scholar , Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA**

vulnerabilities in systems to penetrate, execute their code, and replicate to other systems such as the code Red II worm that infected more than 259000 systems in less than 14 hours.

On a much larger scale, worms can be designed for industrial respionage to monitor and collect server and traffic activities then transmit it back to its creator.

Trojan Horses – A Trojan horse is designed to perform legitimate tasks but it also performs unknown and unwanted activity. It can be the basis of many viruses and worms installing unto the computer as keyboard largess and back door software. In a commercial sense, Trojans can be imbedded in trial versions of software and can gather additional intelligence about the target without the person even knowing it happening. All three of these are likely to attack an individual and establishment through emails, web browsers, chat clients, remote software, and updates.

Semantic Attack – This attack is the modification and dissemination of correct and incorrect information to set some one into the wrong direction or to cover your tracks. The dissemination of incorrect information can be utilized.

Latest : Israel and Palestine -

Use cyber attacks – In the Israel - Palestine conflict cyber attacks were conducted in 2013-14 when Israeli hackers lunched DOS attacks on computers owned by pates Tinian resistance organizations (Hamas) and Lebanese resistance organizations (Hezbollah). Anti Israel hackers responded by crashing several Israeli web sites by flooding them with bogus traffic. There are many other state (included India-Pak) and non-state actors involved in cyber warfare.

(But in Q.2 2013,, Akmal Technologies reported that Indonesia toppled China with portion 38 percent of cyber attack, 79 percent of attack cam from Asia pacific region.

Cyber defection and control Techniques –

Control Systems – Control systems are responsible for activating and monitoring industrial or mechanical controls.

Many devices are integrated with Computer plat forms to control valves and gales to certain physical infrastructures control systems are usually designed as remote telemetry devices that link to other physical devices through internet access or modems. Little security can be offered when dealing with these devices, enabling many hackers or cyber terrorists to seek out systematic vulnerabilities.

Paul Blomgren, manager of sales engineering at cyber security firm explained how his people drove to a remote substation, saw a wireless net work antenna and immediately plugged in their wire less LAN cards.

They took out their laptops and connected to the system because it wasn't using passwords "within 10 minutes, they had mapped every piece of equipment in the facility" Blomgren said, "within in minutes, they mapped every piece of equipment in the operational control net work, within 20 minutes, they were talking to the business net work and had pulled off several business reports. The never even left the vehicle".

References -

1. S Karrouskos : Stuxnet worm impact on industrial cyber physical system security. In 37th annual conference of the IEEE Industrial Electronics Society (IECON 2011)Melbourne, Australia, 7-10 Nov. 2011, Retrieved 20 April 2014
2. Lewes, James, United States: Center for strategic and international studies, Assessing the Risks of cyber terrorism, cyber war and other cyber.
3. Linder, Edward focus on Terrorism, New York : Nova Science Publishers, Inc. 2007 web.
4. Prichard tanet and Laurie Mac Donald "Cyber Terrorism : A study on the extent of coverage in computer security text books." Journal of Information Technology Education 3 (2004) n Page – web.

****

Opium, Chemical And Physiological Properties

Prof. Shailendra Sisodiya * **Prof. B.K. Rawat** **

Introduction - Opium (poppy tears, lachryma papaveris) is the dried latex obtained from the opium poppy (Papaver somniferum). Opium contains approximately 12% morphine, an alkaloid, which is frequently processed chemically to produce heroin for the illegal drug trade and for legal medicinal use in some countries. The latex also includes the alkaloid codeine and its similarly structured cousin the baine. It also contains non-analgesic alkaloids such as papaverine and porcupine. The traditional, labor-intensive, method of obtaining the latex is to scratch ("score") the immature seed pods (fruits) by hand; the latex leaks out and dries to a sticky yellowish residue that is later scraped off, and dehydrated. The word "me conium" (derived from the Greek for "opium-like", but now used to refer to infant stools) historically referred to related, weaker preparations made from other parts of the poppy or different species of poppies. The production of opium itself has not changed since ancient times. Through selective breeding of the Papaver somniferum plant, the content of the phenanthrene alkaloids morphine, codeine, and to a lesser extent thebaine, has been greatly increased. In modern times, much of the thebaine, which often serves as the raw material for the synthesis for hydrocodone, hydromorphone, and other semi-synthetic opiates, originates from extracting Papaver orientale or Papaver bracteatum.

Opium for illegal use is often converted into heroin, which is less bulky, making it easier to smuggle, and which multiplies its potency to approximately twice that of morphine. Heroin can be taken orally, by intravenous injection, intranasal, or smoked (vaporized) and inhaled.

Chemical and physiological properties.-

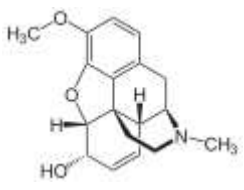

codein

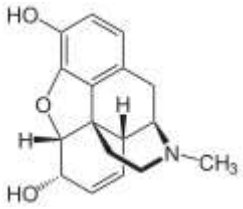

morphin [structural formula]

Morphine is the primary biologically active chemical constituent of opium.Codeine is another biologically active chemical constituent of opium.Opium contains two main groups of alkaloids. Phenanthrenes such as morphine, codeine, and thebaine are the main narcotic constituents. Isoquinolines such as papaverine and noscapine have no significant central nervous system effects, and are not regulated under the Controlled Substances Act. Morphine is the most prevalent and important alkaloid in opium, consisting of 10%–16% of the total, and is responsible for most of its harmful effects such as lung edema, respiratory difficulties, coma, or cardiac or respiratory collapse. Morphine binds to and activates mu opioid receptor in the brain, spinal cord, stomach and intestine. Regular use can lead to drug tolerance or physical dependence. Chronic opium addicts in 1906 China or modern-day Iran consume an average of eight grams of opium daily.

Both analgesia and drug addiction are functions of the mu opioid receptor, the class of opioid receptor first identified as responsive to morphine. Tolerance is associated with the superactivation of the receptor, which may be affected by the degree of endocytosis caused by the opioid administered, and leads to a superactivation of cyclic AMP signaling. Long-term use of morphine in palliative care and management of chronic pain cannot be managed without the possible development of drug tolerance or physical dependence. Many techniques of drug treatment exist, including pharmacologically based treatments with naltrexone, methadone, or ibogaine.

Papaver somniferum and alkaloids - Opium poppies (Papaver somniferum) are popular and attractive garden plants, whose flowers vary greatly in color, size and form. A modest amount of domestic cultivation in private gardens is not usually subject to legal controls. In part, this tolerance reflects variation in addictive potency. A cultivar for opium production, Papaver somniferum L. elite, contains 91.2% morphine, codeine, and thebaine in its latex alkaloids, whereas in the latex of the condiment cultivar "Marianne", these three alkaloids total only 14.0%. The remaining

* H.O.D (Botany) Govt. P.G. College, Sendhwa (M.P.) INDIA
** H.O.D , Govt. P.G. College, Sendhwa (M.P.) INDIA

alkaloids in the latter cultivar are primarily narcotoline and noscapine.

Seed capsules can be dried and used for decorations, but they also contain morphine, codeine, and other alkaloids. These pods can be boiled in water to produce a bitter tea that induces a long-lasting intoxication (See Poppy tea). If allowed to mature, poppy pods (poppy straw) can be crushed and used to produce lower quantities of morphinans. In poppies subjected to mutagenesis and selection on a mass scale, researchers have been able to use poppy straw to obtain large quantities of oripavine, a precursor to opioids and antagonists such as naltrexone.

Poppy seeds are a common and flavorsome topping for breads and cakes. One gram of poppy seeds contains up to 33 micrograms of morphine and 14 micrograms of codeine, and the Substance Abuse and Mental Health Services Administration formerly mandated that all drug screening laboratories use a standard cutoff of 300 monograms per milliliter in urine samples. A single poppy seed roll (0.76 grams of seeds) usually did not produce a positive drug test, but a positive result was observed from eating two rolls. A slice of poppy seed cake containing nearly five grams of seeds per slice produced positive results for 24 hours. Such results are viewed as false positive indications of drug abuse and were the basis of a legal defense.[On November 30, 1998, the standard cutoff was increased to 2000 nanograms (two micrograms) per milliliter.

Harvesting and processing - When grown for opium production, the skin of the ripening pods of these poppies is scored by a sharp blade at a time carefully chosen so that rain, wind, and dew cannot spoil the exudation of white, milky latex, usually in the afternoon. Incisions are made while the pods are still raw, with no more than a slight yellow tint, and must be shallow to avoid penetrating hollow inner chambers or locale while cutting into the lactiferous vessels. In Indian Subcontinent, Afghanistan, Central Asia and Iran, the special tool used to make the incisions is called a nectar or “nectar” (from Persian, meaning a lancet) and carries three or four blades three millimeters apart, which are scored upward along the pod. Incisions are made three or four times at intervals of two to three days, and each time the “poppy tears,” which dry to a sticky brown resin, are collected the following morning. One acre harvested in this way can produce three to five kilograms of raw opium. In the Soviet Union, pods were typically scored horizontally, and opium was collected three times, or else one or two collections were followed by isolation of opiates from the ripe capsules. Oil poppies, an alternative strain of P. somniferous, were also used for production of opiates from their capsules and stems.

Raw opium may be sold to a merchant or broker on the black market, but it usually does not travel far from the field before it is refined into morphine base, because pungent, jelly-like raw opium is bulkier and harder to smuggle. Crude laboratories in the field are capable of refining opium into morphine base by a simple acid-base extraction. A sticky, brown paste, morphine base is pressed into bricks and sun-dried, and can either be smoked, prepared into other forms or processed into heroin.

The production of wheat in has decreased dramatically since farmers had invested in the opium trade. Over some years, the opium trade has become the key economic activity in the village. A farmer reported that he can earn between 1000–2000 lakes annual profit from poppy cultivation instead of the 20 he would make cultivating wheat. Now, all the irrigated land is given over to the poppy cultivation, and most of the men and women who worked in the livestock trade are either involved in the opium trade or work overseas.

Other methods of preparation (besides smoking), include processing into regular opium tincture (tinctura opii), laudanum, paregoric (tincture poi camphorate), herbal wine (e.g. vinum opii), opium powder (pulvis opii), opium sirup (sirupus opii) and opium extract (extracted opii).imam opii is made by combining sugar, white wine, cinnamon, and cloves. Opium syrup is made by combining 997.5 part sugar syrup with 2.5 parts opium extract. Opium extract (extracted opii) finally can be made by macerating raw opium with water. To make opium extract, 20 parts water are combined with 1 part raw opium which has been boiled for 5 minutes (the latter to ease mixing.

Heroin is widely preferred because of increased potency. One study in post addicts found heroin to be approximately 2.2 times more potent than morphine by weight with a similar duration; at these relative quantities, they could distinguish the drugs subjectively but had no preference. Heroin was also found to be twice as potent as morphine in surgical anesthesia. Morphine is converted into heroin by a simple chemical reaction with acetic anhydride, followed by a varying degree of purification. Especially in Mexican production, opium may be converted directly to “black tar heroin” in a simplified procedure. This form predominates in the U.S. west of the Mississippi. Relative to other preparations of heroin, it has been associated with a dramatically decreased rate of HIV transmission among intravenous drug users (4% in Los Angeles vs. 40% in New York) due to technical requirements of injection, although it is also associated with greater risk of venous sclerosis and necrotizing fascist’s.

Consumption - An Akha man smokes a pipe containing opium mixed with tobacco. In the industrialized world, the United States is the world's biggest consumer of prescription opioids, with Italy one of the lowest because of tighter regulations on prescribing narcotics for pain relief. Most opium imported into the United States is broken down into its alkaloid constituents, and whether legal or illegal, most current drug use occurs with processed derivatives such as heroin rather than with unrefined opium.

Intravenous injection of opiates is most used: by comparison with injection, "dragon chasing" (heating of heroin with barbital on a piece of foil), and madak and "ack ack" (smoking of cigarettes containing tobacco mixed with heroin powder) are only 40% and 20% efficient, respectively. One study of British heroin addicts found a 12-fold excess mortality ratio (1.8% of the group dying per year). Most heroin deaths result not from overdose per se, but combination with other depressant drugs such as alcohol or benzodiazepines.

The smoking of opium does not involve the burning of the material as might be imagined. Rather, the prepared opium is indirectly heated to temperatures at which the active alkaloids, chiefly morphine, are vaporized. In the past, smokers would use a specially designed opium pipe which had a removable knob-like pipe-bowl of fired earthenware attached by a metal fitting to a long, cylindrical stem. A small "pill" of opium about the size of a pea would be placed on the pipe-bowl, which was then heated by holding it over an opium lamp, a special oil lamp with a distinct funnel-like chimney to channel heat into a small area. The smoker would lie on his or her side in order to guide the pipe-bowl and the tiny pill of opium over the stream of heat rising from the chimney of the oil lamp and inhale the vaporized opium fumes as needed. Several pills of opium were smoked at a single session depending on the smoker's tolerance to the drug. The effects could last up to twelve hours.

In Eastern culture, opium is more commonly used in the form of paregoric to treat diarrhea. This is a weaker solution than laudanum, an alcoholic tincture which was prevalently used as a pain medication and sleeping aid. Tincture of opium has been prescribed for, among other things, severe diarrhea. Taken thirty minutes prior to meals, it significantly slows intestinal motility, giving the intestines greater time to absorb fluid in the stool.

Despite the historically negative view of opium as a cause of addiction, the use of morphine and other derivatives isolated from opium in the treatment of chronic pain has been reestablished. If given in controlled doses, modern opiates can be an effective treatment for naturopathic pain and other forms of chronic pain.

References -

1. Professor Arthur C. Gibson. "The Pernicious Opium Poppy". University of California, Los Angeles. Retrieved February 22, 2014.
2. "Opium Factories of Bihar - Bihargatha". Bihargatha.in. Retrieved 2011-10-07.
3. Opium : Dikotter, Frank, Lars Laamann and Zhou Xun. 2004. Narcotic Culture: A History of Drugs in China. Chicago: University of Chicago Press; Zheng Yangwen. 2005. The Social Life of Opium in China. New York: Cambridge University Press.
4. Paul Harris in Peshawar (November 25, 2001). "Victorious warlords set to open the opium floodgates". London: Observer.guardian.co.uk. Retrieved 2010-03-21.
5. UN World Drug Report 2007 – Afghanistan" (PDF). Retrieved 2010-03-21.
6. Front Matters_05-31-07.qxd" (PDF). Retrieved 2010-03-21.
7. Suzanne Carr (1995). [dead link] "MS thesis". Retrieved 2007-05-16. (citing Andrew Sherratt)
8. M J Brownstein (June 15, 1993). "A brief history of opiates, opioid peptides, and opioid receptors". Proc Natl Acad Sci USA .
9. PBS Frontline (1997). "The Opium Kings". Retrieved 2007-05-16.
10. Jump up to: a b P. G. Kritikos and S. P. Papadaki (January 1, 1967). "The early history of the poppy and opium". Journal of the 10.Archaeological Society of Athens. Retrieved 2007-05-26.
11. E. Guerra Doce (January 1, 2006). "Evidencias del consumo de drogas en Europa durante la Prehistoria".
12. Ibrahim B. Syed. "Alcohol and Islam". Retrieved 2005-07-07.
13. Islamic Medical Manuscripts at the National Library of Medicine: a note on pharmaceutics". Retrieved 2007-06-06.
14. Julius Berendes (1902). "De Materia Medica".

****

Some Zoosporic Fungi In River Narmada At Hoshangabad (M.P.)

Ranjana Singh *

Abstract - Hoshangabad is a holy city, situated on the left bank of the river Narmada. During the investigation period (1987-1989) study of aquatic fungi had been taken first time in lotic environment of the river Narmada at Hoshangabad. The study station were selected according to the least disturbed and disturbed areas of the river. Total number of 30 genera and 50 fungal species were isolated from all four sampling station of the river. Out of these four genera and seven species of Zoosporic fungi i.e. *Achlya hypogyna, A. oligocantha, A. polyandra, Aphanomyces laevis, Dictyuchus sterile, Saprolegnia delica, S. ferax* belonging to the order Saprolegnials were reported.
Kew Word – Zoosporic fungi, lotic environment, Saprolegniales.

Introduction - Narmada is a pious river. It is the 5th longest river in India. From the religious point of view the river Narmada has second place after the Ganges. Ptolemy has called it Narmados. The stretch of the river Narmada at Hoshangabad enjoys a luxuriant growth of flora and fauna having no reservation and restrictions. After entering the town the various Ghats adorn the south banks of the river.

Study of aquatic fungi had been taken firstly in river Narmada at Hoshangabad. During the investigation period from March 1987 to February 1989 four genera and seven species of the zoosporic fungi were reported, i.e*. Achlya hypogyna, A obigocantha, A. polyandra, Aphanomyces laevis, Dictyuchus sterile, Saprolegnia delica S. ferax* belonging to the order Saprolegniales class Oomycetes of the group Mastigomycotina. Water samples and organic matter were collected monthly from four different stations from divers habits. Isolation of fungi was done by baiting methods. Collection isolation and preservation method describe by Agrawal and Hassija[1], and Dubey[4]. Identification of aquatic fungi was done with the help of manuals, monographs and published work by various authors like Coker[2], Coker and Methews[3], Johnson[5], Sparrow[7] . Khulbe and Bhargava[8] .

Description -

Achlya hypogyna Coker and Pemberton (Pl. 1, Fig. 1-7) Hyphae slender, branched 36µ in diameter. Gammae abundant, sporangia cylindrical 161.48-38 x 24.56-38.37 µm. Oogonia racemousely 39.91 - 67.5µm. Oospore 4-9 centric 18.42 -24.56µm; Oogonial wall unpitted and smooth, antheridia hypogynous, diclinous 2-3 antheridia per oogonium. Oospore spherical in number, Oospore 4-9, centric, 18.42-24.56 µm in diameter.

Achlya oligocantha de Bary (Pl. 1, Fig. 8-11) - Hyphae slender. sporangia sparse, cylindrical straight, 491.20-610.4 µm long and up to 30.7µm in diameter, spore discharge achlyoid. Oogonia spherical, 58.33 –73.68 µm in diameter; oogonial wall sparsely ornamented with smooth papillae. Oospore 24.5 – 27.6µm, centric. Antheridial androgynous, partly diclinous.

Achlya polyandra Hildebrand (Pl. 2, Fig.1-7) - Mycelial growth dense, hyphae stout, gemmae present, sporangia, cymosely branching, cylindrical, 105-500 x 39.91 µm, commonly curved, spore discharge achlyoid. Oogonia spherical 64.47 - 92.1 µm in diameter. Oogonial wall smooth and unpitted, oogonial stalk little curved in some cases, antheridia diclinous, one to many per oogonium, oospores 7 to 17 or more in number, 24.5 – 27.6 µm in diameter centric and sub centric.

Aphanomyces laevis de Bary (Pl. 3, Fig.2-4) - Hyphae 6.14 - 7.67 µm in diameter, hyaline, straight sparingly branched. Sporangia filamentous, formed from undifferentiated hyphae. Zoospores 9.21 µm in diameter after emerging. Oogonia terminal, spherical to sub spherical 27.63 - 39.91µm in diameter, smooth walled ,oospores' hyaline, 21.49 - 27.63µm in diameter, with a large central oil globule. Antheridia one to many, antheridial stalk simple, diclinous or monoclines.

Dictyuchus sterile Coker (Pl. 3, Fig. 1) - Hyphae branched 30.7 - 42.98 µm in diameter. Primary sporangia borne terminally, later borne cymosely branching. Spores 9.9 µm in diameter before sprouting. Sporangial wall disappearing but the encysted spores sticking together to retain the sporangial shape Gemmae lacking. Oogonia not developed.

Saprolegnia delica Coker (Pl. 4, Fig. 5-7) - Hyphae straight branched 21.4-49.9 µm in diameter. Gammae few, sporangia abundant, long, cylindrical 276.3 µm long and 30.7 µm diameter, repeatedly proliferating from within; spores 10-15 µm .Oogonia racemousely, spherical 42.98-73.68 µm, wall smooth, hyaline, pit few. Oospore centric dark 2-6 sometimes 8, 24.5-27.6 µm. Antheridial branches abundant, long, diclinous, persistent.

* Assistant Professor (Botany) Govt. M.L.B Girls P.G. (Auto.) College, Bhopal (M.P) INDIA

Saprolegnia ferax (Gruith) Thuret (Pl.4, Fig.1-4) - Hyphae stout 30.7-55.26 µm in diameter, sparingly branched. Gemmae abundant, variable in shape, sporangia abundant fusiform straight or slightly curved, 199.5 -680 x 24.5 – 52.19µm renewed by internal proliferation, spores 9-11 µm in diameter. , Oogonia abundant usually terminal, rarely lateral, oblong, cylindrical, oblong ones 138.1 x 55.26µm , wall smooth, pitted. Oospore centric, 9 to 17 or more oospores in an oogonia, 18.4 – 21.5 µm in a diameter. Antheridial branches rare, monoclinous or diclinous laterally or apically apprised to the oogonial wall.

References -

1. Agrawal, G.P., and Hasija,S.K. (1986*). Micro-organism in the laboratory: A Laboratory guide of Microbiology, Mycology and Plant Pathology*. Print House (India) Lucknow.
2. Coker., W.C. (1923). *The Saprolegniaceac with notes on other Watermoulds.* University of North Carolina Press. Chapel Hill North Carolina.
3. Coker, W.C. and V.D. Mathews (1937). Saprolegniales*. N. Amer. Flora*, 2:15-67.
4. Johnson, T.W. Jr. (1956). *The genus Achlya Morphology and Taxonomy* XV +180 p. Univ.of Michigan Press. Ann. Arbar Michigan.
5. Khulbe, R.D. and K.S. Bhargava, (1977). Distribution and seasonal periodicity of water moulds in some lakes of Nainital Hills. India. *Hydrobiologia* 54:67-72.
6. Sparrow, F.K. Jr. (1960) . *Aquatic Phycomycetes* IIed. Univ, of Michigan Press. Ann. Arbor 1187p.

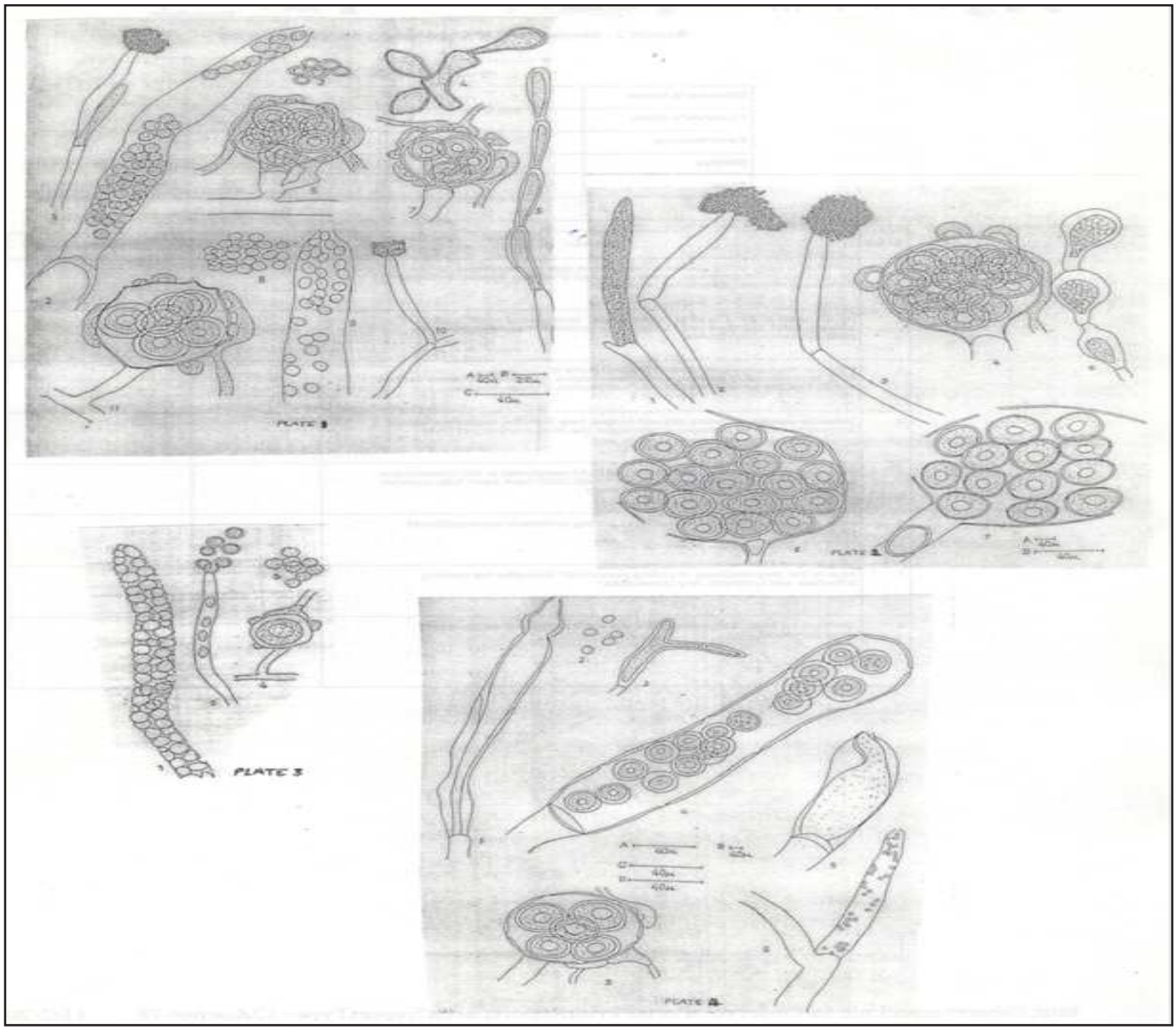

Plate 1, Fig. 1-7*: Achlya hypogyna* . Plate 2, Fig. 1-7: *A. polyandra*
Fig. 8-11: *A. oligocantha*
Plate 3, Fig. 1: *Dictyuchus sterile* Plate 4, Fig. 1-4: *Saprolegnia ferax*
Fig. 2-4: *Aphanomyces laevis* Fig. 5-7: *S. delica*

Giloy (Amrita)- The Nector Of Immortality

Dr. Renu Rajesh *

Abstract - Every plant on this earth has its own importance in the welfare of mankind. Herbal treatment is no doubt one of the most ancient forms of medicine. Every herb has a number of active ingredients which are useful for curing one or the other problem of human body. A diverse range of bioactive molecules make them a rich source of different types of medicines. One such plant is **Giloy** or **Guduchi**, also known as **The Nectar of Immortality**. It is a member of family Menispermaceae and scientifically known as ***Tinospora cordifolia***. Giloy has a long history (since 2000 BC) of use as an Ayurvedic medicine. Giloy has a special mention in ancient mythology (during Great War between Ram and Ravan). In the ayurvedic texts Giloy is referred as Amrita (Nectar) as it imparts youthfulness, vitality and long life. It has ability to enhance immune system to prevent diseases from common cold to fever, diabetes and cancer. It is effective in malaria, typhoid and other fevers by improving antibody production and immune response. It enhances memory; improve health, betters complexion, voice, energy and luster of skin. It helps treating stomach, liver and kidney ailments. It is also used in treatments of fractures. Recent studies have shown the anti cancer and radio protective activities of the herb. Giloy has many active ingredients and all parts of plant are useful. It works at the cellular level.
Key Words - Giloy, Ayurvedic Medicine, Bioactive Molecules, Disease.

Introduction - Every plant on this earth has its own importance in the welfare of mankind. Herbal treatment is no doubt one of the most ancient forms of medicine. Every herb has a number of active ingredients which are useful for curing one or the other problem of human body. A diverse range of bioactive molecules make them a rich source of different types of medicines. One such highly valued plant is **Giloy (a hindu mythological term which means heavenly elixir)** or **Guduchi**. It is also known as **The Nectar of the God (one which protects the body)**. It is a member of family Menispermaceae and scientifically known as ***Tinospora cordifolia (Willd.) Hook. F. and Thomas***.

Scientifically this plant is Classified as

Kingdom	-	***Plantae***
Division	-	***Magnoliophyta***
Class	-	***Magnoliopsida***
Order	-	***Ranunculales***
Family	-	***Manispermaceae***
Genus	-	***Tinospora***
Species	-	***cordifolia***

Other common names for Giloy are Gulansha, Gulancha and Gurcha in Hindi; Tinospora in English; Guduchi and Amrutha in Sanskrit. ***Tinospora cordifolia*** is an indigenous plant species belonging to the tropical areas of India, Myannmar and Sri Lanka. In India it is found ascending to an altitude of 300m-1200m above mean sea level.

The plant Giloy is found in Himalayas and deciduous and dry forests throughout tropical India. It is particularly abundant in the dense forests of Chattisgarh. It is a large glabrous, perennial, deciduous, climbing shrub with a succulent stem and papery, creamy, white to grey in color bark. The plant has aerial roots and climb on neem and mango trees. Synergy between Neem and Giloy enhance efficacy of Giloy plant. Leaves are simple, membranous, alternate and heart shaped. Flowers are small, yellow in color, axillary and long stalked racemes. The fruit is pea sized subglobose drupe and red on maturity. Flowering in Giloy usually starts in the month of March-June and fruit sets in the month of July. It easily propagates by cutting.

Giloy has a long history (since 2000 BC) of use as an Ayurvedic medicine. It holds pride place in the Indian system of Ayurvedic medicine since centuries. It has a special mention in ancient mythology. After Great War between Ram and Ravana, dead monkey soldiers of Ram sena were revived back to life by the king of Gods, Indra, by showering nectar from heaven. Few drops of this nectar which fall on ground and later on sprouted became the Giloy plant. According to Ayurvedic texts Giloy is referred as Amrita (Nectar) as it has potential to impart youthfulness, vitality and long life. Charak described many polyherbal formulas that include Giloy. In Sushruta Samhita a medicated ghee called Guducyadi ghrta found its mention. Amrita Taila or Mulaka Taila as described by Charaka has Guduchi as main herb. It also finds a special mention for its use in tribal or folk medicine in different parts of our country.

The stem, leaves and roots of Giloy are used in medicines. The bitter qualities of all three parts are most abundant in summer. Fresh plant is said to be more effective, however, if not used fresh they should be dried in shade. Dried starchy extract is called **Guduchi Sattva** while its watery extract is often called **Indian Quinine**. **The important chemical compounds** found in Giloy are tinosporine, tinosporon, palmerin, perberillin, berberine, diterpene, syringen, giloin, gilenin, crude giloinin, arabinogalactan polysaccharide, picrotene, bergenin, gilosterol, silosterol, tinosporidine, cordifoliside A to E, palmatosides C and F, hepta consol tinosporic acid and few more. The fresh stem bark contains gilonin, giloin and

* **Prof. (Botany) Govt. Nehru Lead College, Ashoknagar (M.P) INDIA**

gelosterol. Recently phenolic lignin and hypoglycemia agent have also been isolated from the plant. These bioactive phytochemicals have been found to prevent various diseases including cancer and other immunological disorders. The leaves have been found to have protein in abundance and calcium and phosphorous fairly high.

Giloy is a well known medicinal herb. With its bitter taste it has Antipyretic, Antispasmodic and Ant-inflammatory properties. It is known to have a range of medicinal benefits; chief among them is its ability to enhance immunity system. It is in fact a strong immune - stimulant / booster / modulator and immune builder. It prepares body to confront against definite infecting organisms. Scientific studies on human white blood corpuscles (WBC) have shown that this herb helps in increasing the killing ability of macrophages. The unique ability of this herb to work at cellular level has made it so important in the traditional system of Indian medicine. A study conducted at Bhabha Atomic Research Center (BARC), Mumbai, India, established the fact that a substance present in Giloy, G1-4A/PP1 (partially purified), not only shows an immune modulator effect but also an antioxidant effect thereby, preventing cell injury induced by free radicals. Giloy holds a special position as a potent adaptogen and aphrodiasic in ayurvedic system of medicine. All the parts of **Giloy plant are used for various medicinal purposes** as mentioned below:

- It is best known tonic and vitalizer in Ayurveda and said to increase life of the human being. It also helps the body to adapt to stress.
- It is antispasmodic, antipyretic and anti-inflammatory and prevents the occurrence of diseases from common cold/cough to fever. The starch of the plant is used as a remedy for chronic fever and burning sensation.
- It is a remedy for diabetes and other metabolic disorders. It is used to reduce blood glucose level.
- It is helpful in the treatment of hyperacidity, colitis, worm infestation, abdominal pain, vomiting and other liver disorders (even hepatitis). It promotes regeneration of the liver from drug induced hepatic toxicity.
- It is used for skin conditioning.
- It is anti- malarial, anti- bacterial and anti- viral. It improves antibody production.
- It is good in acute dental infections and in fractures.
- The use of Giloy showed significant improvement in seasonal allergic rhinitis.
- Its immune modulation property found to provide beneficial effects on diabetic foot ulcer healing.
- The oil of plant is effective in reducing pain and in skin deseases.
- It helps in curing problems like raktpitta and anemia.
- The decoction of Giloy eases the itching and oozing.
- It helps in getting rid of renal calculi and also in reducing blood urea level.
- Juice of Giloy when taken with cow's milk is found to be effective in combating leucorrhea and with cumin seeds reduce burning sensation caused due to pitta.
- It is antihelminthic, antiarthritic, expectorant and blood purifier.
- It gives strength to the heart and is excellent diuretic.
- Its stem, leaves and roots can be used in excessive bleeding during menstruation or after abortion or delivery.
- It is effective in respiratory troubles particularly in asthama.
- In piles its juice with butter milk is very useful.
- Its juice is considered very effective in removing both exogenous and endogenous toxins. It also cleans out the brain toxins that disturb mental function.
- Giloy has recently become quite popular when it is found to cure swine flu.

About 2-3% of the total deaths caused throughout the world are caused due to cancer alone as per an estimate of the American Cancer Society. Many Indian medicinal herbs are being used by researchers to search cure of this still dreaded disease. These medicinal herbs contain many phytochemicals like terpinoids, carotenoids, flavonoids, alkaloids, saponins, tannins, enzymes, minerals and vitamins etc, which have antioxidant properties. Giloy, of course, is, one such important medicinal plant. The **anticancer activity** of its extract is being explored and results are remarkable. Studies have shown that the fresh juice of Giloy is very beneficial in treatment and prevention of cancer. The bioactive phytochemicals found in Giloy have ability to prevent various immunological disorders and even cancer. Many recent studies have verified the claim that the fresh plant juice cures and prevent liver cancer besides other types.

A lot of research is undergoing to search out the potential effects of *Tinospora cordifolia* and impressive results have been noticed. But most researches have been done in test tube (in vitro) or in animals (in vivo). Though more scientific studies are required, still the studies so far, support the importance of **Ancient Ayurvedic Amrita i.e., Giloy – The Nectar of God or Guduchi – the one who protects the body**.

References -

1. Giloy the Nector of God/holistichealthplus
2. Giloy benefits, its medicinal uses and how to use it, www.wiseshe.com/2010/08/giloy
3. Guduchi/iloveindia.com
4. Kennedy C, 2009, Guduchi: The one who protects the body, www.ayurvedacollege.com/book
5. Onkar P, Bangar J and Karodi R, 2012, Evaluation of antioxidant activity of traditional formulation Giloy satva and extract of the Curcurligo orchiodes, Journal of Applied Pharmaceutical Sciences, 02 (06), 209-213
6. Pandey B. P., 1988, Economic Botany, S. Chand and Company, New Delhi
7. Schulz V, Hansel R, Tayler v, Rational Phytotherapy: A Physician's Guide to Herbal Medicine, Berlin and Heidelberg:Springer, 1998
8. Singh and Jain, 1990, Taxonomy of Angiosperms, Rastogi Puplications, Meerut, India
9. Singh J, Sinha K, Sharma A, Mishra N P, Khanuja S P, 2003, Traditional uses of guduchi, J Med Aroma Plant Sci, 25:748-51.
10. Treatment of Cancer with Giloy/tmplcomponent/http//giloyherb.com

Fungal Deterioration Of Sunflower (HELIANTHUS ANNUUS L.) Seeds During Storage Conditions With Special Reference To Oil Quality

Dr. Shobha Shrivastava *

Abstract - Biodeterioration is any undesirable change in the properties of materials caused by vital activities of microorganisms. Storage is an abnormal state for plant products including seeds, and unnatural condi-tions in storage predispose them to biodeterioration.

Biodeterioration of agricultural seeds is not a recently discovered phenomenon but it had been of the major problems of the mankind from the time immemorial. Seed deterioration implies an irreversible degernative change in the quality of seed after it has reached its maximum quality level.

Sunflower (Helianthus Annuus) is one of the few crop species that originated in North America. It is an important oil seed crop, photo and thermo sensitive, with the advantage of growing throughout the year and even in dry areas.Its seeds are rich source of vegetable oil of high quality with pronouncedly anti cholesterol properties. Sunflower seeds are subjected to attack by several fungi.There is no infor-mation about the fungal deterioration of Sunflower seeds. The present paper deals with the changes in various properties of the seeds during storage at different labels of temperature and relative humidity at an interval of 25,50,75,100,125,150,175 and 200 days respectively.The losses in seed values were more pronounced at higher levels of temperature and relative humidity.

Key words - Biodeterioration, Microorganisms, Photo and Thermo sensitive.

Introduction - Sunflower considered a commercial oil crop all over the world. Fats and oils are most important ingredents of human food. Sunflower seeds contain 40-50% oil and 23% protein and constitute an excellent source of unsaturated fats, crude protein and fibers and important nutrients like many vitamins.

Sunflower is affected by a large number of diseases caused by many fungi and other phytopathogenic microorganisms. Most of the fungal species are reported to be seed borne [1]. During storage condi- tions Sunflower seeds are exposed to various infections by microorganisms like fungi which may bring about several undesirable changes and degradation of seed constituents, thus making the seeds unfit for consumption or sowing [2] & [3], besides these decreases in germination percentage, mycotoxine pro-production and total decay has been observed [3 &4].

Thus, the present study was carried out to survey seed borne mycoflora of Sunflower, testing the effect of some storage fungi on Sunflower oil quality and to investigate some of the changes in various proper-ties of the seeds at different levels of temperature and relative humidity.

Materials and Methods -

1. Effect of temperature and relative humidity under storage conditions - Sunflower seed samples from freshly harvested crop were stored for three months at three levels of temperature (20, 28, and 30^0 C) and relative humidity (RH) (68.5, 75 and 85%). The Various levels of temperature and RH for storage were maintained in incubators. Observations were made after 30, 60, 90, 120, 150 and 180 days of interval. Percentage germination of seeds was determined by placing the seeds in petriplates lined with moist blotters and germination percentage was recorded after 7 days of incubation at 28 $\pm$1^{0}C. The seeds of different conditions of storage were dried at 85$\pm$ 1^{0}C for 8 hours, ground to fine powder and analyzed for protein content [5], oil content and percent free fatty acids of oil [6].

2. Isolation of Sunflower seed borne fungi - A samples of 100 Sunflower seeds (Helianthus annuus L.), was surface sterilized in 2.0% Clorox solution for 1 minute and washed with sterilized water 2 or 3 times. The surface sterilized seeds were then blotted between two dry sterilized filter paper. Seed borne fungi were determined by the standard PDA method [5]. Sunflower seeds from each sample were randomly selected and plated on petridishes. Plates were incubated for 12 hours duration of darkness and light at 20$\pm$1^{0}C. After incubation period each colony examined microscopically for identification [7][8].

3. **Study of Oil Samples -**The refined Sunflower oil samples were collected from the oil producers in sterilized tubes. Spores and mycelium of ten isolated fungi from Sunflower seeds were inoculated in a conical flask containing 100 ml oil sample (10 samples) under aseptic conditions. After 30 days oil was filtered and these oil samples were used for the study of chemical and physical properties under sterilized condition according the described method by [8].

4 . **Physical Properties** -

(i) **Determination of moisture content from oil**:

The moisture content was estimated [9]. The moisture content was calculated by following formula:

Moisture% = $100[M_1-M_2] / M_1-M$

M_1 = Mass in gm. Of the dish with the material before drying process.

M_2 =Mass in gm. Of the dish with the material after drying process.

M = Mass in gm. Of the empty dish.

(ii) Determination of Oil colour-Colour of deteriorated oil was determined by observing the grade of the yellow colour as yellow, bright and so on.

* **Prof. (Botany) Govt. M.L.B.Girl'S P.G. (Auto) College, Bhopal (M.P) INDIA**

(iii) Determination of Odor of deteriorated Oil - For this test the Odor of the deteriorated seed oil was determined by just smelling the sample under the study to detect its case in relation to the oil in check treatment.

(iv) Absorbance of deteriorated Oil - The O.D. at 420 mm absorbance of deteriorated oil was recorded to study the effect of storage fungi on the tested oil samples infected with for each fungal individually.

Results and Discussion - The data shown in Table (1) indicate that out of 10 samples of Sunflower seeds (*Helianthus Annuus. L*); 16 seed-borne fungi were detected i.e., *Aspergillus flavus, A.niger, A. fumigates, A.nudulans, A. candidus, Alternatia alterneta, Alternaria tennius, Curvularia lunata, Emerucella sp; Fusrium oxysporum , F.moniliforme, Mucor sp; Penicillium digitatum, P.notatum; Rhizopus species* and *Trichoderma species*. The most dominant fungus was Aspergillus niger with all of the examined samples, followed by Aspergillus flavus and Fusarium spp. Similar data reported by [1] [2] and [3]. Seed mycoflora are of a great importance for seed deterioration. The obtained results are somewhat similar to those reported by [4] [5].

In all fungi were isolated with profuse fungal growth on the seeds stored at 68.5, 75 and 85% relative humidity. In general, there was as increase in the total percentage incidence of fungi with the length of storage period in most of the conditions. However, the increase in mould counts was rapid between the intervals of 4 to 6 months, in the samples. (Table 2)

Seed Moisture - There was a slight increase in moisture content of seeds stored at different levels of temperature and humidity's. The moisture content was maximum in the samples stored at 35^{0}C, 85% RH between the intervals of 5 to 6 months of storage. (Table 2)

Seed Germination - A varying degree of reduction in germ inability was recorded in the seeds stored under different conditions. Maximum loss was found in the seeds at three levels of temperature and 85% RH. between the intervals of 4 to 6 months of storage.

Bio-chemical changes - The data about the quantitative changes in oil content, free fatty acids and Protein content of seeds stored under different conditions of storage were shown in Table 3. The changes in oil colour may be due to pigments synthesized by in vending fungi like Aspergillus spp. [9].

Oil content - Generally, there was reduction in oil content of seeds in all the storage conditions with the advance of storage period. Maximum decrease was observed at temperature of 35^{o}C and relative humidity of 85%. The oil content of sunflower seeds infested with various seed borne fungi is shown in Table 4. As evident from results all the fungi decreased the oil content at both 15 and 30 days of incubation. The maximum decrease in oil content was, however, caused by Aspergillus flavus and A. fumigatus.

Free fatty acids - Oil extracted from seeds stored at different storage conditions and from seeds infected with different seed borne fungi were analyzed for free fatty acid content and the results are presented in Table 4. Free fatty acid content of oil extracted from infected seeds, in general, showed a great increase. A. flavus, however, caused the most severe damage and a very large increase in free fatty acid content was observed in the sample obtained after 30 days of incubation. A. niger and A. terreus caused a moderate increase in free fatty acid content of oil. Other species of fungi showed a slight increase in free fatty acids.

Soluble protein content - Soluble protein content of de-oiled meal was estimated by spectro- meter. The data revealed that the majority of fungi caused increase in soluble protein contents of seeds as shown in Table 4.

It is well known that relative humidity's and temperature of storage play an important role in the multiplication of fungi causing spoilage of seeds [1].

It is quite evident from the data that there was subsequent enhancement in the extent of dete-rioration at higher levels of temperature (35^{0}C) and relative humidity (75 and 85%). This shows that above conditions appear to be congenial for the growth and proliferation of storage moulds, which are responsible for biodeterioration of seeds. On the contrary, the low tempe-rature (20^{0}C) and low relative humidity (68.5) are not so favorable for the development of storage fungi. The results show that there was a steep rise in mould counts with the increase of relative humidity's. Similar observations were reported by [6] & [10] in different types of seeds.

The comparative analysis of the data on percentage germination indicated that the drop in germination was higher in seeds stored at 35^{O}C, 85%RH. Oil content varied from 15.0 to 48.0 percent during six months storage [8] also observed similar changes in oil content in stored Soybean seeds. Majority of the fungi caused the reduction in oil content when inoculated separately on sunflower seeds.The observation of [6, 7 & 8] was also similar in result.

One of the important changes associated with deterioration of seeds in general, and of oil seeds in particular, is the increase in their free fatty acid [6]. As evident from the results of present study, all the fungi increased the free fatty acid content of sunflower seed oil. Maximum increase was observed with A. flavus followed by A. niger and A. terreus. Similar observations were made by [7] in groundnut and castor seeds. However, A. flavus, A. niger and F. oxysporum showed a remarkable increase in soluble protein content in sunflower seeds [6] reported the increase in protein content in stored bajra grains in the initial months of storage due to seed borne fungi.

Sunflower is particularly used for production of edible oils as well as for seed consumption. The crop is attacked by numerous seed mycoflora and these pathogens may affect the crop resulting in a reduction of the seed quality and quantity. In India much attention has been given to increase production of food grain, however, enough attention has not been made to develop adequate scientific storage facilities and post harvest technology to cope with the increased production. From the present study it is apparent that the low levels of temperature and relative humidity of storage are suitable for safe and long term storage of sunflower seeds.

References -

1. Godika S, Agarwal K, Sing T (1996) : Fungi associated with seeds of Sunflower (Helianthus Linnuus L) grown in Rajasthan and their phytopathological effects. J. Phytol. Res 9: 61-63.
2. Afzal,R; Mughal, S.M.; Munir, M; Sultan, K; Qureshi,R; Ahmed, M; and Laghari,A.K.(2010):Mycoflora associated with seeds of different Sunflower cultivars and its management. Pak.J. Bot, 42(1): 435-445.
3. Ramesh, ch and Avitha,K.M (2005) : Presence of external and Internal seed mycoflora on Sunflower seeds. J.Mycol.Pl.Pathol. 35(2): 362-364.
4. Nahar,S; M.Mushtaq and M.H.Hashmi(2005) : Seed-borne mycoflora of Sunflower (Helianthus annuus L.) Pak J.Bot;

37(2): 451-457.
5. Lowry OH, NI Rosebrough, AL Farr & RJ Randall (1951): Protein measurement with Folin Phenol reagent J.Biol Chem 193, RP 265-275.
6. Mathur,SB; Olga Kongsdul (2003) : Common Laboratory seed healthy testing methods for detecting Fungi, Danish Government Institute of Seed Pathology for Developing Countries Thorvaldsensvey 57,DK-1871. Frederiksberg C. Copenhagen, Denmark pp 399.
7. Kumar Vijay & R.S. Dwivedi (1981): Mycoflora associated with floral parts of Sunflower. Indian Phytopath 34 (3) 314-317.
8. Rajendra B; Kakde and Ashok M.Chavan (2012) : Nutritional changes in Soybean and Sunflower oil due to storage fungi. Current Botany, 3 (4):18-23.
9. International Seed Testing Association (ISTA) (1985): International rules for seed testing. Seed sci.Technol.13: 299-355.
10. Prasad,T. and B.K.Singh (1983): Effect of relative humidity on oil properties of fungal infested Sunflower seeds. Bio. Bull. India 5: 85-88.

Table 1 : Fungi isolated from stored Sunflower seeds (PDA Method)

	Mean % value
1. Alternaria Alternatta	17.5
2. Alternaria tennius	16.8
3. Aspergillus condidus	16.0
4. Aspergilus flavus	15.6
5. Aspergillus fumigates	15.3
6. Aspergillus nudulans	14.0
7. Aspergillus niger	15.3
8. Curvularia luneta	9.5
9. Emerucella sp.	7.4
10. F.oxysporum	8.2
11. F.moniliforme	8.0
12. Mucor. Sp.	7.3
13. Renicillium notatum	6.5
14. Penicillium digitatum	6.0
15. Rhizopus nigricans	5.5
16. Trichoderma species	6.2

Table 2: Change in % moisture content and % germination of Sunflower seeds in storage.

Temperature	20°C			28°C			35°C		
Relative Humidity	68.5%	75%	85%	68.5%	75%	85%	68.5%	75%	85%
% Total change From initial %Moisture %Change after Conten180 days due To mould	.91	1.30	1.52	1.02	1.38	1.65	1.39	1.79	1.92
	0.30	0.69	o.91	0.41	0.77	1.04	0.78	1.18	1.31
% ger- Initial	90.25	-	-	-	-	-	-	-	-
mination%Total Change	73.05	90.25	90.25	88.25	90.25	90.25	83.73	90.25	90.25

Table 3: Change in oil content and free fatty acids of Sunflower seeds in storage.

Temperature	20°C			28°C			35°C		
RH	68.5%	75%	85%	68.5%	75%	85%	68.5%	75%	85%
Oil CONTENT									
Initial Oil content	49.5	-	-	49.5	-	-	68.5	-	-
Control	44.2	-	-	44.2	-	-	44.2	-	-
%Oil content									
After 180 days	39.2	30.0	28.2	25.6	28.2	21.6	18.0	16.5	15.0
% Total reduction	-10.3	-19.5	-21.3	-23.9	-21.3	-27.9	-31.5	-33.0	-34.0
% Reduction due to mould	-5.0	-14.2	-16.0	-18.6	-16.0	-24.6	-26.2	-23.7	-29.2
Free Fatty Acids Control	2.0	-	-	2.0	-	-	2.0	-	-
% Content after 180 Days	3.60	4.00	4.50	2.10	3.90	4.00	4.10	5.00	7.95

Table 4: Effects of storage fungi on oil content, free fatty acids and soluble protein content of Sunflower seeds.

Fungi	% Change in Oil content		% Change in free fatty acids		% Change in soluble protein		Oil colour	Oil odar
	15 days	30 days	15 days	30 days	15 days	30 days		
Initial	49.50	-	3.5	-	64.5	-		
Alternaria Alternatta	-5.0	-10	67.1	65.7	14.0	1.5	Pale yellow	Normal
Alternaria tennius	-4.0	-11.9	60.0	24.86	0.0	24.1		
Aspergillus candidus	-17.8	41.4	122.8	414.2	36.5	26.0	Yellow	Normal
A.flavus	- 46.4	-75.75	71.4	740.0	36.0	46.6		
A. fumigatus	42.4	-66.66	490.0	400.0	6.1	7.2	Asigut yellow	Normal
A. nidulans	13.1	-20.2	160.0	444.7	18.4	14.0		
A. niger	-31.1	-36.3	188.57	600.0	27.6	67.9	Yellow	Normal
Curvularia lunata	-2.2	-37.8	102.85	131.4	10.1	12.5	Yellow	Normal
Emerucella sp.	-12.1	-16.1	20.2	431.4	15.9	21.5	Yellow	Normal
F. moniliforme	-27.	-23.2	174.28	474.2	20.6	0.0	Yellow	Normal
F. oxysporum	-9.0	-39.2	288.57	371.4	36.5	24.3	Pale yellow	Rancid
Mucor sp.	-7.0	-11.1	5.7	117.1	10.9	6.1		
Penicillium notatum	-39.2	-21.9	17.14	77.1	17.7	6.9	Yellow	Specific
P.digitatum	-0.93	17.7	88.57	262.3	25.4	11.1	Yellow	Rancid
Rhizopus nigricans	-6.0	-38.9	42.85	105.7	6.9	9.1		
Trichoderma sp.	14.0	-35.3	28.57	174.2	-15.2	-4.0	Yellow	Normal

****

A Study On Grassland In Relation To Seasonal Changes And Biotic Interference

Mukta Shrivastava *

Abstract -A study on grassland in relation to seasonal changes and biotic interference on the vegetation developed on the study sites is a requirement to the understanding of species diversity. panna forest includes a number of grasslands which are subjected to varying degree of enterferances. All the species encountered on the two study sites are enumerated. A study on grassland composition of the vegetation developed on the both the sites reveals maximum number of species on side II in comparison to site I. The number of species increases on account of heavy biotic interferance.

.

Introduction - In india it is very unsure if there are any example of tropical climax grassland, though grassland is common and it may be very steady pre-climax under the influence of grazing and fire. This stated champion [1936], according to Bor [1942], the grasslands in india are maintained through biotic operations like burning and grazing and the term climax cannot be applied to them. The variety of factors and their instructions produce a large diversity of habitats for plant group and determine to a large extent, the botanical composition of the communities. A study of bio ecology of grassland of Madhya Pradesh revealed to Tiwari [1955] a wide flux in the floristics on account of response, reaction and co-action Clements and shelf ford, [1939] in the biome and led him to recognize five bioseval pandey [1953] successfully interpreted the biological spectra of the grass land as reflecting the intensity of grazing influence of grazing on the vegetation on most of the worker indicates that the grass land vegetation is negatively affected by grazing, especially over grazing, weaver [1950] and Ellison [1960] have reviewed some literature on root growth in the grassland. comparison between grazed and ungrazed grasslands have been an important tool in determining the effect of grazing (weaver and Rowland 1952, Fensham et al 1999, Harrison 1999, stoulgren et al 1999, Safford and Harrison 2001) .

At present grazing is free, except some confined area all cattles including goats, and sheep grazed freely in all parts of the forest except those which are enclosed, but this concession has been abused to a very great extend and it has adverse effect both on forest and cattle breed.

Material And Method -

The present investigation were undertaken in grass land at panna. Two study sites were selected for this study.

Study Site - I - This study site is completely protected situated on panna Ajaigarh road. It is about 10 km. from panna. this area is mainly occupied by grasses but other plants are also found.

TABLE - 1. LIST OF SPECIES OCCURING ON THE TWO STUDY SITES

Species	*Rainy season*		*winter season*	
	I	*II*	*I*	*II*
Chrysopogon montanus	*P*	*P*	*P*	*P*
Heteropogon contortus	*P*	*P*	*P*	*P*
Apluda aristata	*P*	*P*	*P*	*P*
Apluda mutica	*P*	*P*	*A*	*A*
Themeda quadrivalvis	*P*	*P*	*P*	*P*
Iseilenalaxam Hack.	*P*	*A*	*P*	*A*
Cynodon dectylon	*A*	*P*	*A*	*P*
Dichanthium annulatum	*P*	*P*	*P*	*P*
Imperata cylindrica	*P*	*A*	*P*	*A*
Eragrostris tenella	*P*	*P*	*P*	*P*
Sacharum spontanum	*A*	*P*	*A*	*P*
Symbopogon martinwals	*P*	*P*	*P*	*P*
Zornia diphylla	*P*	*P*	*A*	*A*
Xanthium strumarium	*A*	*P*	*A*	*P*
Volunterella ramosa	*A*	*P*	*P*	*P*
Vernonea cinarea	*P*	*P*	*P*	*P*
Vandellia crustaceau	*P*	*P*	*A*	*A*
Urochloa panicoydes Var. povrescns.	*A*	*P*	*A*	*A*
Tricodesma indicum	*A*	*A*	*P*	*A*
Sporobolous diander	*P*	*P*	*P*	*P*
Sida veronicaefolia	*P*	*P*	*P*	*P*
Sateria glauca	*P*	*P*	*A*	*A*
Scoparia dulcis	*P*	*P*	*P*	*P*
Rungia pectinata	*A*	*P*	*P*	*P*
Rhynchosia minima	*P*	*A*	*P*	*A*
Phyllanthus simplex	*P*	*P*	*P*	*P*
Paspalum scrobiculatium	*P*	*A*	*A*	*A*
Paspalum rovneanum	*P*	*P*	*P*	*P*
Paspalidum flavidiom	*P*	*P*	*A*	*A*
Panicum psilobodium	*P*	*P*	*A*	*A*

* Asst. Prof. (Botany) Govt. M.L.B. Girls P.G. (Auto) College, Bhopal (M.P.) INDIA

Panicum humile	P	P	P	P
Kyllinga triceps	A	P	A	A
Iachaemum rugosum	P	A	A	A
Heylandia Lastebrasa	A	P	A	P
Evoivulus numularious	P	P	P	P
Evolvulus aloinoides	P	P	P	P
Euphorbia thymifoli	A	P	A	A
Euphorbia hypercifolia	P	A	P	A
Eupherbia nirta	P	P	p	p
Eleusine indica	p	p	A	A
Digitaria garginata	P	P	A	A
Digitaria grandularis	P	P	A	A
Dismodium triflorum	P	P	P	P
Dactyloctenuim aegyptium	P	P	A	A
Cyperus rodundus	P	P	P	P
Cyperus compressus	P	P	P	P
Crotalaria medecaginea	P	P	A	A
Convelvulus pluricaulis	A	P	A	P
Convolvulus arbensis	P	A	A	A
Cassia tora	A	P	A	A
Cassia kleinii	A	P	A	A
Boerhavia diffusa	P	P	A	P
Bonnaya brachiata	P	P	A	A
Slunea oxyodonta	P	P	p	p
Aristata obscemcionis	p	p	A	A
Anisoneles species	A	A	P	A
Anelena nidiflorum	P	P	A	A
Alysicarpus monolifer	P	P	P	P
Alysicarpus longifolius	P	P	p	p
Allotiropsis cimicina	A	P	A	A
Bothrichloa pertusa	P	P	P	P

P = Presents A = Absents

TABLE - 2. NUMBER OF GRASSLAND SPECIES OCCURRING IN DIFFERENT SEASONS.

Season	*site - I*	*site - II*
Rainy	*45*	*50*
Winter	*33*	*32*

Study Site - II - This study site is also situated on panna Ajaigarh road 10 km. from panna town. It is purely open for grazing.

The study for frequency, density and abundance data were taken by quadrate in ungrazed and grazed field of panna. These area were sampled by the use of 25 quadrate per study area.

Observations - all the species incountered on the two study sites are enumerated in the table 1 number of species occurring in different seasons are given in table 2.

Result and Discussion - Annual species which fulfilled their full growth within one season but occur as senescent or drying plants with ripe seeds in the early part of the comming next season are included in the season of their vigorous growth only. Table 2 show that the maximum number of species occur in the two study sites in the rainy season. during the same period the number of species is greater on study site II (grazed grassland). During winter season, however, more species are found on study site j .

Conclusion - A study on grassland in relation to seasonal changes and biotic interference of the vegetation developed on the both the site reveals maximum number of species on site jj comparison to site j the number of species increases in relation of heavy biotic interference. The comparison of vegetation of study site j and jj reveals the fact that production against scrapping by human being and grazing by cattle result in an increases in the vegetal density and cover.

References -

1. Bor, N.L. 1942 . Ecology: Theory and practice presidential address, Botany section, proc. indian science congress 1- 35.
2. champion, H.G. 1936. A preliminary survey of forest types of india and Burma. Indian forest Rec. (NS) 1 : 1 - 286.
3. clements, F.S. and V.E. Shelford 1939. Bioecology, John willey, New York.
4. Ellison, L.1960. Influence of grazing on plant succession of ranged lands. Bot. Rev. 26 : 1 - 78.
5. Fensham, R.J.J.E, Holman an M.J. Cox 1999 plants species responses along a grazing disturbance gradient in Australian grassland Journal of vegetation science 10 : 77 - 86.
6. Harrisons 1999 Native and alien species diversity at the local and regional scales in grazed California grassland oecologia 121 : 99 - 106.
7. Pandey, S.C. 1953, ecological studies of grasslands of sagar, Ph.D. thesis, sagar university sagar.
8. Saffard, H.D. , and S.P. Harrison. 2001. grazing and substrate interact to affect native vs. exotic diversity in road side grassland. Ecological applications 11 : 1112 - 1122.
9. Stohlgren, T.J. , L.D. Schell, and B. Vanden Heuvel 1999. how grazing and soil quality affect native and exotic plant diversity in Rocky mountaining grassland, Ecological applications 9 : 45 - 64.
10. Tiwari, D.K.1955, the study of bio ecology of grassland of madhya Pradesh, Ph.D. Thesis sagar university, sagar, india.
11. Weaver, J.E. 1950, effects of different intensities of grazing on depth and quantity of roots of grasses. j our. Range, mangt. 3 : 100 - 113.
12. Weaver, J.E., and N.W. Rowland. 1952 effects of excessive natural mulch on development, yield and structure of native grassland. Botanical gazette 114 : 1 - 19.

Dynamics Of Dry Matter Production In *Diospyros Melanoxylon Roxb*

Mukta Shrivastava *

Abstract - Seed production may be sufficient and seed remain viable for a long time but if the conditions for establishment of seedlings are not favourable, the entire energy spent on production and germination of seeds can be said to be wasted. The survival and establishment of seedling is governed by genetical factors and the environmental conditions. The former is the factors which remain effective till the germination of seed whereas the later determines the survival of species. Result of the present study on seedling growth of *D.melanoxylon* indicate that seedling growth and establishment exhibit greater contribution of biomass in roots.

Key words - seedling, establishment, environmental factors, biomass.

Introduction - Conditions for seed germination may be entirely favourable and natural seedling may appear in countless number at the beginning of the rainy season only to disappear largely or entirely within a comparatively shorter period owing to various causes such as drought, poor soil aeration, competition, shade or the other factors (Troup, 1921). Earlier work on seedling studies has largely been confined to the growth of seedlings of various species. In India such type of studies have been done on some tree species. The notable contribution are Seth and Mathauds (1959), Seth and Bhatnagar (1962), Yadav and Mathur (1962), Kaul et.al (1972), Talwar and Bhatnagar (1979). Chin and Furgson (1973) observed the growth and mortality in Dipterocarp forest.

The size of tree is such that always a considerable amount of energy is devoted to the construction of vegetative part. This is true even in trees mostly oriented towards 'r' strategy. Janzen (1970) gave a theoritical distribution patterns of seedling predators of forest trees. Data for tropical forest tree seedling are comparatively scanty, These studies included by those Bhatnagar (1965), Sharma et.al (1970), Agrawal (1972), Sharma and Singh (1975), Lalman Misra (1981) and Singh et.al.(1982).

Material And Method - *D.melanoxylon* Roxb. forest trees species was selected for the present study. Seed were sown in polythene bags. After 30 days these seedlings were transplanted into open plots. For standing crop biomass the harvest technique of odum (1960) was followed. Seedling fractional (root and shoot) wet weight and dry weight were estimated.

Observations - The seedlings were observed carefully throughout the year for germination, leaf fall and other changes. Simultaneously, in forest the survey was done to observe the above quoted perimeters along with dieback, biotic influences and grassing of these seedlings. The entire period of a study was divided into three seasons viz., rainy, winter and summer. All the results were derived from dry weight of shoot and root.

Table 1 : Monthly average dry matter production by shoot and root of *D.melanoxylon* (g plant $^{-1}$)

Age (Month)	Shoot	Root	Total
July	2.1	4.2	6.3
August	2.1	4.5	7.6
September	3.5	6.3	9.8
October	3.7	8.5	12.2
November	4.1	9.0	13.1
December	4.4	9.8	14.2
January	4.7	11.3	15.0
February	4.5	12.0	16.5
March	5.2	12.9	18.1
April	5.5	13.1	18.6
May	5.0	14.2	19.2
June	5.8	15.0	20.8

Table 2 : **Percentage importance of shoot and root and relative growth rate (gg^{-1} month^{-1}) during different months in seedlings of *D.melanoxylon***

Age (Month)	Shoot	Root	R.G.R
July	33.33	66.66	0.0203
August	27.63	59.21	0.0276
September	35.71	64.28	0.0237
October	30.32	69.67	0.0077
November	31.29	68.70	0.0087
December	30.98	70.32	0.0059
January	31.33	75.33	0.0103
February	27.27	72.72	0.100
March	28.72	71.27	0.0029
April	29.56	70.43	0.0034
May	26.04	73.95	0.0086
June	27.88	72.12	

* Asst. Prof. (Botany) Govt. M.L.B. Girls P.G. (Auto) College, Bhopal (M.P.) INDIA

Result And Discussion - Primary data for growth analysis of seedling in different months is given in Table (1). Performance indices for shoot and root fractions are tabulated in terms of percent contribution are given in Table (2). Result envisaged a consistent increase in dry matter of seedling throughout the study period. From the very beginning root compartment possessed higher dry weight till the end of the year than the shoot compartment.

Conclusion - It is evident from data of growth that seedlings of *D.melanoxylon* showed that root contributed more biomass than shoot. Seasonal partitioning of dry matter allocation was higher in the root compartment than in the shoot during all the seasons.

References -

1. Agrawal, P.K. (1972).Rate of dry matter production in forest tree seedlings with contrasting patterns of growth.p. 391-396, V.Puri, Y.S. Murthi, P.K. Gupta and D. Banerjee (eds) Biology of land plants, Shakti Prakashan, Meerut.
2. Bhatnagar, H.P.(1965) Studies in growth behaviour of sal (*Shorea Robusta*) seedlings in different salt forest soils. Trop.E col., 6: 141-151.
3. Chin, Liewthat and Furgson, Wong (1973). Density, recruitment mortality and growth of Dipterocarp seedlings in virgin and logged over forest in sabah.Malay.For., 36:3-15
4. Janzen,D.H. (1970). *Iacquinia Pungus*, a heliophilic from the understory of tropical deciduous forest. Biotropica) 2(2) : 112. 119
5. Kaul, O.N., A.C. Gupta and J.D.S. Negi (1972). Diagnosis of mineral deficiencies in teak (*Tectona grandis*) Indian For., 98: 1973-1977
6. Lalman and A. Misra (1981). Dry matter production by some tropical forest tree seedlings. van vigyan, 19:1-13
7. Odum,E.P. (1960). Organic production and turn-over in old field succession. Ecology, 41: 24-49.
8. Seth, S.K. and G.S. Mathuda (1959). Preliminary trails with Gibberellic acid. Indian For., 85: 528-532
9. Seth,S.K. and H.P.Bhatnagar (1962). Studies in N.P.K. nutrition of *Shorea robusta* seedling. Indian For.Res. (N.S.J. Silv.)
10. Sharma, V.K. and R.P.Singh (1975). Net primary production and energy accumulation pattern of Eucalyptus tereticornis smith seedling. Geobios, 2:65-67
11. Singh, U.N., V.K.Shrivastava and R.B.S.Sengar (1982). A comparative study of the rate dry matter production in forest tree seedlings (*Diospyrous montana* Roxb. *Buchanania lanzan* Roxb.). Ind.J.For., 5:8-14
12. Talwar, K.K. and H.P. Bhatnagar (1979). Effect of macro element deficiencies on fresh and dry matter, mineral uptake and hollecellulose production by *Pinus Caribaea* seedlings. Indian For., 105 : 342-355
13. Troup, R.S. (1921). The silviculture of Indian trees. Oxford university press., pp. 646
14. Yadav, J.S.P. and H.P. Mathur (1962). pH tolerance of sal (*Shorea robusta*) seedlings. Indian For., 88 : 694-700.

****

Banthic Fauna Of Yeshwant Sagar Reservoir - Indore (M.P)

Archana Sharma *

Abstract - Yeshwant Sagar Reservoir is situated near to Indore city.It is shallow man made reservoir was built i 1936 on river Gambhir. The reservoir water used for fish culture.A benthic study was during twelve month 2013 .Porifera,Mollusca andAquatic insect were collected.

Key word - Yeshwant sager reservoir,Gamphir river,benthos,Scoop sampler,species.

Introduction - Yeshwant sagar reservoiris a manmade reervoir near to30 kilometer to indore city. -study purpose to knowledge the banthic faunna of yeshwant sagar reservoirThe term benthos derives from the Greek word bathys, meaning deep. Benthos refers collectively to all aquatic organisms which live on, in, or near the bottom of water bodies. This includes organisms inhabiting both running and standing waters, and also applies to organisms from both saltwater and freshwater habitat The term phytobenthos is used when referring to the primary producers (i.e., various algae and aquatic plants), whereas zoobenthos is applied in nm to all consumers (i.e., benthic animals and protozoa). Benthic microflora (i.e., bacteria, fungi, and many protozoa) constitute the decomposer community, and are involved in the recycling of energy and essential nutrients.

The benthos may be further subdivided on the basis of size. Large benthic animals (those readily visible without the use of a microscope) are collectively referred to as macrozoobenthos or macroinvertebrates. Representatives include clams, snails, worms, amphipods, crayfish, and the larvae of many aquatic insects (e.g., dragonflies, mayflies, stoneflies, caddisflies, chironomid midges, and black flies). Microscopes are essential to discern members of the microbenthos (e.g. nematodes, ostracods).

The benthic macroinvertebrates consume algae, coarse particulate matter (such as fallen leaves) and its associated fungi and bacteria, fine suspended organic matter, and prey organisms. Macroinvertebrates are part of the food supply for many fishes and other vertebrates of lakes and stream

Thus, the benthos encompasses a huge array of life with many phyla involved. They inhabit such disparate habitats as the small aquaria formed in the bottom of pitcher plant leaves to the bottom of the Mississippi River, the Great Lakes, and the oceans. Some of the benthos spend part of their life cycle in other habitats, such as riparian and shore lands.Benthic invertebrates are used for evaluating the quality of flowing water,a also from an important link in supporting detritus based fisheries. The dead organism upon decomposition like bacteria and fungi are used by benthos ,which in turn are consumed by fishes and other aquatic animal . The abundances diversity and distribution of benthic animals in nature is related to various physiochemical and factors.The functional role of benthic communities in the tropic dynamics of reservoir ecosystem is well acknowledged. The compositions, abundance and distribution of benthic organism over a period of time provide an index of ecosystem.Studies on the availability and degree of utilization of bottom dewelling organism help in demarcation of fishing ground . Thought macrobenthos play an eminent rate and occupy a distinct place in the food cycle. Water quality.Think of benthic communities as living 'water purifiers'. The diverse lifestyles of benthic organisms allow them to play vital roles such as cleaning water, processing detritus, and controlling harmful algae blooms. One group of organisms, the filter-feeders, is composed of a variety of species that specialize in removing particles from the water column. For example, a study on the Ashuelot River in New Hampshire4 showed that freshwater musselsca can filter 35% of the total daily discharge (all water flowing past the river mouth) from a flood control dam. To illustrate this point, an aquarium filled with murky water will become clear after several hours of filtering by mussels .Freshwater mussels are one of the most imperiled groups of aquatic organisms in streams and rivers because much of their habitat has been altered by dredging, channeling, impoundment, and sedimentation. Mussels also are sensitive to water pollution, the spread of exotic species, and barriers to migrationBenthic communities break down the organic matter derived from plants – such as aquatic macrophytes and the leaves and branches of trees that fall into streams, lakes, and ponds – while removing dissolved nutrients from the water. Thus, they can also be thought of as 'digestion systems.' A fallen leaf eventually settles to the bottom and microbes colonize it . Microbes break down toxins and leaf structural components, such as cellulose and lignin. Microbes also enhance leaf nutritional value for larger benthic organisms by assimilating nitrogen and other nutrients they remove from the water. These processes are referred to as 'conditioning.' Once the leaf is conditioned by microbes, macroinvertebrates shred the leaf material into smaller particles while consuming small bits of it. This shredding accelerates decomposition by increasing the surface area of the leaf material for further microbial processing. The energy and material fixed during decomposition support the growth of macroinvertebrates, as well as the fish that consume invertebrates and the conditioned

* Guest - Assistant Professor (Zoology) Govt. college, Niwali, Badwani (M.P) INDIA

detritus.The study is carried out for a period of twelve month 2013 . Porifera, Mollusca,Auatic insect were recorded ,Yeshwant sagar reservoir.

Material and Methods - For the purpose of study the bethose collected from the reservoir for a period of twelve month during the year 2013. January to December four sampling station by Scoop sample method and qualitative analysis of benthos. Identify the benthos under microscope. Although a wide range of animal group are represented in a binthic community.

Results and discussion - Freshwater systems – including streams, rivers, ponds, lakes and wetlands – are important components of landscapes. The organisms that make up food webs in freshwater systems are diverse and important both ecologically and economically. Many aquatic species are well known, including a variety of important fish species, but at the bottom of a water body are organisms that are members of benthic communities. The term benthos derives from the Greek word bathys, meaning deep. Benthic communities are composed of algae, bacteria, fungi, and invertebrates — organisms that transform matter and energy into LIFE — living biomass that eventually becomes food for other organisms like fish. Insects that emerge from streams and lakes also provide important nutrients and energy to neighboring forests and sustain terrestrial organisms, such as birds, spiders and lizard. Benthic organisms have unique adaptations that allow their communities to perform valuable "ecosystem services", such as improving water quality for drinking, sustaining commercial fisheries, offering leisure and recreational opportunities, and providing inspiration for artistic expression and spiritual renewal. When the world was relatively "empty" of humans, the bounty of these ecosystem services was so vast that it seemed limitless. However, in today's world of 7 billion people, our footprint has grown so large that it is impairing the capacity of freshwater ecosystems to provide these valuable services.The main food sources for the benthos are algae and organic runoff from land. The depth of water, temperature and salinity, and type of local substrate all affect what benthos is present. In reservoir waters and other places where light reaches the bottom, benthic photosynthesizing diatoms can proliferate. Filter feeders, such as sponges and bivalves, dominate hard, sandy bottoms. Deposit feeders, such as polychaetes, populate softer bottoms. Fish, such as dragonets, as well as sea stars, snails, cephalopods, and crustaceans are important predators and scavengers.play an important role as a food source for fish, such as the sheepheand humans.

In the present study 14 species of (micro-invertebrates) benthos present during study period. This includes 1species of Porifera,4 species of Oligochaeta,4 species of Mollusca and 5species of Aquatic insect, were recorded from Yeshwant Sagar reservoir.

The group of Porifera was represeted by single species viz Spongilla sps.Oligochaeta was represent by 4 species viz Tubifex-tubiex, Limnodrilus hoffmeisteri, Daro doralis, Tubifex albicola.

Mollusca was represent by 4 species viz Vivipara bengalensis, Lymnaea auricularia, Bellamya bengalensis, Pissidium clarkeanum.Aquatic insect was represented by 6species viz Culex sps, Beetls etc.Oligochaetas aredecreased in number during monsoon. The Arthopods dominated the macro-benthic invertebrates during post monsoon and and cold period.The most dominent species among Oligochaetes were Tubifex tubifex, Limnodrilus hoffeisteri is dominant during.Mollusca all species were dominant at study site whereas Pissidium clarkeanum was abundant in number at all study sites.The Arthopods benthic fauna was in more number at all study site, although there is slight fluctuation during monsoon, but increase in large number during post monsoon season.The Aquatic insect species Culex ampheles, Notonecta, Belostoma halobates, Beetles on slight fluctuation during post monsoon season.

In the present study 14 species of benthos were reported from Yeshwant sagar reservoir. Dubey (1995) has reported 55 species of micro invertebrates (benthos) in Kshipra river. Shukla (1995)observed 107 species of macro-zoobenthos from Gandhi sagar reservoir.

Conclusion - A benthos is a bottom dweller and is organism that live on the sea bed and reservoir. The species found in the benthic zone are directly related to the specific kind of habitat. The benthic organism have been widely used in assessing the health of aquatic ecosystem and bio-investegation. The benthic zone provides many valuable product and ecological services. It is a play an important role in the the breakdown of organic substance . The cycle nutrient through the sediments and serve as an important food source for bottom dwelling fish ,larger surface dwelling invertibrates and many bird and mammals ,including as food for human beings. They are naturally as good indicatores of water quality and catches of fish. Yeshwant sagar reservoir14 species present. Benthos play a key role in the productivity of lake . The deritivore benthos are important in an aquatic ecosystem as they are capable of converting low quality detritus into high quality food that may be consumed as higher tropic levels. Benthic species and communities are considered to be the best indicator of organic pollution.

Oligochaeta >Mollusca > Porifera > Aquatic insect.

Acknowlegement - The author are thankful to the Dr. L.K.Mudgal Govt.Girls. Degree college , Indore, for providing laboratory facilities.

References-

1. Alan .P.Covich ,Margarnet A,Palmer and Todd ACrow 1991 The role of Benthic invertebrate species in freshwater ecosystem.Bio.Science vol.49.No 2
2. Ahmed,S.H and Singh,Acomparative study of the benthic fauna of lentic and lotic water bodies in and around Patna (India).j.Environ.Biol.10(3):283-291.
3. Baxter CV, Fausch KD, Saunders WC. 2005. Tangled webs: reciprocal flows of invertebrate prey link streams and riparian zones. Freshwater Biology 50: 201–220.
4. Carter JL, Resh VH, Hannaford MJ, Meyers MJ. 2006. Macroinvertebrates as biotic indicators of environmental

quality. Pages 805-834 in Methods in Stream Ecology, Second Edition, FR Hauer and GA Lamberti (eds.), Academic Press, New York, NY.

5. Dubey,R.K.1991Studies Studies on fish nutrition with reference to growth in local Cat fish population.A.ph.D thesis, Vikram University Ujjain. India.
6. Kaushal,D.K and Tyagi A.P. 1989Observation on the metameric distribution of Benthos in Govindsagar reservoir ,Himachal Predesh. J.In.fish. Soc.India 21 (1):37-46.
7. Naidu,K.V.and Naidu,K.A1979 Some fresh water Oligochaeta from Kashmir India,proc.Indian Aca.Sci. 88:411-419.1
8. Nakano S, Murakami M. 2001. Reciprocal subsidies: Dynamic interdependence between terrestrial and aquatic food webs. PNAS 98 (1): 167-170.
9. Nedeau E. 2006. Quantitative Study of the Freshwater Mussel Community Downstream of the Surry Mountain Flood Control Dam on the Ashuelot River. Unpublished report prepared for U.S. Army Corps of Engineers, Otter Brook/Surry Mountain Lakes, Keene, NH and U.S. Fish and Wildlife Service, New England Field Office, Concord, NH.
10. Rosenberg DM, Resh VH (eds). 1993. Freshwater biomonitoring and benthic macroinvertebrates. Chapman and Hall, New York, NY.
11. Sabo JL, Power ME. 2002. River-watershed exchange: Effects of riverine subsidies on riparian lizards and their terrestrial prey. Ecology 83: 1860-1869.
12. Stevenson RJ, Rollins SL. 2006. Ecological assessments with benthic algae. Pages 785-804 in Methods in Stream Ecology, Second Edition, FR Hauer and GA Lamberti (eds.), Academic Press, New York, NY.
13. Shukla,A.N.1995 Limnological studies on Gandhi Sagar reservoir with special reference to macrozoobenthos. A ph.D thesis Vikram university , Ujjain , India.
14. Thakial, M.R.1997 Studies on benthos in some habitats of Jammu. A.ph.D thesis submitted to the University of Jammu, Jammu

****

लुप्तप्राय प्रजाति, कडकनाथ (अयम सेमानी) सामान्य अध्ययन

डॉ. ओमप्रकाश सोलंकी *

शोध सारांश – 'कडकनाथ मुर्गा ' नाम भले ही अजीब सा हो, लेकिन मध्यप्रदेश के झाबुआ और धार जिले में पाई जाने वाली मुर्गे की यह प्रजाति यहां के आदिवासियों और जनजातियों में बहुत लोकप्रिय है। इसका नाम 'कडकनाथ' कैसे पड़ा, यह तो शोध का विषय है, लेकिन यह मुर्गा ऊँचा पूरा, काले रंग, काले पंखों और काली टांगों वाला होता है। झाबुआ जिला कोई पर्यटन के लिए विख्यात नहीं है। लेकिन जो भी बाहरी लोग और सरकारी अफसर यहां आते हैं उनके लिए 'कडकनाथ' एक आकर्षण जरुर होता है। इसे झाबुआ का गर्व और काला सोना भी कहा जाता है। जनजातिय लोगों में इस मुर्गे को ज्यादातर बलि के लिए पाला जाता है। दीपावली के बाद, त्यौहार आदि पर देवी को बलि चढ़ाने के लिए इसका उपयोग किया जाता है। इसकी खासियत ये है कि इसका खून और मांस काले रंग का होता है। लेकिन यह मुर्गा दरअसल अपने स्वाद और औषधिय गुणों के कारण मशहूर है। खतरे की बात यह है कि इस प्रजाति के मुर्गो की संख्या सन 2001 में अस्सी हजार थी जो अब घटकर सन 2005 में मात्र बीस हजार रह गई है। सरकार भी यह मानती है कि यह प्रजाति खतरे में हैं और इसे विलुप्त होने से बचाने के उपाय तत्काल किया जाना जरुरी है, ताकि इस बेजोड मुर्गे को बचाया जा सके । कडकनाथ भारत का एकमात्र काले मांस वाला चिकन है। झाबुआ में इसका प्रचलित नाम है 'कालामांसी'। आदिवासियों, भील, भिलालाओं में इसके लोकप्रिय होने का मुख्य कारण है इसका स्थानिय परिस्थितियों में घुल मिल जाना, उसकी 'मीट' क्वालिटी और वजन। शोध के अनुसार इसके मीट में सफेद चिकन के मुकाबले 'कोलेस्ट्रॉल' का स्तर कम होता है। 'अमीनो एसीड' का स्तर ज्यादा होता है। यह कामोत्तेजक होता है और औषधि के रुप में 'नर्वस डिसऑर्डर' को ठीक करने के काम आता है। कडकनाथ के रक्त में कई बिमारियों को ठीक करने के गुण पाए जाते हैं, लेकिन आमतौर पर यह पुरुष हारमोन को बढ़ावा देने वाला और उत्तेजक माना जाता है।

प्रस्तावना – अध्ययन क्षेत्र – झाबुआ मध्यप्रदेश प्रान्त का एक शहर है। पश्चिमी मध्यप्रदेश में स्थित झाबुआ जिला गुजरात के वडोदरा, राजस्थान के बांसवाडा और मध्यप्रदेश के धार व रतलाम जिलों से घिरा है। 16वीं शताब्दी में स्थापित यह जिला बहादुर सागर झील के किनारे बसा हुआ है। 6782 वर्ग किमी. में फैला झाबुआ मूलत: आदिवासी जिला है। यहां मुख्यत: भील और भीलाला आदिवासी जातियां रहती हैं। यह जिला आदिवासी हस्तशिल्प खासकर बांस से बनी वस्तुओं, गुडियों, आभूषणों और अन्य बहुत-सी वस्तुओं के लिए प्रसिद्ध है। नर्मदा यहां से बहने वाली प्रमुख नदी है। झाबुआ इंदौर से लगभग 150 किमी. दूर है।

धार जिला तीन भौगोलिक खंडों में फैला हुआ है जो क्रमश: उत्तर में मालवा, विंध्यांचल रेंज मध्य क्षेत्र में तथा दक्षिण में नर्मदा घाटी। हालांकि घाटी पुन: दक्षिण-पश्चिम की पहाडियों द्वारा बंद होती है। धार जिला भारत के सांस्कृतिक मानचित्र में प्रारंभ से ही रहा है। लोगों ने अपने आपको ललित कला, चित्रकारी, नक्काशी, संगीत व नृत्य इत्यादि में संलिप्त रखा था। इस संपूर्ण जिले में बहुत से धार्मिक स्थल हैं, जहां वार्षिक मेलों के आयोजन में हजारों लोग एकत्र होते हैं। इस जिले का मुख्यालय धार शहर है।

शोध विधि – डिजीटल कैमरे से फोटो मेरे स्वयं के द्वारा लिए गए।

विलुप्ति के कारण – इस प्रजाति के घटने का एकमात्र कारण यह भी है कि आदिवासी लोग इसे व्यावसायिक तौर पर नहीं पालते, बल्कि अपने स्वत: के उपयोग हेतु पांच से तीस की संख्या के बीच घर के पिछवाडे में पाल लेते हैं। सरकारी तौर पर इसके पोल्ट्री फॉर्म तैयार करने के लिए कोई विशेष सुविधा नहीं दी जा रही है, इसलिए इनके संरक्षण की समस्या आ रही है।

कडकनाथ की विशेषताएं – जरा इसके गुणों पर नजर डालें, प्रोटीन और लौह तत्व की मात्रा – 25.7 प्रतिशत , मुर्गे का बीस, हफ्ते की उम्र में वजन 920 ग्राम, मुर्गे का सेक्सूअल मेच्योरिटी 180 दिन की उम्र में मुर्गो का वार्षिक अंडा उत्पादन 105 से 110 (मतलब हर तीन दिन में एक अंडा)। इतनी गुणवान नस्ल तेजी से कम होती जा रही है ।

बचाव के उपाय – इसके लिए आदिवासियों और जनजातिय लोंगों में जागृति लाने के साथ-साथ सरकार को भी इनके पालन पर ऋण ब्याज दर में छूट आदि योजनाए चलाना चाहिए। तभी यह उम्दा मुर्गा बच सकेगा।

चिकेन नानवेज खाने वालों का पंसदीदा व्यंजन है। लोग बाजार से ब्रायलर चिकन लाते हैं, उसे चाव से पकाते हैं, आउंटिग करने भी गए तो रेस्टोरेंट में चिकेन का ही काई डिश मंगवाते हैं। यानि मुर्गा है मांसाहारियों की पहली पंसद। आईये हम बताते हैं मुर्गे की एक स्वादिष्ट नस्ल के बारे में।

कडकनाथ या कालामासी देसी नस्ल का एक मुर्गा है जो छत्तीसगढ़ और मध्यप्रदेश में पाया जाता है। इसकी कुकड कूं की आवाज कडकदार होती है। इस कारण से ही इसे कडकनाथ कहते हैं। कालें पंखों और इसके मांस भी काले होने की वजह से इसे कालामासी कहते हैं। कडकनाथ मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ के भील आदिवासियों का पालतू पक्षी भी रहा है।

कडकनाथ मुर्गे की जाति बहुत सख्तजान होती है। हम सुनते हैं कि पोलट्री उद्योग चिकेन की बिमारियों को लेकर परेशान रहता है और बायलर चिकेन को बहुत सारे वेक्सिन और दवाओं के बल पर पाला जाता है। उसके बाद भी बर्ड फ्लू, रानीखेत जैसी बीमारी पोलट्री, उद्योग को नुकसान पहुंचाते हैं। वहीं कडकनाथ की रोगप्रतिरोधक क्षमता बहुत मजबुत होती है, इसे कोई रोग नहीं होता।

होम्योपेथी जो मांसाहार को ईलाज के लिए अवरोध मानता है वो भी कडकनाथ के मांस को कुछ रोगों के लिए कारगर मानता है।

प्रदेश के झाबुआ और धार जिले में पाया जाने वाला कडकनाथ मुर्गा विलुप्ती के कगार पर है। इस मुर्गे की खास बात इसका खून और मीट है जोकि काले रंग का होता है। जीव जगत में इस प्रजाति के अलावा कोई अन्य मुर्गा नहीं जिसका मीट काला होता हो। सुनने में भले ही यह बात अजीब लगती हो पर यह

* शोधार्थी (प्राणीशास्त्र) अटल बिहारी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

उतना ही रोचक है जितना की इसका टेस्टी मीट, इसकी इसी वजह के चलते वर्तमान में यह तेजी से कम होता जा रहा है। दरअसल कडकनाथ इस मुर्गे की प्रजाति या नाम है। इसका पुरा शरीर काला होता है। साल 2001 में इस मुर्गे की प्रजाति में सहज अस्सी हजार मुर्गे थे जो साल 2012 तक घटकर और भी कम रह गए हैं। विलुप्त होती यह प्रजाति को बचाने के लिए सरकार ने पहल कराते हुए स्थानीय स्तर पर फर्म बनवाए हैं ताकि इसे संरक्षित किया जा सके। एक शोध के मुताबिक कडकनाथ का मीट सफेद चिकन के मुकाबले ज्यादा लाभकारी रहता है। इसमें कोलेस्टॉल का स्तर कम होता है और अमीनों एसीड का ज्यादा। यह सेक्स संबंधी समस्याओं के लिए भी कारगर है जोकि नर्वस मिसआर्डर को ठीक करने के काम आता है। यह प्रजाति संकट में है। हालांकि साल 2003 में कडकनाथ मुर्गो की खरीद फरोख्त पर राज्य सरकार ने बैन लगा दिया है। वर्तमान में प्रदेश के झाबुआ सहित करीब 17 स्थानों पर कडकनाथ कुक्कुट प्रक्षेत्र बनाए गए है जहां इस प्रजाति का संरक्षण कर विलुप्त होने से बचाया जा रहा है। दिल की बीमारी, दमा, क्षय रोग, स्त्री रोग जैसी बीमारियों में मुर्गे की भारतीय प्रजाति कडकनाथ का मांस बेहद लाभदायक होता है। प्रसव के बाद होने वाले भयंकर सिरदर्द से भी यह निजात दिलाता है। कई बीमारियों से लडने में सहायक मुर्गे की इस प्रजाति को बोलचाल की भाषा में कालामासी भी कहा जाता है। केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान के वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ डीपी सिंह ने बताया कि इसमें 18 प्रकार के एमीनों एसीड पाएं जाते हैं। विटामीन बी वन, बी टू, बी सिक्स, बी 12, विटामीन सी और ई नाइसिन, प्रोटिन, वसा, कैल्शियम, फासफोरस, लौह तत्व तथा निकोटिनिक अम्ल पाए जाते है।उन्होंने बताया कि इसका मांस स्त्री रोगों में बेहद लाभकारी है।

मूल्य – विभागीय जानकारी के अनुसार पिछले कुछ महिनों में सेक्स बढाने वाले मुर्गे कडकनाथ की मांग में भारी इजाफा हुआ है। रोजाना कडकनाथ के लिए 150 से अधिक लोग खरीदने के लिए इस संस्थान में पहुंच रहें हैं। सूत्रों की माने तो लोग एक किलो के कडकनाथ के लिए 1 हजार रुपये देने को तैयार है। लेकिन विभाग को केन्द्र सरकार के निर्धारित रेट के हिसाब से बेचना पडता है जो 500 रुपये 700 रुपये तक निर्धारित है। कडकनाथ की मांग सबसे अधिक दिल्ली, पंजाब व चंडीगढ में है।

नईदुनिया समाचार पत्र में छपे आलेख के अनुसार इस प्रजाति की अंतर्राष्ट्रीय कीमत सवा लाख रुपये का एक है।

कडकनाथ – मुर्गो की यह नस्ल मध्यप्रदेश के झाबुआ और धार जिले में पाई जाने वाली प्रसिद्ध प्रजाति यहां के आदिवासियों और जनजातियों में बहुज लोकप्रिय है। इस मुर्गे का काला रंग, काले पंख, और काली टांगे होती है। वैज्ञानिकों का कहना है कि फाइब्रोमेनानोसिस के कारण इस प्रजाति के जीवों के मांस का रंग काला होता है। इसे झाबुआ का गर्व और काला सोना भी कहा जाता है। जनजातिय लोगों में इस प्रजाति को ज्यादातर बलि के लिए पाला जाता है। दीपावली के बाद त्योहार आदि पर देवी को बलि चढाने के लिए इसका उपयोग किया जाता है। इसकी खासियत यह है कि इसका खून और मांस काले रंग का होता है। लेकिन यह मुर्गी दरअसल अपने स्वाद और औषधीय गुणों के लिए अधिक मशहूर है। शोध के अनुसार इसके मीट में सफेद चिकन के मुकाबले कोलेस्ट्रॉल का स्तर कम होता है। अमीनो एसीड का स्तर ज्यादा होता है। यह कामोत्तेजक होता है और औषधी के रुप में नर्वस डिसऑर्डर केा ठीक करने में काम आता है। कडकनाथ के रक्त में बिमारियों को ठीक करने के गुण पाए जाते हैं। लेकिन आमतौर पर यह पुरुष हारमोन को बढावा देने वाला और उत्तेजक माना जाता है । इस प्रजाति के घटने का एक कारण यह भी है कि आदिवासी लोग इसे व्यावसायिक तौर पर नहीं पालते बल्कि अपने स्वत: के उपयोग हेतु घर के पिछवाडे में पाल लेते हैं। कडकनाथ भारत का एकमात्र काले मांस वाला चिकन हैं। झाबुआ में इसका प्रचलित नाम है 'कालामांसी' आदिवाासियों भील, भिलालों में इसके लोकप्रिय होने का मुख्य कारण हैं इसका स्थानीय परिस्थितियों में घुलमिल जाना, उसकी 'मीट', क्वालिटी, और वजन। कडकनाथ या कालामांस देसी नस्ल की मुर्गी है। जो छत्तीसगढ और मध्यप्रदेश में पाई जाती है। इसके कूकड कूं की आवाज कडकदार होती है। इस कारण से ही इसे कडकनाथ कहते है। काले पंजों और उसके मांस के भी काले होने की वजह से भी इसे कालामासी कहते है। कडकनाथ मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ के भील आदिवासियों का पालतू पक्षी रहा है। बाजार में कडकनाथ 550 से 600 रुपये किलो की दर से बिक रहा है। इस प्रकार इसे विशेष ऑर्डर पर झाबुआ से मंगवाया जाता है।

कडकनाथ के मांस में प्रोटीन 18–20 प्रतिशत के होती है। कोलेस्ट्रॉल 0.73 से 1 प्रतिशत जबकि सफेद चिकन में यह 13 से 24 प्रतिशत तथा लौह तत्व 26 प्रतिशत पाया जाता है । कडकनाथ के अंडे का उपयोग आदिवासी सिरदर्द प्रसव के बाद होने वाले सिरदर्द, अस्थमा, गुर्दे की सूजन आदि के ईलाज में उपयोग किया जाता है। कडकनाथ के रक्त में मेलेनिन पिगमेंट, हृदय में रक्त प्रवाह बढ़ने का कार्य करता है। ठीक वैसे ही जैसे कि वियाग्रा या सिलडेनाफिल सिडट्रेट वासोडिलेटर का काम करते है।

लाभ – अलीराजपुर के चतरसिंह खेमला ने वर्ष 2008 में आत्मा परियोजना के अंतर्गत नवाचार कार्यक्रम के तहत कडकनाथ मुर्गी पालन की दो ईकाई स्थापित की। शुरुआत में चतरसिंह ने जीवन यापन के उद्देश्य से स्थापित की थी, मगर राज्य स्तरीय भ्रमण कार्यक्रम के दौरान 8 से 12 सिंतबर को किसानों को गुजरात भ्रमण के समय गांधीनगर में आयोजित एक कार्यक्रम में कडकनाथ मुर्गी पालन में उन्हें राज्य स्तरीय पुरस्कार दिलवाया। चतरसिंह को यह पुरस्कार गुजरात सरकार ने 11 सिंतबर को प्रदान किया । 16 सिंतबर को कलेक्टर श्री एमपी डेहरिया ने सांकेतिक रुप से पुरस्कार के रुप में शिल्ड व 51000 रुपये का चैक प्रदान किए।

शासन की योजना – इस योजना के अंतर्गत अनुसूचित जाति वर्ग के लोगों को कुक्कुट पालन के माध्यम से उसकी आर्थिक स्थिति में सुधार लाने तथा कडकनाथ नस्ल के संरक्षण के साथ साथ उनका पोषण स्तर बढाने के उद्देश्य से हीतग्राहियों को 15 दिवसीय 55 कडकनाथ नस्ल के चूजें / कूक्कूट आहार/औषधी एवं परिवहन ०' प्रति ईकाई कुल राशि रुपये 1500 का प्रावधान है जिसमें 80 प्रतिशत राषि रु 1200/– तथा हितग्राही अंशदान राशि 20 प्रतिशत राशि रु. 300/– जमा कराकर हितग्राहियों का योजना लाभ दिया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. hhttp://blog.sureshchiplunkar.com/2007/08/blog-post_02.html
2. hhttp://www.rashtriyakhabar.net
3. hhttp://citychiefnews.copm/ShowNews.aspx?nid=1015
4. hhttp://article.wn.com/view/WNAT3d11cc315777a1d3bd85d803124c64fb
5. hhttp://agritech.tnau.ac.in/animal_husbandry/ani_chik_breeds%20of%20chiken.html
6. http://dainiksavera.com/innerpage.aspx?story_ID=12098#sthash.vijSBJU9.dpuf
7. hhttp://drashokakela.blogspot.in/2014/05/blog-post_14.html
8. hhttp://www.mpdah.gov.in/09-10/default.aspx
9. hhttp://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%9D%E0%A4%BE%E0%A4%AC%E0%A5%81%E0%A4%86
10. http://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%A7%E0%A4%BE%E0%A4%B0_%E0%A4%9C%E0%A4%BF%E0%A4%B2%E0%A4%BE
11. नईदुनिया समाचार पत्र दिनांक 7 सितंबर 2014 का पृष्ठ क्रमांक 10।

****

भारतीय परम्पराओं और साहित्य में पर्यावरण एवं जैव विविधता संरक्षण

डॉ. सुधा श्रीवास्तव *

शोध सारांश – जगत श्रृष्टा ने सभी जीवों को उपभोगार्थ विभिन्न पदार्थ उदारतापूर्वक प्रदान किये हैं जिन्हें केवल अनासक्त होकर विवेकपूर्ण ढंग से उपभोग करना चाहिए यदि उनकों निर्मूल करने की चेष्टा की तो प्रकृति रुष्ट होकर दैहिक, दैविक और भौतिक तापों में वृद्धि कर देगी। इसके उदाहरण अतिवृष्टि, अनावृष्टि, अकाल, सुखा, महामारी इत्यादी हैं।

प्रस्तावना – मानव जीवन पूर्णतया नैसर्गिक शक्तियों पर आधारित है –वेदों में प्राकृतिक शक्तियों की प्रसन्नता एवं सुख समृद्धि की प्राप्ति के लिये स्तुतियों का विधान है।

प्रकृति पर विजय की कामना से हट कर भारतीय दृष्टिकोण में प्रकृति सर्वदा से पूजनीय रही है। जल, थल, वायु, अग्नि वनस्पति आदि सभी प्रकृति के तत्वों में देव का निवास होता है। इन सभी को पावनता एवं सम्पन्नता से सुसज्जित रखना मानव का परम धर्म है एवं इनके देवी पूजन का भी रामचरित मानस में स्पष्ट उल्लेख है। सम्पन्न होने पर प्रकृति स्वत: मानव समाज की समस्त मनोकॉमनाऐं पूर्ण करती है।

फूलहिं फरहिं सदा तरु कानन।
श्रहहिं एक संग गज पंचानन।। रा.च.मा. 7–22–1
लता विटप मांगे मधु चवहीं।
मन भावतो धेनु पय स्रवहीं ।। रा.च.मा. 7–22–5
विधु महिपूर मयूखन्हि, रबि तप जेतनेहि काज।
मांगे वारिद देहि जल, रामचन्द के राज।। रा.च.मा. 7–23

वेदों में पर्यावरण – पर्यावरण संरक्षण में वैज्ञानिक शोधो का आश्रय लेकर आज अधिक से अधिक वृक्षों को लगाने की बात कही जा रही है। इस संबंध में हमारे अथर्ववेद, वराहपुराण एवं मत्स्यपुराण में लिखा है। अथर्ववेद के अनुसार वृक्ष लगाना पुनीत कार्य है, साथ ही वृक्षों के कर्तन के परिणाम स्वरुप यदि प्राकृतिक असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हुई तो पृथ्वी इसे गंभीरता से लेती है। वराहपुराण के अनुसार जो व्यक्ति वृक्षारोपण कर उसकी सार्वभौमिक रक्षा करता है तो वह मोक्ष प्राप्त करता है।

मत्स्यपुराण में तो वृक्षों को काटने वाले के लिये दण्ड विधान की चर्चा है। मत्स्यपुराण में एक वृक्ष को 10 पुत्रों के बराबर माना गया है। इसी क्रम में वृक्षों–वनस्पतियों में देवत्व की प्रतिष्ठा की है। शारंगधर पद्धति में भिन्न–भिन्न वृक्षों के आरोपण के भिन्न–भिन्न फल बतलाऐं गए है। गोस्वामी तुलसीदास के अनुसार प्राकृतिक पर्यावरण के विभिन्न प्रकारों का वर्णन प्रसंग अनुसार मानस में विस्तृतरुप से किया गया है। धरती, अंतरिक्ष अग्नि, वायु, पर्वत, वन, वृक्ष पवन, वनस्पतियाँ, नदी, जल, जलाशय, समुद्र, पशु, पक्षी, नभचर, जलचर, ग्रह, नक्षत्र, आदि।

जैव संरक्षण –भारतीय परम्परा में जैव संरक्षण पर पर्याप्त बल दिया गया है। वेदों में पद–पद पर देवी–देवताओं से जीव–जन्तुओं की रक्षा के लिये प्रार्थना की गई है। अथर्ववेद में तो पशुओं के लिये प्रयुक्त होने वाले अन्न एवं जल को पूर्णत: स्वच्छ रखने की बात कही है, पशुओं के जल पीने के स्थान को गंदगी से मुक्त होना चाहिये।

मनुस्मृति में जैव विविधता संरक्षण –मनुस्मृति में कहा गया है भूमि पर विचरण करने वाले सूक्ष्म जीव–जन्तुओं की रक्षार्थ हमें विचरण करते समय पूर्ण सावधानी रखनी चाहिये। मनुस्मृति में जीवों को बंधन में डालने से भी मना किया गया है। देवताओं के वाहन पशु होने का अर्थ उन जीवों के प्रति आदर भाव रखना है।

जैसे – गणेश का मूषक, ब्रम्हा का हंस, विष्णु का गरुड़, शंकर का वृषभ।

मनुस्मृति में जीव–जन्तुओं की हत्या करने वाला, पकाने वाला, खरीदने वाला, बाटने वाला तथा खाने वाला सभी को जीव हत्या का देशी माना गया है। जीव हत्या करने वाले के विषय में **कौटिल्य का अर्थशास्त्र** में विभिन्न प्रकार की दण्ड विधाऐं बताई गई है। पक्षी, मछली, मृग, गेंडा, भैंसा तथा मोर इत्यादी अहिंसक प्राणियों को पकड़ने तथा प्रहार करने या मारने वाले व्यक्तियों को पौने सत्ताईस पण का दण्ड दिया जाए। यदि कोई गाय को मारे या किसी से मरवाऐं उसकी चोरी करे या करवाऐं उसे प्राण दण्ड दिया जाना चाहिये। इन उद्धरणों से स्पष्ट है कि हमारी परम्पराओं एवं मान्यताओं में पर्यावरण एवं जैव संरक्षण पर पर्याप्त महत्व दिया गया है।

रामचरितमानस में पर्यावरण –रामचरितमानस में बौद्धिक, मानसिक, आध्यात्मिक, राजनीतिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक आदि सभी से संबंधित पर्यावरण चिंतन उत्कृष्ट एवं पावन रुप से प्रस्तुत हैं, जो आज भारतीय समाज के लिए चिंतनीय एवं अनुकरणीय है।

मानस के अनुसार प्राकृतिक सम्पन्नता धरती के स्थायित्व का मूल आधार है। प्रकृति के विभिन्न अंगो की उपेक्षा धरती को मरुस्थल बना देती है।

स्थलीय पर्यावरण एवं जीवन –रहने की धराधाम, खाने को खाद्यान्न, पहनने को वस्त्र, जीवन रुप जल एवं प्राणवायु आदि सभी मनोरंजन के लिए अपरिमित साधन प्रकृति द्वारा समाज को उपलब्ध कराये गये है।

रामचरितमानस में पर्यावरण व्यवस्था –रामचरितमानस में प्राय: सभी राजाओं के द्वारा अपने–अपने राज्य में प्रकृति के अंग के संवर्धन, सरंक्षण तथा उसे फलीभूत करने के उपक्रम का वर्णन है। रामराज्य की प्रजा के सभी लोग उद्यानरुप सुमनवाटिका लगाते हुए तथा सुंदर–सुंदर पक्षियों को संरक्षण देते हुए वर्णित किये गए हैं

* प्राध्यापक (प्राणीशास्त्र) शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

वन, उपवन तथा धरती रामराज्य में परम सम्पन्न दिखाये गए है। सरिता सुरम्य जल से बहती हुई प्रदर्शित है। यहां तक कि राक्षसों की लंका में भी वन, बाग, उपवन, वाटिका, सरोवर, कूप एवं वापी आदि की बहुतायत है।

जनसंख्या नियंत्रण –प्राकृतिक प्रदूषण का मुख्य कारण बढ़ती हुई जनसंख्या का भी रामचरितमानस में निदान बताया है। सीमित एवं संस्कारिक संताने एवं दो संतान पर ही जोर दिया गया।

दुई दुई सुत सब भ्रातन्ह केरे।
भए रुप गुन सील धनेरे।। रा.च.मा. 7–24–8

इन उद्धरणों से स्पष्ट है कि भारतीय परम्पराओं में पर्यावरण एवं जैव संरक्षण को पूर्णत: महत्व दिया गया है। यदि यह कहे कि परम्पराऐं बनी ही पर्यावरण संरक्षण के लिये हैं तो गलत नहीं है।

चातुर्मास एवं पर्यावरण संरक्षण –जैव संरक्षण के संबंध में हमारी परम्परा अनुसार देवशयनीय एकादशी के बाद आने वाले समस्त आराधना दिवस में पर्यावरण से प्राप्त वनस्पतियॉ, फूल, फल एवं जन्तुओं की रक्षा से सीधा संबंध है।

जैसे हरियाली अमावस्या में पौधारोपण एक उत्सव के रुप में, नागपंचमी में नागों की सुरक्षा हेतु, हलक्षट में सारी खरपतवार की पूजन, गौवत्स द्वादशी पर गाय एवं बछड़े की पूजन, तेजा दशमी में नाग एवं घोड़े की पूजन, हरतालिका तीज में वे सारी वनस्पतियाँ जो उस समय वन, बाग, उपवन में आती है, शिव पूजन में आवश्यक होती है, गणेश चतुर्थी में द्रुप घास का महत्व, ऋषि पंचमी पर आंधीझाड़ा का महत्व बताया गया है।

वर्षा ऋतु समस्त जीव–जन्तुओं का ब्रीडिग एवं परिवर्धन का समय होता है इसलिये इन उत्सव में उपयोग की हुई वनस्पतियां एवं पकवान का जल में विसर्जन करना जलीय जन्तुओं की भोजन संबंधी आवश्यकता की आपूर्ति करना है।

श्राद्ध पक्ष में मौसम के परिवर्तन होते ही श्राद्ध के नाम पर सभी पशु–पक्षियों को भोजन देने की परम्परा के पीछे भी जैव संरक्षण का चिंतन ही है।

शिव परिवार जैव विविधता संरक्षण का सुंदर उदाहरण – शिव परिवार की स्थापना एक पारिवारिक संबंधों की मधुरता एवं एक ही स्थान पर नंदी, नाग, सिंह, मोर एवं मूषक का होना एक जैव विविधता की सुंदर विधान का उत्तम उदाहरण है।

समाधान – इन परम्पराओं के नाम पर जो जल संसाधनों में बढ़ती हुई गंदगी के पीछे दूर–दर्शिता की कमी अवश्य समझ में आती है। तत्कालिन चिंतको ने इस तरह जनसंख्या विस्फोट पर शायद मंथन नहीं किया होगा इसलिये संसाधनों की सुरक्षा वर्तमान परिस्थिति में एक महत्वपूर्ण विषय है, इस विषय पर विचार होना चाहिये।

इस पर हमें समय के अनुसार सुधार करना गलत नहीं है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. रामचरितमानस प्रकाशक – गीता प्रेस, गोरखपुर।
2. संस्कृत साहित्य में पर्यावरण चेतना, धनन्जय वासुदेव द्विवेदी श्रीकृष्ण साहित्य सदन।

****

A study on problems experienced by adolescents in slum areas of udaipur city

Dr. Suman Audhicya * Ranveer Kour * *

Abstract - The study was an attempt to assess and compare the problems experienced by slum boys and girls (14-18) years of age. The total sample for the present study consisted of 60 boys and 60 girls between the age of 14-18 years, studying in government schools of slum areas of Udaipur city. The inventory constructed by Bhateja and Nandwana (2001) was used to identify the problems experienced by adolescents in slum areas. The findings indicate that the problems experienced by most of the subjects in all five areas were at moderate extent. In personal and health areas girls experienced more problems than boys. Significant differences were found between boys and girls of 14-18 years in personal and health area.

Keys words-Adolescent, Family problems, School problems, Social problems, Health problems: Personal problems

Introduction- The adolescence period is defined with in the time period of 10 year to 19 years (Goodburn and Rose, 1995).

The adolescence period is featured by dramatic physiological changes that in practice leading them to move forward from a child to an adult. Hence, adolescence period is a transitional period, where an individual reaches to the physical maturity. During this period, an individual passes through many inter related changes of body, mind and social relationships. The adolescents body grown in size, strength, stamina and reproductive capacity and becomes more defined, psychologically and emotionally. The person becomes more capable of abstract thinking, develops more mature aspects of critics, morality, empathy and some remote features of future orientation and self-awareness or identity. (Friedman, 1992).

* Professor, Dept. of Human Development and Family Studies, College of Home Science, MPUAT, Udaipur

** Research scholar, Dept. of Human Development and Family Studies, College of Home Science, MPUAT, Udaipur

During the period of adolescence, many changes they feel unsure and scared of going through. Adolescents have to passing through an unstructured and ill-defined phase. It is a time when individual is erratic, emotional and unpredictable. Due to rapid physical changes, adolescent's state that it is period of change and these change for the most part unfavorable and are expressed in confusion, feeling of insecurity and anti attitudes towards life leading to certain problems.

Although, all these problems are faced by adolescents in every social class. Studies have suggested that adolescents from lower socio economic status face different problems than that of higher socio economic status due to lack of family and community support and the deprivation of facilities they face, lead them to frustration. (Hollingshead, 1999). Lower socio economic classes or slums environment makes the status of the adolescents more miserable and more vulnerable to maladjustment and delinquency, which are the general problems faced by the slum dwelling families.

Thus, the study is an effort at micro level to identify the problems experienced by adolescent boys and girls living in slum areas and may help the parents, teachers and school administrations to know about the problems of school going slum adolescent boys and girls. The study will be helpful for parents to maintain effective interaction and good communication with children, which will help to gear the development of adolescents in a positive way. Thus the study was undertaken in the light of following objectives.

Objectives -

1. To identify the problems experienced by adolescent boys and girls in the age range of 14 to 18 year in family, school, social, health, and personal areas.
2. To compare the problems experienced by adolescent boys and girls in family, school, social, health and personal areas.

Material and method - The study was conducted in the slum areas with in the municipal limits of Udaipur city, Rajasthan. The total sample for the present study consisted of 60 boys and 60 girls between the age ranges of 14-18 years, thus making a total of 120 respondents. The inventory constructed by Bhateja and Nandwana (2001), which was modified by the investigator and used to identify the problems experienced by boys and girls in adolescence years.

Results and discussion - Table 1 shows the percentage distribution on problems experienced by girls and boys between the age of 14-18 years. It is clearly shown in the table that majority of the girls of 14-18 year experienced the problems at a moderate extent in all areas except health area. Further 30 percent to 50 percent girls experienced the problems at higher extent in four areas i.e. family, school, social and personal areas but 73.33% girls experienced the problems at a higher extent in health area.

This may be due to the reason that in Indian society girls do not feel comfortable when they talk about health aspect especially about reproductive health. They feel shy, embarrassed and uncomfortable and are hence non

* Professor (Human Development and Family Studies) College of Home Science, MPUAT, Udipur (Raj.) INDIA

** Research scholar (Human Development and Family Studies) College of Home Science, MPUAT, Udipur (Raj.) INDIA

communicative and do not actively participate in open discussion related to health area.

Chakravarty's (1998) study also revealed that girls face more problems in health related aspects due to inadequate care, neglect and malnutrition, poor access to health services, nutrition and education especially in the slum areas.

Table 1: (See in below)

Table further revealed that majority of the boys of 14-18 years of age experienced the problems at a moderate extent in all five areas. Further 21 percent to 28 percent boys experienced problems at a higher extent in family, school, personal and health areas but in social area 40 percent boys experienced the problems at a greater extent. This may be due to the reason that today adolescents are confront with very complicated situation. He has more contact with the outer world. Too much is being expected from the adolescent. He needs more conformity in his group as well as in his own society. With more complex responses adolescent is under great pressure to achieve, to participate and to do well in all types of activities. He is conscious of his self and his socio economic status. All these aspects piled up and this creates catastrophies in all the areas, particularly in social area. Thus, now a day adolescent boys are facing severe social problems (Yadav, 1989).

Table 2: 'z' values of problems experienced by boys and girls between the age of 14-18 year in different areas

N=60

S. No.	Areas	'z' value calculated
1.	Family	1.40
2.	School	1.18
3.	Social	1.45
4.	Personal	2.06*
5.	Health	6.01**

Note-* Significant at 0.05 percent level

** Significant at 0.01 percent level

The z values for selected areas are presented in table 2. Table reveals that in all selected areas significant difference between boys and girls in the age group of 14-18 years were found only in two areas i.e. personal (2.06*) and health (6.01**) at 0.05 percent and 0.01 percent level of significant. Table further indicates that in personal area slum adolescent girls face more problems as compared to boys. Girls are engaged in household chores, besides being casual workers in the field. The social attitude toward girls is very negative. They are not given an adequate share of nutritional resources, nor any scientific education on matters of sex, health care and access to proper hygienic environment hygiene. The onset of puberty also brings several restrictions for girls for fear of security. All this and several cultural biases inculcate a low self-image in girls (Kumari, 1995).

In health related area girls experienced more problems due to poor health and nutritional status, lack of information and knowledge among girls about reproductive health related issues. Poverty, malnutrition ignorance, unsanitary environment and lack of safe drinking water, population growth and rapid urbanization with attendant overcrowding, poor housing and environment deterioration have worsened the situation. (Chand, 1999)

Thus it can be clearly seen from the results that slum boys and girls experienced the problems at a higher extent in health, social and personal areas.

Conclusion - It can be concluded from the results that girls experienced more problems in health area at higher extent whereas boys experienced more in social areas. Significant difference was observed between boys and girls in personal and health areas. Various factors which are responsible for having more problems in health personal and social areas may be that slums are usually most deprived section of the urban community. They are economically, socially and educationally backward. Basically parents of adolescents having no education, skills and work experience, which adversely affect the adolescents and make them vulnerable to maladjustment and delinquency.

References -

1. Bhateja, T. and Nandwana, S. 2001. Adolescents problems inventory. Identification of problems experienced by rural adolescent girls between the age range of 11 to 16 years. M.Sc. thesis submitted to Maharana Pratap University of Agriculture and Technology, Udaipur, Rajasthan.
2. Chand, D.1999. Housing of rural poor. Social Change.**20**: 361-362
3. Chakravarty, M.1998. Neglect, cruelty and wastage of human resources: The girl child. Indian Anthropologist.**28**: 9-20.
4. Friedman, H.L.1992.Changing pattern of adolescent sexual behaviour: consequences of helath and development. Journal of adolescent health **13**:345-350.
5. Goodburn and Rose, 1995. http://www.blogger.com. Physical and social development of adolescents.
6. Hollingshead, 1999. Child development. Holt and Winston publisher, New York, pp.417.
7. Kumari, R. 1995. Rural female adolescence. Indian scenario. Social Change. **25**: 177-188.
8. Yadav, S. 1989. An exploratory study on the identification of problems experienced by school going adolescent boys between the age range of 12-16 years of Udaipur city. M.Sc. thesis submitted to Maharana Pratap University of Agriculture and Technology Udaipur, Rajasthan.

Table 1: Percentage distribution of problems experienced by Girls and Boys between the age of 14-18 years in different areas

S. No.	Areas	Girls 14-18 years (n=60)			Boys 14-18 years (n=60)		
		Low extent	Moderate extent	High extent	Low extent	Moderate extent	Highe xtent
1	Family	-	58.33	41.66	-	75	25
2	School	-	70	30	-	78.33	21.66
3	Social	-	50	50	-	60	40
4	Personal	-	61.66	38.33	3.33	68.33	28.33
5	Health	-	26.66	73.33	1.66	70	28.33

Personality Differences In Adolescents Of Normal And Broken Families

Dr. Abha Tiwari * Krishna Choudhary **

Abstract - The objective of present research work is to study the effect of broken families on personality of adolescent boys and girls of rural and urban areas. The study was conducted taking 480 samples of boys and girls from broken and normal families of rural and urban areas of Hanumangarh district, Rajasthan, of North India. Singh's Differential Personality Inventory (SDPI) (Singh Arun Kumar and AshishKumar2002) was used to measure the personality traits. The results indicated a significant effect of broken families on some personality traits of adolescent boys.

Introduction - Family is the first line of defense especially for children and plays a central role in their survival, health, education, development and protection. It has some fundamental tasks of nurturance, emotional bonding, socialization and regulation of sexuality, to establish a sense of identity, negotiating role in terms of division of duties and decision-making. It has major potential to provide stability and support **(Desai, 1995).**Now-a-days, a family could be of two forms, complete or broken. A broken family is believed to be the cause of child's mislead in life. Separations, family problems, death of one parent, and misunderstandings from the family are the major causes of single - parent or broken families. Good relationship with parents and siblings may build a strong relationship in a family, which can develop proper behavior of a person. The behavior of a person can also affect their relationship with the family.

Adolescence is defined as the period of transition between childhood to adulthood that involves biological, cognitive, and socio-emotional changes and overall personality changes. It is the period of rapid and complex physical and psychological changes. Adolescent is the most vulnerable age for development, which faces many changes due to emergence of puberty and abstract reasoning, which help in budding out of a different kind of personality **(Larson, et. al. 2002)**.So at this stage they need proper guidance and good atmosphere at home.

Broken families have several effects on adolescents, like they might feel guilty or responsible for the divorce, they may become increasingly aggressive, violent and/or non-cooperative, lashing out at both parents, may become emotionally needy out of fear of being abandoned, may lose the ability to concentrate which results in poor academic performance, and may develop intense feelings of grief and loss, exhibit anti-social behavior as well as other behavioral problems, may suffer from drug and/or alcohol addictions.

Burton (2012) reports that parents marital problems can leave a lasting impact on their young children. Researchers found that when young children witnessed conflict between their parents, this eventually leads to issues in their teenage years, including depression and anxiety. "The results further highlight the possibility that there will be persistent negative effects of children's early experiences when there is conflict between their parents, at least when their emotional insecurity increases as a result of the conflict," according to Mark Cummings, Notre Dame Endowed Chair in Psychology, who led the research**. Moon (2011)** finds that the self-interests and personal experiences associated with marital status influence perceptions of the effects of divorce on children. **Anjali (2005)** reports that conflicts in family, unbalanced nutrition, less of exercise, separated father and mother, extreme protection and punishment, lack of proper sexual education and hormonal changes are responsible for the stress. In the study by **Praveen Kumar Jha (2002),** it was found that self-confidence and emotional maturity were positively associated with vigilant style of decision making in case of executives.

Objectives -

1. To study personality of adolescent (boys and girls) of normal and broken families.
2. To study and compare the personality (decisiveness, responsibility, emotional stability, masculinity, friendliness, true sensuality, ego strength, curiosity, dominance self concept) of adolescent boys and girls of normal and broken families.
3. To study gender differences in personality (decisiveness, responsibility, emotional stability, masculinity, friendliness, true sensuality, ego strength, curiosity, dominance self concept) of adolescent boys and girls of normal and broken families.

Hypothesis -

1. There will be no difference in personality of adolescents (boys and girls) of normal and broken families.
2. The adolescent boys and girls have no significant difference in personality (decisiveness, responsibility,

* Professor and Head, Human Development, Govt. M.H. College of Home Sci. & Sci. for women (Auto.) Jabalpur (M.P.)
** Research Scholar, Govt. M.H. College of Home Sci. & Sci. for women (Auto.) Jabalpur (M.P.) INDIA

emotional stability, masculinity, friendliness, true sexuality, ego- strength, curiosity, dominance, self concept) of normal and broken families.

3. There will be no gender differences in personality (decisiveness, responsibility, emotional stability, masculinity, friendliness, true sexuality, ego-strength, curiosity, dominance, self concept) of adolescents (boys and girls) of normal and broken families.

Methodology - The study was conducted on 480 boys and girls from broken and normal families of rural and urban areas of Hanumangarh district, Rajasthan,of North India. Adolescents (boys and girls) belonging to normal and broken families, studying in 9th and 10th class at Government and private schools of urban as well as rural areas were selected for research. Data was collected through survey method.

Tools -

Questionnaire for general information - A questionnaire for general information of the candidates used which included questions related to personal and socio-economic variables.

Singh's and Singh's differential personality inventory: The tool developed by Singh and Singh (2002) was used to measure the personality of the adolescents**.**

Data Processing and Analysis - Data was computerized, analyzed and interpreted by using frequency distribution, percentage, Z test etc.

Results and Discussion - Comparative assessment of adolescent's personality traits is done on the basis of gender and type of families in urban and rural areas. Personality traits of adolescent boys and girls in normal family reveals significant differences in few of the personality traits i.e. responsibility (Z= 2.17), masculinity (Z= 2.94) , friendliness (Z= 2.80), dominance (Z= 4.06) at 5 per cent level of significance. Result related to broken families reveals significant difference in friendliness (Z= 3.00), dominance (Z= 3.01), and self respect (Z= 2.11). Adolescent from normal families scored high mean values than broken families. This reveals that family atmosphere affect the personality of adolescent , mean score of boys and girls reveals that boys scored more than girls, only in aspect of responsibility, girls scored higher than boys irrespective of the type of families. This means that adolescents living in normal families were more or less similar in their personality.

Differences in personality of adolescent boys and girls of normal and broken families in rural and urban areas (Table See)

Conclusion - Result reveals that personality of adolescent boys was significantly higher on Masculinity, friendliness, dominance. Further girls were having higher level of responsibility in normal families. Result related to broken families reveals that boys scored higher mean values than girls in friendliness, dominance, self concept. However boys of normal families scored higher mean values than other categories. The reasons of these findings might be basically the prevalence of sophisticated rearing of girl which produce a more dependent personality, attention seeking, and the disorganization in family make them more irritated and frustrated.

References -

1. Burton, N. (2012). Divorce Effect On Kids: Do You Wish Your Parents Had Split? The Huffington Post. http://www.huffingtonpost.com/natasha-burton/divorce-effect-on-kids_b_1601627.html.
2. Desai, M.1995. Towards family policy research. Indian Journal of Social Work, 56:225-231.
3. Larson, R.W. and Gillman, S.2002.Transmission of emotions in the daily interactions of single-mother families. American Journal of Sociology. 61 (1) :21-37.
4. Lauer, R. H. & Lauer, J. (2000). Marriage and Family . Sydney: UNSW Press.
5. Moon, M. (2011). The effects of divorce on children: Married and divorced parents' perspectives. Journal of Divorce & Remarriage, 52 (5), 344-349.
6. Praveen Kumar Jha (2002). The Function of Self Confidence and Emotional Maturity in Decision Making Styles of the Executives, Journal of Community Guidance and Research, 19, 419- 422.

Sr. No.	Variable / Personality aspects	Normal families (n=240)		'Z'	Broken families (n=240)		'Z'
		Boys (n= 120) ($\bar{X}\pm$ SD)	Girls (n=120) ($\bar{X}\pm$ SD)		Boys (n= 120) ($\bar{X}\pm$ SD)	Girls (n=120) ($\bar{X}\pm$ SD)	
1	Decisiveness	11.24±1.68	11.28±1.33	0.62	10.80±1.62	10.49±1.71	0.44
2	Responsibility	11.99±1.37	12.86±1.60	2.17*	11.51±1.34	12.06±1.37	1.80
3	Emotional stability	10.41±1.80	10.25±1.93	1.05	10.16±1.68	09.38±1.75	1.46
4	Masculinity	11.73±1.94	10.72±1.94	2.94*	10.39±1.62	09.46±1.96	1.88
5	Friendliness	12.77±1.63	12.00±1.46	2.80*	12.23±1.89	11.00±1.73	3.00*
6	Heterosexuality	11.00±2.19	10.80±2.33	0.29	10.80±1.91	10.48±2.15	1.06
7	Ego strength	10.83±1.76	10.95±1.90	1.61	10.58±2.60	10.07±1.55	0.99
8	Curiosity	11.76±1.40	11.15±1.37	1.13	11.34±1.28	10.75±1.72	1.54
9	Dominance	11.41±1.86	10.41±2.17	4.06*	11.12±1.35	09.85±1.41	3.01*
10	Self concept	10.26±1.57	10.06±1.84	0.68	10.06±1.69	09.30±1.32	2.11*

*significant at 0.05 level

****

प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाओं के पहनावे के चयन का अध्ययन

डॉ. आभा तिवारी * वीणा श्रीवास्तव * *

शोध सारांश – इस शोध में निम्न सामाजिक–आर्थिक वर्ग की प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाओं के पहनावे के चयन पर माता–पिता, विज्ञापन एवं मित्रों के प्रभाव का अध्ययन किया गया है। इस वर्ग की 90 छात्राओं का यादृच्छिकी विधि द्वारा प्रतिचयन किया गया। प्राप्त परिणामों के अनुसार पहनावे का चयन माता–पिता से प्रभावित पाया गया व पहनावे के चयन पर टीवी आदि के विज्ञापन या मित्रों का प्रभाव नहीं पाया गया।

प्रस्तावना – प्रारंभिक किशोरावस्था, बाल्यावस्था एवं उत्तर किशोरावस्था के बीच की अवस्था होती है, जिसमें एक विकासशील किशोर बाल्यकाल से परिपक्वता की ओर अग्रसर होता है। प्रारंभिक किशोरावस्था एक ऐसी अवस्था है, जब किशोर स्वयं को बच्चा नहीं समझता है और बाल्यकालीन व्यवहार को छोड़कर वयस्क व्यवहार को सीखना चाहता है। ऐसी अवस्था में किशोर पर आसपास के वातावरण, माता–पिता, मित्र, भाई–बहन, विज्ञापन आदि का प्रभाव पड़ने लगता है।

पहनावा एक प्रमुख सामाजिक व्यवस्था है। वस्त्र का उपयोग शरीर की रक्षा, व्यक्तित्व को आकर्षक बनाने आदि हेतु सामाजिक–आर्थिक स्थिति के अनुसार होता है। किसी परिवार का सामाजिक–आर्थिक स्तर उसकी आमदनी, शैक्षणिक स्तर व व्यवसाय पर आधारित होता है। प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु ऐसे परिवार की प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकओं को लिया गया है, जिनके परिवार का व्यवसाय मजदूरी है एवं दैनिक कार्य द्वारा आमदनी अर्जित करते हैं। चयनित परिवारों का अधिकतम शैक्षणिक स्तर कक्षा 10 वीं तक है। जे. टुरसीनकोवा एवं जे. मोयईसीडिस(2011) द्वारा चेक रिपब्लिक में अपने शोध अध्ययन, जो 13 से 19 वर्ष के किशोरों पर उनके पहनावे के चयन पर ब्राण्ड , मित्रों व माता–पिता के प्रभाव का अध्ययन किया गया व यह पाया गया कि इस वर्ग के किशोरों के पहनावे का चयन उनके माता–पिता से प्रभावित रहता है व ब्राण्ड या मित्रों का प्रभाव नहीं पड़ता।

उपरोक्त अध्ययन व पहनावे का सामाजिक व्यवस्था की आवश्यकता के दृष्टिगत निम्न सामाजिक–आर्थिक वर्ग की प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाओं का पहनावे के चयन पर अध्ययन समीचीन है। निम्न सामाजिक–आर्थिक वर्ग की बालिकाओं के पहनावे के चयन पर माता–पिता, टीवी आदि पर आने वाले विज्ञापन एवं मित्रों के प्रभाव का अध्ययन किया गया है।

चर –

स्वत्रंत चर	– माता–पिता, विज्ञापन, मित्रों का प्रभाव
परतन्त्र चर	– पहनावे का चयन
नियंत्रित चर	– निम्न सामाजिक–आर्थिक वर्ग के परिवार एवं प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाएं

उद्देश्य –

1. प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाओं के पहनावे के चयन पर माता–पिता के प्रभाव का अध्ययन।
2. प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाओं के पहनावे के चयन पर मित्रों, भाई–बहन के प्रभाव का अध्ययन।
3. प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाओं के पहनावे के चयन पर विज्ञापन के प्रभाव का अध्ययन।

परिकल्पना – परिणामों की सार्थकता ज्ञात करने हेतु शून्य परिकल्पना निम्नानुसार निर्मित की गई :

1. प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाओं के पहनावे के चयन पर माता–पिता का कोई प्रभाव नहीं पड़ता।
2. प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाओं के पहनावे के चयन पर मित्रों, भाई–बहन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता।
3. प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाओं के पहनावे के चयन पर विज्ञापन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

न्यादर्श – अध्ययन हेतु 12 से 14 वर्ष की प्रारंभिक किशोरावस्था की 90 बालिकाओं का यादृच्छ विधि द्वारा प्रतिचयन किया गया। चयन की गई सभी बालिकाएं निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर के परिवारों से ली गई जिनके परिवार के प्रमुख अर्जक दैनिक कार्य से धन अर्जित करता है व परिवार प्रमुख का अधिकतम शैक्षणिक स्तर कक्षा दसवीं तक है।

विधि – अध्ययन हेतु शोधकर्ता द्वारा स्वनिर्मित प्रश्नावली को उपयोग किया गया है। शोध हेतु जबलपुर शहर के शा.हाई.स्कूल की बालिकाओं का चयन किया जाकर उनपर प्रश्नावली का प्रशासन किया गया।

सांख्यिकी विधि – संकलित तथ्यों का सांख्यिकीय विश्लेषण करने हेतु काई–वर्ग का प्रयोग किया गया है।

उपकरण – प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाओं के पहनावे के चयन का अध्ययन करने हेतु स्वनिर्मित प्रश्नावली का उपयोग किया गया।

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या – चयनित समूह की बालिकाओं पर प्रश्नावली का प्रशासन करने के पश्चात प्राप्त परिणाम की व्याख्या एवं विश्लेषण निम्नानुसार है :

तालिका क्रमांक 1 (अगले पृष्ठ पर देखें)

ग्राफ क्रमांक 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखें)

सारणी में प्रदर्शित परिणामों से स्पष्ट होता है कि बालिकाओं के पहनावे के चयन पर माता–पिता का प्रभाव पड़ता है। प्राप्त काई–वर्ग का मान सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक है। अधिकांश बालिकाएं माता–पिता के चयन के अनुसार पहनावा अपनाती हैं।

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (मानव विकास) शासकीय स्वशासी मो. ह. गृह विज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
* * शोधार्थी (मानव विकास) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

तालिका क्रमांक 2 (देखें)

ब्राफ क्रमांक 2 (अगले पृष्ठ पर देखें)

उपरोक्त परिणामों से स्पष्ट होता है कि, काई-वर्ग का मान सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक है। अर्थात तीनों प्रकार की प्रतिक्रियाओं के मध्य सांख्यिकीय दृष्टिकोण से अंतर है। सर्वाधिक प्रतिक्रियाएं विज्ञापन के अनुसार नहीं पहनते हैं, के पक्ष में हैं। इस प्रकार उपरोक्त परिणामों से स्पष्ट होता है कि, निम्न सामाजिक-आर्थिक वर्ग के परिवार की प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाएं अपने पहनावे के लिए विज्ञापन से प्रभावित नहीं होती हैं।

तालिका क्रमांक 3 (अगले पृष्ठ पर देखें)

ब्राफ क्रमांक 3 (अगले पृष्ठ पर देखें)

उपरोक्त परिणामों से स्पष्ट होता है कि काई-वर्ग का मान सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक है। अर्थात तीनों प्रकार की प्रतिक्रियाओं के मध्य सांख्यिकीय दृष्टिकोण से अंतर है। सर्वाधिक प्रतिक्रियाएं मित्रों के अनुसार नहीं पहनते हैं, के पक्ष में हैं। इस प्रकार उपरोक्त परिणामों से स्पष्ट होता है कि, निम्न सामाजिक-आर्थिक वर्ग के परिवार की प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाएं अपने पहनावे के लिए मित्रों के पहनावे से प्रभावित नहीं होती हैं।

इस प्रकार उपरोक्त परिणामों से स्पष्ट हो जाता है कि, निम्न सामाजिक-आर्थिक वर्ग के परिवारों की प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाएं जहां अपने माता-पिता की पसंद के अनुसार पहनावा पहनती हैं, वहीं दूसरी ओर उनके पहनावे के चयन पर विज्ञापन का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता। इसके साथ ही वे अपने मित्रों की देखा देखी एवं उनके अनुसार भी अपने पहनावे में परिवर्तन नहीं करती हैं। प्रस्तुत शोध में न्यादर्श निम्न सामाजिक-आर्थिक वर्ग के परिवारों की प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाओं को लिया गया है।

अधिकांश माता-पिता दैनिक कार्य कर वेतन अर्जित करते हैं। इन परिवारों की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी नहीं होती है एवं वे मुश्किल से ही अपने दैनिक जीवन की आवश्यकता की पूर्ति कर पाते हैं। कुछ परिवार में तो विशेष अवसरों के लिए भी अच्छी पोशाक भी उपलब्ध नहीं हो पाती है। माता-पिता अपने आर्थिक संसाधनों का अधिकतम उपयोग अपने जीवनयापन के लिए करते हैं। विज्ञापन एवं मित्रों के पहनावे को देखकर निश्चित रुप से ही इच्छा होती होगी परन्तु अपने परिवार की स्थिति का आकलन करतीं हैं तो जो उपलब्ध हो पाया है, उसी को पर्याप्त मानकर उसमें संतोष करने का प्रयास करतीं हैं। उपरोक्त न्यादर्श की बालिकाओं के संदर्भ में परिकल्पनाऐं स्वीकृत नहीं होती हैं। प्रस्तुत शोध के अध्ययन के संदर्भ में चेक गणराज्य के जे. टुरसीनकोवा एवं जे. मोयईसीडिस;2011द्ध द्वारा अपने शोध अध्ययन, जो 13 से 19 वर्ष के किशोरों पर उनके पहनावे के चयन पर ब्राण्ड , मित्रों व माता-पिता के प्रभाव का अध्ययन किया गया व यह पाया गया कि इस वर्ग के किशोरों का पहनावे का चयन उनके माता-पिता से प्रभावित रहता है व ब्राण्ड या मित्रों का प्रभाव नहीं पड़ता। प्रस्तुत अध्ययन में प्राप्त परिणाम भी यही दर्शाते हैं।

निष्कर्ष - शोध अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि -

1. निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के परिवारों की प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाओं के पहनावे का चयन माता पिता के अनुसार होता है।
2. निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के परिवारों की प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाओं के पहनावे का चयन टीवी आदि पर आने वाले विज्ञापनों से प्रभावित नहीं होता ।
3. निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के परिवारों की प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाओं के पहनावे का चयन उनके मित्रों के पहनावे से प्रभावित नहीं होता ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 बर्मन गायत्री (2005), किशोरावस्था, द्वितीय संस्करण, शिवा प्रकाशन , इन्दौर, पृ. 63 से 67।

2 एलिजाबेथ बी हरलॉक (1964), बाल विकास, चतुर्थ संस्करण, टाटा मेग्राव- हिल, न्यूयार्क. पृ. 705 सुलैमान डा. मुहम्मद (2012), मनोविज्ञान शिक्षा एवं अन्य सामाजिक विज्ञानों में सांख्यिकी, छठा संस्करण, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, दिल्ली. पृ. 308 से 344-

3 जे. टुरसीनकोवा एवं जे. मोयईसीडिस (2011), 1"Impact of reference groups on the teenagers' buying process of clothing in the czech republic." Journal ACTA, Universitatis Agriculturae et silviculturae mendelianae Brunensis. Vol 59(2011), Issue 7, page 489 – 496. http:www.acta.mendelu.cz.

तालिका क्रमांक 1

प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाओं के पहनावे के चयन पर माता-पिता का प्रभाव

	माता-पिता के अनुसार पहनते हैं	माता-पिता के अनुसार नहीं पहनते हैं	तटस्थ	काई-वर्ग	सार्थकता
प्राप्त उत्तरों का वितरण	66	9	15	65.40	<0.01
प्रतिशत	73.33	10.00	16.67		

तालिका क्रमांक 2

प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाओं के पहनावे के चयन पर विज्ञापन का प्रभाव

	पहनावा विज्ञापन के अनुसार करते हैं	पहनावा विज्ञापन के अनुसार नहीं करते हैं	तटस्थ	काई- वर्ग	सार्थकता
प्राप्त उत्तरों का वितरण	11	73	6	92.87	< 0.01
प्रतिशत	12.22%	81.11%	6.67%		

तालिका क्रमांक 3

प्रारंभिक किशोरावस्था की बालिकाओं के पहनावे के चयन पर मित्रों का प्रभाव

	पहनावा मित्रों के अनुसार करते हैं	पहनावा मित्रों के अनुसार नहीं करते हैं	तटस्थ	काई-वर्ग	सार्थकता
प्राप्त उत्तरों का वितरण	7	76	7	105.8	<0.01
प्रतिशत	7.78%	84.44%	7.78%		

ग्राफ क्रमांक 1

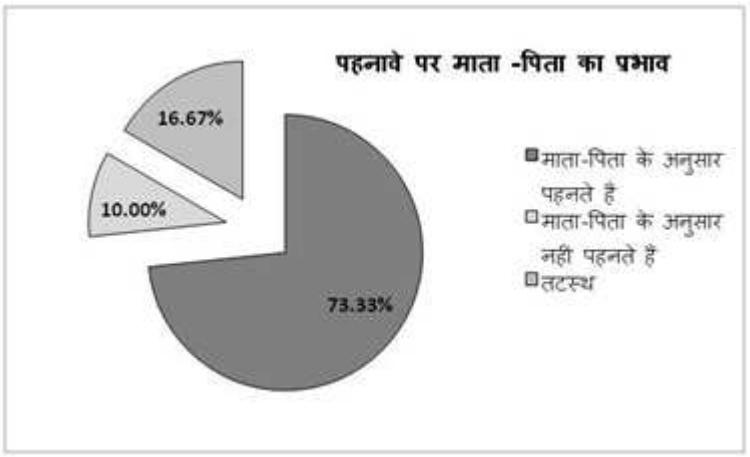

ग्राफ क्रमांक 2

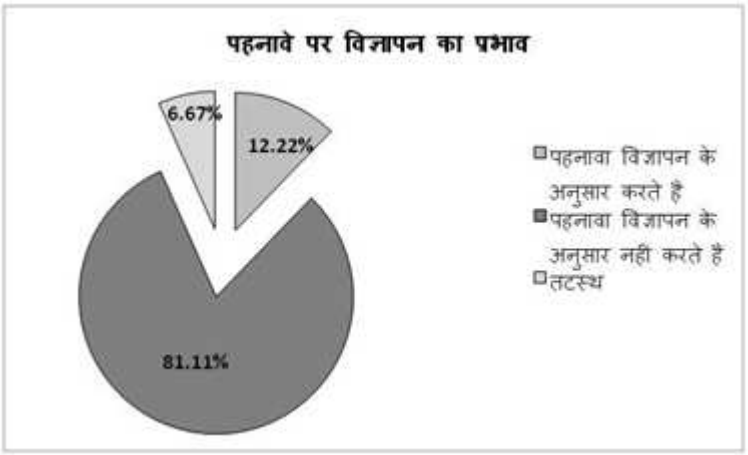

ग्राफ क्रमांक 3

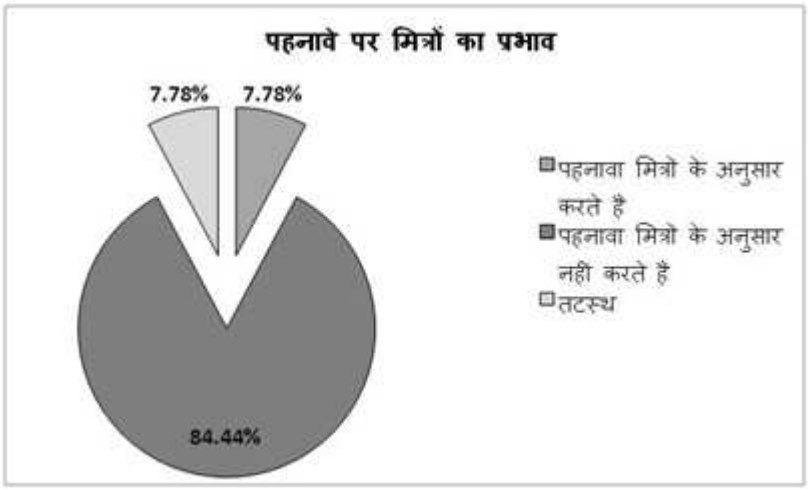

किशोर बालक-बालिकाओं के इंटरनेट का उपयोग करने में लिंग भिन्नताओं का अध्ययन

डॉ. आभा तिवारी * निरंजना धोटे * *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में किशोर बालक-बालिकाओं के इंटरनेट का उपयोग करने में लिंग भिन्नताओं का अध्ययन किया गया है। इंटरनेट का उपयोग करने वाले 20 बालक, 20 बालिकाओं का चयन कर स्वनिर्मित परीक्षण के प्रशासन द्वारा निष्कर्ष प्राप्त किये गये। परिणामों द्वारा ज्ञात हुआ कि किशोर बालक-बालिकाओं के इंटरनेट का उपयोग करने में लिंग भिन्नताओं में कोई अन्तर नहीं है।

प्रस्तावना – वर्तमान समय में विज्ञान की प्रगति के साथ-साथ जहाँ एक ओर सभी लोगों को सभी प्रकार की सुख-सुविधाओं में वृद्धि हुई है, वहीं दूसरी ओर विज्ञान की प्रगति के विपरीत परिणाम भी सामने आये हैं। इन परिणामों में संचार माध्यमों की प्रगति के फलस्वरूप किशोरावस्था में इंटरनेट का प्रभाव स्पष्ट रूप से सामने आया हैं।

किशोरावस्था को जीवन का सबसे कठिन काल कहा जाता है। किशोरावस्था में किशोर बालक-बालिकाओं के व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों तथा शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक तथा सामाजिक क्षेत्र में ऐसे क्रांतिकारी परिवर्तन होते हैं जिसके कारण किशोरावस्था को एक नये जन्म की संज्ञा दी गई है तथा किशोरावस्था संपूर्ण जीवन की इमारत होती है।

इंटरनेट की लत एक ऐसी मनोदशा है जो कम्प्यूटर का अत्यधिक उपयोग करने से होती है। इंटरनेट का उपयोग किशोरों में एक बढ़ती हुई समस्या हैं, दैनिक जीवन में अधिक से अधिक लोग इंटरनेट का उपयोग करते हैं जो कि अपनी आवश्यकता के लिये इसका उपयोग करते हैं परन्तु किशोरों में इंटरनेट का उपयोग जरूरत से ज्यादा बढ़ता जा रहा है। इंटरनेट के अधिक उपयोग के कारण किशोरों में इंटरनेट का उपयोग नशे की तरह हो गया है, जिसके कारण उनके व्यक्तित्व पर अत्याधिक प्रभाव पड़ता है, तथा इंटरनेट की लत के कारण किशोरों के स्कूल में उपलब्धि की कमी देखने को मिल रही है। इंटरनेट की वजह से किशोरों को समय से पहले एवं गलत जानकारी प्राप्त होती है जिसकी वजह से किशोरों का व्यक्तित्व विकास गलत तरीके से विकसित होता हैं। **जेसिका जी** (2012) ने किशोरों में फेसबुक, ऑनलाईन, सामाजिक नेटवर्किंग साइटों की लोकप्रियता व इंटरनेट की लत का अध्ययन किया, जिनके परिणामों से पता चला कि 50 प्रतिशत छात्रों में इंटरनेट की लत देखी गयी तथा फेसबुक, ऑनलाइन, सामाजिक नेटवर्किंग साइटों का उपयोग, इंटरनेट उपयोग की समस्याओं के लक्षणों में गंभीर योगदान निभाता है।

बालाज्स एस. (2012) ने सामाजिक कारकों के संबंध में यूरोपीय देशों में किशोरों के बीच इंटरनेट के उपयोग करने का अध्ययन किया। परिणामों से पता चला कि 4.4 प्रतिशत किशोर इंटरनेट का उपयोग करते हैं, लेकिन देश और लिंग भिन्नता के आधार पर किशोरों में कोई अन्तर नहीं होता है तथा इंटरनेट उपयोगकर्त्ताओं में भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक समर्थन की कमी किशोरों में अधिक पायी गई।

उपरोक्त पूर्व अनुसंधान के आधार पर कहा जा सकता है कि किशोर बालक एवं बालिकाओं में इंटरनेट का उपयोग करने में कोई अंतर नहीं पाया गया है। अत: किशोरों पर इंटरनेट का विशेष प्रभाव स्पष्ट रूप से देखने को मिल रहा है क्या किशोरों पर इंटरनेट का प्रभाव उनके व्यक्तित्व पर पड़ता है या नहीं ? यदि प्रभावित करता है तो हमें प्रयास करना होगा कि हम किशोर बालक-बालिकाओं के व्यक्तित्व, सामाजिक व्यवहार को विकसित कर सके साथ ही अध्ययन के आधार पर न केवल बालक को वरन् उनके अभिभावकों को भी परामर्श दिया जा सकेगा।

उद्देश्य –

1. किशोर बालक-बालिकाओं के इंटरनेट उपयोग करने में अन्तर का अध्ययन।

परिकल्पना –

1. किशोर बालक-बालिकाओं के इंटरनेट का उपयोग करने में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

न्यादर्श –

शोध कार्य हेतु निम्नानुसार न्यादर्श लिया गया है –

न्यादर्श तालिका

समूह	संख्या
बालक	20
बालिकाएँ	20
योग	**40**

आवश्यक उपकरण –

इंटरनेट का उपयोग संबंधित स्वनिर्मित परीक्षण।

विधि – न्यादर्श में चयनित विद्यार्थियों पर इंटरनेट का उपयोग करने संबंधित स्वनिर्मित परीक्षण का छोटे-छोटे समूह में प्रशासन किया गया एवं फलांकन कुंजी के माध्यम से फलांकन किया गया।

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या – किशोर बालक-बालिकाओं के इंटरनेट उपयोग करने में लिंग भिन्नताओं को अध्ययन करने हेतु न्यादर्श से प्राप्त परिणामों को विश्लेषण निम्नानुसार है –

सारणी संख्या – 1 (अगले पृष्ठ पर देखें)

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (मानव विकास), शा.मो.ह.गृहविज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
** शोध छात्रा, शा.मो.ह.गृहविज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय, जबलपुर, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

किशोर बालक–बालिकाओं के इंटरनेट उपयोग करने में लिंग भिन्नताओं का अध्ययन

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
बालक	20	49.80	6.83	1.02	0.05
बालिका	20	43.80	5.17		

स्वतंत्रता के अंश – 36 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.02
0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.71

उपरोक्त तालिका में प्रदर्शित परिणामों से स्पष्ट होता है कि किशोर बालक एवं बालिकाओं पर इंटरनेट का उपयोग करने में कोई अंतर नहीं है, क्योंकि प्राप्त टी मान 1.02 है जो 0.05 स्तर पर न्यूनतम निर्धारित सारणी मान की अपेक्षा कम है जो कि सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक नहीं है। अत: पूर्व में ली गई परिकल्पना सत्यापित होती है।

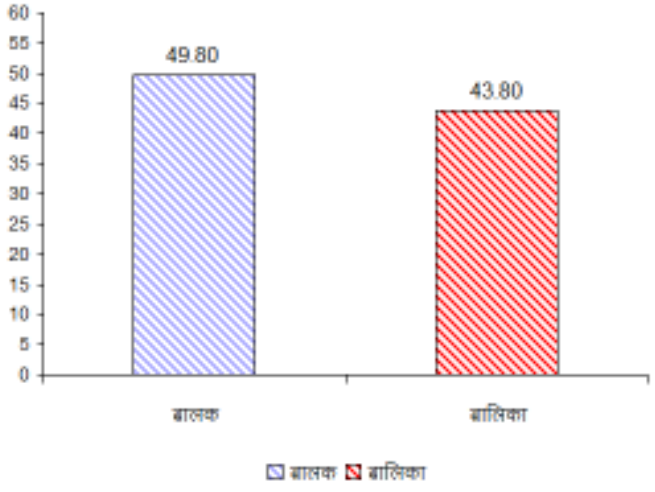

वर्तमान समय में इंटरनेट विद्यार्थियों के अध्ययन कार्य में एक आवश्यकता के रूप में हो गया है, शालाओं में भी प्राथमिक स्तर से कम्प्यूटर का उपयोग करना सिखाया जाता है, जिसे की आगे चलकर विद्यार्थी इसका उपयोग बिना किसी कठिनाई के कर सके तथा इंटरनेट के द्वारा विद्यार्थी नवीनतम जानकारी कुछ ही क्षणों में प्राप्त करके अपने ज्ञान को और अधिक विकसित कर सकते है। इंटरनेट सोशल नेटवर्किंग साइट्स का महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया है तथा किशोरावस्था में इंटरनेट की लत एक समस्या के रूप में सामने आई हैं। विद्यार्थियों में कम्प्यूटर का उपयोग करने की आदत का एक महत्वपूर्ण कारण शाला के कुछ कार्यों जैसे प्रोजेक्ट बनाना आदि के लिए शिक्षक विद्यार्थियों को कम्प्यूटर का उपयोग करने की सलाह देते है, जिससे की उनका शालेय कार्य उत्तम तरीके से पूर्ण हो सके तथा ऐसे में किशोर बालक–बालिकाएँ समान रूप से इंटरनेट का उपयोग करते है। संभवत: यही कारण है कि प्रस्तुत शोध कार्य में इंटरनेट का उपयोग करने में बालक–बालिकाओं में कोई अंतर नहीं है, इस संबंध में बालाज्स एस.(2012) का शोध महत्वपूर्ण हैं, जिसमें इंटरनेट का उपयोग करने में लिंग भिन्नताओं में अंतर नहीं पाया गया। शाला में कम्प्यूटर के उपयोग के साथ–साथ विद्यार्थी सोशल नेटवर्किंग साइट्स में अधिक समय व्यतीत करने लगे, जो कि उनके शालेय उपलब्धि की दृष्टिकोण से हानिकारक हो सकता है। अत: किशोर बालक–बालिकाओं के अभिभावक को इस ओर ध्यान देना चाहिए कि उनके पाल्य उनके सानिध्य में ही इंटरनेट का उपयोग करें, जिसे कि किशोर इंटरनेट के दुष्प्रभाव से बच सकें।

निष्कर्ष –

1. किशोर बालक–बालिकाओं के इंटरनेट का उपयोग करने में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सुरेश भटनागर (2007) 'बाल विकास एवं पारिवारिक सम्बन्ध', विनय रखेजा द्वारा आर. लाल बुक डिपो निकट गवर्नमेंट इण्टर कॉलेज, मेरठ
2. www.fubmed.com
3. www.google.com
4. www.hchi.nim-nih.gov
5. www.Papers .ssrn.com
6. www.wikipedia.com

****

Conflict Management Proficiency Among The Managers Of Hotel Industry

Vinod Kumar Singh Bhadauria *

Abstract - There can be more conflict in hospitality industry because people here have to give tangible results in terms of quality and quantity of work. To prove successful they have to face many problems related to work distribution and services. Therefore to understand the conflict, Hotel industry has been taken up for the present study. Research proves that the managers were having CMP between average and excellent range. It also shows that the mangers of Jaipur city were having better CMP capacity than that of Udaipur and Jodhpur city.

Key words – Conflict, Conflict management proficiency, Forcing, Accommodating, Avoiding, Compromising, Collaborating.

Introduction - Hospitality managers generally fulfill a wide range of roles and take the lead, as well as coordinate and control the activities in the day-to-day operation of their businesses. They may thus be involved, to a lesser or greater extent, in the many activities of numerous departments in a hotel such as the front office, food and beverage department, housekeeping department, purchasing, accounting and marketing.

Conflict is a result of natural competition between two or more individuals or between various departments. It may be used to prevent stagnation by focusing on problems which need to be resolved. Furthermore, conflict helps both individuals and groups to define and perpetuate their distinctiveness and promotes unity, cohesion and common purpose. It may be very healthy as it enables individuals and groups to establish norms to regulate and define the balance of power which prevails in an enterprise.

There can be more conflict in hospitality industry because people here have to give tangible results in terms of quality and quantity of work. To prove successful they have to face many problems related to work distribution and services. Therefore to understand the conflict in Hotel industry the present study has been taken up .

The study has been carried out with the following objectives:

1. To assess the conflict management proficiency (CMP) of managers working in hotel industry of different cities.
2. To provide suitable suggestions to manage Conflict Management Proficiency efficiently.

Research Hypotheses -

H1. There is no significant difference among Conflict Management Proficiency (CMP) of managers of Jaipur, Jodhpur and Udaipur city.

Research Methodology

1. Locale of the study - he present study was conducted in the hotels of Jaipur, Jodhpur and Udaipur. The hotels from 3 stars to 5 stars were selected.

2. Sample and its selection - The sample size for the present study was consisted of 45 managers i.e 15 from each city.

3. Tool and its description -

Conflict Management Scale (Dhaka, 2000) - The scale used in this study was conflict management scale (Dhaka, 2000). The scale of conflict management had four spheres; the scale had 24 items in all and 6 items in each sphere i.e. each sphere was ¼ on the total scale. Maximum score of an individual could be 96 and minimum score could be 24 where as maximum score of one sphere was 24 and minimum 0 but for the present study only the total scores were used for analysis.

4. Procedure for data collection - For data collection the tools was given to the respondents and the separate instruction were given. The subjects were instructed to read each items carefully and tick (Ö) one of the alternatives from 'always', 'often', / 'sometimes' and 'rarely'.

Result and Discussion -

Table- Frequency distribution of managers of different cities in Hotel Industry in different ranges of CMP

	Jaipur (15)	Jodhpur (15)	Udaipur (15)
Very poor CMP (less than 24)	-	-	-
Average CMP (25-48)	-	2	-
Above average CMP (49-72)	6	13	12
Excellent CMP (73-96)	9	-	3

Table clearly reveals that no manger had poor conflict management proficiency, while only 2 managers from Jodhpur having average CMP. 6 managers of Jaipur, 13 managers of Jodhpur and 12 managers of Udaipur were having above average CMP. Excellent CMP was observed in Jaipur i.e 9 managers and Udaipur i.e 3 managers. Thus it shows that

* **Director, Pacific Institute Of Hotel Management, Udaipur (Raj.) INDIA**

Jaipur city managers were having better CMP than that of Udaipur and Jodhpur. All managers fall in the range between average and excellent CMP, and no is having poor CMP.

During research it was found that the managers of Jaipur possess above average to Excellent CMP range while Udaipur and Jodhpur city managers possess average to above average CMP Thus the hypothesis **"**There is significant difference between Conflict Management Proficiency (CMP) of managers of Jaipur, Jodhpur and Udaipur city" is rejected. The above table reveals also reveals the same fact.

Suggestions For CMP - Conflict management can be done by planning and identifying instances of conflict and developing procedures to resolve them.

Valuing employees and giving praise where praise is due. Regular consultation and communication. Providing unambiguous situations by guiding and monitoring employees. Conflict is to an extent, a part of individual relationships and organizational development, and no organization can hope to mature productively and be successful without the ability to resolve conflicts in the workplace when they arise.

There are five key styles for managing conflict-

- Forcing - Using your formal authority or power to satisfy your concerns without regard to the other party's concerns
- Accommodating -Allowing the other party to satisfy their concerns while neglecting your own
- Avoiding - Not paying attention to the conflict and not taking any action to resolve it
- Compromising - Attempting to resolve the conflict by identifying a solution that is partially satisfactory to both parties but completely satisfactory to neither.
- Collaborating - Co-operating with the other party to understand their concerns in an effort to find a mutually satisfying solution.

References -

1. Einarsen, S. Violence at work in hotels, catering and tourism, Working Paper, ILO- Geneva, October 2003
2. Hoffmann, M.H.G. (2005) „Logical argument mapping: a method for overcoming cognitive problems of conflict management , *The International Journal of Conflict Management*, 16 (4), pp. 304-334 [Online] Available at: http://nuweb. northumbria.ac.uk/library/norapowersearch/index.html (Accessed: 1 of February 2011).
3. International Project Management Association (2011) *IPMA*.Available at: http://www.ipma.ch/Pages/default.aspx (Accessed: 16 of January 2011).
4. Karatepe. O.M, Magaji. A.B. "Work-Family Conflict and Facilitation in the Hotel Industry "*Cornell Hospitality* Quarterly November 2008 ,vol. 49, Pg. 395-412

Graph- Frequency distribution of managers of different cities in Hotel Industry in different ranges of CMP

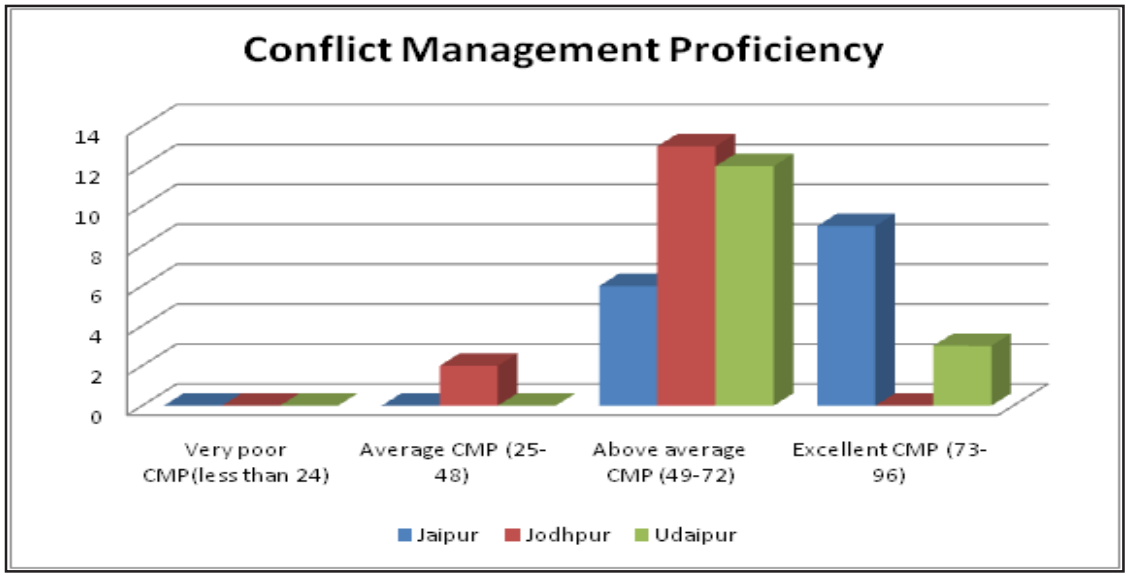

Proving The Research Hypotheses

H1. There is no significant difference between Conflict Management Proficiency (CMP) of managers of Jaipur, Jodhpur and Udaipur city.

ANOVA Table				a 0.05		
Source	SS	df	MS	F	F critical	
Between	1857.6	2	928.8	12.53844	3.219942	Reject
Within	3111.2	42	74.07619			
Total	4968.8	44				

ANOVA Test For CMP in Jaipur, Jodhpur & Udaipur -

Development Of Banking In India : Major Issues

Namrata Ganguly * Priyanka Kurup **

Abstract - The banking sector in India is carpet which deals with practices since the time of britishers till now where we find online banking where the banking services is at our door step. There has been a kind of revolution in the banking sector. Nowadays banks have started concentrating on customer as customer has become the king of the market. In this paper there has been an effort made to highlight on certain issues in the banking system in India. The paper has dealt with background of banking sector, the turning point in banking, IT revolution in banking, the issues related to its growth and development. This will address the growth aspect and will try to give a pathway for banking development.
Keywords - Customer, employees, information technology, revolution.

Introduction - In present day scenario economy is facing some major economic threats. This has made the situation very uncertain causing recession in major economies like US and Europe. These develop certain questions related to the maintaining and progress in the field of growth and development.

However, among all these speculations India's banking Industry is among the few to, maintain sustainability. The growth of India's banking industry has been admirable over the past few years. It has gone through many eminent changes in the field of expansion of profitability, credit expansion. This factor of expansion has made Indian banking strong and vibrant. Indian banks tries to keep the economy moving and hence there has been a positive approach in the field of growth and development.

History and Background - Banking sector in India has its own relevance. This can be seen since ancient times. In ancient India there is an evidence of loans from the vedic period. Later during the maurya dynasty an instrument called adesha was in use, which was an order on a banker desiring him to pay the money of the note to a third person, which corresponds to the definition of a bill of exchange as we understand it today. During the Buddhist period, there was considerable use of these instruments. Merchants in large towns gave letters of credit to one another.

During the period of British rule merchants established the union bank of Calcutta in 1829, first as a private joint stock association, then partnership. Its proprietors were the owners of the earlier commercial bank and Calcutta Bank, who by mutual consent created union bank to replace these two banks. Union bank was incorporated in 1845 but failed in 1848, having been insolvent for some time and having used new money from depositors to pay its dividends. The Allahabad bank, established in 1865 and still functioning today, is the oldest joint stock bank in India. Calcutta was the most active trading port in India, mainly due to the trade of the British empire and so became a banking center. Among the list of banks was the Punjab National Bank, established in Lahore in 1895.

Around the turn of the 20th century, the Indian economy was passing through a relative period of stability. Around five decades had elapsed since the Indian Mutiny, and social industrial and other infrastructure had improved.

The partition of India in 1947 adversely impacted the economies of Punjab and West Bengal, paralyzing banking activities for months. India's independence marked the end of the regime of laissez – faire for the Indian banking. The government of India initiated measures to play an active role in the economic life of the nation and the industrial policy resolution in 1948 envisaged a mixed economy. This resulted into greater involvement of the state in different segments of the economy including banking and finance. The major steps to regulate banking then included –

- The Reserve Bank of India, India's central banking authority, was established in April 1935 but was nationalized on 1st January 1949 under the terms of the Reserve bank of India Act, 1948.
- In 1949, the banking regulation act was entacted which empowered the Reserve Bank of India "to regulate, control and inspect the banks of India".
- The Banking Regulation Act also provided that no new bank or branch of an existing bank could be opened without a license from the RBI and no two banks could have common directors.

Turning point in Banking Sector - Indian banking sector has noticed several vital growing points among which nationalization is one of the eminent aspects. Despite of provisions, control and regulations of the Reserve bank of India, banks in India expect the state bank of India or SBI, continued to be owned and operated by private persons. By the 1960s, the Indian banking industry had become an important tool to facilitate the development of the Indian

* Asst.Prof. (Commerce and Management) Career College, Barkatullah University, Bhopal (M.P) INDIA
** Asst.Prof. (Commerce and Management) Career College, Barkatullah University, Bhopal (M.P) INDIA

economy. At the same time, it had emerged as a large employer and a debate had ensured about the nationalization of the banking industry. Indira Gandhi, the prime minister of India expressed the intention of the government of Indian the annual conference of the All India congress Meeting in a paper titled "Stray thoughts on banks nationalization". The meeting received the paper with enthusiasm.

Therefore, the government of India issued an ordinance and nationalized 14 largest commercial banks with effect from the midnight of 19 july 1969. These banks contained 85 percent of bank deposit in the country. Within two weeks of the issue of the ordinance, the parliament passed the banking companies bill, and it received the presidential approval on 9 august 1969. A second dose of nationalization of 6 more commercial banks followed in 1980. The stated reason for nationalization was to give the government more control of credit delivery. With the second dose of nationalization, the government of India controlled around 91% of the banking business of India. Later on in the year 1993, the government merged New Bank of India with Punjab National Bank. It was the only merger between nationalized banks and resulted in the reduction of the number of nationalized banks from 20 to 19.

In the early 1990s, the government embarked on a policy of liberalization, licensing a small number of private banks. These came to be known as New Generation Techsavvy banks, and included global trust bank which later amalgamated with oriental bank of Commerce, ICICI bank and HDFC bank. This move, along with the rapid growth in the India, revitalized the banking sector in India, which has seen rapid growth with strong contribution from all the three sectors of banks, namely, government banks, private banks and foreign banks.

Revolution of Banking Sector - The Indian banking sector has eventually gone through tremendous technological changes too. The IT revolution has had a growth impact on the Indian banking system. The use of computers in the banking sector in India has increased many fold after the economic liberalization of 1991 as the country's banking sector has been exposed to the world's market. Indian banks found it difficult to compete with the international banks in terms of customer service, without the use of information technology.

The banking sector set up a number of committees to define and co-ordinate banking technology. These have included :

- In 1984 was formed the committee on mechanization in the banking Industry whose chairman was Dr. C Ranganrajan Deputy Governor, RBI. The major recommendations of this committee were introducing MICR technology in all banks in the metropolises in India : This provided for the use of standardized cheque forms and encoders.
- In 1988, the RBI sets up the committee on computerization in banks. It emphaised that settlement operation must be computerized in the clearing houses of RBI. It focused on computerization of branches and increasing connectivity among branches through computer. It also suggested modalities for implementating online banking. The committee submitted its reports in 1989 and computerization began from 1993 with the settlement between IBA and bank employees association.
- In 1994, the committee on technology issues relating to payment systems, cheques clearing and securities settlement in the banking industry was set up under chairman W.S. Saraf. It emphasized electric Funds Transfer (EFT) system. With the BANKNET communications network as it carrier.
- In 1995, the committee proposed legislation on electric funds transfer and other Electronic payments.

Indian Banking Industry - The Indian industry of banking is guarded by the Reserve bank of India ; which mainly comprises of

1. Commercial banks
2. Cooperative banks

Those banks which are involved in the general working of banks is called the commercial banks. Commercial banks are generally joint stock banks. Their capital is divided into shares and these shares are purchased by either their men or organization. The commercial banks are engaged in many activities like depositing money, providing loans, collection of shares etc.

In India the commercial banks have been categorized into two categories which consists of Scheduled banks and Non-scheduled banks. Scheduled banks are the banks which have been included in the second schedule of Reserve Bank of India (RBI) Act,1934. When the assessment of performance of banks is to be done by the RBI. Categorizes them into public sector banks, old private sector banks, and foreign banks.

Major Issues for Indian Banking - In India, which is a developing country there are many people who are not able to reach to the banking services. But on the other hand there are people who are availing these banking services. But on the other hand there are people who are availing these banking services to the fullest and day by day their expectations are increasing due to the dynamic technological growth and level of competition. The main aim of banking sector is to meet the satisfaction level of the customers.

Now the existing situation has created various issues and opportunity for Indian Commercial banks. In order to understand the banking sector properly we need to understand these issues explicitly.

- **Resource Management -** Resource Management of resource is one of the important challenges which a working sector has to manage. And when we say resources it is mainly the management of human resources. It is an aspect which cannot be overlooked. In human resources there is a correlation between the work climate and performance of the organization

because the better the working environment the better will be the performance.

- **Banking Globally -** The world economy is a factor which cannot be overlooked when we talk about banking sector. Way back in 1991 when the seeds of liberalization put forth, it was a green signal for foreign banks. And now in India we have many foreign banks working and flourishing positively. This positive growth of foreign banks is becoming an issue for nationalized banks because these foreign banks are very well equipped with the technology and we have to cope up with them.
- **Risk factor -** Another important issue which comes infront is the management of risk. Business is all about risk, the more the risk the more is the business. But the keywork is to eventually manage this risk. Because there are many banks which due to lack of proper management of risk could not survive. The growing competition sometimes increases the level of competitiveness among banks. But existing global banking scenario is seriously posing threats for Indian banking Industry. And hence, it is here where an important issue comes in front and we need to give it a way out.
- **Issues related to environment -** Environmental constraints have always been a major issue in banking sectors pathway of growth and development because it is an aspect on which the working of employees depends a lot. If a healthy environment is not provided to them it would adversely affect the working of banks. Hence it becomes essential to spread awareness not only in our country but also in abroad. Then only the focus of the people can be changed.
- **Customer satisfaction -** This has become one of the major concerns for any sector when we talk about that certain sections need development. The trend of growth and development has changed nowadays. Because customer has become the king of any business and if it is banking then there is no question that here customer is of course the king and their satisfaction is utmost and hence the banking sector growth depends a lot on this issue.
- **Ethical Constraints -**When we say banking sector first thing that comes to our mind is money and profit. But apart from these two factor there is an ethical side also which also deals with social aspect. There are banks which focus on investing in community, providing opportunities to the disadvantaged and supporting social, environmental, and ethical issues. At this point it becomes essential to mention the difference between social banks and mainstream banks. A social banks concentrates on three aspects ie customer, satisfaction and then profit whereas a mainstream bank concentrates on the aspect of maximization of profit.

Suggestions - On the basis of above discussion it can be said that as customer has become the king of market and the various companies have also started to highlight this factor, it has become the duty of various Indian banks to change their pattern of working as already some have started to do it. Another important aspect is to raise the standard of technology to the fullest so that we can compete with various foreign banks in world market. There should be greater expansion of bank branches as we are doing business globally and spreading our wings in world market. And last but not the least there is a need to utilize the resources to the fullest to make a more better base for growth and development.

Conclusion - In the changing scenario of the world there are many factors which influence the growth and development of banking sector. There has been many phenomenal changes which directly affects the phenomena which has been above mentioned. Apart from this, it has also been seen that the banking sector has seen many colorful aspects of growth, but has also left us with certain issues.

The aforesaid paper has discussed the various issues in banking sector growth like management of resources, banking globally, risk factor, environmental issues, customer satisfaction and ethical constraints. The paper has also made an effort to highlight the turning points in banking sector which were nationalization and liberalization aspect in banking sector. These revolution in this sector has compelled them to think again on their working scenario.

References -

1. Acharya, V.V. Philip Schnabl and Gustava Saurez,(2013), "Securitization without Risk Transfer ",Journal of financial Economics,107,515-526
2. Easterly,William,(1993), "How much do distortions affect growth,Journal of monetary economics,Vol.32, No.4,pp. 187.212
3. Pritchett (2005), Country Note B in world bank (2005), Economic growth in 1990s, learning from a decade of reform.
4. World Bank (2005) Economic growth in the 1990s learning from a decade of reform.
5. World Bank (2005) P.11, emphasis in the original.

****

India's balance of trade

Dr. Satish Maheshwari * **Trapti Maheshwari** * *

Abstract - The Reserve Bank of India (RBI) is responsible for compiling the balance of payments for India. The RBI obtains data on the balance of payments primarily as a by-product of the administration of the exchange control. In accordance with the Foreign Exchange Management Act (FEMA) of 1999, all foreign exchange transactions must be channeled through the banking system, and the banks that undertake foreign exchange transactions must submit various periodical returns and supporting documents prescribed under the FEMA. In respect of the transactions that are not routed through banking channels, information is obtained directly from the relevant government agencies, other concerned agencies, and other departments within the RBI. The information is also supplemented by data collected through various surveys conducted by the RBI. Data are prepared.

Introduction - The balance of payments of a country is the record of all economic transactions between the residents of a country and the rest of the world in a particular period (over a quarter of a year or more commonly over a year). These transactions are made by individuals, firms and government bodies. Thus the balance of payments includes all external visible and non-visible transactions of a country during a given period, usually a year. It represents a summation of country's current demand and supply of the claims on foreign currencies and of foreign claims on its currency.[1]

Balance of payments accounts are an accounting record of all monetary transactions between a country and the rest of the world.[2] These transactions include payments for the country's exports and imports of goods, services, financial capital, and financial transfers. The BOP accounts summarize international transactions for a specific period, usually a year, and are prepared in a single currency, typically the domestic currency for the country concerned. Sources of funds for a nation, such as exports or the receipts of loans andinvestments, are recorded as positive or surplus items. Uses of funds, such as for imports or to invest in foreign countries, are recorded as negative or deficit items.

Developments in India's Balance of Payments during the Third Quarter (October-December) of 2013-14 - Preliminary data on India's balance of payments (BoP) for the third quarter (Q3), *i.e.*, October-December 2013, of the financial year 2013-14, are now available and presented in Statements I and II. While Statement I presentBop data in BPM6 format,Statement II provides the same as per the old format.

Developments in India's Bop during October-December 2013 -

- India's current account deficit (CAD) narrowed sharply to US$ 4.2 billion (0.9 per cent of GDP) in Q3 of 2013-14 from US$ 31.9 billion (6.5 per cent of GDP) in Q3 of 2012-13 which is also lower than US$ 5.2 billion (1.2 per cent of GDP) in Q2 of 2013-14. The lower CAD was primarily on account of a decline in the trade deficit as merchandise exports picked up and imports moderated, particularly gold imports.
- On a Bop basis, merchandise exports increased by 7.5 per cent to US$ 79.8 billion in Q3 of 2013-14 (3.9 per cent in Q3 of 2012-13) on the back of significant growth especially in the exports of engineering goods, readymade garments, iron ore, marine products and chemicals.
- On the other hand, merchandise imports at US$ 112.9 billion, recorded a decline of 14.8 per cent in Q3 of 2013-14 as against an increase of 10.4 per cent in Q3 of 2012-13. Decline in imports in Q3 was primarily led by a steep decline in gold imports, which amounted to US$ 3.1 billion as compared to US$ 17.8 billion in Q3 of 2012-13 and US$ 3.9 billion in Q2 of 2013-14.
- As a result, the merchandise trade deficit (Bop basis) contracted by around 43 per cent to US$ 33.2 billion in Q3 of 2013-14 from US$ 58.4 billion a year ago.
- Net services receipts improved during Q3 of 2013-14, essentially reflecting a decline in payments on account of services imports. Net services at US$ 18.1 billion recorded a growth of 8.9 per cent in Q3 of 2013-14 (y-o-y).
- Net outflow on account of primary income (profit, dividend and interest) amounting to US$ 5.4 billion in Q3 of 2013-14 was relatively lower than that in the corresponding quarter (US$ 5.8 billion) of 2012-13 as well as the preceding quarter (US$ 6.3 billion). In Q3 of 2013-14, gross private transfer receipts at US$ 17.3 billion showed an increase of 4.8 per cent (y-o-y).
- In the financial account, on net basis, both foreign direct investment and portfolio investment recorded inflows of US$ 6.1 billion and US$ 2.4 billion, respectively in Q3 of 2013-14. Within portfolio investment, the debt segment showed net outflow in Q3 which, however, was offset by higher net inflows of US$ 6.2 billion under the category of equity.
- 'Loans'(net) availed by deposit taking corporations (commercial banks) witnessed an outflow of US$ 5.9 billion

*Professor (Commerce) Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.) INDIA
**Research Scholar , Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.) INDIA

in Q3 of 2013-14 owing to repayments of overseas borrowings and a build-up of their overseas foreign currency assets. Under 'currency & deposits', net inflows of NRI deposits amounted to US$ 21.4 billion in Q3 of 2013-14 as compared to US$ 2.7 billion in Q3 of 2012-13. A sharp increase in NRI deposits was on account of fresh FCNR(B) deposits mobilized under the swap scheme offered by the Reserve Bank during September-November 2013. Loans (net) availed by other sectors (*i.e.* External commercial borrowings) at US$ 4.1 billion also showed an increase of 42.1 per cent over Q3 of 2012-13. Net flows under trade credits and advances, however, continued to be negative in Q3 of 2013-14 as repayments remained higher than disbursements.

- On a Bop basis, there was a net accretion of US$ 19.1 billion to India's foreign exchange reserves in Q3 of 2013-14 as compared to a drawdown of US$ 10.4 billion in the preceding quarter (Table 1).

Developments in India's Bop during April-Dec. 2013

- The turnaround in export growth and decline in imports from July 2013 onwards led to a sharp improvement in the trade deficit to US$ 116.9 billion in April-December 2013 from US$ 150.0 billion in April-December 2012.
- Contraction in the trade deficit, coupled with a rise in net invisibles receipts, resulted in a reduction of the CAD to US$ 31.1 billion (2.3 per cent of GDP) in April-December 2013 from US$ 69.8 billion (5.2 per cent of GDP) in April-December of 2012.
- Net inflows under the capital and financial account (excluding change in foreign exchange reserves) declined to US$ 39.7 billion in April-December 2013 from US$ 68.5 billion in corresponding period of 2012-13 owing to net outflows on account of portfolio investment, higher repayment of loans, and trade credit & advances.
- On Bop basis, foreign exchange reserves increased by US$ 8.4 billion during April-December 2013 as compared with an accretion of US$ 1.1 billion in April-December 2012.

Conclusion - The Balance of Payments of a Country can be defined as the Statistical Record of a Country's International Trade over a certain period of time, presented in the form of double entry Book-keeping. Balance of Payments (Bop) accounts are an accounting record of all monetary transactions between a Country and the rest of the world. These transactions include payments for the country's exports and imports of goods, services, financial capital, and financial transfers. The Bop accounts summarize international transactions for a specific period, usually a year, and are prepared in a single currency. Sources of funds for a nation, such as exports or the receipts of loans and investments, are recorded as positive or surplus items. Uses of funds, such as for imports or to invest abroad, are recorded as negative or deficit items. When all components of the BOP accounts are included they must sum up to zero with no overall surplus or deficit. For example, if a country is importing more than it exports, its trade balance will be in deficit, but the shortfall will have to be counterbalanced in other ways – such as by funds earned from its foreign investments inflows, by running down existing central bank reserves or by accepting loans (with stringent conditionality) from outside.

References –

1. economictimes.indiatimes.com
2. www.rbi.org.in
3. en.wikipedia.org/wiki/www.slideshare.net/.../indias-balance-of-payments-position

Table 1: Major Items of India's Balance of Payments

(US$ Billion)

	Oct-Dec 2013 (P)			Oct-Dec 2012 (PR)			Apr-Dec 2013-14 (P)			Apr-Dec 2012-13 (PR)		
	Credit	Debit	Net	Credit	Debit	Net	Credit	Debit	Net	Credit	Debit	Net
A. Current A/c.	137.7	141.9	-4.2	130.5	162.3	-31.9	407.0	438.2	-31.1	388.2	458.0	-69.8
1. Goods	79.8	112.9	-33.2	74.2	132.6	-58.4	234.9	351.9	-116.9	221.8	371.8	-150.0
Of which:												
POL	14.9	42.2	-27.3	17.3	41.8	-24.5	47.2	125.2	-77.9	44.8	121.8	-77.1
2.Services	37.6	19.5	18.1	37.1	20.4	16.6	110.8	57.5	53.4	107.9	59.9	48.0
3. Primary Income	3.0	8.4	-5.4	2.7	8.5	-5.8	8.6	25.2	-16.6	7.6	23.9	-16.3
4. Secondary Income	17.3	1.0	16.3	16.5	0.8	15.7	52.6	3.6	49.0	50.9	2.3	48.6
B. Capital A/.c & Financial A/c.	129.3	124.5	4.8	120.2	89.5	30.8	396.1	364.9	31.3	339.6	272.2	67.4
Of which:												
Change in Reserve (increase (-)/ Decrease (+)		19.1	-19.1		0.8	-0.8		8.4	-8.4		1.1	-1.1
C.Errors & Omissions (-)(A+B)			-0.6			1.1			-0.1			2.4

P: Preliminary; PR: Partially Revised

Note: Total of subcomponents may not tally with aggregate due to rounding off.

Business Ethics And Corporate Social Responsibility- A Need For Today

Dr. Vimmi Behal * **Dr. Anil Shivani** * *

Abstract - Todays the scenario has changed. The human needs has grown up, and he is never satisfied. This dissatisfaction effects the continuous craving for obtaining more, by any mean and at any cost i.e. at the cost of others. Business and society are interdependent and business ethics and corporate social responsibility are allied to each other. More over both are dependent for development of a better society. This paper make an effort for developing a business environment and society.

Key Word - Business ethics, Social responsibility, environment, justification etc

Introduction - Business Ethics – Ethics is a set of rules that define right and wrong conduct. Business ethics can be defined as written and unwritten codes of principals and valves that governs decisions and actions with in a company. In the business world, the organizations culture sets standards for determining the difference between good and bad decision making and behaviour. The filed of business ethics is further complicated by the fact that many terms exist to refer to corporate offices and programs intended to communicate, monitor and enforce a company values and standards. In theory, one can make some rough distinctions among the various domains related to business ethics, e.g. corporate responsibility , social responsibility, corporate compliance etc.

For the purpose of clarity, definitions will be provided for each of the terms that can be understood as related to the goal of improving the conduct of business, i.e. business ethics corporate compliance, corporate governance, corporate sustainability and corporate social responsibility. Some organizations choose to recast the concept of business ethics through such other terms as integrity, business practices or responsible business conduct.

Corporate Social Responsibility- Corporate social responsibility can be understood in terms of corporate responsibility but with greater stress upon the obligations. Corporate and social responsibility is sometimes described as being a tacit contract between business and a community. The community expects the business to pressure the environment and to make the community a better place to live and to work through charitable activities. Business for social responsibility (2001) speaks of CSR co. the following terms. "Socially responsible business practices strengthen corporate accountability, respecting ethical values in the interests of all stakeholders. Responsible business practices respect and preserve the natural environment. Helping to improve the quality and opportunities of life, they empower people and invest in communities where a business operates."

Genesis Of Ethics-

- Ethics is a greek word, it means character or manners.
- Ethics is subjective while morality is objective.
- Ethics is about sense of belongingness to society of business.

Three Dimensions of Ethics

1. **Unitarian view of ethics** – Business is a part of moral structure and Moral Ethics.
2. **Separatists view of ethics** – Morality and Ethics has no role in business society and law deals with Ethics and Morality.
3. **integrated view of ethics**- Ethical behaviours and business should be integrated is a new era called business Ethics.

Ethical Theories- Ethics is about field of domain of enquiry while Morality is the object of enquiry. When espoused value becomes practiced values, then the group is said to be Ethical organization. Ethical theories can be classified into three subject areas-

1. Meta Ethics.
2. Applied Ethics
3. Normative Ethics

Meta Ethics – Meta ethics means how we understand, know about, and what we mean when we talk about what is right and what is wrong.

Applied ethics- Applied ethics is a discipline of philosophy that attempts to apply ethical theory to real life situation.

Normative ethics- Normative ethics is the study of ethical action . that guide and control human conduct and sets out certain standard that determine what is right and what is wrong.

Ethical issues for business – This theories can lead to describe the various dimensions for business ethics but their key areas for business can be summarized in the following

* **Asst. Prof. (Commerce) Atal Bihari Vajpayee Hindi Vishwavidyalaya, Bhopal (M.P) INDIA**
* * **H.O.D (Commerce) Atal Bihari Vajpayee Hindi Vishwavidyalaya, Bhopal (M.P) INDIA**

Issues –

a) Product Safety Standard
b) Advertising Contents
c) Working Environment
d) Unauthorized Payments
e) Employees Privacy
f) Environmental Issues

Conclusion – As saying of **BHAGAVAD GITA**

" Karmanye Vaadhika -raste, maa phaleshu kadachan,
Maa karma- phala- hetur- bhoorma, mate
sangostwakearmini."
your right is to work only,
But never to its fruits
Let not the fruits of action by thy motive
Not let thy attachment be to inaction.

This famous verse contains the essential principles of disinterestedness or detachment. It cautions that our natural tendency while doing our work is to be deflected from disinterestedness particularly if we think of fame or fortune along the way. The will of God is supreme, and the fulfillment of that will is all that matters . Success or failure does not depends on the individual, but on other.

As for motivation, good behavior, often brings a reward , but not every time. We could simply act selfishly and forget about obligation. People invented ethics precisely because it does not always coincide with self interest. There is no denying that one can often do well by doing good. An ethical company is more likely to build a good reputation, which is more likely to bring financial rewards over the long term.

There is a deeper confusion here, to look to ethics for motivation is to misunderstand what ethics is all about. If is like studying finance to find a reasons to make money.

Finance does not teach one to want to be rich. It teaches one how to be rich, assuming one wants to be rich. So it is with Ethics, Ethics teaches one how to be good, assuming one wants to be good.

Although Ethics is not the same as self interest, business executives often want to be assured that it is the same. They want to make certain that" one can do well by doing good", meaning that one can succeed in business by being Ethical.

References –

1. Issue Brief overview of corporate social responsibility-48809
2. Carrol A B(1979) the pyramid of corporate social responsibility the moral management of stake holders.
3. Carroll A.B. (1999) the pyramid of corporate social Responsibility Towards the moral management of the organization stake holders.
4. Davis k William, (1984) Business and society , New York .
5. Fredrick, WC(1986) Toward CSR3 why Ethical analysis is indispensable and unavoidable in corporate affairs, review 28(2) 126-41.

****

An Analytical Study Of Importance Of Business Process Management (BPM) With Cloud Computing

Dr. Vimmi Behal * **Dr. O.P. Sharma** * *

Abstract - Business process management gives organizations the ability to identity, monitor and optimize their business process. A Business process management can only coordinate a certain amount of business process instances simultaneously. In order to serve all customers in peak load situations, additional machines are necessary. At last a Business process management system is used to keep track of business process models and to keep track of business process models and to coordinate the execution of business process.**Key Word –** Maintaining, peak, load, models , investment, decomposition.

Introduction - Today's, many BPM vendors offer cloud base BPM systems. The advantage of these systems is that organizations can use Business process management software in a pay- per-use manner. Now a days the cloud solution should scalability to the user, so that in peak load situations, additional resources can instantiated relatively easily. A major concern of cloud based solutions for organizations, is the fear of losing or exposing confidential data. In this paper we consider a BPM architecture in which parts of a business process are placed in the cloud and parts are placed on premise. The decomposition in driven by a list of markings in which the distribution location for each of the activities in a business process is defined.

The behaviors of a business process and the decomposition is performed on this intermediate model, rather than on an existing language. The decomposition frame work consists of a transformation chain of three transformation used for converting a business process, defined in an existing business process language into an instance other intermediate model, performing the decomposition.

This work investigates the possibility of integrating Business process management (BPM) with cloud computing .This paper gives the motivation behind the subject, the objectives and explains the structure of the business.

Objectives- BPM has gained a lot in popularity the last two decades. By identifying and managing business processes, companies get insight in what they are doing, which parts of the process can be automated or can be optimized. This many lead to lower costs better customer satisfaction. Each process instance is monitored by the BPMs and business users are able to look into these process instances. The process instances give insight into the progress of the process and show if processes are completed successfully, or have failed. In case of failure, the process instance shows in which part of the process the failure occurred. The software is hosted on a server and customer are able to login to the software using the internet mostly by using a browser. One of the big advantages here is that companies can change their product relatively easily without having to distribute the updates to all their customers. They only have to adjust the software that is running on their own servers. Many of these services are built using the service oriented architectures(SOA) principals. cloud computing is an example of a model where computing resources are offered to the user as a service.

BPM life cycle - Design – The design phase consists of identifying existing processes and capturing the business process in process models.

Implementation- in the implementation phase the designed process is implemented in an executable process language, which can be developed in a BPMS.

Enactment-The enactment phase is the run time phase of the cycle. the business process is deployed and monitored by a BPMS.

Evaluation -In the evaluation phase the monitored information that is collected by the BPMS is used to review the business process.

Business Process management and Notation (BPMS)

BPMN is a notation for dening business process models, developed by the business process management initiative language constructs BPMN diagrams modelled , charts, consisting of activities that are connected to each other to determine their relations. The most important constructs available in the language are-

Event – Events effect the flow of a process three types of events are defined in BPMN, namely start, intermediate and End events.

Activity- Activities can be described as work performed by a company . There are two types of activities tasks and sub processes.

- Gateway
- Sequence flow
- message flow
- Association
- Pool
- Lane

General Benefits and drawbacks –Cloud based BPM gives cloud users the opportunity to use cloud software in a pay-per-use manner, instead of having to make upfront investments on BPM software, hardware and maintenance.BPM in the cloud has also several downsides. By putting a BPMS in the cloud ,cloud users might lose control over their sensitive data .The cost of the cloud activity may increase since data transfer is one of the billing factors of cloud computing.

Conclusion-In this paper, we investigated combination of BPM and cloud computing . We discussed both cloud computing and BPM and gave on overview of literature that discusses their combination. BPM has been introduced by identifying the four phase of the BPM lifecycle and the three science models of cloud computing and the specific benefits and drawbacks of each of these service models. It was quite difficult to find the combination of cloud computing and BPM. which indicates that the subject is still interesting for further research.

References –

1. Appian cloud, mobile and social BPM march 2011.
2. Appian BPM in the cloud its Time, its safe, its smart, oct 2011.
3. Fujitsu interstage cloud BPM ,2009
4. A Alves, V.mehta, s.thatte, web services business process execution language, 2007
5. Amazon amazon elastic compute cloud Dec 2011.
6. Amazon, amazon simple storage service, Dec 2011
7. Amazon, amazon simple DB. Dec 2011.

* Asst. Prof. (Comm.) Govt. College Kalapipal (M.P) * * H.O.D (Comm.) Govt. College Kalapipal (M.P) INDIA

100 Million Facebook Users In India Are Valuable For Any Marketer

Dr. Pradeep Kumar Sharma* Vishwas Sharma **

Introduction - Social media allow individuals, companies, organizations, governments, and parliamentarians to interact with large numbers of people. Face book is one the most influential social media tool that provide highly interactive platform to the users. In March 2014 Facebook touches the milestone of 100 million Face book users in India. 100 Million Face book users in India are valuable for any Marketer. That's why most of the companies are using Face book as an effective marketing tool.

This paper gives a brief overview of the growing popularity of Face book in India and looks at how the different attributes of Face book affect the way people interact online, and considers their potential social and economic impact.

Growth and Current status of Face book in India - In the expanding world of internet — India has over 200 million users, expected to triple by 2016 to 600 million — Facebook dominates the social media play. Most of the online population (around 84 million) uses the Net via their handsets, and these mobile users may not find the ad intrusions on Facebook a pleasurable experience.

The figure shows the current status of Face Book users in India.

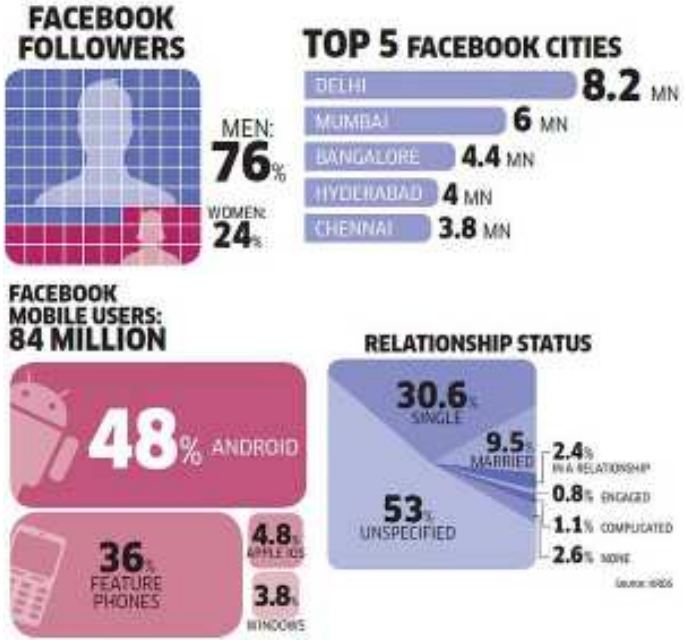

Source:KRDS

The USP of Face book - The USP of Facebook lie in their ability to know the user — age, city location, what device she is using, what she likes and so on. For instance Nokia targets the 18-24 year olds routinely with its new launches. In this case The Face book provides better segmentation of the Market which can easily be targeted. Facebook is a high-involvement platform, where youth converge. Ability to target helps get the message to right people, while scale creates the impact.

How Companies are using Facebook as an effective Marketing Tool - MobiKwik, a Gurgaon-based start-up that offers mobile payment services, has been on Facebook for two years. About a year back MobiKwik started paid advertising on Facebook targeting Android phone users. Besides, a lot of the new users of MobiKwik coming on Android devices were in the 25 to 30 age group, and MobiKwik found that Facebook enabled it to target ads at this group. Mr. Sachin Gupta, digital marketing specialist, MobiKwik Says, "Being on Facebook helped us drive traffic to our app and get new users.

Mr. Kartik Jain, head of marketing, HDFC Bank says: "the user base reflects Facebook's increasing role in online social chatter." He further says: "We use Facebook to listen to our customers, build our image and crosslink across social media platforms."

For example HDFC Bank has 90 videos on YouTube that talk about aspects of banking in simple terms (simplifying fixed deposits, mortgages and the like), which it promotes on Facebook.

Mr. Ronita Mitra, senior vice-president, brand communication and insights, Vodafone India, which has brought back the Zoozoos for the Indian Premier League (IPL) says: "We have 17.8 million fans on the Vodafone Zoozoos page. Facebook allows us high measurability and targeting and we aim to use the medium in line with its strengths."Online fashion retailer Myntra uses Facebook logout ads — the ad that a user sees on logging out from Facebook. Mr. Vikas Ahuja, chief marketing officer, Myntra says: "Facebook can help do age segmentation — we target 18-27 year olds, as that's the internet-savvy population and key contributor to our business. We can do gender-specific targeting and by location as well. Around 35% of our business comes from women."

* Professor (Commerce) Govt. Hamidia Arts and Commerce College, Bhopal (M.P.) INDIA
** Research Scholar, B. U. Bhopal (M.P.) INDIA

Conclusion - Social Media marketing is a new way to market the products. Face book is one of the highly interactive platform for the users. Taking advantage of this attribute, the marketers are targeting the customers very efficiently and building theirs brands. Companies are effectively using Face book to achieve their objectives.

References -

1. www.economictimes.com
2. http://www.parl.gc.ca/content/lop/researchpublications/2010-03-e.htm#a2
3. "Facebook tops 1 billion users," CBC News, 4 October 2012
4. Organisation for Economic Co-operation and Development [OECD], "Participative Web and User-Created Content: Web 2.0, Wikis and Social Networking,"2007,p. 36.
5. www.krds.com

****

Socio Economic Impact Of Displacement On Tribal's Of Chhattisgarh

Dr. Prabhakar Pandey * Jainendra Kumar Patel **

Abstract - After independence many development project have been taken up in tribal belt of Chhattisgarh state. And yet the incidence of poverty, malnutrition and illiteracy is most common in tribal's of Chhattisgarh. Hunger and destitution was not remarkable in past has now become the order of the day. The level of deprivation is much greater among tribal people than other population of the state. Network of infrastructure, industrial, mineral and other development project has failed to corresponding development of tribal people & integrate them to the wider world. These development project have worsened, the social and economic situation of tribal's. They have been uprooted from their lands and forest, their Kith and Kin, villages which they had long emotional, social, cultural and religious ties and relationship. These development projects have destroyed the roots of their distinct way of life and their social and collective identity.

The above indicates that there is need for rethinking about development and displacement. Tribal's of Chhattisgarh state has paid enormous price without the benefits of these developments project taken up since last sixty years.

There is no doubt that projects are imperative for national and overall development of the people. However the displacement oriented development projects need to be re-examined and readdressed.

The study provides data on the extent and nature of development induced displacement in tribal belt and examines the consequences of displacement on tribal's in reference to their socio economic, cultural and environmental conditions.

Keywords – Development, Displacement, Displaced Family, Displaced Persons, Project Affected Family.

Introduction - After India become independent the national reconstruction become an important concern of nationalist leadership. In place of Mahatma Gandhi philosophy of development which was based on village life, Jawahar Lal Nehru vision making India a modernized society was adopted. This began with the process of displacing the rightful claimant of land, forest and other natural resources.

Today even after more than sixty years of Independence we are following the same path. The proliferation of laws, policies of liberalization, globalization, dismantling of controls, restrictions and high taxes has further accelerated the process of displacement.

Tribal's have been the worse affected by the development projects. A little over 21 million is estimated to have been displaced by development projects in India during 1951-90. Displaced tribal accounted 8.54 Million which constitute 40% of the displaced population though they comprise only 8.2% of the total population.

In the case of tribal's in India development induced displacement has affected the identity of tribal's in a very significant way. Modes of their livelihood is agriculture. They identify and describe themselves as cultivators. They totally depend on forest and forest resources and their basic needs are met from the resources of forest. Tribes are not only dependent on forest resources for their livelihood but also for cultural and religious purpose. Displacement dislocates them from their territory and home-land leadership to erosion of their identity. In brief, the development resulted in the dislocation from their territory and home land, fragmentation of the community lead to loss of their culture, ways of life, language and territorial identification and thus loosing their identity of being a distinct people.

Significance -

The problematic situation of tribal's arising out of the development project, as mentioned above lead to take up this study, an attempt to understand the development projects and their impact on tribal's of Chhattisgarh. Some studies on development induced displacement from 1957-1995 by Fernades and Asif (1997-2001) EKKA & Asif (2000) have been made. Fernades Report estimated the number of displaced person (DP) and project affected (DAP) persons at 3.2 million in Chhattisgarh.

Action Aid Indian social Institute New Delhi and LAYA submitted detail research report on Development and Displacement (2008). The report reveal that "Tribal India specially the region adjoining Andhra Pradesh Chhattisgarh, Odisha and Jharkhand has paid enormous price without the benefits of these developments accruing to them in the last sixty years of India's economic development."

These studies find out the massive displacement of the people specially of tribal's and lack of resettlement of these people. Where there had been resettlement it has been at

* Prof. (Commerce) Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
** Research Scholar (LAW) M.P. Bhoj (OPEN) University, Bhopal (M.P.) INDIA

bad shape. They have also examined the extent and nature of land acquisition and loss of livelihood due to the development projects.

The study also indicates that among the displaced persons, women were the most sufferers. The shock of displacement is so strong that the social, cultural economic and psychological loss of the displaced persons are irreparable.

Objectives - The main objectives of the study is to ascertain social and economic impact of the development induced displacement on tribal's of Chhattisgarh. The objectives of the study are -

1. To find out the extent of utilization of natural resources for development and displacement of tribal's.
2. To study the extent and scale of impact on Displaced persons and project affected persons.
3. To study the measures of resettlement and rehabilitation of DAP & PAP.
4. To study the impact of development induced displacement on socio economic lives of tribal's.

Thus it is an attempt to understand the real problems of development induced displacement of tribal's.

Methodology -

1. The study is based on secondary data collected from related departments & gazettes notification of Chhattisgarh Govt.
2. Primary data collected on the basis of interviews and in depth studies of displaced persons, project affected persons, - Project affected families displaced families by Action Aid India Social Institute New Delhi and LAYA (2007) has been used to analyse the impact of the development projects on tribal's & the socio economic cost of displacement and rehabilitation. Action Aid study was first study ever conducted in Chhattisgarh.

Profile of Chhattisgarh state - Chhattisgarh state was formed in 2000 dividing the state of Madhya Pradesh. Total area of Chhattisgarh is 443000 sq. km. Forest area is 59772.389 sq. kms. Important rivers - Mahanadi, Shivmati, Indravati, Hasdo, Arpa, Kelo and Son, Rehar, Kanha flow through the state and they covers. 137360 sq. km. of states land in river basin area.

Chhattisgarh is one of the richest Mineral deposit states in India. There is substantial deposit of line stone, Iron ore, Copper ore, Rock phosphates Manganese ore, Coal asbestos and Mica, Chhattisgarh contains nearly 525 million ton of dolomite reserves which is 24% to of the country. It has reserves of 73 million tones of Bauxite, 2000 million tones of Iron ore, Coal about 29000 million tones and Tin about 27000 million tones.

The total population of the state as per the 2001 censes is 20833803. Schedule castes and schedule tribes constitute 11.60% and 31.80% respectively. The main tribal groups in Chhattisgarh are Abujmaria, Baiga, Birhor, Hill Korwa, Kamar Koya, Guta Koya, Kol, Oraon, Kodakas and Gond. Out of total population 80 % are rural and 20% are urban. Literacy in the state is 64.7% and where as in tribal's it is 42.7%, Sex ratio in state is 989, but in tribal's it is 1013. Total workforce in ST is 53.4 and most of them are in agriculture sector.

Land Acquisition for development projects - Land acquisition in Chhattisgarh state was for five major development projects-Water resources, Industry, Transport, Mining, Non-hydro project. Land was also acquired for some minor projects such as - defence establishment Environment protection, Transport and Communication, Human resource development, Refugee resettlement, Farm and fisheries, Urban development, Housing, Health, Education, Government office, Tourism and government offices during 1982-2007 through gazette notification under Land Acquisition Act 1894 and Forest, Act 1846. Project wise land acquisition in Chhattisgarh is shown in table no. - 01.

Table No. - 01

Project wise land acquisition in Chhattisgarh 1982-2007 (land in acres)

S.No.	Project Name	No. of Project	Total in acres
1.	Water resources	14739	100431.45
2.	Industries	133	5713.84
3.	Mining	54	1492.81
4.	Non Hydro powder	192	4088.29
5.	Defence	33	3902.14
6.	Environment Protection	18	32.25
7.	Transport & communication	2238	37262.83
8.	Human Resource Development	13	95.78
9.	Refugee Settlement	02	5.22
10.	Farms & Fisheries	02	less than acreone
11.	Housing	41	249.52
12.	Social Welfare	03	4.42
13.	Health Services	03	less than one acre
14.	Education	05	1 to 50 acres range
15.	Tourism	01	Less than one acre
16.	Govt. Office	31	408.43

(Source - Chhattisgarh Gazette 1982-2007)

Data shown in the Table No.-1 clearly indicates that five major development project - water resources. Transport, Industry non-hydro powder and mining have acquired the maximum land.

The Displaced and Affected Families - Development projects as mentioned above have most adversely affected the tribal population. They have destroyed their habitat and sources of their livelihood. Land acquired from tribal areas are common land and government legitimized on the ground that the lands do not belong to tribal's and they are encroachers. The state supported development projects displaced and affected the tribal population. There are mainly two categories of tribal population.

1. Displaced persons (DP)
2. Project affected persons (PAP)

The Table No. - 2 shows the categories of population directly or indirectly affected by development project.

Table No. - 2 (See the next page)

The report estimated that 15715 were DPs and 700934 were PAPs Table no. 02 Clearly indicates that most of the persons have been displaced under industries projects in the state.

Action Aid, Indian Social Institute New Delhi and LAYA Andhra Pradesh carried out a very intensive and extensive research and collected data. Their analysis clearly indicates, that most of the displaced persons, have been from scheduled tribes. They are most affected, and worst victims of development among the DP and PAP.

Table No. - 3 (See the next page)

Socio-economic impact of Displacement - Tribal's are the people of the forest and nature. Forest and nature are part and main source of their economy, food, agriculture, livestock, and housing implements. Forest and nature are the part of their belief system & worship, abode of spirit, song and dance and life style. Tribal's protect the nature and give a shape to it.

Displaced tribal's had to face various problems. Action Aid, Indian social institute and LAYA identified 503 respondents amongst displaced persons of Chhattisgarh and collected data. Analysis of the data reveals following socio-economic impact on displaced tribal's.

1. Tribal's were not properly informed regarding development projects only 18 % received information through officials sources.
2. Most of the displaced persons (55%) had non acceptance, negative feelings (anger, fear, frustration).
3. Respondents (23%) were forcibly evacuated from their original habitation and there wear protest on land related issue.
4. Govt. claims that displaced were adequately compensated but 85% of respondents felt that they were not adequately compensated. Many tribal tenants without land deeds are displaced but not compensated.
5. Majority of respondents spent their compensation money on food items. Compensation money was not sufficient to substitute effectively for the loss livelihood. Only 30% spent compensatory amount on land development and 23% on purchase of land.
6. Since C.G. Government is no resettlement policy till date only eight percent of respondent displaced were resettled and 91% to of them were not settled by the project which displaced them.
7. It was also revealed that the majority of the displaced faced the financial strain after resettlement. Financial strain was exponentially increased with the combination of lack employment opportunities and inadequate infrastructure.
8. This displaced families had to go through sever trauma in the process of displacement to resettlement .They had to travel from place to place in search of work. Nearly four percent stayed in transit camp and 92% had no exact settlement during transition.
9. Large number of displace had to bear the financial burden of relocation and borrowed money from other sources because the cost of relocation as assumed by the official was not sufficient.
10. Only 5.5% were compensated transportation cost for shifting to settlement colonies.
11. Amongst the victims of displacement major problem was unemployment.
12. Non availability of non timber forest produce affected the substenance economy and lively hood of displaced tribal's.
13. Resettlement sites lack basic facilities such as medical care, drinking water, sanitation, school, community centers.
14. It has been observed that in displaced men and women alcoholism and crime rate has increased after displacement.
15. After displacement communalism and social tensions have increased. In the state Salwa Judum (Peace Mission) initiated by C.G. Government started as anti-naxalite movement has extensively harmed tribal communities resulting in great civil unrest and violent social tension.
16. It was observed that tribal women are neither heads of household nor do they own lands in their name and was not eligible for compensation. Tribal women have become victims of trafficking by mining and industrial operators by false allurement of employment, marriage or more comfortable life in cities.

Conclusions - As stated about the realities of displacement it clearly indicates ,the development induced displacement has multiple affect on the social - economic conditions of displaced tribal communities. It has escalated, the financial strain, taken aways their forest land, deprived them from non timber forest produce which was an integral part of their subsistence economy. There is lack of basic facilities such as health care, education, supply of drinking. Water, sanitation in resettlement colonies, increased crimes and alcoholism and loss of social network are common features of displacement and resettlement.

Development induced displacement has not only destroyed economy of tribal's but it has destroyed the cultural identity of these tribal's which is deeply interwoven with the forest, law & water, resources. Displaced tribal's have lost their community social network, spiritual, religious cultural identities which have a deeper psychological impact that cannot be measured. Development induced displacement has converted the tribal's from subsistence agricultural economy into wage earner labourers in the modern industrial economy.

References -

1. Action Aid India, International Indian Social Institute, New Delhi and LAYA Andhra Pradesh Resource Rich Tribal's Poor a report (2008).
2. Census of India 2001, Chhattisgarh series 23, Director of Census Operation Chhattisgarh, Collectorate Chhattisgarh.
3. Ekka Alex, Study of Chhattisgarh Documentation Centres, India Social Institute, New Delhi 2000.
4. Official sources of information :
   - Irrigation Water Resources Department.
   - Mining Department
   - Industrial Department
   - Chhattisgarh Forest Department
   - Non Hydro Power Department
   - Revenue Department
   - Transportation and Communication Department

Websites :-

1. http// chhatisgarh.nic.in/statistics
2. http// durg.nic.in
3. http// raipur.nic.in
4. http//jashpur.nic.in
5. http// raigarh.nic.in
6. http// sarguja.nic.in
7. http// bilaspur.nic.in
8. http// chhatisgarh.nic.in/development/achivement.htm.
9. http// www. mapofindia.com/state profiles/chhattisgarh
10. http// cgforest.nic.in/forest resources.htm

Table No. - 2
Displaced and affected population

S.No.	Project	DFs (2)	DPs (3)	PAFs (4)	PAPs (5)	Total DP + PAP (6) (3+5)
1.	Water Project	965	3032	3087	10743	13775
2.	Industry Project	30165	152242	150398	646059	828301
3.	Mine Project	735	1885	4196	14132	16017
	Total	**31,865**	**15,7,159**	**157681**	**700934**	**858093**

(Source : Action Aid and Indian Social Institute Report)

Table No. - 3
Consolidated Social Group membership of DP & PAP in Chhattisgarh State

S.No.	Social groups	DP	DAP	Total
1.	Schedule Tribes	149847 (95.35)	650572 (92.81)	800419 (93.27)
2.	Schedule caste	4382 (2.78)	25139 (3.61)	29521 (3.44)
3.	OBC	2444 (1.55)	18476 (2.63)	20920 (2.44)
4.	General	486 (0.31)	6747 (0.96)	7233 (0.84)
		157159	700934	858093

(Source : Action Aid and Indian Social Institute Report)

****

कृषि उत्पाद पर आधारित उद्योगों का लागत-लाभ विश्लेषण : (उज्जैन जिले की दाल मिलों के विशेष संदर्भ में)

डॉ. बी.एस. मक्कड़ * डॉ. ऋतु पोरवाल* *

प्रस्तावना – भारत एक कृषि प्रधान देश है। भारत की एक अरब से अधिक जनसंख्या में लगभग 70 करोड़ जनसंख्या कृषि पर निर्भर है और इस 70 करोड़ में में 30 करोड़ के लगभग अशिक्षित है एवं इस 30 करोड़ में से 85% व्यक्ति कृषि कार्य करते है। भारत में 74.29% जनसंख्या गांवों में निवास करती है और जिनका प्रमुख उद्यम कृषि है। भारत में लगभग 76.3% जनसंख्या कृषि संबंधित कार्यो से अपना जीवनयापन करती है।

आज भी किसान पारम्परिक तरीके से कृषि कार्य करते है। इन्हें कृषि आधारित शिक्षा देकर आधुनिक कृषि प्रणाली एवं उन्नत तरीके खोजने होंगे जिससे कृषकों की आय में वृद्धि हो सके। आर्थिक उदारीकरण का चक्र जब से प्रारंभ हुआ है तब से गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वालों का प्रतिशत बढ़ा है। देश में बेरोजगारी एवं भुखमरी बढ़ी है। यह देश के लिए सबसे बड़ी चुनौती है कि आज गांव का बेरोजगार काम तलाश में महानगरों की ओर पलायन कर दर-दर की ठोकरे खा रहा है। ऐसी दशा में यह आवश्यक हो जाता है कि जो भी ग्रामीण बेरोजगार है उसको कृषि उत्पाद पर आधारित उद्योगों की ओर मोड़ा जा सके जिससे ग्रामीण प्रतिभा का शहरों की ओर पलायन रूक सके। बेरोजगारी को रोकने के लिए कृषि उत्पाद पर आधारित उद्योगों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए, जैसे – दलहन से दाल निकालने के लिए दाल मिलों की स्थापना की जा सकती है।

कृषि उद्योगों की अवधारणा कृषि एवं उद्योगों के महत्व अंत: निर्भरता को दर्शाती है। 'कृषि उद्योग ऐसे उद्योगों को कहते है जो प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से कृषि के आगत-निर्गत से जुड़े हुए होते है। ये उद्योग अधिकतर कृषि उपज पर निर्भर रहते है या कृषि से प्राप्त कच्चे माल की प्रक्रिया से उपयोग सामग्री का उत्पादन करते है।' कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार होने के कारण औद्योगिक इकाईयों, औद्योगिक रोजगार तथा कुल उत्पादन मूल्य में कृषि उद्योगों का महत्वपूर्ण योगदान होता है जबकि इन उद्योगों को बहुत कम पूंजी विनियोग की आवश्यकता होती है। इसका कारण यह है कि ये मिल मुख्यत: श्रम प्रधान होती है।

उद्देश्य – शोध का प्रमुख उद्देश्य उज्जैन जिले के दाल मिलों की वित्तीय स्थिति का अध्ययन कर उनका लागत-लाभ विश्लेषण करना है एवं मिलों में आने वाली समस्याओं का अध्ययन कर उनका समाधान करना है।

शोध का अपेक्षित परिणाम – पुष्टि की प्रत्याशा में प्राक्कल्पना की जाती है कि कच्चे माल के भावों में अनिश्चितता के कारण लागत प्रभावित हुई है जिसके कारण लाभार्जन क्षमता भी प्रभावित हुई है।

दाल मिलों का लागत-लाभ विश्लेषण –

लागत संरचना – किसी वस्तु के निर्माण में जो खर्चे किए जाते है वे सब मिलकर वस्तु की लागत कहलाती है। किसी भी वस्तु का निर्माण सामग्री, श्रम तथा अन्य व्ययों की सहायता से ही सम्भव होता है। लागत संरचना लागत के तत्वों पर आधारित होती है। ये तीन तत्व है- सामग्री, श्रम तथा व्यय। लागत के तत्वों को चित्र द्वारा दर्शाया गया है –

सामग्री लागत	श्रम लागत	व्यय
1. प्रत्यक्ष सामग्री	1. प्रत्यक्ष सामग्री	1.प्रत्यक्ष सामग्री
2.अप्रत्यक्ष सामग्री	2.अप्रत्यक्ष सामग्री	2.अप्रत्यक्ष सामग्री

प्रत्यक्ष अर्थात् जिसे वस्तु निर्माण में प्रत्यक्ष रूप से प्रयोग किया गया हो एवं अप्रत्यक्ष अर्थात् जिसका प्रयोग वस्तु निर्माण में प्रत्यक्ष रूप से नहीं किया गया है। उदाहरणार्थ दाल मिल में प्रयुक्त चना एक कच्चे माल के रूप में प्रत्येक्ष चना एक कच्चे माल के रूप में प्रत्यक्ष सामग्री है तथा मशीनों के लिए तेल, झाडू, मशीनों की सफाई का कपड़ा इत्यादि अप्रत्यक्ष सामग्री है।

प्रत्यक्ष सामग्री प्रत्यक्ष श्रम एवं प्रत्यक्ष व्यय को जोड़ने पर मूल लागत ज्ञात हो जाती है। उपरिव्यय से तात्पर्य यहां कारखाना उपरिव्यय कार्यालय उपरिव्यय तथा विक्रय एंव वितरण उपरिव्ययों से है

दाल मिलों का लागत विश्लेषण – लागत के विभिन्न तत्वों को अर्थात् प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष व्ययों को जोड़कर उत्पादित वस्तु की कुल लागत प्राप्त की जाती है। किसी भी संस्था में लागत ज्ञात करते समय विभिन्न चरणों में कार्य किया जाता है। अत: जिस क्रम से लागत ज्ञात की जाती है उसे ही लागत विश्लेषण कहा जाता है। कुल लागत ज्ञात करने के लिए लागत विश्लेषण के निम्न प्रारूप को प्रदर्शित किया गया है।

विवरण	**प्रति क्विंटल**	**रकम**
सामग्री का मूल्य		–
+ प्रत्यक्ष व्यय एवं श्रम		–
• मूल लागत		–
+ कारखाना उपरिव्यय		–
• कारखाना लागत		–
+ कार्यालय उपरिव्यय		–
• कार्यालय लागत		–
+ विक्रय एवं वितरण उपरिव्यय		–
• बेचे गए माल की लागत		–
+ कर एवं वित्तीय उपरिव्यय		–
•कुल लागत		–

दाल मिलों का लागत लाभ विश्लेषण – माल की लागत एवं विक्रय लागत के अंतर को लाभ के रूप में प्रदर्शित किया जाता है। लागत पर जब विक्रय का आधिक्य पाया जाता है तब विक्रेता को लाभ होता है एवं जब विक्रय पर लागत का आधिक्य पाया जाता है तो विक्रेता को हानि होती है। दाल मिलों की हानि या लाभ को निम्न समीकरण द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है–

* प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, (वाणिज्य विभाग एवं शोध केन्द्र) शासकीय माधव कला, वाणिज्य एवं विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक वाणिज्य, अवंतिका महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

हानि = लागत मूल्य – विक्रय मूल्य

लाभ = विक्रय मूल्य – लागत मूल्य

तालिका क्र. – 1 (अगले पृष्ठ पर देखें)

तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ है कि वर्ष 2010–11 में जिले की चना दाल मिल में लाभ प्राप्ति का प्रतिशत लागभग 50 प्रतिशत से 56 प्रतिशत के मध्य रहा है। जिले की चना दाल मिलों में सर्वाधिक लाभ प्राप्ति 1545 रूपये प्रति क्विंटल ऋषभ इण्डस्ट्रीज द्वारा 56.18 प्रतिशत की दर से प्राप्त की जा रही है। मिल द्वारा उत्पादित माल का लागत मूल्य 2750 रूपये प्रति क्विंटल पाया गया है तथा 4395 रूपये प्रति क्विंटल विक्रय मूल्य पाया गया है। मिल द्वारा कुल 20 हजार क्विंटल दाल का उत्पादन किया जा रहा है। न्यूनतम लाभ 1433 रूपये प्रति क्विंटल ओम प्रकाश एण्ड कम्पनी द्वारा 50.96 प्रतिशत की दर से प्राप्त किया गया है। मिल द्वारा उत्पादित माल का लागत मूल्य 2812 रूपये प्रति क्विंटल पाया गया है तथा विक्रय मूल्य 4245 रूपये प्रति क्विंटल पाया गया है। मिल द्वारा कुल 18 हजार क्विंटल माल का उत्पादन किया गया है। तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि लाभ प्रतिशत में वृद्धि का कारण लागत पर विक्रय का आधिक्य पाया गया है।

कृषि उत्पाद पर आधारित उद्योगों की समस्याएं एवं सुझाव – हमारा देश कृषि प्रधान देश है तथा इसकी जनसंख्या बहुत अधिक होने के कारण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाना अत्यन्त आवश्यक है। यदि हम अपने देश की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाना चाहते है तो कृषि उत्पाद पर आधारित उद्योगों का विकास अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। सरकार इन उद्योगों के लिए प्रयास तो कर रही है परन्तु फिर भी इनके विकास के मार्ग में कठिनाईयाँ अनुभव की जा रही है। जिले में संचालित उद्योगों को कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है, जो निम्नानुसार है–

1. कृषि को मानसून का जुआ कहा जाता है। मानसून की अनिश्चितता के कारण कृषि उपज में भी अनिश्चितता बनी रहती है जिससे इन उद्योगों को कच्चे माल की प्राप्ति में कठिनाई आती है।
2. इन उद्योगों के द्वारा कच्चे माल की प्राप्ति राज्यीय एवं अंतराष्ट्रीय बाजारों से की जाती है जिससे कच्चा माल अधिक मूल्य पर प्राप्त होता है फलस्वरूप इसका लागत मूल्य अधिक होता है।
3. कृषि उत्पाद पर आधारित उद्योगों के लिए बैंकों द्वारा कोई विशेष योजना नहीं चलाई गई है जिससे उन्हें उच्च ब्याज दर पर ऋण लेना पड़ता है तथा बैंक से ऋण प्राप्त करने में उद्यमी के समक्ष प्रतिभूति की समस्या भी उत्पन्न होती है।
4. इन उद्योगों द्वारा अपना माल मध्यस्थों के द्वारा विक्रय करवाया जाता है, जिससे लागतो में वृद्धि हो जाती है।
5. नागरिकों द्वारा ब्राण्डेड उत्पादों का उपयोग स्थानीय उत्पादों की अपेक्षा अधिक किये जाने के कारण इन्हें जटिल प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है एवं अपना माल प्रतिकुल शर्तो पर बेचना पड़ता है।
6. श्रमिक से संबंधित समस्या भी बनी रहती है। व्यस्त समय में यह समस्या अधिक तीव्र हो जाती है।
7. विद्युत की समस्या के कारण क्षेत्रों की अनेकों मिले बंद पड़ी है।
8. उज्जैन जिले के अंतर्गत अनेक मिले पुरानी है जिसके कारण इनके भवन की स्थिति माल की सुरक्षा की दृष्टि से ठीक नहीं पाई गई है जिस कारण भण्डारण की समस्या बनी हुई है।
9. सरकार द्वारा इन उद्योगों के विकास के लिए कोई विशेष कार्यक्रम नहीं चलाए गए हैं जिनसे इनका वांछित विकास नहीं हो पाया है।
10. इन उद्योगों द्वारा नवीनतम तकनीकी का प्रयोग नहीं किए जाने के कारण इनकी पूर्ण उत्पादन क्षमता का उपयोग नही हो पा रहा है।

इन समस्याओं के समाधान हेतु निम्न प्रयास किए जा सकते है –

1. कच्चे माल की उपलब्धता स्थानीय स्तर पर एवं निकटतम स्थानों से की जा सके इस दिशा में प्रयास किये जाने चाहिए। विशेष रूप से भण्डारण पर ध्यान दिया जाना चाहिए।
2. कृषि आधारित उद्योगों के लिए ऋण प्रक्रिया एवं ब्याज दर युक्ति संगत की जानी चाहिए।
3. मिल मालिकों द्वारा माल की विपणन प्रक्रिया में सुधार करना चाहिए। उन्हें बाजार में अपने माल के स्थायित्व हेतु उसका प्रचार–प्रसार करना चाहिए जिससे स्थानीय उपभोक्ता उससे आकर्षित होकर विक्रय वृद्धि में योगदान दे।
4. विद्युत की समस्या के समाधान के लिए सरकार के बाद एवं निजी क्षेत्र द्वारा इन उद्योगों के लिए निरंतर अबाधित विद्युत आपूर्ति हेतु प्रयास किये जाने चाहिए।
5. श्रमिकों को प्रशिक्षित एवं अभिप्रेरित कर उनके कार्यहीन समय को न्यूनतम करते हुए अधिकाधिक उतपादन हेतु प्रेरित किया जाना चाहिए।
6. उत्पाद के सुरक्षित भंडारण हेतु आधुनिकतम भण्डारगृहों की स्थापना की जानी चाहिए साथ ही पुराने भण्डारगृहों की आवश्यकतानुसार मरम्मत की जानी चाहिए।
7. सरकार एवं औद्योगिक संगठनों के द्वारा इन उद्योगों के विकास हेतु कार्यक्रमों, संगोष्ठियों एवं कार्यशालाओं का आयोजन किया जाना चाहिए।
8. उद्योगों के स्वामियों को तकनीकी ज्ञान की जानकारी प्रदान करने के लिए सरकार द्वारा कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए तथा उन्हें यह अवगत करवाया जाए कि वे किसी तकनीकी विशेषज्ञ की सहायता लेकर अपने उद्योगों में आधुनिक तकनीकियों का प्रयोग करे जिससे उत्पादन में वृद्धि कर लाभ में भी वृद्धि की जा सके।
9. इन उद्योगों के विकास हेतु निरन्तर शोध एवं अनुसंधान प्रक्रिया जारी की जानी चाहिए।

शोध के अपेक्षित परिणाम की पुष्टि – पुष्टि की प्रत्याक्षा में प्राक्कल्पना की गई थी कि कच्चे माल के भावों में अनिश्चितता के कारण लागत प्रभावित हुई है जिसके कारण लाभार्जन क्षमता प्रभावित हुई है।

निष्कर्ष –

1. इन उद्योगों में किसी विशेषज्ञ की नियुक्ति नहीं की गई है।
2. दाल मिलों में एकाकी व्यवसाय के अंतर्गत कार्य करने वाली मिलों का बाहुल्य पाया गया है।
3. इन मिलों में एक पाली 8 घंटे की होती है।
4. जिले में संचालित दाल मिलों का प्रबंधन कार्य मिल मालिकों के परिवार के सदस्यों द्वारा किया जा रहा है।
5. लेखा संबंधित समस्त कार्य करने के लिए मुनीम की नियुक्ति की गई है।
6. इन मिलों में विभागी करण पद्धति का प्रयोग नहीं किया गया है।
7. श्रमिकों की भर्ती के लिए 'कारखाने के दरवाजे पर भर्ती' स्त्रोत का सर्वाधिक प्रयोग किया गया है।
8. दाल मिलों में स्थायी पूंजी की तुलना में कार्यशील पूंजी की अधिकता पाई गई है।

9. जिले की दाल मिलों द्वारा पूंजी के स्त्रोत में स्वयं की पूंजी का प्रयोग अधिक किया गया है।
10. मिलों की विपणन प्रक्रिया उचित नहीं पाई गई है।
11. विपणन कार्य स्वामी एंव मध्यस्थों के माध्यम से किया जा रहा है।
12. इन मिलों में सुरक्षित भण्डारण की वैज्ञानिक पद्धति नहीं पाई गई है।
13. इन मिलों में अत्याधुनिक तकनीकों का प्रयोग नहीं किया जा रहा है जिससे उत्पादन क्षमता प्रभावित हुई है।
14. दाल मिलों में सर्वाधिक लाभ प्रतिशत ऋषभ इण्डस्ट्रीज का है एवं न्यूनतम लाभ प्रतिशत ओमप्रकाश एण्ड कम्पनी का है।
15. इन मिलों का अध्ययन करने से ज्ञात हुआ है, कि पूर्व की तुलना में लाभ प्रतिशत में वृद्धि हुई है जिसका कारण उनकी लागत एवं विक्रय के मध्य पाया गया अंतर है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. यादव सुबह सिंह : कृषि अर्थव्यवस्था, रावत पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
2. सिंह इंद्रजीत : श्रमिक विधियाँ, सेन्ट्रल लॉ ऐजेंसी, इलाहाबाद।
3. किशोर रवि एम. : लागत लेखाकंन टेक्समेन अलाइड सर्विसेस प्रा. लि. दिल्ली।
4. मुखर्जी रविन्द्रनाथ : सामाजिक शोध एवं सारिव्यकी, विवेक प्रकाशन, दिल्ली।
5. विकास आयुक्त लघु उद्योग, उद्यु उद्योग परियोजनाएँ, खण्ड प्रथम उद्योग मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली।
6. www.bhaskar.com
7. www.industries.com

तालिका क्र. - 1
जिले की दाल मिलों का प्रति क्विंटल
लागत-लाभ विश्लेषण

क्र	मिल का नाम	कुल उत्पादन (रूपये में)	विक्रय मूल्य (रूपये में)	लागत मूल्य (रूपये में)	लाभ	
					रूपये	प्रतिशत
1.	सिंहल इंटरप्राजेस	16	4260	2743	1517	5530
2.	महालक्ष्मी पल्स एण्ड प्रोटिन्स	22	4303	2832	1417	5194
3.	ऋषभ इण्डस्ट्रीज	20	4295	2750	1545	5618
4.	राणीसती पल्सेस	10	4263	2806	1457	5192
5.	गणेश दाल मिल	30	4278	2792	1486	5322
6.	ओम प्रकाश एण्ड कम्पनी	18	4245	2812	1433	5096
7.	लद्दूमलजंगी दाल मिल	16	4295	2775	1520	5477
8.	मित्तल इण्डस्ट्रीज	10	4303	2776	1527	5500
9.	श्री गुरूकृपा दाल मिल	22	4263	2798	1465	5235
10.	श्याम इण्डस्ट्रीज	12	4295	2798	1497	5350

स्त्रोत : व्यक्तिगत सर्वे द्वारा मिल मालिकों से प्राप्त आंकड़ों पर आधारित।

जिले की दाल मिलों का प्रति क्विंटल
लागत-लाभ विश्लेषण

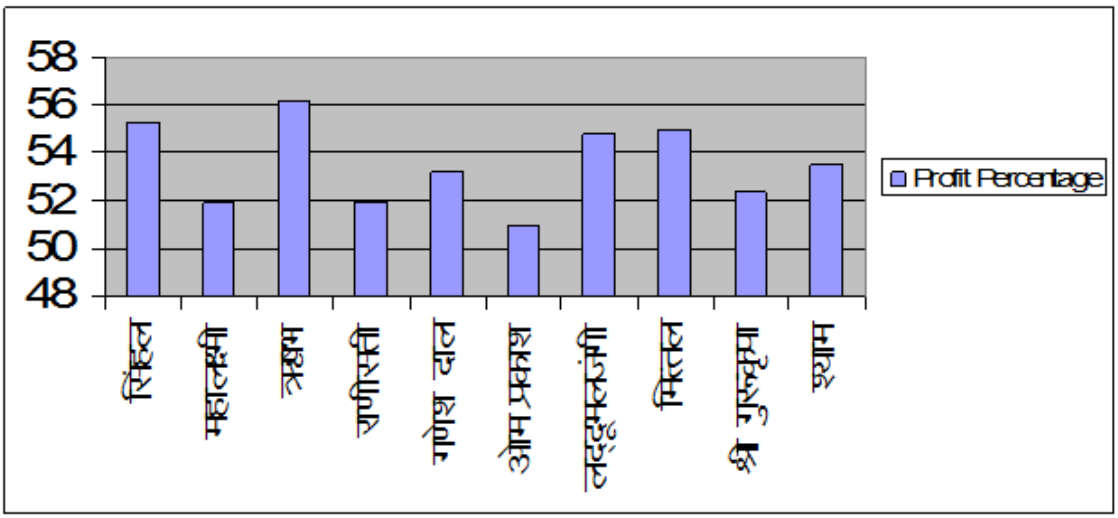

डाकघर की अल्पबचत योजनाऐं - एक अध्ययन (उज्जैन जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. बी.एस. मक्कड़ * डॉ. सोनी व्यास * *

प्रस्तावना – "जल की बिखरी हुई बूंद सूख कर खत्म हो जाती है जबकि यही छोटी–छोटी बूंदे परस्पर मिलकर महासागर बन जाती है, यह कथन बचत करने के बारे में बड़ा सार्थक प्रतीत होता है। भारत जैसे विकासशील राष्ट्र में अल्पबचत अत्यंत महत्वपूर्ण है। छोटी–छोटी बचतों को प्रोत्साहन करने के उद्देश्य से ही देश में राष्ट्रीय बचत संगठन कार्य कर रहा है।" हमारे देश में सन् 1882 से डाकघर बचत बैंक कार्यरत है। इसके अंतर्गत डाकघरों के माध्यम से बचत बैंक की सुविधाएं उपलब्ध करायी जाती है। डाकघर बचत बैंक को आम जनता और विशेष रूप से निर्धन वर्ग की सेवा करने की दृष्टि से सबसे बड़ा बैंक कहा जाता है। शुरू–शुरू में इसका लक्ष्य मितव्ययता की आदत को बढ़ावा देना था। लेकिन पिछले दस वर्षो में दस क्षेत्र में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए है। कम पढ़े लिखे तथा करोड़ो गांववासियों के लिए संचालित विशाल नेटवर्क होना इसकी प्रमुख विशेषता है।

महानगरों में इस बचत बैंक में आधुनिकतम प्रक्रिया इलेक्ट्रानिक फंड ट्रांसफर तथा बड़े बैंकों की भांति खातेदारों के लिये क्रेडिट कार्ड जारी करने की सुविधायें शुरू की जा चुकी है। भारतीय डाक द्वारा प्रीबचत बैंक सेवा के अंतर्गत कि गये इस परिवर्तन से लोगों को आकर्षित करने का प्रयास किया गया है। डाकघर बचत बैंक में खातेदारों के लिये चेक आदि की सुविधा तो हमारे देश में बहुत पुरानी है। डाकघर द्वारा अल्पबचत योजनाओं को प्रोत्साहन देने के लिए समय–समय पर कई प्रकार की योजनाएं तथा पुरस्कार भी प्रदान किये जाते है। भारतीय डाकघर सेवायें विश्व भर में सबसे बड़ी और विशाल है। इसके अंतर्गत कई महत्वपूर्ण कार्य भी किये जाते है।

शोध का उद्देश्य – डाकघर की अल्पबचत योजनाओं का आयकरदाताओं द्वारा लिये जा रहे लाभो का अध्ययन करना ही शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य है।

शोध की प्राक्कल्पना – पुष्टि की प्रत्याशा में प्राक्कल्पना की जाती है कि आयकरदाताओं द्वारा डाकघर की अल्पबचत योजनाओं का समुचित एवं पर्याप्त लाभ उठाया गया है।

शोध हेतु प्रयुक्त प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र में उज्जैन जिले के 100 जमाकर्ताओं का सर्वेक्षण दैवप्रतिचयन पद्धति के आधार पर किया गया है तथा सूचना प्राप्ति के लिये समंको का एकत्रीकरण प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों स्त्रोतों से किया गया है। प्राथमिक संमकों का संकलन सम्बंधित विभाग के अधिकारी कर्मचारी तथा जमाकर्ताओं आदि से साक्षात्कार प्रश्नावली आदि विधिओं के माध्यम से तथा द्वितीयक समंकों को मुख्य रूप से उज्जैन के मुख्य डाकघर देवासगेट द्वारा प्रकाशित पत्रिका, वित्तीय विवरणों, समाचार पत्रों, इंटरनेट आदि के माध्यम से विषय सामग्री का संकलन किया गया है।

विषय विस्तार एवं पल्लवन – डाकघर द्वारा अल्पबचत की जो योजनाऐं वर्तमान समय में चलाई जा रही है वें निम्नानुसार है –

1. **डाकघर बचत खाता योजना –** यह योजना डाकघरों में 01 अप्रेल 1822 से प्रारम्भ की गई है। यह खाता एकल अथवा संयुक्त नामों से खोला जा सकता है। अवयस्क व्यक्ति भी यह खाता खोल सकता है। न्यूनतम् 50 रूपये से खाता प्रारम्भ किया जा सकता है। इसकी अधिकतम सीमा एकल खातें के रूप में लाख रूपये तथा संयुक्त खातें के रूप में 2 लाख रूपये है। इस योजना में 4 प्रतिशत वार्षिक ब्याज देय है। न्यूनतम 500 रूपये शेष पर चेक की सुविधा उपलब्ध है। डाकघर बचत खातें में जमा रकम पर व्यक्तिगत खातें के रूप में 3500 रूपये वार्षिक का ब्याज कर मुक्त होगा जबकि संयुक्त खातें की स्थिति में कर छुट की ब्याज राशि 7000 रूपये पर होगी। इससे अधिक अर्जित ब्याज पर कर लगेगा।

2. **05 वर्षीय डाकघर आवर्ती जमा खाता योजना –** यह योजना नियमित बचत के लिये एक आदर्श योजना है। इस योजना में परिपक्वता पर 10 रूपये के खातें में 74453 रूपये मिलते है। इस पर 83 प्रतिशत त्रैमासिक आधार पर ब्याज मिलता है। इस योजना में निवेश की अधिकतम सीमा नहीं है। न्यूनतम 10 रूपये अथवा 5 रूपये के गुणकों में खाता खोला जा सकता है। एक वर्ष पश्चात् जमा राशि की 50 प्रतिशत तक राशि सिर्फ एक बार निकाली जा सकती है।

3. **डाकघर सावधि जमा खाता योजना –** यह योजना अवधि के अनुसार 4 प्रकार की होती है। इस योजना में वार्षिक आधार पर ब्याज दिया जाता है परन्तु इसकी गणना तिमाही आधार पर होती है।

प्रकार	चक्रवृद्धि ब्याज दर
एक वर्षीय सावधि जमा खाता	8.20 प्रतिशत
दो वर्षीय सावधि जमा खाता	8.20 प्रतिशत
तीन वर्षीय सावधि जमा खाता	8.30 प्रतिशत
पांच वर्षीय सावधि जमा खाता	8.40 प्रतिशत

इस योजना में निवेश की राशि न्यूनतम 200 रूपये एवं इसके गुणकों में तथा अधिकतम की कोई सीमा नहीं है। खाता 6 माह बाद बिना परिपक्वता के बंद किया जा सकता है। इसे आयकर अधिनियम की धारा 80 सी के तहत बचत लिखित समूह में शामिल किया जाता है।

4. **डाकघर मासिक आय योजना –** यह योजना 5 वर्ष की है। इस योजना में निवेश की न्यूनतम राशि 1500 रूपये तथा अधिकतम राशि एकल खातें में 4.50 लाख तथा संयुक्त खातें में 9 लाख रूपये निर्धारित की गई है। यह योजना धारक को 8.40 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से ब्याज प्रदान करती है। इसके अतिरिक्त 5 प्रतिशत की दर से परिपक्वता पर बोनस भी प्रदान करती है। एक वर्ष बाद खाता बंद करने पर 2 प्रतिशत तथा तीन वर्ष बाद खाता बंद करने पर 1 प्रतिशत की कटौती की जाती है। इस योजना में जमा राशि पर किसी प्रकार की आयकर छूट प्रदान नहीं की जाती है।

5. **राष्ट्रीय बचत पत्र –** भारत सरकार ने 01–04–1990 से राष्ट्रीय बचत पत्र (छठां एवं सातवां निर्गम को बंद करते हुए) 01–04–2013 से पांच वर्षीय राष्ट्रीय बचत पत्र (आठवीं अंक) तथा दस वर्षीय राष्ट्रीय बचत पत्र (नोवी अंक) नाम से एक नई एवं अत्यंत लाभकारी योजना प्रारम्भ की गई। इस योजना में निवेश की न्यूनतम राशि 100 रूपये तथा अधिकतम

*प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, (वाणिज्य विभाग एवं शोध केन्द्र) शासकीय माधव कला, वाणिज्य एवं विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, भारतीय महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

राशि की कोई सीमा नही है। ये बचत पत्र कुल पांच मूल्य वर्ग में उपलब्ध है। 100, 500, 1000, 5000 तथा 10000 रूपये इन पर चक्रवृद्धि ब्याज 8.05 प्रतिशत तथा 8.08 प्रतिशत 6 माही अर्ाािर पर परिपक्वता पर देय है। जमा राशि आयकर अधिनियम की धारा 80 सी के अंतर्गत कुल आय में से कटोती योग्य है।

6. 15 वर्षीय लोक भविष्य निधि खाता – इस योजना में 8.70 प्रतिशत दर से ब्याज वार्षिक आधार पर गणनीय है। निवेश की न्यूनतम राशि 500 रूपये तथा अधिकतम राशि 1 लाख रूपये वित्तीय वर्ष में राशि एक मुश्त या 12 किश्तों में जमा की जा सकती है। इस योजना की परिपक्वता अवधि 15 वर्ष है। जमा राशि आयकर अधिनियम की धारा 80 सी के अंतर्गत कुल आय में से कटोती योग्य है। साथ ही इस योजना पर मिलने वाला ब्याज पूर्णत: कर मुक्त होता है।

7. वरिष्ठ नागरिक जमा योजना 2004 – यह योजना 01 जुलाई 2004 से प्रारम्भ की गई है। 60 वर्ष की आयु से अधिक आयु वर्ग के वरिष्ठ नागरिकों के लिये यह योजना उपयोगी है। इस योजना की परिवक्वता अवधि 5 वर्ष है। इसके अंतर्गत ब्याज 9.20 प्रतिशत की दर से त्रैमासिक आधार पर दिनांक 31 मार्च, 30 जून, 30 सितम्बर तथा 31 दिसम्बर पर मिलता है। 1000 के गुणांकों में खाता खोला जा सकता है तथा इसकी अधिकतम जमा राशि की सीमा 15 लाख रूपये है। यह योजना आयकर अधिनियम 1961 के अंतर्गत '80 सी के तहत बचत लिखित समूह में शामिल है। बचत बैंक के अतिरिक्त भारतीय डाकघरों में डाक जीवन बीमा कराने की सुविधा प्रदान की जाती है। जिसमें कम प्रीमियम तथा अधिक बोनस दर उपलब्ध है। उज्जैन जिले के डाकघर अल्पबचत योजनाओं के विगत 5 वर्षों में जमा राशियों की स्थिति जो निम्नलिखत तालिका के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है –

(तालिका क्रं.01 नीचे देखें)

तालिका की सभी योजनाओं का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि सभी वर्षो में सर्वाधिक राशि बचत खाता योजना के अंतर्गत जमा हुई है तथा 5 वर्षीय आवर्ती जमा योजना 15 वर्षीय लोक भविष्य निधि योजना तथा वरिष्ठ नागरिक जमा योजनाओं की राशियों में भी उज्जैन जिले के नागरिकों द्वारा राशि विनियोजित की गई है।

शोध के अपेक्षित परिणाम की पुष्टि – पुष्टि की प्रत्याशा में प्राक्कल्पना की गयी थी कि आयकरदाताओं द्वारा डाकघर की अल्पबचत योजनाओं का समुचित एवं पर्याप्त लाभ उठाया गया है। संदर्भ रूप में तालिका क्रमांक – 1 के अंतर्गत डाकघर बचत खाता योजनाडाकघर आवर्ती जमा खाता योजना राष्ट्रीय बचत पत्र, 15 वर्षीय लोक भविष्य निधि योजना, वरिष्ठ नागरिक जमा योजना 2004 प्रमुख है। इन योजनाओं के अंतर्गत राशि विनियोग करने पर आयकरदाताओं को आयकर अधिनियम की धारा 80 सी के अंतर्गत छूट प्राप्त होती है। अत: आयकरदाताओं द्वारा आयकर से बचने हेतु इन योजनाओं में विनियोग किया गया है।

निष्कर्ष – किसी भी देश की अर्थव्यवस्था के विकास में डाकघर की अल्पबचत योजनाओं की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अल्पबचत योजना कोई नवीन योजना नहीं है। आय–व्यय और बचत व्यक्ति की आकांक्षा और आपूर्ति के मध्य संघर्ष करती हुई एक जन्मदाता एवं स्वाभाविक क्रिया है। जिसका शिक्षा और संगठन से अधिक विवेक से संबंध होता है। राष्ट्रीय बचत कार्यक्रम को एक जनआंदोलन के रूप में विकसित किया जाना चाहिये ताकि लोगों में नियमित बचतभावना पनप सके तथा विकास कार्यक्रमों के लिये संसाधनों के अभाव की स्थिति पैदा न होने पाये लेकिन इसके लिये प्रचार–प्रसार की दिशा में सार्थक प्रयास करने होंगे।

यद्यपि राष्ट्रीय बचत संगठन राज्य बचत निदेशालय तथा भारतीय डाकघर विभाग द्वारा अल्पबचत की विभिन्न योजनाओं का प्रचार किया जाता है किन्तु प्रचार माध्यमों का इस क्षेत्र में प्रभावी भूमिका निभाने की अभी आवश्यकता है। इस समय हमारे देश में डाकघर बचत खाता, सावधि, आवृत्ति, लोक भविष्य निधि, मासिक आय योजना, राष्ट्रीय बचत योजना, वरिष्ठ नागरिक जमा योजना आदि के द्वारा विभिन्न लाभकारी योजनाऐं चलायी जा रही है किन्तु इनके कार्य करने के ठंग और प्रणाली में सुधार की जरुरत है तभी डाक बचत में रिकार्ड उपलब्धि प्राप्त की जा सकती है। इस क्षेत्र में अनन्त संभावनाऐं अभी शेष है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ.पन्त जे.सी.एवं डॉ.मिश्रा जे.पी.– व्यावहारिक अर्थशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा।
2. डाकघर जिला उज्जैन के वार्षिक प्रतिवेदन एवं वित्तीय विवरण (वर्ष 2007–08 से 2011–12 तक)

पत्र–पत्रिकाएं –

1. भारतीय डाक विभाग – डाक सेवा एक नजर में
2. कुरुक्षेत्र पत्रिका – संपादक – कुरूक्षेत्र ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार मंत्रालय कृषि भवन, नई दिल्ली।
3. योजना पत्रिका – 538 योजना भवन संसद मार्ग नई दिल्ली।
4. प्रतियोगिता दर्पण

समाचार पत्र – दैनिक भास्कर, बिजनेस स्टेन्डर्ड, बिजनेस भास्कर।

वेबसाईट एवं ब्लॉग्स –

1. www.indiapost.gov.in
2. www.24duniya.com
3. www.nayaindiya.com
4. D33P जागरण junction (आपकी आवाज, आपका ब्लॉग) प्रदीपचन्द्र निगम ब्लॉग।

तालिका क्रं.01

उज्जैन जिले के डाकघर की अल्पबचत योजनाओं के अंतर्गत जमा राशियों की स्थिति (राशि लाख रूपये में)

योजनाऐं	2007–08		2008–09		2009–10		2010–11		2011–12	
	राशि	प्रतिशत	राशि	प्रतिशत	राशि	प्रतिशत	राशि	प्रतिशत	राशि	प्रतिशत
बचत खाता योजना	5217.57	100	8521.97	163.33	14663.32	281.03	16245.92	311.36	20426.26	391.49
सावधि जमा खाता योजना	1411.56	100	817.44	57.91	873.46	61.88	845.26	59.88	830.62	58.84
5 वर्षीय आवर्ती जमा खाता योजना	3728.86	100	4367.79	117.13	4621.82	123.94	4845.45	129.94	5201.56	139.49
मासिक आय योजना	3740.48	100	1707.60	45.5	2758.37	73.74	2640.22	70.58	2751.92	73.57
15 वर्षीय लोक भविष्य निधि योजना	347.56	100	330.94	95.21	321.75	92.57	345.67	99.45	367.45	105.72
राष्ट्रीय बचत पत्र	1155.55	100	815.32	70.55	806.62	69.80	811.27	70.20	815.92	70.60
वरिष्ठ नागरिक जमा योजना	774.82	100	755.92	97.56	725.90	93.68	719.09	92.80	746.27	96.31

स्त्रोत :– डाकघर मुख्य कार्यालय देवासगेट, उज्जैन द्वारा प्रदत्त वार्षिक प्रतिवेदन के आधार पर।

देवास जिले के ग्रामीण विकास हेतु राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक की योजनाओं के लक्ष्य एंव क्रियान्वयन का मूल्याकंन एक अध्ययन (वर्ष 1999-2000 से 2005-2006)

डॉ. सचिन दास *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोधपत्र देवास जिले के ग्रामीण विकास हेतु राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक(नाबार्ड) की योजनाओं के लक्ष्य एंव क्रियान्वयन का मूल्याकंन में क्षेत्रिय बैंको,सहकारी बैंको ,वणिज्यिक बैंको ,कृषि एंव ग्रामीण विकास बैंकों के माध्यम से समाज के कमजोर वर्गो के लिये – लघु सिचाई ,भुमि विकास ,कृषि यंत्रीकरण ,बागान और बागवानी , दुग्धव्यवसाय ,मुर्गी पालन ,पशु पालन ,वानिकी ,मत्स्य पालन, भण्डारण हेतु –विशिष्ट कार्यक्रम के द्वारा विभिन्न ग्रामीण विकास कि योजनाओं के लिये ऋण वितरित किया गया है जिनसे ग्रामीणों का आर्थिक, सामाजिक , सांस्कृतिक एवं सामाजिक विकास हुआ है और उनके जीवन स्तर में सुधार हुआ है।

प्रस्तावना – किसी भी राष्ट्र का विकास तब तक पूर्ण नहीं माना जा सकता जब तक कि उस राष्ट्र के गांवों का विकास नहीं हो जाता। यह कथन भारत के परिप्रेक्ष्य में और भी महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि हमारे देश की अधिकांश जनसंख्या गांवों में निवास करती है या दूसरे शब्दों में कहे तो भारत गांवो में बसता है। ऐसे में हम विज्ञान के नये अविष्कारों का उपयोग कर कितनी भी तरक्की कर लें पर जब तक इनका लाभ ग्रामीण क्षेत्रों में नही पहुंचता तब तक संपूर्ण राष्ट्र को विकसित करना अतिश्योक्ति होगी।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व वर्षा में ही इस दिशा में प्रयास शुरु किये जा चुके थे । तत्पश्चात शासन द्वारा भी इस क्षेत्र में प्रयास किये जा रहे हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व के वर्ष 1908 में श्री रवीन्द्रनाथ टेगौर ने 'श्रीनिकेतन योजना' के माध्यम से ग्रामीण युवकों को ग्राम कल्याण का उपदेश दिया तथा उन्हें ग्रामों में जाकर कल्याणकारी कार्य करने की प्रेरणा दी। वर्ष 1926 में गांधीजी द्वारा सेवा ग्राम योजना के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिये 20 सूत्रीय कार्यक्रम बनाया जिसमें मुख्यत: खादी का प्रयोग ,हाथ से कपड़ा बुनना ,प्रारंभिक और प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम , नारी कल्याण कार्यक्रम नसबंदी आदि प्रमुख थे। स्वतंत्रता के पश्चात् शासन द्वारा वर्ष 1955 में छुआ – छुत अभिशाप अधिनियम , वर्ष 1961 में दहेज अधिनियम एंव वर्ष 1975 में स्व. प्रधानमत्री श्रीमती इंदिरा गांधी द्वरा 20 सूत्रीय कार्यक्रम की घोषणा की इस कार्यक्रम की रूप रेखा इस प्रकार तैयार की गई कि सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक विकास हो सके।

समग्र तौर पर देखा जाये तो 'ग्रामीण विकास कार्यक्रम एक व्यापक कार्यक्रम है जिसके अंतर्गतकृषि विकास ,आर्थिक तथा सामाजिक उन्नति के आधार की तैयारी , भूमिहीनों को उचित मजदुरी, आवास की व्यवस्था, एंव स्वास्थ्य एंव संचार सुविधा का विकास शामिल है।'

शासकीय एंव अन्य प्रयास – भारत गांवों का देश है , सन 1991 की जनसख्या के अनुसार भारत में लगभग 74.30 % व्यक्ति यहाँ के लगभग 6 लाख गांवों में निवास करते हैं। अत: ग्रामीण क्षेत्रों की कल्पना किये बिना राष्ट्र की उन्नति कि प्रत्येक योजना अर्थहीन और राष्ट्र की सर्वांगिण प्रगति का स्वप्न अधूरा जायेगा।

योजना आयोग ने ग्रामीण विकास के लिये सामुदायिक विकास योजना नामक एक विस्तृत कार्यक्रम तैयार किया। यह कार्यक्रम 20 अक्टुबर 1952 को 55 चुनी हुई परियोजनाओं के रूप में शुरू हुआ। सामुदायिक विकास कार्यक्रम का उद्देश्य ग्रामीण भारत का समन्वित विकास है । जिससे कि उसका सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक विकास हो।

सामुदायिक विकास योजनाओं से तात्पर्य ग्रामीण क्षेत्रों की सामाजिक और आर्थिक पून: निर्माण की उन योजनाओं से है जो जनसाधारण के सहयोग से चलाई जाती हैं। यह एक ऐसी विधि या प्रणाली है जिसमें समुदाय के विकास हेतु सरकार व जनता आपस में मिलकर सहयोग के साथ कार्य करते है।

समुदायिक विकास योजना के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि ओर उससे संबंधित क्षेत्रों जैसे – भूमि सुधार, सिंचाई की व्यवस्था, बीज खाद की व्यवस्था एवं पशुओं की अच्छी नस्लों की खरीदी के लिये विभिन्न योजनाओं के माध्यमों से वित्त उपलब्ध करवाया जाता है। सहकारिता विकास कार्यक्रम के अंतर्गत नई सहकारी समितियों को खोलना तथा पुरानी सहकारी समितियों का पुनर्गठन करने का कार्य किया जाता है। इस योजना के अंतर्गत रोजगार की व्यवस्था करने हेतु ग्रामीण और उपयुक्त उद्योगों का विकास करना, ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न योजनाओं के माध्यम से सड़क निर्माण कराना, ट्राईसेम योजना और नेहरू रोजगार योजना के द्वारा तकनीकि शिक्षा को बढ़ावा देना, समय-समय पर स्वास्थ संबंधी कार्यक्रमों के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छता तथा बीमारियों की रोकथाम हेतु जानकारी प्रदान करना, गृह निर्माण कार्यक्रम के अंतर्गत पुराने मकानो की हालत ठीक करने तथा नये मकान बनाने हेतु सलाह देना तथा जरूरत पड़ने पर आर्थिक सहायता उपलब्ध करवाना।

समाज के कमजोर वर्गो के लिये विशिष्ट कार्यक्रमों के माध्यमों द्वारा जैसे-सीमांत कृषक योजना , कृषि श्रमिकों के लिये अनेक कल्याणकारी योजनाऐं , अकाल क्षेत्रों में रोजगार की व्यवस्था , पहाड़ी क्षेत्रों में रोजगारोन्मुखी कार्यक्रम , संपूर्ण ग्राम विकास , मछली पालन , कुक्कुट पालन, भेड़-बकरी पालन , अच्छे व सस्ते आवसीय गृहों का निर्माण, पाठशालाओं का निर्माण , स्वास्थ केन्द्रो का निर्माण , बागवानी तथा सार्वजनिक हित के कार्यक्रम नाबार्ड के द्वारा क्रियान्वित किये जा रहे है।

देवास जिले के ग्रामीण विकास हेतु नाबार्ड की योजनाओं का लक्ष्य एंव क्रियान्वयन का मूल्यांकन – वाणिज्यिक बैंकों , जिला सहकारी बैंकों , जिला सहकारी कृषि ग्रामीण बैंकों देवास शाजापुर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के द्वारा – लघु सिचाई ,भुमि विकास ,कृषि यंत्रीकरण ,बागान

* प्राचार्य, मौलाना आजाद महाविद्यालय, देवास (म.प्र.) भारत

और बागवानी , दुग्धव्यवसाय ,मुर्गी पालन ,पशु पालन ,वानिकी ,मत्स्य पालन, भण्डारण एंव अन्य पर विभिन्न योजनाओं के माध्यम से विभिन्न वर्षो में ऋण प्रदान किया है । जिसका तालिकानुसार विवरण निम्नानुसार है –

(तालिका अगले पृष्ठ पर देखें)

नाबार्ड के द्वारा वणिज्यिक बैंकों , जिला सहकारी बैंकों , जिला सहकारी कृषि ग्रामीण बैंकों देवास शाजापुर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के माध्यम से कुल ऋण प्रवाह – नाबार्ड के द्वारा वाणिज्यिक बैंकों ,जिला कें. सहकारी बेंकों, जिला सहकारी कृषि ग्रामीण बैंकों ,देवास षाजापुर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के द्वारा लघु सिंचाई हेतु वर्ष 1999–2000 में कुल 2665.43 लाख रू. का ऋण प्रदान किया गया । वर्ष 2000–2001 में 2909.67 लाख रू का ऋण किया गया जो कि आधार वर्ष 1999–2000 की तुलना में 1.09 गुना अधिक था वर्ष 2001–02 में 2994.76 लाख रू. का ऋण प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष की तुलना में 1.12 गुना अधिक था वर्ष 2002–03 में 4275.22 लाख रू. का ऋण प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष की तुलना में 1.60 गुना अधिक था वर्ष 2003–04 में 5549.93 लाख रू. का ऋण प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष की तुलना में 2.08 गुना अधिक था। वर्ष 2004–05 में 7962.01 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष की तुलना में लगभग 3 गुना अधिक था वर्ष 2005–06 में 9500 लाख रू. का ऋण प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष की तुलना में 3.56 गुना अधिक था।

भूमि विकास हेतु नाबार्ड ने विभिन्न बैंकों के माध्यम से वर्ष 1999–2000 में 16.80 लाख रू. का ऋण प्रदान किया । वर्ष 2000–01 में 11.51 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो आधार वर्ष की तुलना में 38.49% कम था । वर्ष 2001–02 में 3.87 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो आधार वर्ष की तुलना में 76.97% कम था । वर्ष 2002–03 में 56.65 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो आधार वर्ष की तुलना में 3.37 गुना अधिक था । वर्ष 2003–04 में 78.68 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो आधार वर्ष की तुलना में 4.68 गुना अधिक था । वर्ष 2004–05 में 32.24 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो आधर वर्ष की तुलना में 1.91 गुना अधिक था । वर्ष 2005–06 में 40 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो आधर वर्ष की तुलना में 2.38 गुना अधिक था ।

कृषि यंत्रीकरण हेतु वर्ष 1999–2000 में 1854.56 लाख रू. का ऋण प्रदान किया गया । वर्ष 2000–01 में 1349.15 लाख रू. का ऋण प्रदान किया गया जो की आधार वर्ष की तुलना में 27.26% कम था । वर्ष 2001–02 में 837.48 लाख रू. का ऋण प्रदान किया गया जो आधार वर्ष की तुलना में 54.85% कम था । वर्ष 2002–03 में 754.29 लाख रू. का ऋण प्रदान किया गया जो आधार वर्ष की तुलना में 59.32% कम था । वर्ष 2003–04 में 663.19 लाख रू. का ऋण प्रदान किया गया जो आधार वर्ष की तुलना में 64.25% कम था । वर्ष 2004–05 में 474.62 लाख रू. का ऋण प्रदान किया गया जो आधार वर्ष की तुलना में 74.41% कम था । वर्ष 2005–06 में 85 लाख रू. का ऋण प्रदान किया गया ।

बागान और बागवानी हेतु वर्ष 1999–02 में 13.91 लाख रू. का ऋण प्रदान किया गया वर्ष 2000–01 में 46.03 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो आधार वर्ष की तुलना में 3.3 गुना अधिक था । वर्ष 2001–02 में 65.27 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो आधार वर्ष की तुलना में 4.70 गुना अधिक था । वर्ष 2002–03 में 72.10 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो आधार वर्ष की तुलना में 5.18 गुना अधिक था । वर्ष 2003–04 में 132.18 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो आधार वर्ष की तुलना में 9.50 गुना अधिक था । वर्ष 2004–05 में 54.97 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो आधार वर्ष की तुलना में 3.95 गुना अधिक था। वर्ष 2005–06 में 85 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो आधार वर्ष की तुलना में 6.11 गुना अधिक था । दुग्ध व्यवसाय के लिये वर्ष 1999–2000 में 169.64 लाख रू.का ऋण प्रदान किया गया । वर्ष 2000–01 में 74.85 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो आधार वर्ष का 55.88% कम था। वर्ष 2001–02 में 127.13 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो आधार वर्ष का 25.06% कम था। वर्ष 2002–03 में 139.73 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो आधार वर्ष का 17.64% कम था। वर्ष 2003–04 में 78.36 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो आधार वर्ष का 53.81% कम था। वर्ष 2004–05 में 39.85 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो आधार वर्ष का 76.51% कम था। वर्ष 2005–06 में 70 लाख रू. का ऋण प्रदान किया जो आधार वर्ष का 58.74% कम था।

मुर्गी पालन हेतु वर्ष 1999–2000 में0.20 लाख रू.का ऋण प्रदान किया गया । वर्ष 2000–01 में 2.87 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष की तुलना में लगभग 14 गुना अधिक था । वर्ष 2001–02 में 1.03 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष की तुलना में लगभग 5 गुना अधिक था । वर्ष 2002–03 में 1.34 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष की तुलना में लगभग 6.7 गुना अधिक था। वर्ष 2003–04 में 2.45 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष की तुलना में लगभग 12 गुना अधिक था । वर्ष 2005–06 में 3.00 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष की तुलना में लगभग 15 गुना अधिक था ।

पशु पालन हेतु वर्ष 2001–02 में8.07 लाख रू.का ऋण प्रदान किया गया । वर्ष 2002–03 में 17.52 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष (2001–02)का लगभग 2.17 गुना अधिक था । वर्ष 2003–04 में 25.03 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष की तुलना में लगभग 3 गुना अधिक था । वर्ष 2004–05 में 13.46 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष की तुलना में लगभग 1.67 गुना अधिक था। वर्ष 2005–06 में 30 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष की तुलना में लगभग 3.71 गुना अधिक था ।

वानिकी हेतु वर्ष 2000–2001 में6.65 लाख रू.का ऋण प्रदान किया गया । वर्ष 2003–04 में 87.77 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष (2000–01)का लगभग 13 गुना अधिक था । वर्ष 2004–05 में 1.02 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष का लगभग 1.56 गुना अधिक था । वर्ष 2005–06 में 5.00 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष का लगभग 1.56 गुना अधिक था। वर्ष 2005–06 में 5.00 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष का लगभग 7.70 गुना अधिक था

मत्स्य हेतु वर्ष 1999–2000 में 0.70 लाख रू.का ऋण प्रदान किया गया । वर्ष 2000–01 में 0.96 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष (1999–2000)का लगभग 1.37 गुना अधिक था । वर्ष 2001–02 में 0.10 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष का लगभग 85.72% गुना अधिक था । वर्ष 2002–03 में 2.52 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष का लगभग 3.5 गुना अधिक था। वर्ष 2003–04 में 4.71 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष का 6.72 गुना अधिक था। 2004–05 में 7.68 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष का लगभग 10 गुना अधिक था । 2005–06 में 10 लाख रू.

का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष का 14 गुना अधिक था भण्डारण हेतु वर्ष 1999-2000 में 5.96 लाख रू.का ऋण प्रदान किया गया। वर्ष 2000-01 में 5.96 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष (1999-2000)का लगभग शत प्रतिशत था। वर्ष 2001-02 में 17.58 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष का लगभग 3 गुना अधिक था। वर्ष 2002-03 में 2.52 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष का लगभग 57.72% कम था। वर्ष 2003-04 में 45.97 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष का 7.71 गुना अधिक था। 2004-05 में 2.71 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष का लगभग 54.54%गुना अधिक था। 2005-06 में 50.00 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष का लगभग 8.38 गुना अधिक था

अन्य के लिए वर्ष 1999-2000 में 83 .70 लाख रू.का ऋण प्रदान किया गया। वर्ष 2000-01 में 667.90 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष (1999-2000)का लगभग शत प्रतिशत था। वर्ष 2001-02 में 124.58 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष का लगभग 1.48 गुना अधिक था। वर्ष 2002-03 में 2087.44 लाख रू. का ऋण प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष का लगभग 25 गुना अधिक था। वर्ष 2003-04 में 441.75 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष का 5.27 गुना अधिक था। 2004-05 में 809.29 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष का लगभग 9.50 गुना अधिक था। 2005-06 में 600.00 लाख रू. का ऋण प्रदान प्रदान किया गया जो कि आधार वर्ष का लगभग 7.16 गुना अधिक था

निष्कर्ष – देवास जिले के ग्रामीण विकास की गति को भविष्य में और तीव्र करने के लिए नाबार्ड द्वारा केन्द्र सरकार के साथ संलग्न प्रस्तावित योजनायें नाबार्ड द्वारा भविष्य में भी विकास की गति को बनाये रखने के लिए संचालित होती रहेगी। 11 वीं पंचवर्षीय योजना (वर्ष 2007-08 से वर्ष 2011-12) तक में केन्द्र सरकार द्वारा प्रस्तावित विभिन्न ग्रामीण एंव कृषि विकास की परियोजनाओं में नाबार्ड की सक्रिय भागीदारी रही , राज्य सरकार द्वारा भविष्य में लागु की जाने वाली ग्रामीण एंव कृषि विकास की योजनाओं पर नाबार्ड की सक्रिय भागीदारी रहेगी ,कृषि उद्योग एंव सेवा क्षेत्र में संतुलन बनाये रखने का कार्य भी नाबार्ड द्वारा किया जायेगा।प्रदेश में बागान और बागवानी , दुग्धव्यवसाय ,मुर्गी पालन ,पशु पालन ,वानिकी ,मत्स्य पालन, भण्डारण आदि विकास के लिए बनाई गई योजनाओं में नाबार्ड कि भूमिका अहम् रहेगी। कृषि यंत्रीकरण ,फसल बीमा योजना आदि के अंतर्गत कृषकों को प्रोत्साहित करके ग्रामीण विकास करने में बैंक की सक्रिय भागीदारी होगी। कृषि फसलों के भण्डारण एंव प्रसंस्करण विकास के लिए भी बैंक योजनाऐं बनाकर कार्य करेगा। आधारभूत सुविधाओं के विकास एंव ग्रामीण स्वास्थ की योजनाओं में भी सरकार के साथ समन्वय स्थापित करके कार्य किया जावेगा। गैर वित्तीय योजनाओं के माध्यम से ग्रामीणों को प्रोत्साहित करके ग्रामीण एंव कृषि विकास के विभिन्न कार्य नाबार्ड के द्वारा किये जावेगें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 एग्रीकल्चर इकॉनामिक्स, दार हर सरनम रामा पब्लिसिंग हाउन्स 1992
2 दत्तरूद्र एवं सुन्द्ररम के.पी.एम., भारतीय अर्थव्यवस्था एस. चन्द्रा एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली1989
3 Gupta U.K. Management of Financial Radha Publication Institution in India, New Delhi
4 Jain P.K. Financial Institution of India Trichi Publication New Delhi1983
5 माहेश्वरी पी.डी, सांख्यिकी प्रविधियाँ, विवेक प्रकाशन , देहली 1997
6 मिश्र श्रींकांत, भारत में कृषि विकास, द मेकमिलन कम्पनी ऑफ इंडिया लि नई दिल्ली 1976
7 मध्यप्रदेश में सहकारिता, डॉ. सक्सेना एम.पी. अपेक्स बैंक ट्रेनिंग कॉलेज भोपाल (म.प्र.राज्य सहकारी बैंक मर्या. द्वारा संचालित)
8 नाबार्ड कार्यालय, देवास के वार्षिक प्रतिवेदन
9 वाणिज्यिक बैंकों , जिला सहकारी बैंकों , जिला सहकारी कृषि ग्रामीण बैंकों देवास शाजापुर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के वार्षिक प्रतिवेदन
10 इन्टरनेट

वर्ष	लघु सिंचाई		भूमि विकास		कृषि यंत्रीकरण		बागान और बागवानी	
	राशि	%	राशि	%	राशि	%	राशि	%
1999-00	2665.43	-	16.80	-	1854.56	-	13.91	-
2000-01	2909.67	109.15	11.51	68.51	1349.15	72.74	46.03	330.91
2001-02	2994.76	112.34	387	23.03	837.48	45.15	65.27	469.23
2002-03	4275.22	160.38	56.65	337.20	754.29	40.672	72.10	518.33
2003-04	5549.93	208.20	78.68	468.33	683.19	35.75	132.18	950.25
2004-05	7962.01	298.69	32.24	191.90	474.62	25.59	54.97	395.18
2005-06	9500	354.41	40.00	238.09	85.00	0.045	85.00	611.07

वर्ष	दुग्ध व्यवसाय		मुर्गी पालन		पशु पालन		वानिकी		मत्स्य पालन		भण्डारण		अन्य	
	राशि	%	राशि	%	राशि	%	राशि	%	राशि	%	राशि	%	राशि	%
1999-00	169.64	-	0.20	-	-	-	-	-	0.70	-	5.96	-	83.70	-
2000-01	74.85	44.12	2.87	1435	-	-	0.65	-	0.96	137.14	5.96	100	667.90	797.96
2001-02	127.13	74.94	1.03	515	8.07	-	-	-	.0.10	14.28	17.58	294.96	12.58	148.84
2002-03	139.73	82.36	1.34	870	17.52	217.10	-	-	2.52	360	2.52	42.28	2087.44	2493.95
2003-04	78.36	46.19	2.45	1225	25.03	310.16	87.77	3503.07	4.71	672.85	45.97	771.30	441.75	527.77
2004-05	39.85	23.49	00	00	13.46	166.79	1.02	1097.14	7.68	1097.14	2.71	45.46	809.29	966.89
2005-06	70.00	41.26	3.00	1500	30.00	371.74	5.00	1428.57	10.00	1428.57	50.0	838.926	600.00	716.68

भारतीय अर्थव्यवस्था में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की भूमिका

डॉ. सचिन दास * डॉ. एल. एन. शर्मा * *

शोध सारांश – बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का उदय आर्थिक क्षेत्र में द्वितीय विश्व युद्ध के बाद हुआ। इस समय इन्हें बहुराष्ट्रीय निगमों, अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनीयाँ, ग्लोबल व्यवसाय, अन्तर्राष्ट्रीय निगम आादि नामों से पुकारा जाता था। बहुराष्ट्रीय कम्पनी एक ऐसी कम्पनी या उद्यम होती है जो एक से अधिक देशों में फैली रहती है तथा जिसका उत्पादन तथा सेवायें उस देश के बाहर भी होती है जिसमें वह जन्म लेती है। अन्य शब्दों में बहुराष्ट्रीय निगम से अभिप्राय उन विशाल अल्पाधिकारी कम्पनीयों से है। जिसकी फैक्ट्रियों और बिक्री व्यवस्था का जाल विश्व के सारे देशों में फैला हुआ होता है, साथ ही ये अपने व्यवसाय से अधिक लाभ अर्जित करने का प्रयास करते हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट के अनुसार यह निगम निजी, सहकारी अथवा सरकारी स्वामित्व वाले भी हो सकते हैं इनके उत्पादन की तकनीक बहुत उन्नत होती है। तथा इनकी प्रसिद्धि विश्व के काफी देशों में फैली हुई होती है। इसलिये इन निगमों की वस्तुयें आसानी से बिक जाती है। आज संयुक्त राज्य अमेरिका में सर्वाधिक बहुराष्ट्रीय कम्पनियों कार्यरत है। जर्मनी, युनाइटेड किगडम, जापान, फ्रांस, इटली, स्विटजरलैण्ट, तथा आस्ट्रेलिया, का क्रम आता है। वर्तमान समय में विश्व व्यापार का 40% प्रतिशत इन बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा संचालित होता है।

प्रस्तावना – भारत में इस प्रकार की अनेक कम्पनियाँ है जिनका कारोबार भारत में ही है , किन्तु उनका मुख्यालय भारत के बाहर अन्य देशों में है। साथ ही साथ इनका व्यवसाय भारत के अतिरिक्त अन्य कइे देशों में भी पाया जाता है। कुछ कम्पनियों के नाम तथा इनके व्यवसाय निम्न प्रकार है जैसे – पौण्डस चेहरे के लिये क्रीम बनाने वाली कम्पनी, कोलगेट – पालमोलीव दन्त मंजन व दाढ़ी का साबुन बनाने वाली कम्पनी, हिन्दुस्तान लीवर साबुन व डालडा घी बनाने वाली कम्पनी, ग्लैक्सो दवाई बनाने वाली कम्पनी, गुडलक नेरोलक पेन्ट्स रंग व वार्निश बनाने वाली कम्पनी, वारने टी चाय बेचने वाली कम्पनी, सीवा दवाई वाली कम्पनी आदि।

भारतीय अर्थव्यवस्था में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों (निगमों) की भूमिका– बहुराष्ट्रीय निगम न केवल विश्व निवेश में ही प्रभावशाली होते है वरन् अन्तर्राष्ट्रीय अत्पादन व्यापार, वित्त तथा तकनीक में भी अपना महत्व रखते हैं। एक रिपोर्ट के अनुसार 14 बड़े विकसित देशों में बहुराष्ट्रीय निगमों की सख्या आरम्भ में 7000 थी जो अब बढ़कर इस समय 24,000 हो गयी है। सम्पूर्ण विश्व में इस समय 40000 बहुराष्ट्रीय कम्पनीयाँ हैं। इनके पास संसार की कुल निजी सम्पति का 1/3 भाग है तथा जिनकी बिक्री 55,000 करोड़ डालर प्रतिवर्ष हैं। 10 बड़े देशों के बहुराष्ट्रीय निगमों की संख्या उनके विदेशी सम्बद्ध संस्थाओं सहित निम्नलिखत तालिका के द्वारा दर्शाया गया है –

क्र. सं.	देश का नाम	बहुराष्ट्रीय निगमों की सख्या	विदेशी सम्बद्ध संस्थाएँ
1	जर्मनी	6984	11821
2	जापान	3529	3150
3	सयुंक्त राज्य अमेरिका	3000	14900
4	फ्रांस	2056	6870
5	ब्रिटेन	1500	2900
6	कनाडा	1308	5874
7	ब्राजील	566	7110
8	चीन	389	15966
9	इटली	263	1438
10	भारत	187	926

इस तालिका से स्पष्ट होता है कि सबसे अधिक बहुराष्ट्रीय निगम जर्मनी में है। जापान दूसरे स्थान तथा अमेरिका तीसरे स्थान पर है। भारत में 187 बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ हैं। भारत ने अपने विकास की गति तीव्र करने के लिये विदेशी पूँजी आमंत्रित करना स्वीकार किया है। प्रत्यक्ष विदेशी सहायता, प्रैद्योगिकी सहयोग, अन्तर्राष्ट्रीय वित्त संस्थाओं से दीर्घ कालीन ऋण तथा बहुराष्ट्रीय निगमों की स्थापना आदि के कारण विदेशी पूँजी ने भारतीय अर्थव्यवस्था को नये आयाम प्रदान किये है। इसके अतिरिक्त देश में विदेशी मुद्रा भण्डार में अपार वृद्धि हुई। वर्ष 1991 में जो विदेशी मुद्रा 1.1 बिलियन डालर थी वह बढ़कर वर्ष 1998 में 27.36 बिलियन डालर हो गयी। इस दृष्टि से भारतीय अर्थव्यवस्था का वर्तमान स्वरूप एक संरचनात्मक परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। योजना काल में इसके विकास की दर निम्न प्रकार रही है।

क्र. सं.	योजनाएँ	विकास दर का लक्ष्य (%में)	विकास दर की प्राप्ति(%में)
1	प्रथम योजना काल	2.1	3.6
2	द्वितीय योजना काल	4.5	4.0
3	तृतीय योजना काल	5.6	2.2
4	चतुर्थ योजना काल	5.7	3.3
5	पंचम योजना काल	5.4	5.1
6	षष्ठम योजना काल	5.2	5.3
7	सप्तम योजना काल	5.0	5.5
8	अष्टम योजना काल	6.0	6.5
9	नवम योजना काल	7.0	6.8
10	दशम योजना काल	8.0	7.2

उपर्युक्त तालिका को देखने से पता चलता है कि द्वितीय , तृतीय , तथा चतुर्थ योजनाओं में विकास दर लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो सकी, किन्तु आगे की योजनाओं में देश को आगे निकलने में सफलता प्राप्त हुई।

इसी प्रकार 1998 में सफल घरेलू उत्पादन गत वर्षो की तुलना में घटकर 5 प्रतिशत हो गया। इसी प्रकार राजकोषीय घाटा गत वर्षो की तुलना में बढ़कर 6 प्रतिशत है। यह हमारी अर्थव्यवस्थों के लिये चिन्ता का विषय रहा।

* प्राचार्य, मौलाना आजाद महाविद्यालय, देवास (म.प्र.) भारत
* *अतिथि विद्वान, नेहरु शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर– मालवा (म.प्र.) भारत

बहुराष्ट्रीय निगम तथा विदेशी विनियोग – 1991 में औद्योगिक नीति की घोषणा के बाद भारत में विदेशी पूँजी के आगमन में तेजी आयी। सरकार ने भारतीय उद्योगों को अपनी गतिविधियाँ चलाने में सुविधा देने से नकारात्मक सूची को छोड़कर अन्य सभी मामलों में स्वत: प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग की अनुमति दे दी। स्वत: विनियोग का अभिप्राय विदेशी विनियोजकों को विनियोग करने के 30 दिनों के अन्दर तथा कोई शेयर जारी करने के भी 30 दिनों के अन्दर भारतीय रिजर्व बैक को इस बारे में केवल सूचित करना है। विदेशी स्वामित्व वाली कम्पनियों के लिये विदेशी विनियोग सम्वर्द्धन बोर्ड या सरकार से प्राथमिकता वाले क्षेत्रों में विनियोग हेतु पूर्व और विशेष अनुमति लेने की आवश्यकता को कुछ अनिवार्य शर्तो के साथ समाप्त कर दिया गया है।

सरकार ने प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग नीति उदारीकरण की प्रकिया में निम्नलिखित परिर्वतन किये –

1 ई – कॉमर्स के लिये 100 प्रतिशत विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग ।
2 22 उपभोक्ता मदों पर लाभाँश संतुलन की स्थिति को हटा दिया गया।
3. विद्युत क्षेत्र में विदेशी विनियोग पर रोक हटा दी गयी।
4. तेल परिशोधन में 100 प्रतिशत विदेशी विनियोग की अनुमति प्रदान की गयी है। विदेशी विनियोग जो सन् 1991–92 में 97 मिलियन अमेरिकी डालर था वह बढ़कर 1997–98 में 3557 मिलियन अमेरिकी डालर हो गया। इसके बाद इसमें कमी आयी। पुन: यह सन् 2001 –2002 में बढ़कर 3904 मिलियन अमेरिकन डालर के स्तर तक पहुँच गया। भारत में अधिकांश प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग कम्प्यूटर हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर इंजीनियरिंग उद्योग सेवाओं ,इलेक्ट्रॉनिक्स तथा विद्युत उपस्कर रसायन और सम्बद्ध उत्पादों के माध्यम से हुआ है। इतना होते हुए भी भारत सरकार ने नयी आर्थिक नीति में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को प्रोत्साहन देने हेतु अनेक रियायतों की घोषणाये की है। जुलाई 1991 में भारत सरकार ने विदेशी निवेश के लिये अधिक उदार नीति की घोषणा की। इस घोषणा के अनुसार 34 उद्योगों को लाइसेंस से मुक्त कर दिया गया। इन उद्योगों में विदेशी निवेशक की इक्विटी पूँजी 51 प्रतिशत तक हो सकती है। 15 उद्योगों को ऐसे रखा गया जिनमें निवेश करने के लिए कोई अनुमति की आवश्यकता नहीं होती हैं। इनमें निवेश की अनुमति विदेशी निवेश प्रोन्नति बोर्ड देता है। सन् 1992–93 में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश, पोर्ट फोलियो निवेश तथा अनिवासियों द्वारा निवेश और जमाओं को प्रोत्साहन के लिये निम्नलिखित कदम उठाये गये।

1 अप्रैल 1992 को भारत सरकार ने बहुपक्षीय निवेश गारन्टी एजेन्टी प्रोटोकाल जो निवेश की सुरक्षा की गारन्टी देता है पर हस्ताक्षर किया है।
2 विदेशी निवेशक इक्विटी की बिक्री रिजर्व बैक आफ इंडिया द्वारा निर्धारित दर नहीं वरन बाजार दर पर कर सकता हैं।
3 उपभोक्ता वस्तुओं के उद्योग को छोड़कर शेष में लाभांश बराबर निर्यात करना अनिवार्य नहीं होती है।
4 प्राकृतिक तेल की खोज व सफाई शक्ति विद्युत कोयले के खनन में भी विदेशी निवेशक पूँजी लगा सकता है।
5 1973 के विदेशी विनिमय अधिनियम फेरों मे ऐसे संशोधन किये है ताकि विदेशी निवेश को प्रोत्साहन प्राप्त हो सके।

गैर – बैंकिग क्षेत्र के अतिरिक्त बैकिग क्षेत्र में भी बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ सक्रिय भूमिका निभा रही हैं। भारत के 9 व्यवसायिक बैंकों की 115 शाखायें विदेशों में कार्य कर रही हैं। इनमें सचल एजेन्सियाँ भी सम्मलित हैं। भारत में लगभग 25 विदेशी बैंक हैं जिनकी 100 से अधिक शाखायें यहाँ पर कार्यरत हैं। ग्रिन्डलेज बैंक स्टैण्डर्ड चाटर्ड बैंक हांगकांग एंव संघाई कापोरेशन में से प्रत्येक की 20 से अधिक शाखायें यहाँ पर कार्य कर रही हैं।

इस संदर्भ में विशेष बात यह रही कि सरकार की नीति इन बहुराष्ट्रीय निगमों का भारतीयकरण करने की थी। अत: इस अधिनियम के अन्तर्गत सरकार ने कुछ अधिकार ले लिये जिनके अन्तर्गत उसने इन सभी 883 कम्पनियों से कहा था कि अपनी पूजीं में विदेशियों का हिस्सा 40 प्रतिशत करने का प्रयास करें। अत: 700 कम्पनियों ने अपनी पूजीं में विदेशियों हिस्सा 40 प्रतिशत कर दिया, लगभग 100 कम्पनियों को 51 प्रतिशत पर बने रहने की अनुमति दे दी गयी लगभग 40 को 74 प्रतिशत पर बने रहने की आज्ञा दे दी गयी ,लेकिन कोका कोला व आई.बी.एम इस प्रकार विदेशी हिस्सा कम करने को तैयार नहीं हुए। अत: उन्होंने अपना व्यापार बन्द कर दिया, परन्तु अब सरकार ने नीति में परिवर्तन किया है। औद्योगिक नीति, 1991 के अनुसार 51 प्रतिशत की पूंजी की अनुमति सरकार द्वारा दी जा रही है (कुछ मामलों में शत प्रतिशत पूंजी की अनुमति दी जा रही है।) इससे इन निगमों की क्रियाएँ भारत में बढ़ रही हैं। अनेक बहुराष्ट्रीय निगम भारत में आ गये हैं और उन्होने अपना व्यापार प्रारम्भ कर दिया है। कोका कोला कम्पनी जिसे पहले अनुमति न मिलने के कारण अपना व्यापार भारत में बन्द करना पड़ा था, वह अब 17 वर्ष बाद पुन: भारत में आ गई है।

भारत की औद्योगक नीति 1991 व नवीन आर्थिक नीति के फलस्वरूप बहुराष्ट्रीय निगमों का कारोबार भारत में तेजी से बढ़ने लगाा है। जिससे भारतीय उद्योगपतियों में भय सा फैल गया है और वे भरसक प्रयास कर रहे है कि उनके भली–भाँति मुकाबला किया जा सके।

निष्कर्ष – बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का विश्व की आर्थिक प्रणालियों पर क्रांतिकारी प्रभाव पड़ता है। इसका कारण यह है कि बहुराष्ट्रीय निगम के अन्तर्राष्ट्रीय सौदो का प्रभाव कई देशों के परम्परागत पूँजी के प्रवाह और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पर पड़ता है। इनके द्वारा विकासशील देशों को विकसित देशों से पूँजी की व्यवस्था करने में सहायता मिलती है , तकनीकी ज्ञान का भी आदान प्रदान होता है। इनकी सहायता से मानवीय संसाधनो का विकास होता है, ये कम्पनियाँ ज्ञान के आदान प्रदान होने के कारण लोगों में आपसी सहयोग सहानुभूती प्रेम तथा सहिष्णुता आदि गुणों का विकास होता है।

अन्त में यह कहना गलत नहीं होगा कि बहुराष्ट्रीय निगम अतिथेय देशों में अपनी शाखाये स्थापित करके बड़ी मात्रा में रोजगार के अवसरों का निर्माण करते हैं। ये दो प्रकार से रोजगार का सृजन करते है। प्रथम निवेश की दर में वृद्धि करके तथा दूसरा तकनीकी ज्ञान का विकास करके। अत:एव बहुराष्ट्रीय निगम विकासशील देशों मे निवेश की दर को ऊँचा उठाने मे सहायता प्रदान करते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दत्तरूद्र एवं सुन्द्ररम के.पी.एम, भारतीय अर्थव्यवस्था एस. चन्द्रा एण्ड कम्पनी,, नई दिल्ली 1989
2. व्यवहारिक अर्थशास्त्र जे.सी. पंत एंव जे.पी. मिश्रा साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा
3. Gupta U.K. Management of Financial Radha publication InstitutioninIndia New Delhi
4. Jain P.K.Financial Institution of India Trichi Publication New Delhi1983
5. Goyal O.P. Financial Institution Light & Life Publishers, Jammu 1989 Economics Growth in india
6. A. Ansari Business Studies yougbodh Agrawal Prakashan Raipur (C.G.)
7. इन्टरनेट

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित खरगोन की नवीन ऋण नीति का समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ. गणेश प्रसाद दावरे *

शोध सारांश – जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, खरगोन 16 दिसंबर 1949 को पंजीकृत हुई थी। वर्तमान में बैंक की कुल 54 शाखाऐं एवं 9 अमानत शाखाऐं है। इस प्रकार 63 शाखाऐं कार्यरत है, जिसमें संबद्ध कुल 297 समितियां कार्यरत है, जिसमें प्राथमिक कृषि सहकारी संस्थाऐं 182, विपणन एवं प्रक्रिया समितियां 18, बुनकर एवं औद्योगिक समितियां 21 एवं अन्य समितियां 76 सम्मिलित है। बड़वानी और खरगोन दोनों जिलों में कुल कृषक परिवारों की संख्या 3,78100 है, जिसमें बैंक से संबद्ध समितियों के परिवारों की संख्या 3,53,855 होकर अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के सदस्यों की संख्या 1,66,281 है।

अल्पकालीन कृषि ऋणों के फसलवार (खरीफ एवं रबी) मानदण्ड निर्धारण करने के लिये एवं मध्यकालीन/दीर्घकालीन ऋणों की ईकाई लागत तय करने हेतु आयुक्त सहकारिता एवं पंजीयक सहकारी संस्थाऐं, मध्यप्रदेश भोपाल द्वारा गठित तकनीकी समुह द्वारा नवीन ऋण नीति तैयार की गई। बैंक द्वारा वितरित किये जाने वाले अल्प कालीन एवं मध्यकालीन ऋणों की अदायगी क्षमता प्रति एकड़ के मान से निम्नानुसार फसल ऋण मान का अनुमोदन करने का निर्णय लिया गया है।

प्रस्तावना – जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, खरगोन की स्थापना मुख्य रुप से सहकारिता के सिद्धांत को दृष्टिगत रखते हुए सुदूर ग्रामीण अंचलों में एवं शहरी क्षेत्रों में बसे कृषकों तथा कम आय वर्ग के लोगों को बैंकिग सुविधाऐं तथा कृषि आदान उपलब्ध कराते हुए उनके जीवन का सर्वांगीण विकास करना रहा है।

बैंक उक्त उद्देश्य की पूर्ति हेतु निरन्तर प्रगति पथ पर अग्रसर है। ये सर्वविदित है, कि व्यवसायिक बैंकों की सेवाओं का विस्तार ग्रामीण क्षेत्रों में पर्याप्त मात्रा में न होने से ग्रामीणों को बैंकिंग सुविधाऐं उपलब्ध कराने का मुख्य दायित्व जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक का ही है। बैंक द्वारा उक्तानुसार ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग सभी कृषकों को बैंकिंग सुविधाऐं एवं कृषि आदान उपलब्ध कराया जा रहा है।

शोध का उद्देश्य – जिला सहकारी केन्द्रीय बैं क मर्यादित खरगोन अपनी स्थापना के पश्चात् अपने उद्देश्य की पूर्ति में कहां तक सफल हुआ है । सहकारिता के सिद्धांत के प्रतिपादन के साथ-साथ किसानों को ऋण उपलब्ध कराने में कहां तक सफल हुआ है । यह ज्ञात करना शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य है ।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र – प्रस्तुत शोध पत्र में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित खरगोन द्वारा प्रकाशित द्वितीयक संमकों का प्रयोग करते हुए उनका समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है तथा खरगोन जिले की नवीन ऋण नीति को ही शोध पत्र के क्षेत्र में सम्मिलित किया गया है ।

शोध व्याख्या – तालिका क्र.1 (अगले पृष्ठ पर देखें)

तालिका क्र. 01 के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि खरीफ एवं रबी की फसल का फसलवार कुल लागत का निर्धारण, कुल उत्पादन मूल्य एवं वर्तमान स्वीकृत साख सीमा (प्रति एकड़) में नगद (मजदूरी, निंदाई, सिंचाई, ब्याज आदि) का फसल मूल्य तथा खाद, बीज, दवाई (जैविक खाद) का वस्तु ऋण आरोपित होने से फसल के वास्तविक मूल्य में अत्यधिक वृद्धि हो रही है ।

अल्पकालीन एवं मध्यकालीन / दीर्घकालीन कृषि ऋण वितरण के सम्बन्ध में अधिकतम ऋण सीमा, ऋण वितरण का समय एवं मानदंड तथा शर्तो का निर्धारण –

अल्पकालीन कृषि, मध्यकालीन कृषि एवं दीर्घकालीन, उद्यानिकी मिशन योजनान्तर्गत ऋणों के लिये ऋण वितरण हेतु व्यक्तिगत सदस्यों की अधिकतम ऋण सीमा पात्रता, ऋण सीमा पात्रता, ऋण वितरण का समय एवं इस संबंध में आवश्यक मानदण्ड तथा शर्तो का निर्धारण किये जाने हेतु निम्नानुसार प्रस्ताव प्रस्तुत हैं। अधिकतम् ऋण सीमा के अंतर्गत सामग्री क्रय करने की स्थिति में कोटेशन का 80 प्रतिशत एवं निर्माण कार्य की स्थिति में एस्टीमेट का 80 प्रतिशत या अधिकतम ऋण सीमा जो भी कम हो उस सीमा तक ऋण स्वीकृत किया जावेगा। अधिकतम ऋण सीमा, ऋण वितरण का समय एवं मानदंड निम्नानुसार होगें।

तालिका क्र.2

ऋण अदायगी सीमा के आधार पर सीमावार प्रति एकड़ ऋणमान सीमा का निर्धारण (2005-2013)

(ईकाई रु. प्रति हेक्टेयर)

क्र.	नाम फसल	नगद	खाद	बीज	दवाई	योग
1	शंकर ज्वार	5625	1125	375	375	7500
2	मक्का	7500	1500	500	500	10000
3	सोयाबीन	10725	2145	715	715	14300
4	मूंगफली	10625	2025	675	675	14000
5	मूंग चवला	6000	1200	400	400	8000
6	उडद	6375	1275	425	425	12000
7	अरहर (तुवर)	12000	2400	800	800	16000
8	बी. टी. कपास	31500	6300	2100	2100	42000
9	गेहू	15000	3000	1000	1000	20000
10	चना	7500	1500	500	500	10000

स्त्रोत: जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, खरगोन

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

तालिका क्र. 02 के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि ऋण अदायगी सीमा के आधार पर फसलवार (प्रति एकड़) ऋणमान सीमा का निर्धारण फसल के नगद मूल्य में खाद, बीज, दवाई का खर्च जोड़कर फसल के वास्तविक मूल्य में अत्यधिक वृद्धि हो रही है।

खरीफ एवं रबी की फसल का फसलवार कुल लागत का निर्धारण, कुल उत्पादन मूल्य एवं वर्तमान स्वीकृत साख सीमा (प्रति एकड़) में नगद (मजदूरी, निंदाई, सिंचाई, ब्याज आदि) का फसल मूल्य तथा खाद, बीज, दवाई (जैविक खाद) का वस्तु ऋण आरोपित होने से फसल के वास्तविक मूल्य में अत्यधिक वृद्धि हो रही है।

इस साख सीमा के अन्तर्गत ऋण वितरण के पूर्व न्यूनतम ऋण वसूली- इस ऋण नीति में नगद ऋण वितरण उन्हीं संस्थाओं को किया जावेगा जिनकी बैंक स्तर पर कुल मांग के विरुद्ध कम से कम 25% वसूली हो चुकी हो। किंतु यह प्रतिबंध लघु कृषक सदस्यों के लिए प्रभावशील नहीं रहेगा। अर्थात् समिति के ऐसे लघु कृषक सदस्य जिनके द्वारा अपनी मांग का सम्पूर्ण ऋण मय ब्याज के अदा कर दिया हो तो उन्हें पात्रतानुसार पुन: संस्था से ऋण प्राप्त करने की पात्रता होगी। इसी प्रकार से असंतुलन वाली समितियों की मांग की गणना सदस्यों पर बकाया ऋण की मांग का 25% भाग वसूल होने पर ही ऋण वितरण किया जाना संभव होगा।

निष्कर्ष- जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, खरगोन विगत 6 दशकों से कृषक परिवारों की विभिन्न वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति कर रही हैं। क्षेत्र के कृषक बैंक की जमा नीति से लाभान्वित हो रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वार्षिक प्रतिवेदन जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, खरगोन, 2005-2013
2. पुस्तिका जिला सांख्यिकी कार्यालय, खरगोन, 2013
3. श्रीवास्तव, प्रेमनारायण : पश्चिम निमाड़ गजेटियर
4. ऋण पुस्तिका, जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, खरगोन,2013
5. अग्रवाल, माथुर, गुप्ता : सहकारी चिन्तन एवं ग्रामीण विकास, रमेश बुक डिपों, जयपुर, 2012
6. माथुर डॉ. बी.एस. : सहकारिता, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2012
7. स्मारिका : मध्यप्रदेश राज्य सहकारी संघ, भोपाल, 2012

तालिका क्र.1

खरीफ एवं रबी के फसल की कुल लागत का निर्धारण, कुल उत्पादन मूल्य एवं वर्तमान स्वीकृत साख सीमा प्रति एकड़ फसलवार (खरीफ एवं रबी) कुल लागत का निर्धारण (प्रति एकड़) वर्ष 2005-2013

क्र	नाम फसल	कृषि विभाग/उद्यानिकी विभाग अनुसार लागत प्रति हेक्टेयर					
		नगद (मजदूरी, निंदाई, सिंचाई, ब्याज आदि)	वस्तु ऋण			योग	कुल योग (3+7)
			खाद	बीज	दवाई (जैविक खाद)		
1	2	3	4	5	6	7	8
1	शंकर ज्वार	12450	5610	934	1000	7544	19994
2	मक्का	17300	7960	3000	1000	11960	29260
3	सोयाबीन	10450	7140	3000	1500	11640	22090
4	मूंगफली	14450	7140	10000	1000	18140	32590
5	चना	12350	4490	3750	2500	10740	23090
6	पपीता (शंकर)	13550	17000	12500	7000	36500	50050
7	शंकर मिर्च	28900	33000	7500	6000	46500	75400
8	बी. टी. कपास	34650	9825	3600	5000	18425	53075
9	गेहू	20100	7960	2500	1000	11460	31560
10	देशी मिर्च	6600	9900	550	1650	12100	18700

स्त्रोत: जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, खरगोन

****

भारतीय कृषि में यंत्रीकरण

डॉ. एम. आर. महाले *

शोध सारांश – मशीनीकरण आधुनिक खेती प्रणाली के लिए आवश्यक है। छोटे पैमाने की खेती में मशीनीकरण कम लाभप्रद होता है। भारत में धीमी गति से मशीनीकरण का यह एक प्रमुख कारण है। किन्तु उचित तकनीक वाली मशीनो का उपयोग छोटे पैमाने पर खेती में लाभ पहुँचा सकता है। भारत में छोटे पैमाने पर खेती का अनुपात दो तिहाई के आसपास है। फिर भी कृषि में आधुनिक तरीका उत्पादन बढ़ाने के लिए आवश्यक है।

प्रस्तावना – भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान रहा है और आज भी है। वास्तव में कृषि हमारे देश में केवल जीविकोपार्जन का साधन या उद्योग-धंधा ही नहीं है बल्कि अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। देश में उद्योग धन्धे, विदेशी व्यापार, विदेशी मुद्रा अर्जन, विभिन्न योजनाओं की सफलता एवं राजनितिक स्थायित्व भी कृषि पर ही निर्भर है। 'कृषि को सर्वाधिक प्राथमिकता देने की आवश्यकता है। यदि कृषि असफल रहती है तो सरकार एवं राष्ट्र दोनों ही सफल रहते है।'

भारत में बड़े पैमाने पर परम्परागत तरीके से खेती की जाती रही है। 1969-70 में हरितक्रांति के पश्चात् से खेती की पद्धति में सुधार होता जा रहा है। मनुष्य श्रम और पशु शक्ति के स्थान पर मशीनी शक्ति के उपयोग की ओर कृषकों का न केवल ध्यान गया है बल्कि मशीनों के उपयोग का अपनी-अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार उन्होंनें उपयोग भी आरंभ कर दिया है। माना कि इससे बेरोजगारी बढ़ी है।

खेती के विभिन्न कार्यो में मशीनों का उपयोग करने को मशीनीकरण कहा जा सकता है। जैसे खेत की जुताई-बुआई के लिए ट्रेक्टर का उपयोग, सिचांई के लिए आयल इंजिनों का उपयोग, कटाई व गेहूँ तथा अन्य उपजों की सफाई के लिए थ्रेसरों का उपयोग किया जाना मशीनीकरण के उदाहरण के रूप में लिये जा सकते है। प्रगति- वर्ष 1961 में 0.31 लाख ट्रेक्टर थे, वर्ष 2008-2009 में इनकी संख्या बढ़कर 303 लाख के आसपास पहुँची। आयल इंजिन 2.30 लाख से बढ़कर 1128 लाख के ऊपर हो गए। विद्युत चालित मोटरों की संख्या 2 लाख थी, 100 लाख तक पहुँच गई है। निदाई, दूध की पूर्ति आदि के लिये नवीन उपकरणों के उपयोग से कृषक वर्ग के लोग जानकार होते जा रहे है।

यंत्रीकरण के लाभ –

1. **उत्पादकता में वृद्धि** – मशीनों के उपयोग से खेत की उत्पादकता में वृद्धि होती है। जिन स्थानों पर पशु तथा मुनष्य शक्ति जमीन को तोड़ नहीं सकती, वहाँ आसानी से ट्रेक्टर का उपयोग काम कर देता है। समय से जुताई करने से वर्षा के अन्तराल में अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। उपजों को बाजार तक ले जाने में सहूलियत होती है। मशीनों के उपयोग से खेत की उत्पादकता के साथ-साथ प्रति श्रमिक इकाई भी उत्पादकता बढ़ती है।
2. **श्रम पूर्ति में सहायता** – उपज के सीजन में श्रम की कमी का अनुभव आमतौर पर किया जाता है। निश्चित समय में बुआई, निदाई व कटाई करना आवश्यक होता है। समय चूकने से प्राकृतिक प्रकोप-अवर्षा आदि से फसल नष्ट होने की संभावना होती है। सब काम मनुष्य और पशु शक्ति से किया जाता रहा है। उसका मशीनीकरण में रूपान्तरण लाभप्रद साबित हो रहा है।
3. **लागत में कमी** –कृषि में लागत ऊँची रहती आई है, उसे कम करने में मशीनों का योगदान रहाता है, मजदूरी खर्च कम बैठता है।
4. **आय में वृद्धि** – कृषि में मशीनों के उपयोग से प्रति हेक्टेयर उत्पादन बढ़ा है। माल बाजार में समय से पहुँच जाता है। रखरखाव के आधुनिक तरीकों से उपजें कम नष्ट होती है। इससे कृषि में लगे लोगों की आय बढ़ी है, किसानों की मजदूरी भुगतान करने की इससे क्षमता में भी वृद्धि हुई है।
5. **उपजों का द्विगुणापन**– मशीनों के उपयोग से खेत में एक के स्थान पर दो फसलें या तीन फसलें लेना संभव हो पा रहा है। समय से कटाई, फिर नई फसल के लिये खेत की तैयारी, उसकी सिंचाई और फिर कटाई अर्थात् दो-तीन फसलें लेना किसान के लिए संभव हो रहा है, इससे उत्पादन में वृद्धि होती जा रही है।
6. **बाजार आधिक्य** – एक ही फसल लेने की स्थिति में खेती करने वाले अपने स्वयं की उपज से खाने की पूर्ति भर कर पाते थे। अब अधिक पैदावार करने की स्थिति में वे बाजार में आधिक्य उत्पादन लाने की स्थिति में है। यह द्विगुणित फसल लेने के कारण संभव हो सका है।
7. **काम की दशा में परिर्वतन**– खेती करना एक कष्ट साध्य कार्य रहा है। कड़ी धूप, वर्षा में ठण्ड में चाहे जैसी स्थिति हो, कृषक का काम करना ही पड़ता था। मशीनों के उपयोग से कम समय में अधिक काम करने के कारण काम की दशाएँ सुविधाजनक हो गई है। खेत जोतना हो या सिंचाई के लिए पानी देना हो यथाशीघ्र और कम श्रम से काम करना संभव हो गया है।

यंत्रीकरण के दोष – बेरोजगारी-कृषि क्षेत्र में रोजगार के अवसरों में कमी आई है। मशीनों के उपयोग के कारण जहाँ कृषि श्रमिक को वर्ष में औसतन 185 दिन काम मिलना था, वह घटकर 140 दिन ही रह गया है। कम-से-कम 10 श्रमिकों तथा 20 बैलों का काम एक ट्रेक्टर या एक थ्रेसर कर देता है। ग्रामों में लघु उद्योगों की दशा उनकी उपजों के बाजार नहीं होने से दयनीय है। कृषि के वैकल्पिक काम नहीं होने से ग्रामीण क्षेत्र में बेरोजगारी का दायरा बढ़ता जा रहा है।

1. **कारक अंश**– यह निर्धारित करना कठिन है कि किसके योगदान से वास्तविक उत्पादन बढ़ रहा है। उसे उतना अंश मिलना चाहिये अर्थात् श्रम के योगदान से या मशीन के योगदान से उत्पादन में वृद्धि हो रही है। अन्ततः मशीन को मनुष्य ही चलाता है। उसमें कुशलता होना मशीनों के लिए आवश्यक है। कुशल श्रम बनने में समय चाहियें।
2. **लघु पैमाने पर खेती** – भारत में 80 से 85 प्रतिशत जोतें छोटे पैमाने की है। इसमें मशीनों का उपयोग लागत की दृष्टि से लाभप्रद नहीं होता। फसलों पर भी निर्भर करता है। जैसे धान की फसल, कपास की फसल, चाय बागान या फल की खेती में अधिकाधिक श्रम का उपयोग करना ही पड़ता है। पूर्ण मशीनीकृत इन उपजों के लिए लाभप्रद नहीं होती, और न ही बड़ें पैमाने पर इनकी व्यवस्था लाभप्रद हो पाती है।
3. **निर्भरता** – मशीनीकरण में उपयोग आने वाले उपकरणों तथा तेल पूर्ति के लिए कृषकों की निर्भरता निरन्तर बढ़ती जा रही है। माँग बढ़ने से कीमतों में अभिवृद्धि हो रही है। इससे खेती की उपजें भी बाजार में सस्ते दाम पर नहीं बिक पाती है।

असमानता-मशीनीकृत खेती सब क्षेत्रों में संभव नहीं, न सब किसानों के लिए संभव है। ऐसी स्थिति में क्षेत्रीय और वर्गीय आर्थिक असमानता बढ़ती जा रही है। लेकिन प्रगति हो रही है जो निम्नलिखित तालिका में देखी जा सकती है।

निष्कर्ष-अभी भी उचित तकनीक की गुंजाइश है। आंशिक मशीनों का उपयोंग लाभदायक है। सहकारी खेती प्रणाली अपनाकर मशीनों के उपयोग को लाभप्रद बनाया जा सकता है और छोटे पैमाने के दोष दूर किये जा सकते है। यह भी आवश्यक है कि अमेरिका या यूरोप का मशीनीकरण में अन्धानुकरण न करके भारतीय समाजिक व आर्थिक स्थिति को देखते हुए चयनित मशीनों का उपयोग करें।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

भारतीय उपभोक्ताओं में ऑनलाइन बाजार की प्रवृत्ति

डॉ. हरवंश मरावी *

प्रस्तावना – विगत कुछ वर्षो से जब से ई- कॉमर्स पद्धति का विकास हुआ है कंपनियों के कारोबारी में निरंतर वृद्धि हुई है, वहीं दूसरी ओर उपभोक्ताओं ने विभिन्न कंपनियों के उत्पादों में विश्वास जगाया है। किसी भी वर्ग का उपभोक्ता क्यों न हो मोल-भाव ,उठाईगिरी,कीमत की अविश्वसनीयता, बाजारों की धक्का-मुक्की से मुक्ति पाना चाहा है।और ऐसे में कंपनियों ने उपभोक्ताओं को ऑनलाइन बाजार की ओर प्रवृत्त किया है।

उत्पादक ,उत्पादन ,उपभोक्ता बाजार अदि सभी किसी अर्थव्यवस्था में मजबूती के आधार स्तंभ होते हैं। वर्तमान से बहुत पहले तक हम अपने उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं की पूर्ति बाजार के माध्यम से कर पाते थे, बाजार जो कि स्थानीय प्रांतीय अन्तर्प्रातीय बाजार के स्वरूपों का प्रयोग किया करते थे।

वर्तमान में इंण्टरनेट की बढ़ती मॉग ने बाजार एवं उपभोक्ता को भी प्रभावित किया है।उपभोक्ता अब स्थानीय बाजार जो कि भीड़ भरे होते हैं , धक्का -मुक्की , चोरी , जेबकतरी आदि सभी परेशानियों से बचने के लिए इंण्टरनेट बाजार की ओर प्रवृत्त हो रहे हैं, ।

आम तौर पर यह पाया जाता है कि वर्तमान में स्थानीय बाजारों में प्रतिदिन हो या तीज त्यौहारों का समय हो खरीददारी की बड़ी भीड़ होती है जिससे यातायात एवं अनेक खतरे जैसे लूट जेबकतरी आदि का भय बना रहता है जिससे अब कुछ कंपनियों ने खरीददारों को राहत देकर उनकी अभिरूचि एवं मॉग अनुसार आपुर्ति घर पहुॅच सेवा के माध्यम से पूरी करके बाजार में ऑनलाइन खरीदी का प्रचलन निरंतर बढ़ा रहे हैं।यह खरीददारी फुटकर में ही नहीं वरन थोक खरीददारी में भी चलन में आ पहुॅचा है।

वर्तमान में देश में ऑनलाइन खरीददारी केवल किताबों ,इलेक्ट्रानिक्स सामान कपड़े और जूतों तक ही सीमित नहीं रहा है। अब साबुन शैम्पू हेयर ऑयल पर्सनल केयर तथा दैनिक उपयोग की घरेलू जरूरतों किराना सामान फल सब्जियॉ आदि भी उपभोक्ता ऑनलाइन खरीद पा रहे हैं। यह यब ई ट्रेडिंग कम्पनियों के माध्यम से उपभोक्ताओं को ऑनलाइन खरीददारी की सुविधा उपलब्ध करा रहे हैं।

देश में अभी कुछ कम्पनियां ऐसी हैं जो केवल बड़े शहरों तक ही सीमित हैं लेकिन कुछ कंपनियों का विस्तार देश भर में छोटे कस्बों गॉवों तक फैल चुका है। ऑन लाइन कारोबार की बढ़ती संभावनाओं ने एफ एम सी जी क्षेत्र की बड़ी-बड़ी कंपनियों को भारत में ऑनलाइन बिक्री की ओर अग्रसर किया है। यही कारण है कि अब बड़ी कम्पनी जैसे डाबर , मैरिक्को ,बिसलरी और आई टी सी आदि अपने उत्पादों को ऑनलाइन विक्रय को बढ़ावा दे रही हैं।उद्योग संगठन के अध्ययन के अनुसार वर्ष 2015 तक भारत में ऑनलाइन खुदरा कारोबार 7000 करोड़ तक का हो जाएगा, लगातार इस कारोबार में वृद्धि हो रही है पिछले तीन वर्षें में 150 प्रतिशत की दर से ऑनलाइन कारोबारी में वृद्धि परिलक्षित हुई है।

तालिका

भारत में ऑनलाइन व्यापार की स्थिति (अरब डालर में)

क्र.	वर्ष	ऑनलाइन व्यापार
1.	2009.10	3.8
2.	2010.11	6.4
3.	2011.12	9.5
4.	2012.13	13.00
5.	2013.14	16.3 अनुमानित

(स्त्रोत- मोबाईल एसोसिएसन ऑफ इंडिया)

कुछ प्रमुख कम्पनियों के बेबसाइड-

1. www.flipkart.com,
2. www.snapdeal.com,
3. www.infibeam.com,
4. www.indiaplaza.com,
5. www.shopping.indiatimes.com,
6. www.tradus.com,
7. www.ebay.in,
8. www.junglee.com,
9. www.futurebazaar.com,
10. www.naaptol.com,
11. www.shopclues.com,
12. www.shop.seventymm.com,
13. www. jabang.com,
14. www. bigbazaar.com

अनेक ऐसी कम्पनियां हैं जिनसे सीधे उपभोक्ता अब अपनी पसंद रूचि के अनुसार वस्तु घर बैठे खरीद लेता है तथा स्थानीय बाजार में होने वाली परेशानियों से राहत पा लेता है,तथा डेबिट, क्रेडिट कार्ड के माध्यम से घर बैठे भुगतान भी कर देता है। कुछ ऐसी भी कंपनियां है जो किराना जैसी दैनिक वस्तुऍ एवं सब्जियां आदि भी उपभोक्ताओं को ऑनलाइन उपलब्ध कराने लगी हैं तथा उपभोक्ताओं में ऐसी कंपनियों में विश्वास बढ़ा है।

लोकलबनिया डॉट कॉम,मैन्नोशापर्स डॉट कॉम,जापनाउ डॉट कॉम,बिगबास्केट डॉट कॉम ,बिगबाजार डॉट काम ,आरामशॉप डॉट काम ,एकस्टाप डॉट कॉम,वन किराना डॉट कॉम,सिटि किराना डॉट कॉम,ईजीराशन डॉट कॉम,माई ग्राहक डॉट कॉम आदि कंपनियां हैं जो देश में स्थानीय बाजारों की दैनिक वस्तुओं की आपूर्ति ऑनलाइन बिक्रय के माध्यम से छोटे शहरों तक भी कर रही हैं।

जब से ई- कॉमर्स पद्धति का विकास हुआ है कंपनियों के कारोबारी में निरंतर वृद्धि हुई है, वहीं दूसरी ओर उपभोक्ताओं ने विभिन्न कंपनियों के उत्पादों में विश्वास जगाया है। किसी भी वर्ग का उपभोक्ता क्यों न हो मोल-भाव ,उठाईगिरी,कीमत की अविष्वसनीयता, बाजारों की धक्का-मुक्की से

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, हरसूद, जिला खण्डवा (म.प्र.) भारत

मुक्ति पाना चाहा है।और ऐसे में कंपनियों ने उपभोक्ताओं को ऑनलाइन बाजार की ओर प्रवृत्त किया है ।बड़े शहरों से लेकर अब गॉवों का उपभोक्ता भी ऑनलाइन बाजार से जुड़ने लगा है।

तालिका 2

ऑनलाइन बाजार स्थिति

वस्तुएँ	प्रतिशत
इलेक्ट्रानिक्स एवं इलेक्ट्रिकल्स	20
कपड़े शूज	30
पुस्तकें	40
सौन्दर्य प्रसाधन	40
अन्य घरेलू दैनिक सामग्री	22

(स्त्रोत- स्थानीय सर्वे पर आधारित)

उपभोक्ताओं को लाभ -

1. मॉग अनुसार आपूर्ति एवं रूचि अनुसार आपूर्ति ।घर पहुॅच सेवा का लाभ। गुणवत्तापूर्ण माल की आपूर्ति ।
2. यातायात संबंधी व्ययों से राहत । दलालों व बिचौलियों से मुक्ति ।
3. तुलनात्मक दामों का अध्ययन ।
4. समय एवं धन की बचत । मोल-भाव से मुक्ति।

कम्पनियों को लाभ-

1. उत्पादकों वितरकों और अन्य व्यापारिक सहयोगियों से व्यापारिक सूचनाओं का यथाशीघ्र आदान -प्रदान सहज एवं सरल व्यापारिक व्ययों की कमी ।नये व्यापार की प्रबल संभावनाएँ ।
2. उत्पादों एवं सेवाओं से संबंधित अधिक जानकारी प्रदान की क्षमता में वृद्धि।
3. आपूर्ति में तीव्रता, नये ग्राहकों तक पहुॅच आसान एवं बेहतर संबंध मोल-भाव से मुक्ति।

आशंकाएँ-

1. डिजिटल हस्ताक्षर एवं डिजिटल सर्टीफिकेट की मान्यता पूर्ण रूप से अभी लागू नहीं हो पाया है।
2. उचित कानूनी ढॉचा तैयार अभी नहीं है। धोखा-धड़ी की संभावना हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मोबाईल एसोशियशन ऑफ इण्डिया ।
2. व्यक्तिगत सर्वे।

****

भारत हेवी इलेक्ट्रीकल्स भोपाल में श्रमिक प्रेरणाओं का मूल्यांकन

डॉ. इफ्फत खान *

प्रस्तावना – कारखानों में कर्मचारियों की कार्य क्षमता का स्तर बनाये रखने एवं वृद्धि के लिये श्रमिक प्रेरणाओं का महत्वपूर्ण स्थान है। सार्वजनिक उपक्रमों में श्रमिक प्रेरणाओं का महत्व इसलिये अधिक है क्योंकि विकासशील देशो के पास सार्वजनिक उपक्रमों के विकास के अलावा कोई विकल्प नहीं है। 'आज के युग में सार्वजनिक उपक्रम राजनीतिक दर्शन का परिणाम है... यह विचार कि उत्पादन पूंजीपतियों से सार्वजनिक स्वामित्व में हस्तांतरित कर दिया जाए मार्क्स के सिद्धांत के समान पुराना है।'[1]

भारत में सार्वजनिक उपक्रमों का इतिहास बहुत पुराना है। वैदिक काल में राज्य द्वारा संचालित उद्योग अस्तित्व में थे। 'राज्य को प्राचीन भारत में समाज का प्रमुख केन्द्र समझा जाता था तथा उसे जनकल्याण की प्रमुख क्रियाओं में हस्तक्षेप की अनुमति प्राप्त थी। प्राचीन भारत में राज्य आर्थिक जीवन के प्रबंध एवं नियंत्रण में निकट से सहयोग करता था।'[2]

वर्तमान में सार्वजनिक उपक्रमों का भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान है। सार्वजनिक उपक्रम ब्यूरों ने वर्ष 1973-74 में सार्वजनिक उपक्रमों में पारिश्रमिक तथा श्रमिक प्रेरणाओं के महत्व को स्वीकार करते हुए इसका अध्ययन किया गया। कार्य करने की क्षमता और कार्य करने की इच्छा में अन्तर होता है। एक श्रमिक सामान्यत: 70 से 75 प्रतिशत तक कार्य करता है। यदि श्रमिकों को पर्याप्त श्रमिक प्रेणाएं उपलब्ध कराई जाए तो उनसे 20 प्रतिशत तक अधिक कार्य लिया जा सकता है। वास्तव में कार्य लेना एक कला है। अत: शोधकर्ता ने सार्वजनिक उपक्रमों में श्रमिक प्रेरणाओं के अध्ययन हेतु भारत हेवी इलेक्ट्रीकल्स भोपाल को चुना जो विद्युत उपस्कर बनाने वाली विश्व की 12 शीर्ष कम्पनियों में से एक है। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पण्डित जवाहरलाल नेहरू के द्वारा भारत हेवी इलेक्ट्रीकल्स भोपाल का उद्घाटन किया गया एवं जुलाई 1960 में इस उपक्रम में उत्पादन प्रारंभ हुआ।

प्रेरणाओं का विकास एवं महत्व – अभिप्रेरण की समस्या तब से अस्तित्व में है जब से मनुष्य ने मिलकर कार्य करना प्रारंभ किया। अभिप्रेरण की अनेक विचारधाराओं का विकास हुआ। मासलो (1954) ने अभिप्रेरण को व्यक्तियों की आवश्यकता क्रम से जोड़ा, हेजबर्ग (1959) ने इसे उपलब्धि, विकास संभावनाओं से जोड़ा, मेकलैंड (1953) ने इसे सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के रूप में माना एवं भारत के एच.सी. गांगूली (1954) ने प्रेरणा देने वाले घटकों में मजदूरी एवं सुरक्षा को अधिक महत्व दिया।

अभिप्रेरणा प्रबंध का महत्वपूर्ण कार्य है। अभिप्रेरणा उपक्रम के कर्मचारियों को जी जान से कार्य करने को प्रेरित करती है। प्रेरण एक बैटरी के समान है जिसे बार-बार चार्ज करना पड़ता है। ब्रेच के शब्दों में 'अभिप्रेरण सामान्य प्रेरण देने वाली प्रक्रिया है जो किसी दल के सदस्यों को कारगर रूप से मिलकर कार्य करने तथा संगठन के उद्देश्यों एवं कर्तव्य पूर्ति के लिए प्रेरित करती है' अभिप्रेरण का मुख्य उद्देश्य कर्मचारियों को कार्य करने के लिए प्रेरित करना है। राष्ट्रीय श्रम आयोग ने इसके महत्व को इस प्रकार वर्णन किया है। 'मानवीय साधनों के सदुपयोग के लिए जरूरी है कि प्रेरण योजनाएं लागू की जाए ताकि मानवीय प्रयत्नों द्वारा अधिक उत्पादन को बढ़ावा मिल सके।'[3]

कर्मचारी मनुष्य है न कि मशीन का पुर्जा। फ्रांसिस ने ठीक ही कहा था 'आप एक व्यक्ति का समय खरीद सकते हैं, किन्तु आप उसके साहस, पहल करने की योग्यता, स्वामीभक्ति, हृदय, मस्तिष्क एवं आत्मा को नहीं खरीद सकते।'[4] आज की बदलती परिस्थितियों में यह कार्य श्रमिक प्रेरणाएं कर सकती है। भारत हेवी इलेक्ट्रीकल्स की 12 इकाईयों में कर्मचारियों के विकास एवं कल्याण पर अधिक व्यय किया जाता है। जिसका प्रभाव मूल्य वृद्धि से निम्न तालिका में दर्शाया गया है।

तालिका-1 भारत हेवी इलेक्ट्रीकल्स लि. द्वारा कर्मचारियों पर व्यय एवं मूल्य वृद्धि वर्ष 2009-10 - 2013-14

वर्ष	कर्मचारियों को भुगतान (करोड़ रूपयों में)	प्रतिशत मूल्य वृद्धि
2009-10	5243	42.54
2010-11	5410	36.03
2011-12	5466	32.89
2012-13	5753	35.37
2013-14	5934	49.19

स्त्रोत: भारत हेवी इलेक्ट्रीकल्स लि. वार्षिक प्रतिवेदन 2013-14

भारत हेवी इलेक्ट्रीकल्स में वित्तीय प्रेरणाएं – वित्तीय अभिप्रेरणा वह है जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मुद्रा से संबंधित है। 'प्रेरक के रूप में मुद्रा महत्वपूर्ण है। अच्छी मजदूरी, कार्यानुसार भुगतान या किसी दूसरे प्रकार का प्रेरक भुगतान, बोनस, संस्था की ओर से बीमा भुगतान या व्यक्तियों को कार्य निष्पादन के लिए की गई किसी दूसरे प्रकार के भुगतान के रूप में मुद्रा का विशेष महत्व है।'[5] भारत हेवी इलेक्ट्रीकल्स लि. भोपाल इकाई में वेतन एवं मजदूरी के अतिरिक्त भत्ते, बोनस, प्लांट परफोरमेंन्स योजना, पुरूस्कार योजना, छुट्टी, यात्रा भत्ता, छुट्टी नगदीकरण एवं चिकित्सा भत्ता, कर्मचारियों को प्रदान की जा रही है। बी.एच.ई.एल. भोपाल में कार्मिक लाभ वर्ष 1979-80 में 6.60 लाख रूपये थे जो वर्ष 1988-89 में बढ़कर 3291 लाख रूपये हो गया इस प्रकार इन दस वर्षो में 5 गुनी वृद्धि हुई है।

बी.एच.ई.एल. भोपाल इकाई में कर्मचारियों की कार्य क्षमता बढ़ाने हेतु प्रथम प्लान्ट परफोरमेंस योजना 1973-74 में शुरू की गई। भेल प्रबंधन ने वर्ष 2013-14 के लिये विभिन्न ग्रेड के कर्मचारियों को निम्न तालिका में दर्शाये प्लान्ट परफोरमेंस पेमेन्ट दिया जाएगा।

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

तालिका–2
भारत हेवी इलेक्ट्रीकल्स लि. भोपाल में प्लांट परफोरमेंस
वर्ष 2013–14

क्रमांक	ग्रेड	राशि
1	ए बी1, ए.बी.2	31248
2	ए3, ब3	36664
3	ए4, ब4	38331
4	ए5, ब5	39997
5	ए6 ब6	41667
6	ए7 ब7	43331
7	ए8 ब8	44997
8	ए9 ब9	46664
9	एबी10, एबी 12	49997

उपरोक्त राशि में गोल्डन जुबली गिफ्ट की दो हजार रूपये की राशि को जोड़कर भुगतान किया जायेगा।

पुरूस्कार योजना – बी.एच.ई.एल. भोपाल में प्रतिमाह पुरूस्कार राशि का भुगतान किया जाता है। यह भुगतान अर्द्ध/अकुशल कर्मचारियों को कम दर पर एवं कुशल कर्मचारियों को अधिक दर पर दिया जाता है। प्लांट परफोरमेंस बोनस एवं पुरूस्कार प्रेरणा योजनाओं का सीधा संबंध कार्य क्षमता से है।

अवित्तीय प्रेरणाएं – 'राष्ट्रीय श्रम आयोग के अनुसार, वित्तीय अभिप्रेरणाओं के साथ–साथ अवित्तीय अभिप्रेरणाएं भी कर्मचारियों को प्रदान की जानी चाहिए जिससे उत्पादकता में वृद्धि हो सके।' बी.एच.ई.एल. भोपाल में प्रमुख अवित्तीय प्रेरणाएं– श्रम कल्याण, नौकरी की सुरक्षा, भावी पदोन्नति के अवसर, कार्य की मान्यता एवं प्रशंसा, कर्मचारियों से मानवीय व्यवहार, सुझाव पद्धति, शिकायतों का शीघ्र निपटारा एवं श्रमिकों की प्रबंध में भागीदारी।

श्रम कल्याण – नकद मजदूरी का कर्मचारियों की कार्यक्षमता पर इतना प्रभाव नहीं पड़ता जितना उनकी परिस्थितियों में सुधार करने से पड़ता है। राबर्ट ओविन ने श्रम कल्याण के महत्व को बड़े सुन्दर ढंग से वर्णन किया है। 'मशीनों का महत्व मानव जीवन में अधिक नहीं जितना तुम मशीनों पर ध्यान देते हो उसके अच्छे परिणाम होते हैं अगर तुम उतना ही ध्यान मजदूरों पर दो तो बहुत अच्छे परिणाम होंगे।'[6] बी.एच.ई.एल. भोपाल में कारखाना अधिनियम 1948 के अन्तर्गत सभी वैधानिक कल्याण सुविधाएं श्रमिकों को प्रदान की जाती है। एच्छिक श्रम कल्याण की जितनी अच्छी सुविधाएं बी.एच.ई.एल. भोपाल में प्रदान की जाती है उतनी प्रदेश के किसी भी कारखाने में प्रदान नहीं की जाती हैं।

नौकरी की सुरक्षा – यहां के कर्मचारियों की नौकरी सुरक्षित है एवं वे कारखाने के प्रति अपनापन अनुभव करते हैं। भेल के श्रमिक अपने भविष्य के संबंध में आश्वस्त हैं।

कार्य की मान्यता एवं प्रशंसा – प्रबंध कर्मचारियों द्वारा किये गये कार्यों को मान्यता देता है। जो कर्मचारी कार्य को कौशल के साथ करते हैं उनकी कार्य क्षमता को सराहा जाता है।

सुझाव पद्धति – यहां के कर्मचारी उत्पादन में सुधार हेतु प्रयत्नशील रहते हैं एवं सुधार हेतु अपने सुझाव प्रस्तुत करते हैं। सुझाव पद्धति कर्मचारियों के ज्ञान में वृद्धि करता है।

शिकायतों का निपटारा – यहां शिकायतों के निवारण में आदर्श प्रक्रिया अपनाई जाती है। भेल में ज्यादातर शिकायतें प्रथम चरण में ही हल की जाती हैं एवं असंतोष को बढ़ने नहीं दिया जाता।

श्रमिकों की प्रबंध में भागीदारी – बी.एच.ई.एल. भोपाल में श्रमिकों की प्रबंध में भागीदारी एक प्रेरण के रूप में अपनाई जाती है। यहां उत्पादन प्रबंध, वित्तीय प्रबंध, सेवीवर्गीय प्रबंध एवं इंजीनियरिंग क्षेत्रों में श्रमिक भागीदारी औद्योगिक लोकतंत्र के अंग के रूप में अपनाया जाता है।

बी.एच.ई.एल.भोपाल के कर्मचारियों के प्रेरणाओं के संबंध में विचार– यहां के 55 प्रतिशत कर्मचारी जिनकी आय कम है।वित्तीय प्रेरणाओं के पक्ष में है जैसा तालिका में दर्शाया गया है।

तालिका–3 – भारत हेवी इलेक्ट्रीकल्स लि. भोपाल में कर्मचारियों के प्रेरणाओं के संबंध में विचार

	वर्ष 2014	प्रतिशत
1	वित्तीय प्रेरणाएं	55
2	अवित्तीय प्रेरणाएं	45
		100

सर्वेक्षण पर आधारित

भारत हेवी इलेक्ट्रिीकल्स भोपाल में पर्याप्त वेतन एवं मजदूरी के अतिरिक्त प्लान्ट परफोरमेंस बोनस एवं प्रेरणा पुरूस्कार योजनाओं के फलस्वरूप कर्मचारियों की आय में वृद्धि हुई है एवं उत्पादन के लक्ष्यों को पूरा किया जा रहा है। प्रत्येक कर्मचारी अपनी योग्यताओं के अनुसार उत्पादन में योगदान दे रहा है। अवित्तीय प्रेरणाओं ने अधिक उत्पादन हेतु अनुकूलतम परिस्थितियों के निर्माण में एवं मधुर श्रम संबंध बनाए रखने में महत्वूपूर्ण योगदान दिया है। तैयार उत्पादन वर्ष 1963–64 में 4.7 करोड़ रूपये था जो वर्ष 2013–14 में बढ़कर 4345.08 करोड़ रूपये हो गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Hansen, A.H.; Public Enterprises in various countries.
2. Gupta,N.S.; Industrial Structure of India during Medieval period 1970, p.8.
3. Report of National Commission on Labour, 1968 p. 92.
4. Francis, C; Human Relation Time April 14, 1952
5. Patten, A; Man, Money and Motivation, 1961, Ch. 2.
6. Florance,S.; Labour Problems, p. 26.

****

डोलोमाइट उद्योग में डोलोमाइट की उत्पादन क्षमता व वास्तविक उत्पादन का विश्लेषणात्मक अध्ययन (अलीराजपुर जिले के डोलोमाइट उद्योग के विशेष संदर्भ में)

डॉ. नटवर लाल गुप्ता * डॉ. रामेश्वर गुप्ता * *

शोध सारांश – प्रत्येक राष्ट्र के तीव्र आर्थिक विकास के लिए औद्योगिकरण का होना अत्यंत आवश्यक है। भारत के आर्थिक विकास के में भी सेवा क्षेत्र के बाद उद्योग का ही स्थान आता है। हमारे देश की अर्थव्यवस्था का बहुत बड़ा हिस्सा औद्योगिकरण से जुड़ा हुआ है। वर्तमान परिप्रेक्ष में अमेरिका, चीन व जापान के विकास का आधार भी औद्योगिकरण ही है। नवप्रवर्तन व तकनीकी विकास ने औद्योगिकरण को और अधिक सक्षम व समर्थ बनाया है। आज विश्व के प्रत्येक देश के आर्थिक सामाजिक विकास के लिए औद्योगिकरण को बढ़ावा दिया जा रहा है। भारत जैसे विकासशील देशों के लिए तो यह और भी महत्वपूर्ण हो गया है, क्योंकि देश के आधारभुत उद्योगों व विशेष आर्थिक क्षेत्रों के विकास से ही देश की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाया जा सकता है। आर्थिक स्थिति मजबूत होने पर ही देश संरचनात्मक व विकासात्मक लक्ष्यों व उद्देश्यों को प्राप्त कर सकता है, साथ ही वह अपनी आर्थिक –सामाजिक समस्याओं जैसे गरीबी, बेरोजगारी, धन की विषमता, निम्न जीवन स्तर, कम उत्पादकता तथा आधारभूत सुविधाओं के अभाव से छुटकारा प्राप्त कर सकता है। इसी से देश में एक आदर्श औद्योगिक समाज की रचना की जा सकती है।

प्रस्तावना – आज एक ओर जहां विकासशील देश औद्योगिकरण को बढ़ावा देकर विकास की दौड़ में अग्रसर हो रहे है, तो दूसरी और विकसित देश सृजनात्मक चिन्तन, नव प्रवर्तन व देश के अमूल्य प्राकृतिक संसाधनों का समुचित दोहन औद्योगिकरण के माध्यम से कर विश्व में औद्योगिक क्रांति को प्रज्ज्वलित कर रहे है। आत्मनिर्भर समाज की रचना में भी औद्योगिकरण व उद्यमिता विकास का महत्त्वपूर्ण योगदान है। देश में औद्योगिक उन्नति से न केवल देश के नागरिकों की आवश्यकता की पूर्ति हो रही है अपितु विश्व के अन्य देशों को वस्तुओं का निर्यात कर विदेशी मुद्रा का भण्डारण भी किया जा रहा है। वर्तमान सामाजिक सुधार का महत्त्वपूर्ण साधन भी औद्योगिकरण ही है। इसके कारण व्यक्तियों के चिंतन व विचारों में परिवर्तन आया है। समाज जन समाज की घिसी–पिटी परंपराओं से मुक्त होना चाहते है। नवीन अविष्कारों व वैज्ञानिक दृष्टिकोण के फलस्वरूप समाज में व्याप्त अंधविश्वास व रूढ़िवादी विचारधारा में कमी आई है। यह औद्योगिकरण की ही देन है कि हम कई मिल दूर स्थित अपने परिचित से इस प्रकार बातचीत कर सकते है जैसे वह हमारे समीप ही बैठा हो।

औद्योगिकरण के कारण हमारे परिवेश में बदलाव आया है। आज हम 21 वीं सदी के उस भारत को देखना चाहते है जो विकसित राष्ट्रों की सूची में सिरमौर हो। देश आर्थिक व समाजिक उन्नति में अग्रसर रहें तथा भारत को अपना खोया हुआ गौरव पुन: प्राप्त हो सकें। इस और हमारे देश ने द्रुत गति से कदम बढ़ा भी दिए है तथा औद्योगिकरण को बढ़ावा देने का हर संभव प्रयास किया है। आज देश ने सड़क परिवहन, रेल परिवहन, वायु परिवहन व जल परिवहन के क्षेत्र में काफी तरक्की की है। वर्ष 2014 में दिल्ली के बाद अब मुंबई में भी मेट्रों ट्रेन का शुभारंभ किया जा चुका है। माता वैष्णोंदेवी मंदिर का मार्ग और सुगम बनाने का भारतीय रेलवे का कदम सराहनीय है। देश के 15 वें प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी नें वर्ष 2016 तक देश को बुलेट ट्रेन देने की सौगात की घोषणा की है। जो देश के आर्थिक सामाजिक क्षेत्र के विकास में महत्त्वपूर्ण भुमिका का निर्वहन करेगी। भारत में औद्योगिक प्रगति का आकलन इस बात से लगाया जा सकता है। कि **अमेरिकी वाणिज्यिक पत्रिका फोब्स द्वारा जारी सूची** के अनुसार भारत के रिलायंस इण्ड्रस्टीज के श्री मुकेश धीरूभाइ अम्बानी , विप्रो के श्री अजीम प्रेमजी , टाटा के श्री रतन टाटा , इन्फोसिस के के. नारायण मुर्ति , रिलायंस ग्रुप के अनिल धीरूभाइ अम्बानी आदि उद्योगपतियों का नाम विश्व भर में सफल महिला उद्यामियों की सुची में शामिल है। जिनके औद्योगिक कौशल का लोहा संपूर्ण विश्व मानता है। इस प्रकार पेप्सीकों की इन्दीरा नुई नें सफल उद्यमी के रूप मे अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है।

अध्ययन का उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य डोलोमाइट उद्योग में डोलोमाइट पाउडर की उत्पादन क्षमता व वास्तविक उत्पादन के मध्य संबंध को ज्ञात करना व विसंगति का पता लगाना तथा उन्हें दूर करने हेतु सुझाव प्रस्तुत करना है।

अध्ययन का क्षेत्र – प्रस्तुत विषय के समुचित अध्ययन हेतु म.प्र. के औद्योगिक रूप से पिछड़े अनुसूचित जनजाति बहुल अलीराजपुर जिले को चुना गया । इस जिले में संचालित डोलोमाइट उद्योगों में से चयनित 07 डोलोमाइट उद्योग इकाइयों के 05 वर्षो के उत्पादन के आकड़ों का अध्ययन किया गया है।

शोध प्रविधि – मध्यप्रदेश के सबसे कम साक्षर व औद्योगिक दृष्टि से पिछडे अलीराजपुर जिले के चयनित डोलोमाइट उद्योगों सें प्रत्यक्ष व्यक्तिगत अनुसंधान विधि के आधार पर साक्षात्कार व प्रश्नावली के माध्यम से समंको का संकलन किया गया है।

समग्र का आकार – प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु मध्यप्रदेश के अनुसूचित जनजाति बहुल अलीराजपर जिले में संचालित 28 डोलोमाइट उद्योगों में से दैव निदर्शन विधि द्वारा चयनित 07 डोलोमाइट उद्योगों का अध्ययन किया गया है व निष्कर्षो का निरुपण किया गया है ।

* प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत
** पी.जी.टी., ई.एम.आर.एस., कुक्षी (म.प्र.) भारत

डोलोमाइट खनिज परिचय – डोलोमाइट रंगहीन, श्वेत अथवा गुलाबी रंग लिए हुए पाया जाने वाला खनिज है। इसमें कैल्शियम, मैग्नीशियम व कार्बोनेट तत्वों का मिश्रण होता है। यह मैग्निशियम मिश्रित पदार्थो को प्राप्त करने का स्रोत है। डोलोमाइट कैल्शियम एवं मैग्नीशियम युक्त लवण है। इसमें से ये दोनों धातुएँ निष्कर्षित की जा सकती है। रसायन विज्ञान के अनुसार इसका सूत्र CAMG (CO3) है, चूँकि कैल्शियम व मैग्नीशियम का अयस्क होने के कारण यह खनिज अधिक महत्तवपूर्ण है। कैल्शियम की उपस्थिति के परिणामस्वरूप यह शरीर के लिए अत्यन्त उपयोगी व लाभप्रद होता है, क्योंकि कैल्शियम शरीर के लिए अत्यन्त आवश्यक तत्व होता है। यह दाँत एवं हड्डियों को मजबूती प्रदान करता है। डोलोमाइट में पाया जाने वाला दूसरा तत्व मैग्नीशियम पौधों में क्लोरोफिल के लिए आवश्यक घटक है। डोलोमाइट में कैल्शियम (45.65 प्रतिशत) एवं मैग्नीशियम (54.35 प्रतिशत) की उपलब्धि के कारण ही इसका खाद के लिए फिलिंग के रूप में अत्यन्त महत्तवपूर्ण उपयोग किया जाता है। रासायनिक खाद व पशु आहार के उत्पादन में भी इसका मिश्रण किया जा रहा है। यह विभिन्न खदानों में चूने के पत्थर के साथ संयुक्त अवस्था में पाया जाता है।

डोलोमाइट उद्योग का सामान्य परिचय – मनुष्य स्वयं न तो भौतिक पदार्थ का निर्माण कर सकता है और न ही उसका विनाश। मनुष्य केवल प्रकृति से प्राप्त रूप गुण में परिवर्तन लाकर उन्हें अधिक उपयोगी बना सकता है। इस प्रकार उद्योग वस्तुओं के रूप में उपयोगिता प्रदान कर उन्हें मनुष्य के लिए उपयोगी बना देता है। अर्थशास्त्र की भाषा में उद्योग शब्द का अर्थ प्राकृतिक संसाधनों की उपयोगिता की सृष्टि या वृद्धि से है। सरल शब्दों में हम कह सकतें है कि अनिर्मित पदार्थो को उपयोगी व बिक्री की दशा में लाने की क्रिया को ही उद्योग कहते है। उद्योगपतियों का कार्य वस्तुओं के निर्माण तक ही सीमित रहता है। वस्तुओं के विक्रय का कार्य व्यापारियों का होता है। परंतु लगभग सभी उद्योगपति व्यापारी भी होते है, क्योंकि उन्हें अपनी बनाई गई वस्तुओं का विक्रय भी करना होता है। कपड़ा मिल, लोहा इस्पात का कारखाना , बिस्कुट फेक्ट्री , दाल–मिल, सीमेंण्ट व कागज की मिले सब उद्योग के उदाहरण है।

डोलामाइट उद्योग एक खनिज आधारित उद्योग है। डोलोमाइट खनिज के उत्खनन से लेकर पाउड़र निर्माण तक की प्रक्रिया इस उद्योग में की जाती है। इस उद्योग में प्रयुक्त कच्चामाल डोलोमाइट पत्थर अलीराजपुर जिले में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। डोलोमाइट खदानों का पट्टा अधिकार म.प्र. सरकार द्वारा निश्चित अवधि के लिए दिया जाता है। अनेक उद्यमी स्वयं खदान का पट्टा प्राप्त कर कच्चेमाल की आपूर्ति करते है। तो अनेक पट्टा धारक से कच्चामाल क्रय करके अपना उत्पादन करते है। उद्योग अपनी आवश्यकतानुसार कच्चे माल का क्रय करके उसे मजदूरों द्वारा ट्रकों पर लदवाकर उद्योग स्थल तक पहुंचाते है। मजदूरों को इस कार्य हेतु जो मजदूरी दी जाती है वह कार्यानुसार स्वभाव की होती है। ट्रक मालिकों को अनुबन्ध पर आधारित तय दर पर गाड़ी भाड़ा प्रदान किया जाता है। वर्तमान में 80 से 85 रूपये प्रतिटन की दर से गाड़ी भाड़ा लगाया जा रहा है।

पत्थरों का वजन अधिक होने से महिला श्रमिक की बजाय अधिकांशत: पुरुष श्रमिकों द्वारा इस कार्य को किया जाता है। कच्चे माल की लागत में मुख्यत: श्रमिकों को दी जाने वाली मजदूरी, शासन को प्रदान की जाने वाली रॉयल्टी तथा ट्रक मालिकों को दिया जाने वाला भाड़ा शामिल होता है। निर्मित माल की लागत के नियंत्रण हेतु सर्वप्रथम कच्चे माल की लागत को नियंत्रित करने की आवश्यकता है।

औसत उत्पादन लागत व क्षमता अनुपात – चयनित डोलोमाइट औद्योगिक इकाइयों की उत्पादन लागत व क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन करने हेतु इनका सामुहिक मूल्यांकन आवश्यक है। साथ ही जिले में डोलोमाइट उद्योग के विकास तथा नवीन योजनाओं के सृजन के लिए भी इनका एक चार्ट द्वारा विश्लेषण नीतियुक्त है। जिले में चयनित इन सातों डोलोमाइट उद्योग इकाइयों की उत्पादन लागत व क्षमता को निम्न तालिका द्वारा विश्लेषित किया जा सकता है –

तालिका क्र. 01 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका में प्रयुक्त समंकों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि जिले में चयनित सभी डोलोमाइट उद्योग इकाइयाँ अपनी उत्पादन क्षमता के अनुरूप उत्पादन नहीं कर रही है। चयनित दो बड़ी उद्योग इकाइयाँ जिनकी उत्पादन क्षमता 10000 टन वार्षिक है उनमें श्री माधव मिनरल्स् ने अपनी क्षमता का 50.86 प्रतिशत उत्पादन किया है जबकि श्री अमझेरावाला मिनरल्स् तो उत्पादन क्षमता के मात्र 35.70 प्रतिशत तक ही पहुँच सकी है। इन उद्योगों के पास अधिक कार्यक्षमता की मशीनें व संसाधन होने के बावजूद उत्पादकता स्तर न्यून होना एक गम्भीर समस्या है।

चयनित तीन मध्यम आकार की इकाइयाँ जिनकी उत्पादन क्षमता 7000 टन वार्षिक है, जिनमें श्री हरि मिनरल्स् का औसत उत्पादन 4346 टन रहा है जो उनकी उत्पादन क्षमता का 62.08 प्रतिशत है। यही इकाई अन्य इकाइयों में सबसे अधिक उत्पादन कर पायी है। इसी स्तर की इकाई श्री राधे मिनरल्स् अपनी कार्यक्षमता का 41.86 प्रतिशत उत्पादन कर सकी है जबकि श्री फखरी मिनरल्स् का उत्पादकता स्तर 40.87 प्रतिशत रहा है।

चयनित अन्तिम दो छोटी इकाइयाँ जिनकी वार्षिक उत्पादन क्षमता 6000 टन है। उनमें से श्री राम मिनरल्स् अपनी उत्पादन क्षमता का 27.83 प्रतिशत उत्पादन करने में सफल रही है। जबकि श्री श्याम मिनरल्स् का उत्पादन सभी चयनित इकाइयों से कम है यह इकाई उत्पादन क्षमता का मात्र 24.40 प्रतिशत ही उत्पादन कर सकी है।

डोलोमाइट उद्योगों के उत्पादन सम्बन्धी समस्याएँ –

1. कच्चे माल की समस्या।
2. वित्तीय समस्या।
3. श्रम सम्बन्धी समस्या।
4. विद्युत की समस्या।
5. मशीनों एवं उपकरणों की समस्या।
6. परिवहन की समस्या।
7. प्रदूषण की समस्या।
8. सुरक्षा की समस्या।
9. औद्योगिक भूमि का अभाव।
10. श्रम संगठन का अभाव।
11. विपणन सुविधाओं का अभाव।

निदानात्मक सुझाव –

1. विद्युत् की आपूर्ति।
2. विपणन व्यवस्था में सुधार।
3. कच्चे माल की परिपूर्ति।
4. श्रम समस्याओं को दूर करना।
5. श्रम कल्याण एवं सामाजिक सुरक्षा।
6. वित्तीय स्रोतों में सुधार।
7. शासकीय अनुदान एवं छूटों में वृद्धि।

8. सुरक्षा सुविधा।
9. परिवहन एवं संचार के संसाधनों का विकास।
10. औद्योगिक भूमि की उपलब्धता।
11. विपणन अनुसन्धान एवं सर्वेक्षण।
12. विपणन भण्डार ग्रह की सुविधा।
13. उद्योग में पूँजी निवेश को प्रोत्साहन।

निष्कर्ष – उक्त विश्लेषण के आधार पर कहा जा सकता है कि इस नवगठित छोटे से जिले में जहाँ पर पर्याप्त मात्रा में डोलोमाइट खनिज होने के बावजूद उद्योगों की उत्पादन क्षमता काफी कम है। इसका सबसे महत्वपूर्ण कारण यहाँ पर संसाधनों की सीमित उपलब्धता है। साथ ही शासन की इस उद्योग के प्रति उदासीनता भी उद्योग के विकास मार्ग को अवरूद्ध किए हुए है। चूंकि यह विद्युत आधारित उद्योग है अर्थात् उद्योग की मशीनों का संचालन विद्युत शक्ति पर निर्भर करता है। जिले में विद्युत की अपर्याप्तता व अघोषित कटौती भी इसके लिए एक बड़ी समस्या है। शासन को इस जनजाति बहुल जिले के औद्योगिक विकास हेतु अपनी नीतियों में विशेष सुधार करने की आवश्यकता है।

उद्योगों को भी अपनी सीमित उत्पादकता की समस्या से उबरना होगा। उद्योग के प्रबंधकों को चाहिए कि वे उद्योग की कमजोरियों को खोजकर उनके निराकरण हेतु प्रभावी योजनाओं का निर्माण करें। नवीन तकनीकी से युक्त मशीनों का उपयोग कर उत्पादन स्तर को बढ़ाने का प्रयास भी नितांत आवश्यक है। कार्य के आधार पर श्रमिकों का उचित प्रबन्ध करना, उनके प्रशिक्षण की व्यवस्था करना, श्रम कल्याण व सामाजिक सुरक्षा की योजना बनाना तथा प्रबन्ध व संगठन के बीच उचित तालमेल होना उद्योग की प्रगति मार्ग को सुदृढ़ बनाता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कोठारी डॉ. मिलिन्द, मिश्रा डॉ. व्ही.के., साहू डॉ. पी. एम. (2012–2013), उद्यमिता विकास, आर.बी.डी. पब्लिकेशन्स् (यूनिट ऑफ रमेश बुक डिपो), जयपुर.
2. चतुर्वेदी महेशचन्द्र, चतुर्वेदी मिथिलेशचन्द्र (2009), श्रम अर्थशास्त्र एवं श्रम समस्यायें, गोयल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ.
3. दत्त रूद्र एवं सुन्दरम् के.पी.एम. (2008), भारतीय अर्थव्यवस्था, एस. चंद्र एण्ड कम्पनी लि. नई दिल्ली।
4. व्यास कृष्ण, गोयल (2005), आर्थिक भू–विज्ञान, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
5. योजना, (जून : जुलाई, दिसम्बर 2007), सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली।
6. प्रतियोगिता दर्पण विशेषांकः–(2009–10), भारतीय अर्थव्यवस्था उपकार प्रकाशन, आगरा।
7. उद्योग व्यापार पत्रिका (दिसम्बर 2007), आई.टी.पी.ओ. नई दिल्ली।
8. जिला झाबुआ की खनिज शाखा के अभिलेख।
9. जिला सांख्यिकी कार्यालय, जिला झाबुआ (म.प्र.)
10. जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र कार्यालय जिला झाबुआ (म.प्र.)
11. खनिज निरीक्षक शाखा, जिला झाबुआ (म.प्र.)
12. उपखनिज निरीक्षक शाखा, जिला आलीराजपुर.(म.प्र.)
13. भू–अभिलेख कार्यालय, जिला आलीराजपुर.(म.प्र.)

वेबसाइट –

1. www.dolomitedipositinindia.com,
2. www.minesinindia.com
3. www.minerals.com.

तालिका क्र. 01 – डोलोमाइट उद्योग का औसत उत्पादन व क्षमता अनुपात

उद्योग इकाई	औसत उत्पादन (टन में)	वार्षिक उत्पादन क्षमता(टन में)	उत्पादकता प्रतिशत
अमझेरावाला मिनरल्स्	3570	10000	35.70
माधव मिनरल्स्	5086	10000	50.86
फखरी मिनरल्स्	2861	7000	40.87
राधे मिनरल्स्	2930	7000	41.86
हरि मिनरल्स्	4346	7000	62.08
श्याम मिनरल्स्	1464	6000	24.40
राम मिनरल्स्	1670	6000	27.83

स्रोत : उद्योग इकाइयों के वित्तीय अभिलेखानुसार।

डोलोमाइट उद्योग का औसत उत्पादन व क्षमता अनुपात

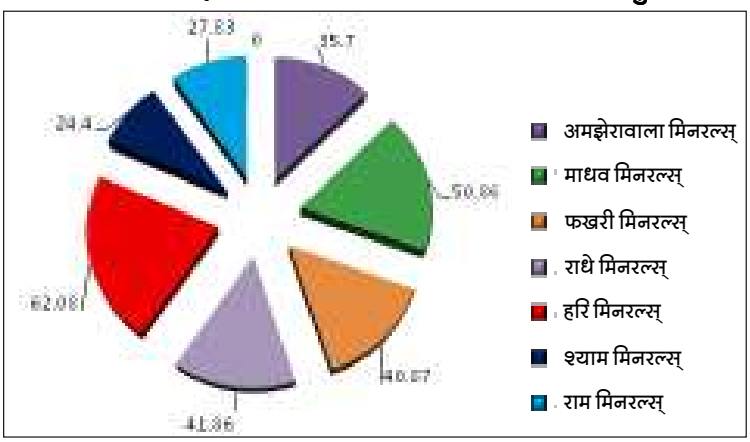

भारतीय अर्थव्यवस्था में गरीबी के कारण एवं प्रभाव का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

राकेश बधेल *

शोध सारांश – भारत में गरीबी हमेशा से ही एक मुलभूत समस्या रही है और समय समय सरकारों द्वारा गरीबी दुर करने के उपाय भी किये है। 'भारत ही नहीं विश्व के सभी अल्प–विकसित या विकासशील देंशों में जहाँ प्रति व्यक्ति आय बहुत कम है आय की असमानताओं और बेरोजगारी ने कई बुराईयों को जन्म दिया है जिनमें से सर्वाधिक गंभीर बुराई निर्धनता या गरीबी हैं तात्पर्य यह है कि गरीबी असमानता और बेरोजगारी के मध्य बहुत नजदीकी संबंध हैं वैश्वीकरण की ओर तीव्रता से बढ़ते हुए भारत की सबसे बड़ी आर्थिक–सामाजिक चुनौती गरीबी की है।[1] भारत की लगभग 60 फीसदी आबादी अभी भी भरपेट खाना नहीं खा पाती है। यह गरीबी लोकतंत्र एवं शान्ति तथा सुरक्षा के लिए चुनौती है। भुख का अपना व्याकरण होता है और उसमें अधिकारो के अलंकरण की कोई जगह नहीं होती हैं। देश में आर्थिक विकास के साथ आर्थिक असमानताएं बढ़ती जा रहीं है।

प्रस्तावना – भारत में गरीबी तय करने के लिए बनाये गये अनेक मापदण्ड विवादित बने हुए है। गरीबों की संख्या को लेकर योजना आयोग एवं विभिन्न संगठनो के संमकों में काफी अंतर हैं। 'योजना आयोग के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रो के लिए 2400 कैलोरी व शहरी क्षेत्रो के लिए 2100 कैलोरी भोजन प्रतिदिन जिन्हे नहीं मिलता है वह गरीब माना जाता हैं। पौष्टिकता को मौद्रिक रूप में देख जाए तो यह 107 रू. प्रति व्यक्ति प्रतिमाह गॉवों में तथा 122 रू प्रति व्यक्ति प्रतिमाह शहरी क्षेत्रो में आता हैं। वह गरीब माना जाता हैं। इसके बाद ग्रामीण क्षेत्रो में 11060 रू एवं शहरी क्षेत्रों में 11850 रू प्रतिगृह वार्षिक उपभोग व्यय का मापदण्ड निर्धारित किया गया। योजना आयोग के नवीनतम आंकडों के अनुसार शहरी क्षेत्रों में 26 रू प्रतिदिन एवं ग्रामीण क्षेत्रों में 21 रू प्रतिदिन से कम मजदूरी पाने वाले व्यक्ति गरीबी रेखा के नीचे माने जाते हैं।'[2] 'संयुक्त राष्ट्र द्वारा गरीबी व भूख पर आयोजित सम्मेलन में कहा गया कि विश्व में हर 03 सेकण्ड में एक आदमी भूख से मर रहा हैं एन. एस. एस. के अनुसार 'देश में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वालों की कुल जनसंख्या में 19.7 प्रतिशत अनुमानित हैं।'[3] यह सामान्य धारणा हैं कि जब किसी देश का विकास होता हैं तो वहां गरीबी कम होती हैं विकास एवं गरीबी में धनात्मक सहसंबंध माना जाता हैं लेकिन कुछ विद्धानों के मतानुसार देश में विकास के साथ–साथ गरीबी कम होने के स्थान पर बढ़ रही है। 'सरकारी आंकडों के विपरीत सुरेश तेन्दुलकर समिति की रिर्पोट के अनुसार भारत में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वालो लोगों का कुल आबादी पर 37.2 प्रतिशत है'[4] तथा छठी पंचवर्षीय योजना में भी यह बात कही गई की हमारे देश में लगभग 50 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रही है। 'विश्व बैंक के अनुसार भारत में अत्यंत गरीबी से जीवन गुजारनें वाले लोगों का प्रतिशत वर्ष 1990 में 51.3 प्रतिशत तथा वर्ष 2005 में 41.6 प्रतिशत था जो वर्ष 2015 में 31.5 करोड (25.4 प्रतिशत) रहने का अनुमान है।'[5]

'सामान्यत: जीवन, स्वास्थ्य तथा दक्षता के लिए न्यूनतम उपभोग की आवश्यकताओं को प्राप्त करने की असमर्थता को गरीबी कहते है। जब समाज का बहुत बड़ा भाग न्यूनतम जीवन स्तर को भी प्राप्त नहीं कर पाता हैं अर्थात केवल निर्वाह स्तर पर हीं गुजारा करता हैं तो इसे समाज में व्यापक निर्धनता की संज्ञा दी जाती है। गरीबी की अवधारणा को सापेक्ष एवं निरपेक्ष दोनों रूप में देखा जा सकता हैं।'[6] 'सापेक्ष गरीबी से अर्थ आय की असमानताओं से होता है जब दो देशों की प्रति व्यक्ति आय की तुलना करते है तो उसमें भारी अन्तर पाया जाता है, इस अन्तर के आधार पर हम गरीब अमीर देश की तुलना करते है, जिसे सापेक्षिक गरीबी कहते है। निरपेक्ष गरीबी को सामान्यत: जीवन की आवश्यकताओं को जुटाने के लिए पर्याप्त धन के अभाव के रूप मे परिभाषित किया जाता हैं। इसमें गरीबी से अर्थ मानव की आधारभूत आवश्यकताओं जैसे खाना, कपड़ा, स्वास्थ्य सहायता आदि की पुर्ति हेतु पर्याप्त वस्तुओं व सेवाओं को जुटा पाने में असमर्थता से होता है। अमेरिका जैसे राष्ट्रों में गरीबी की माप निरपेक्ष आधार पर की जाती है। इसके अंतर्गत गरीबी की माप वार्षिक आय के स्तर पर की जाती है।'[7]

'देश में निर्धनता अनुपात एंव निर्धनों की संख्या के संबंध में ताजा आँकड़ें जुलाई 2013 को योजना आयोग द्वारा जारी किये गये। तेंदुलकर समिति द्वारा सुझाए गए नए फॉमूले के आधार पर वर्ष 2009–10 के लिए 19 मार्च 2012 को जारी किए गए थे। इस फॉमूले के अनुसार निर्धनता रेखा का आंकलन भोजन में कैलोरी की मात्रा के बजाय, प्रत्येक राज्य में निर्धनता रेखा के लिए शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति मासिक उपभोग व्यय के आधार पर अलग–अलग निर्धारित किया गया है। अखिल भारतीय स्तर पर ग्रामीण क्षेत्रों में 816.8 रू प्रतिमाह व शहरी क्षेत्रों में 1000 रू प्रतिमाह के उपभोग व्यय को जहाँ वर्ष 2011–12 में निर्धनता रेखा की पहचान की गई। ग्रामीण क्षेत्रों में ओडिशा में जहाँ यह 695 रू न्यूनतम हैं वहीं नागालैण्ड में यह सर्वोच्च 1270 रू है। शहरी क्षेत्रों में छतीसगढ़ में 849 रू न्युनतम है। तथा नागालैण्ड 1302 रू सर्वोच्च है। योजना आयोग के वर्ष 2011–12 के अनुसार देश में निर्धनों की सर्वाधिक संख्या वाले राज्य क्रमश: उत्तर प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र है। जबकि निर्धनता अनुपात की दृष्टि से पहले तीन राज्य क्रमश: छतीसगढ़, झारखंण्ड, मणिपुर है। राज्यों में न्युनतम निर्धनता अनुपात क्रमश: गोवा (5.9%) केरल (7.05%) हिमाचल प्रदेश(8.0%) है।'[8] प्रस्तुत शोध पत्र में भारतीय अर्थव्यवस्था में व्याप्त गरीबी का स्तर एवं अवधारणा के साथ कारण एवं प्रभाव को तालिका द्वारा स्पष्ट कर सुझावों को प्रस्तुत किया गया है।

गरीबी के कारण –

1. शिक्षा और जागरूकता कमी से प्रत्येक व्यक्ति अपना आर्थिक विकास नहीं कर पाता है और उसमें गरीबी के कारण स्वस्थ मानसिकता का

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

विकास नही हो पाता है और वह हमेशा परंपरागत तरीके से चलता है।

2. भारत में ज्यादातर जनता निम्न और मध्यम वर्ग की है और यहां प्रत्येक व्यक्ति शिक्षा प्राप्त कर उद्योग लगाने के बजाए नौकरी करना पसंद करता है। जिससे उद्योग में पिछड़ापन पाया जाता है।
3. अवसरों में असमानता और भ्रष्टाचार के कारण योग्य व्यक्ति को योग्य स्थान नहीं मिल पाता है, जिससे वह पिछड़ जाता है और समाज में गरीब और गरीब होता चला जाता हैं।
4. भारत में राजनैतिक चेतना का अभाव है। यहां ज्यादातर व्यक्ति जाति, भाई भतीजावाद और भ्रष्टाचार में लिप्त होकर मतदान करते है तथा भारत में सभी राजनितिक पार्टीयो को चुनाव के समय ही गरीबों का दर्द दिखाई देता है। जो भारतीय समाज में गरीबी का बड़ा कारण है।
5. भारतीय समाज में व्याप्त जातिगत व्यवस्था तथा कई सामाजिक कुप्रथाएं जैसे साहूकारी प्रथा, जमींदारी प्रथा, मृत्युभोज देने की प्रथा, विवाह में आय से अधिक खर्च करना, जादु टोना, झुठी प्रतिष्ठा आदि देश की आर्थिक प्रगति में बाधक है। जिससें गरीबी का स्तर बना हुआ है।
6. प्रशासनिक शिथिलता भी गरीबी का कारण है। गरीबी निवारण से सम्बंधीत केन्द्र और राज्य सरकार की योजनाओ लालफीताशाही के कारण सही क्रियान्वयन नहीं होने से हितग्राहियो को लाभ नहीं मिल पाता है और भारत में गरीबी व्याप्त है।
7. भारत में बढ़ती जनसंख्या, पुँजी की कमी, अविकसित व्यवसाय, रोजगार प्रधान शिक्षा प्रणाली का अभाव, मानवीय एवं प्राकृतिक संसाधनों का अपूर्ण दोहन, बढ़ती बेरोजगारी और खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में बढ़ती बेरोजगारी आदि गरीबी के बड़े कारण है।

गरीबी का प्रभाव –

1. भारत में निर्धनता के कारण अशिक्षा एवं जागरूकता के अभाव के कारण परिवार नियोजन न अपनाने के कारण जनसंख्या वृद्धि हो रही है।
2. भ्रष्टाचार और अवसरों में असमानता के कारण समाज में अपराधी प्रवृतिया बढ़ रही है।
3. भारत में व्याप्त जाति व्यवस्था एवं कुप्रथाओं के कारण उद्योगों में पिछड़ापन पाया जाता है। तथा निष्क्रियता एवं भाग्यवादीता से भिक्षावृति में वृद्धि हो रही है।
4. गरीबी के कारण बच्चों में कुपोषण एंव व्यक्तियों में निम्न जीवन स्तर पाया जाता हैं जिससे उनकी मानसिक सोच और शारीरिक स्वास्थ पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।
5. गरीबी से त्रस्त लोगों द्वारा गॉवों से शहरों की तरफ रूख किया जाता हैं जिससे शहरी क्षेत्रों में गंदी बस्तीयों का निर्माण हो रहा हैं और कई समस्याए उत्पन्न हो रही है।
6. नेशनल काउंसिल फार एप्लाइड इकॉनोमिक रिसर्च (NCAER) के अनुसार 'एक प्रतिशत परिवारों के पास कुल राष्ट्रीय संपत्ति का 14 प्रतिशत है। जबकि 50 प्रतिशत परिवारों के पास कुल राष्ट्रीय संपत्ति का मात्र 7 प्रतिशत ही पाया गया है।' यें आर्थिक आँकडें भारतीयों का जीवन स्तर और आर्थिक विषमताओं की गहरी खाई को प्रदर्शित करता है।
7. गरीबी के कारण व्यक्तियों की आय कम होती है तो व्यय कम होता और इस व्यय से बाजार, उद्योग, प्रति व्यक्ति आय, राष्ट्रीय आय, पुँजी निर्माण आदि पर इसका विपरित प्रभाव पड़ता है और इसका प्रभाव संम्पूर्ण अर्थव्यवस्था पर प्रभाव पड़ता है।

तालिका क्र.1 : भारत में गरीबी की व्यापकता का अनुमान

	कुल जनसख्या में गरीबी की रेखा के नीचे रहने वालो का प्रतिशत		
वर्ष	**ग्रामीण क्षेत्र**	**शहर क्षेत्र**	**संम्पूर्ण देश**
1973-74	56.4%	49.0%	54.9%
1977-78	53.1%	45.2%	51.3%
1983-84	45.7%	40.8%	44.5%
1987-88	39.1%	38.2%	38.9%
2004-05	42.0%	25.5%	37.2%
2009-10	33.8%	20.9%	29.8%
2011-12	25.7%	13.7%	21.9%

स्त्रोत :-Economy Survey, भारतीय आर्थिक नीति, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल, वर्ष 2013,पृष्ठ क्र. 132

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से पता चलता है कि देश में 1973-74 में गरीबी का स्तर ग्रामीण क्षेत्र 56.4% एवं शहरी क्षेत्र 49.0% तथा संम्पूर्ण देश में 54.9% था। जो वर्ष 2011-12 में ग्रामीण क्षेत्र में 25.7% एवं शहरी क्षेत्र में 13.7% तथा संम्पूर्ण देश में 21.9% हो गया हैं गरीबी रेखा के नीचे रह रही जनसंख्या ग्रामीण और शहरी दोनों ही क्षेत्र में है। किन्तु ग्रामीण क्षेत्र में अधिक है और तालिका से स्पष्ट भी स्पट होता हैं कि गरीबी की समस्या शहरी क्षेत्र की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्र में अधिक हैं इसका कारण ग्रामीण क्षेत्र में खेतिहार मजदूरों की स्थिति अत्यधिक दयनीय हैं किन्तु फीर भी सरकारी प्रयासों के माध्यम से और तालिका के अनुसार गरीबी स्तर में परिवर्तन हुआ है।

तालिका क्र.2 : इण्डिया विजन 2020 के महत्वपूर्ण लक्ष्य

क्र.	**इण्डिया विजन 2020 के महत्वपूर्ण लक्ष्य**	**2000-2001 की स्थिति**	**2020 की संभावना**
1	गरीबी रेखा के नीचे की आबादी (%)	26%	13%
2	बेरोजगारी की दर	7.3%	6.8%
3	कृषि में रोजगार	56%	40%
4	वयस्क पुरूष साक्षरता	68%	96%
5	वयस्क महिला साक्षरता	44%	94%
6	शिक्षा पर खर्च (जी.डी.पी.का %)	3.2%	4.9%
7	जीवन प्रत्याशा (जन्म के समय)	64 वर्ष	69 वर्ष
8	5 वर्ष से कम आयु के बच्चों मे कुपोषण	45%	8%
9	वार्षिक वृद्धि दर (जी.डी.पी.का %)	4.4%	9.0%
10	कुल जनसंख्या में शहरी जनसंख्या का प्रतिशत	25.5%	40.0%

स्त्रोत - प्रतियोगिता दर्पण (लघु अतिरिक्ताक) सामान्य अध्ययन अर्थव्यवस्था एक दृष्टि में, द्वितीय सशोधित एंव परिवर्द्धित सस्करण 2013-14,पृष्ठ क्र.16

गरीबी निवारण तथा भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास हेतु इण्डिया विजन 2020 के लक्ष्यों को देखकर स्पष्ट होता हैं कि इनमें से कुछ लक्ष्यों को आसानी से प्राप्त किया जा सकता हैं किन्तु गरीबी निवारण, जीवन प्रत्याशा, 5 वर्ष से कम आयु के बच्चों में कुपोषण की रोकथाम और वार्षिक वृद्धि दर को प्राप्त करना दिव्यस्वप्न लगता है। किन्तु अच्छों प्रयासों और उचित क्रियान्वयन से इन्हे प्राप्त किया जा सकता है।

गरीबी निवारण के सुझाव –

1. सरकारों द्वारा चलाई जा रही योजनाओं का सही तरह से क्रियान्वयन करना होगा ताकि योजनाओं का लाभ सही हाथों में पहुच सके।
2. ग्रामीण क्षेत्रों में लघु एवं कुटीर उद्योगों को बढ़ाने के साथ-साथ पशुपालन, वानिकी व सहायक उद्योगों को भी बढ़ाना होगा।
3. गरीब वर्ग के लिए शिक्षा एवं जागरूकता के लिए अलग से नीतियों का निर्माण करना होगा तथा उन्हें उद्योग के लिए प्रोत्साहित करना होगा।
4. सरकार को भारतीय परिस्थितियों और जमीनी स्तर पर मुलभूत समस्याओं को ध्यान में रख कर नीतियों का निर्माण करना होगा ताकि संम्पूर्ण अर्थव्यवस्था का विकास हो सके।
5. ग्रामीण क्षेत्रों में विकास हेतु सार्वजनिक कार्य तेजी से शुरू कर पूरा किया जाना चाहिए इसके लिए सड़के, नहरे, कुएं ग्रामीण मकान, बिजली, पानी की व्यवस्था आदि कार्य किये जा सकते है जिससे बेरोजगारी और निर्धनता दोनों कम होगी।
6. गरीबी दुर करने के लिए जनसंख्या नियंत्रण के उपाय किये जाने चाहिए भारत में वर्तमान जनसंख्या वृद्धि दर 1.93 प्रतिशत वार्षिक है। जो अधिक है।
7. जनशक्ति नियोजन, कृषि आधारित उद्योग धंधों का विकास, प्राकृतिक संसाधनों का उचित दोहन, पुँजी निर्माण में वृद्धि, मुद्रा स्फीर्ति पर नियंत्रण, समान अवसरों की उपल्ब्धता, आर्थिक विकास में तेजी, ग्रामीण औधोगीकरण, सामाजिक सेवाओं का विस्तार आदि उपाय कर गरीबी पर नियंत्रण किया जा सकता है।

अत: निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि गरीबी एक गंभीर समस्या है किन्तु सही दिशा में प्रयास और उचित संचालन तथा वास्तविक क्रियान्वयन से इसका निदान संभव है, इसमें कोई दो राय नहीं है कि विकास में अनेक बाधाऐं होती है, लेकिन इन बाधाओं कों धीरे धीरे दूर किया जा सकता है यदि ऐसा होना सम्भव न होता तो कोई भी अर्द्ध विकसित देश विकसित नही हो सकता था।

अत: अन्त में यही कहा जा सकता है कि अल्प विकसित व अर्द्ध विकसित देशो में गरीबी का कुचक्र तो चलता है, लेकिन उसको धीरे धीरे तोड़ा जा सकता है और देश का विकास किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सामान्य अध्ययन, आंनद कुमार पाण्डेय एंव श्रीमती अर्चना पाण्डेय, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ आकादमी, भोपाल, पृष्ठ क्र.175,176, तृतीय(संशोधित परिवर्द्धित) 2013
2. योजना आयोग, नौवीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002)
3. राजस्थान पत्रिका,11 फरवरी 2007 (रविवारीय)
4. राजस्थान पत्रिका,11 फरवरी 2007 (रविवारीय)
5. भारत का आर्थिक और सामाजिक विकास, मैगबुक, भारतीय अर्थव्यवस्था, अरिहंत पब्लिकेशन्स इंडिया लिमिटेड, वर्ष 2013 पृष्ठ क्र. 04
6. सामान्य अध्ययन, आंनद कुमार पाण्डेय एंव श्रीमती अर्चना पाण्डेय, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ आकादमी, भोपाल, पृष्ठ क्र. 175,176, तृतीय(सशोधित परिवर्द्धित) 2013
7. व्यष्टि अर्थशास्त्र, डॉ. जे.सी. पंन्त, डॉ. जे.पी. मिश्रा, साहित्य भावन पब्लिकेशन्स, वर्ष 2013, पृष्ठ क्र. 67, 69, 70
8. प्रतियोगिता दर्पण (लघु अतिरिक्तक) सामान्य अध्ययन अर्थव्यवस्था एक दृष्टि में, द्वितीय सशोधित एंव परिवर्द्धित सस्करण 2013-14,पृष्ठ क्र. 20, 21, 22, 24
9. भारतीय आर्थिक नीति, डॉ. पी.डी. महेश्वरी, डॉ. शीलचंद गुप्त, कैलाश पुस्तक सदन भोपाल, वर्ष 2013, पृष्ठ क्र. 132

****

विकास खण्ड स्तरीय उत्कृष्ट विद्यालय की कार्यप्रणाली का अध्ययन (बदनावर ब्लाक के संदर्भ में)

डॉ. सतीश माहेश्वरी * मोहनसिंह वारकेले **

प्रस्तावना – भारत के ग्रामीण एवं श्रमिक वर्ग चाहकर भी अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा नहीं दिला पाते है। आज के बदलते एवं मंहगाई के युग में जहां एक और परिवार को पालना कठिन हो गया है। वही अपने प्रतिभाशाली बच्चों को अच्छी शिक्षा की व्यवस्था के बारे में विचार करना ओर भी दुर्लभ सा हो गया है। परिवार कोई सा भी हो अपने-अपने बच्चों को अच्छी से अच्छी शिक्षा दिलाना चाहते है।यदि अच्छे स्कूल में प्रवेश ले तो उनकी फीस की पूर्ति करना कठिन हो जाता है। इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए शासन ने उत्कृष्ट विद्यालय की स्थापना की। प्रारंभ में उत्कृष्ट विद्यालय जिला स्तर पर खोले गये। इसका मुख्य उद्देश्य शासकीय विद्यालय की शिक्षा में गुणवत्ता लाना है तथा गैर शासकीय शालाओं में जो शिक्षा की गुणवत्ता है उसकी बराबरी करना इसके लिये सरकार ने इन विद्यालयों को हर प्रकार के संसाधन उपलब्ध कराये है।

बदनावर ब्लॉक के संदर्भ में शासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय को जुलाई 2003 में उत्कुष्ट विद्यालय का दर्जा दिया गया। शिक्षकों की नियुक्ति कलेक्टर महोदय के निर्देशन में की गई थी, जो पहले से कार्यरत स्टॉफ था उनमें से भी योग्यता के आधार पर चयन किया गया शेष जिले के शिक्षकों से आवेदन मंगाकर योग्य शिक्षकों को पदस्थ किया गया।

परिकल्पना–उत्कुष्ट विद्यालय में प्रवेश प्रक्रिया जटिल है।

उद्देश्य–वर्तमान समय की मांग और प्रतियोगी युग में एक श्रेष्ठ नागरिक बनने में उत्कृष्ट विद्यालय अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहा है, कम शुल्क पर इन विद्यालयों में केन्द्रीय विद्यालय स्तर की शिक्षा दी जाती है। साथ ही सहशिक्षा प्रणाली के माध्यम से बच्चों को एकता एवं समन्वयता भी सिखाई जाती है। उत्कृष्ट विद्यालय में प्रवेश चयन परीक्षा के माध्यम से कक्षा 9 वीं में किये जाते है, इन विद्यालयों में शिक्षा का माध्यम हिन्दी तथा क्षेत्रीय भाषायें साथ ही अंग्रेजी माध्यम का प्रयोग किया जाता है।

अध्ययन की विधि–प्रस्तुत अध्ययन में द्वितीयक समंको का ही प्रयोग किया है, द्वितीयक समंको के लिये उत्कृष्ट विद्यालय की विवरणिका एवं विद्यालय के संबंध में प्रकाशित होने वाले विभिन्न पत्रिकाओं का अध्ययन कर सूचनाएं एकत्रित की गई है।

अध्ययन का क्षेत्र–प्रस्तुत शोध पत्र धार जिले के बदनावर तहसील की उत्कृष्ट विद्यालय तक ही रखा गया है।

उत्कृष्ट विद्यालय में प्रवेश हेतु संदर्शिका–उत्कृष्ट विद्यालय में प्रवेश हेतु प्रत्येक विद्यार्थी को चयन परीक्षा देनी होती है। इस हेतु उत्कृष्ट विद्यालय के प्राचार्य द्वारा पूर्ण तैयारी की जाती है यह परीक्षा मई माह के अंत में ली जाती है। यह परीक्षा पूरे प्रदेश के जिला स्तर के विद्यालय में प्रवेश हेतु होती है। चयन परीक्षा व्यावसायिक परीक्षा मण्डल भोपाल द्वारा पूरे प्रदेश में एक साथ संचालित होती है इसके लिये विद्यालय से आवेदन पत्र प्राप्त कर भरा जाता है।

उत्कृष्ट विधालय में प्रवेश हेतु समान्य नियम–

1. उत्कृष्ट विद्यालय में कक्षा 8 वीं में 50 प्रतिशत अंक प्राप्त छात्रों को प्रवेश परीक्षा के आधार पर कक्षा 9वीं में प्रवेश दिया जाता हैं।
2. जो छात्र या छात्रा उसी जिले में जिसमें छात्र या छात्रा ने प्रवेश के लिये आवेदन दिया हैं, ये किसी मान्यता प्राप्त विद्यालय के गतवर्ष के सत्र की कक्षा 9 वी में उत्तीर्ण हो चुके इस सत्र की कक्षा 10 वी में अध्ययनरत हैं, निर्धारित प्रवेश परीक्षा में बैठ सकते हैं।
3. विद्यार्थियों की उम्र कम से कम 13 वर्ष होनी चाहिए।
4. यदि चयनित अभ्यार्थी किसी प्रकार की विकलांगता श्रेणी में आता हैं, तो उसे प्रवेश देते समय स्वजन पद मुख्य चिकित्सा अधिकारी द्वारा प्रमाणित चिकित्सा प्रमाण पत्र अनिवार्य रूप से प्रस्तुत करना पडेगा।

उत्कृष्ट विद्यालय में प्रवेश की परीक्षा प्रणाली–चयन परीक्षा की अवधि 2 घंटे की होती हैं इसमें वस्तुनिष्ठ प्रश्न होते हैं। प्रश्न पत्र में गणित, विज्ञान से संबंधित प्रश्न पूछे जाते हैं, इसके अलावा इसमें अंग्रेजी तथा हिन्दी के साथ-साथ सामान्य ज्ञान के भी प्रश्न पूछे जाते हैं। प्रश्न पत्र 200 अंको का होता हैं। उत्तीर्ण होने के लिये 33 प्रतिशत अंक अनिवार्य हैं। उत्तर ओ.एम.आर. शीट पर देना होता हैं। विद्यालय में 800 सीटे हैं इनकी पूर्ति मेरिट के आधार होती हैं, तथा आरक्षण का पालन होता हैं। अनुसूचित जाति 22 प्रतिशत, अनुसूचित जनजाति 3 प्रतिशत शेष पद सामान्य व विछड़ा वर्ग से भरे जाते हैं।

विशेष वर्ग के आधार पर वर्गीकरण

क्रं.	विशेष वर्ग	छात्रों की संख्या	प्रतिशत
1.	अनुसूचित जाति	176	22 प्रतिशत
2.	अनुसूचित जनजाति	24	3 प्रतिशत
3.	पिछड़ा वर्ग	360	45 प्रतिशत
4.	सामान्य वर्ग	240	30 प्रतिशत
5.	कुल	800	100 प्रतिशत

उपरोक्त तालिकाओं से स्पष्ट होता हैं, कि उत्कृष्ट विद्यालय में अनुसूचित जाति के 176 छात्र है, अनुसूचित जनजाति के 24, पिछड़ा वर्ग के 360 छात्र हैं, तथा सामान्य वर्ग के 240 छात्र हैं ये सभी छात्र 9 वी से 12 वीं तक के हैं। उपरोक्त सूची मेरिट के आधार पर बनाई गई हैं।

उत्कृष्ट विद्यालय में परीक्षा का परिणाम –मई माह के अंत में उत्कृष्ट विद्यालय की चयन परीक्षा के परिणाम जून माह में घोषित हो जाने की संभावना रहती हैं, परीक्षा परिणाम निम्न प्रकारी से विद्यार्थियों को प्राप्त हो सकेगें।

(अ) जिले में स्थित विद्यालय के नोटिस बोर्ड पर।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

(ब) उत्तीर्ण होने पर विद्यार्थियों को पत्र के माध्यम से सूचना द्वारा।

उत्कृष्ट विद्यालय में राज्य शासन द्वारा वित्तीय प्रबंध –विद्यालय में खर्चे तथा व्यय शासन द्वारा वहन किये जाते है, इस विद्यालय में सामान्य तथा सभी छात्रों हेतु 60 सीट वाला छात्रावास हैं, यह छात्रावास विद्यालयीन केम्पस में ही स्थित हैं, इसमें खाने के बर्तन, टेबल कुर्सी भोजन तथा अन्य सामान्य सुविधायें शासन की ओर से दी जाती हैं।

उत्कृष्ट विद्यालय की शिक्षा नीति –राष्ट्रीय शिक्षा नीति के कई लक्ष्य लेकर उत्कृष्ट विद्यालय प्रारंभ किये हैं, जिससे शिक्षा के उच्च स्तर को बढ़ावा मिला हैं,

ब्लॉक स्तरीय विद्यार्थियों को उत्तम शिक्षा उपलब्ध कराना–उत्कृष्ट विद्यालय में शिक्षा की उत्तम व्यवस्था हैं, इसमें सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह हैं कि यहां अनुशासन का अधिक ध्यान दिया जाता हैं, विद्यालय की सभी गतिविधियां समयानुसार होती हैं, वर्तमान में बदनावर ब्लॉक के उत्कृष्ट विद्यालय की समय सारणी के अनुसार छात्रावास के सभी विद्यार्थी सुबह 5.30 बजे प्रात उठकर 7.00 बजे उठकर व्यायाम करते हैं, इसके बाद 1.00 घंटे का समय नहाने व नाश्ते का होता हैं। दोपहर 12 बजे की छुटटी भोजन के लिये होती हैं और शाम 5 बजे तक शिक्षण कार्य होता हैं। और 5.30 से 6.30 तक खेल कूद का समय होता हैं इसके पश्चात 7.30 से 8.30 बजे तक भोजन का समय होता हैं। और 8.30 से 10.00 तक बच्चों को स्वयं अध्ययन का समय होता हैं। रात्रि 10.00 बजे सोने का समय होता हैं।

उपरोक्त क्रियायें समयानुसार चलती है, और इस समय चक्र के अनुसार यदि विद्यार्थी को ढाला जायेगा तो, निश्चित ही वह एक सफल नागरिक बन पायेगा। इसके अलावा शिक्षा की दृष्टि से समय–समय पर अंतर विद्यालयीन प्रतियोगिता भी होती हैं, जिसमें प्रमुख खेल सांस्कृतिक व अन्य शैक्षणिक प्रतियोगिताएं होती हैं, इस प्रतियोगिता के माध्यम से विद्यार्थी राष्ट्रीय स्तर पर जाकर अपनी प्रतिभा दिखाते हैं।

ब्लॉक स्तरीय प्रतिभाशाली विद्यार्थियों की शिक्षा के स्तर को अधिक प्रोत्साहित करना –ग्रामीण क्षेत्र के प्रतिभावान छात्रों के लिये शासन ने शिक्षा नीति के तहत 22 प्रतिशत अनुसूचित जाति 3 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति व शेष सामान्य व पिछड़ा वर्ग से भरे जाते हैं, ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों को विशेष महत्व दिया जाता हैं। इस योजना से विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों के बच्चों को प्रोत्साहित करना और उन्हें कुएं एवं मेढ़क की विचारधारा से ऊपर उठाना हैं, इस योजना से सबसे अधिक लाभ उन वर्ग के बच्चों को मिलता हैं, जो अधिक प्रतिभाशील होकर भी शिक्षा के क्षेत्र में आगे नहीं बढ़ पाते और जो उनके विकास में बाधक हैं, लेकिन उत्कृष्ट विद्यालय के द्वारा इस तरह के कमजोर वर्ग के बच्चों को भरपूर मौका मिलता हैं।

विद्यार्थियों में निश्चित उददेश्य की प्राप्ति में सहयोग प्रदान करना–राष्ट्रीय एकता को बढावा देने के लिये राज्य सरकार ने उत्कुष्ट विद्यालय की स्थापना की। इसके अन्तर्गत सभी विद्यालयों का अपनी दूसरी शाखा अर्थात विद्यालय से भाषा के रूप में रिश्ता बनाये रखने के लिये प्रवास किया जाता हैं। यहां छात्रों को टीम बनाकर एक शाखा से दूसरी शाखा में लाया जाता है। इसमें बच्चों में वहा की सांस्कृतिक भाषा, रहन–सहन वहा के लोगों के साथ मेल–मिलाप होता हैं, और इस प्रकार वहा से आये बच्चों को अपने यहा के जलवायु, मौसम, रहन–सहन, खान–पान आदि का ज्ञान होता हैं, और इसी प्रकार से एक राज्य से दूसरे राज्य के बीच में एक रिश्ता कायम होता हैं, इससे हमारी राष्ट्रीय एकता को बढावा मिलता हैं।

उत्कृष्ट विद्यालय की शिक्षा निति –आज के वर्तमान परिदृश्य एवं प्रतिस्पर्धा को देखते हुए उत्कृष्ट विद्यालय छात्रों को हर क्षेत्र में योग्य बनाने के लिये एक उच्च स्तरीय शिक्षा नीति का निमार्ण किया, जिसके अन्तर्गत सभी प्रकार की शिक्षा को शामिल किया गया जो कि निम्न हैं।

उत्कृष्ट विद्यालय में पुस्तकीय ज्ञान के साथ–साथ शारीरिक शिक्षा भी दी जाती हैं। इसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के खेल जैसे कबड्डी, खो–खो क्रिकेट, बास्केटबॉल, फूटबॉल इत्यादि का प्रशिक्षण दिया जाता हैं, और समय–समय पर विद्यार्थियों को प्रतिस्पर्धात्मक भावनायें बनाये रखने के लिये प्रतियोगिता भी कराई जाती हैं।

उत्कृष्ट विद्यालय में सी.बी.एस.ई. पद्धति व शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षण के साथ चित्रकला का प्रशिक्षण भी दिया जाता हैं, इसमें विभिन्न प्रकार की चित्रकला का प्रशिक्षण दिया जाता हैं और इसके लिये आवश्यक सामग्री और प्रशिक्षण के लिये अध्यापक की व्यवस्था भी होती हैं।

सांस्कृतिक प्रशिक्षण–भारतीय सांस्कृतिक कला को विद्यमान रखने के लिये उत्कृष्ट विद्यालय के अंतर्गत विद्यार्थियों को सांस्कृतिक प्रशिक्षण दिया जाता हैं, जैसे– गायन, वादन,वाद–विवाद प्रतियोगिता, भाषण इत्यादि का प्रशिक्षण होता हैं व समय–समय पर राज्य पर इनकी प्रतियोगिताएं भी होती हैं।

अन्य प्रशिक्षण –उपरोक्त सभी प्रशिक्षण के साथ–साथ उत्कृष्ट विद्यालय में कुछ अन्य प्रशिक्षण व अन्य योजनायें भी लागू हैं जो निम्न हैं –

एन.सी.सी., एन.एस.एस., स्कॉउट्स एंड गाईड्स

निष्कर्ष –किसी भी राष्ट्र की राष्ट्रीय आय वहाँ के नागरिकों पर निर्भर करती हैं, यदि नागरिक क्रियाशील हैं, तो विकास की गति भी क्रियाशील रहेगी। अत: हम कह सकते हैं कि विद्यालय में विद्यार्थियों को ऐसा माहौल प्रदान किया जाता हैं, जिससे विद्यार्थी समाज में चल रही कुरीतियों व स्वार्थ प्रवृत्ति से ऊपर उठता हैं तथा एक साहसी नागरिक बनकर अपना लक्ष्य प्राप्त करता हैं तथा समाज के किसी भी स्तर पर आश्रित नहीं रहता हैं। धार जिले के बदनावर तहसील के उत्कृष्ट विद्यालय का सत्र 2014 में कक्षा 10 वीं का रिजल्ट में 70 प्रतिशत तथा 12 वी में 87 प्रतिशत रहा पूरे जिले में 10 उत्कृष्ट विद्यालय में से कक्षा 12 का परिणाम 2014 में ब्लॉक स्तर पर द्वितीय रहा।

अत: कहा जा सकता हैं, कि उत्कृष्ट विद्यालय का शिक्षा स्तर बहुत ही अच्छा हैं। अत: सभी वर्ग उत्कृष्ट विद्यालय में ही बच्चों को एडमिशन कराना चाहते हैं, इससे उत्कृष्ट विद्यालय की ख्याति फैल रही हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. उत्कृष्ट विद्यालय की विवरणिका।
2. विद्यालय के संबंध में प्रकाशित होने वाले विभिन्न पत्रिकाओं का अध्ययन कर सूचनाएं एकत्रित की गई है।

****

म.प्र. लोकसेवा आयोग की प्रतियोगी परीक्षा में ग्रामीण छात्रों को आने वाली समस्याओं का सर्वेक्षणात्मक अध्ययन

डॉ. सतीश माहेश्वरी * मोहनसिंह वास्केले **

प्रस्तावना – आज के युवा कल के भविष्य हैं। इनके सुनहरे भविष्य के लिए जरूरी हैं शिक्षा केवल किताबी ज्ञान नहीं है अपितु रोजमारोन्मुखी होनी चाहिये। आज यह आवश्यक हो गया हैं कि इस क्षण भंगुर जीवन काल में शिक्षा में ज्ञान के क्षैतिज को छुपाना विद्यार्थी का उद्देश्य होता हैं। वह संकल्पना बद्ध होकर जीवन में सपनों को साकार करना चाहता हैं। परन्तु निश्चित सफलता के लिए जरूरी है अच्छा मार्ग और अच्छी अध्ययन सामग्री। आज का हर युवा बुलंदियों को छुना चाहता हैं, परन्तु लक्ष्य की प्राप्ति योग्य एवं सफल व्यक्ति को ही मिलती हैं। शहरों में रहने वाले छात्र प्रतियोगी परीक्षाओं से भली भांति परिचित रहते हैं। शहरों के छात्रों को उचित मार्गदर्शन और अच्छी अध्ययन सामग्री प्राप्त होती हैं। परन्तु जो छात्र ग्रामीण क्षेत्र के होते हैं अर्थात जो गांवों से शहरों में आते हैं उन्हें उचित मार्गदर्शन प्राप्त नहीं हो पाता हैं। उनकी प्रारंभिक शिक्षा गांवों में ही प्राप्त होती हैं तथा स्नातक शिक्षा वे अपने आसपास के छोटे शहरों में प्राप्त करते हैं जिससे वे प्रतियोगी परीक्षाओं से अनभिज्ञ रहते हैं। ग्रामीण छात्रों की शिक्षा का आधार कमजोर होता हैं ये आधुनिक शिक्षा अर्थात तकनीकी शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। ग्रामीण छात्र शहरी वातावरण से अपरिचित रहते हैं जब ये शहर में आते है तब वे यहां के छात्रों से परिचित होते हैं और तब उन्हें प्रतियोगी परीक्षा के बारे में जानकारी प्राप्त होती हैं। ये परीक्षा में बैठने के इच्छुक होते है और अच्छे पदों पर चयनित होने के लिये तैयारी करते हैं। इनके मन में भी समाज में प्रतिष्ठा पाने की इच्छा जागृत होती हैं।

परिकल्पना–मध्य प्रदेश लोक सेवा आयोग की प्रतियोगिता परीक्षा में ग्रामीण छात्रों को समस्याओ होती है।

औचित्य–हाल ही के वर्षो में ग्रामीण क्षेत्रों में सिविल सेवाओं के प्रति सम्मान में तेजी से वृद्धि दृष्टिगत हुई हैं। वास्तव में देश की सर्वोच्च सेवा में अपनी भागीदारी दर्ज कराना हर ग्रामीण नागरिक के लिये गर्व की बात हैं। देश की प्रशासनिक व्यवस्थाओं को चुस्त-दूरूस्त बनाये रखना, आर्थिक विकास एंव सामाजिक कल्याण हेतु निति निर्धारण में देश के गणमान्य राजनेताओं को सहयोग एवं सुझाव देना तथा नागरिकों की सामान्य विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति की व्यवस्था करना सिविल सेवार्थियों की ही तो जिम्मेदारी हैं। अंतत: म.प्र. लोक सेवा आयोग प्रतियोगी परीक्षा में ग्रामीण छात्रों को आने वाली समस्याओं का अध्ययन की पूर्ति के लिए हमारा यह एक तुच्छ प्रयास हैं।

समस्या कथन – इस परियोजना में समस्या कथन म.प्र. लोक सेवा आयोग प्रतियोगिता परीक्षा में ग्रामीण छात्रों को आने वाली समस्याओं का अध्ययन हैं

उद्देश्य–

1. मध्य प्रदेश लोक सेवा आयोग प्रतियोगिता परीक्षा में ग्रामीण प्रतियोगियों की समस्याओं का अध्ययन करना।
2. सर्वेक्षण के माध्यम से छात्रों की प्रतिक्रियाऐं जानना।

प्रदत्तों का संकलन– इस परियोजना में आदिवासी बालक छात्रावास में रह रहे धार, झाबुआ, जिले के प्रतियोगियों को लिया जायेगा। इनमें 25 प्रतियोगी धार जिले के तथा 25 प्रतियोगी झाबुआ जिले के लिये जायेंगे। इस प्रकार कुल 50 छात्रों को लिया जावेगा।

सीमाऐं

- इस परियोजना में केवल आदिवासी बालक छात्रावासों से म.प्र. सेवा आयोग के प्रतियोगियों को ही लिया जावेगा।
- प्रश्नावली साक्षात्कार कम से कम 50 प्रतियोगियों से भरवाई जावेगी।

म.प्र. लोक सेवा आयोग की परीक्षा तीन चरणों में होती हैं।

- **प्रारंभिक परीक्षा**
- **मुख्य परीक्षा**
- **साक्षात्कार**

प्रारंभिक परीक्षा–म.प्र. लोक सेवा आयोग में प्रारंभिक परीक्षा मुख्य परीक्षा के लिये उम्मीदवारों के चयन के लिए होती हैं। इस परीक्षाा में दो प्रश्नपत्र होते हैं। एक सामान्य ज्ञान से संबंधित तथा दूसरा सामान्य बोध परीक्षण (जनरल एप्टीट्यूट टेस्ट) यह परीक्षा वस्तुनिष्ठ होती हैं। प्रारंभिक परीक्षा सिर्फ मुख्य परीक्षा में चयनित करने के लिए की जाती हैं। इसमें अंक मुख्य परीक्षा की तरह साक्षात्कार के लिये नहीं जुडते हैं। प्रारंभिक परीक्षा में सम्मिलित होने के लिये उम्मीद्धार को निम्नांकित नियमों का पालन करना होता हैं।

- उम्मीद्वार भारत का नागरिक होना चाहिये।
- न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता।

उम्मीद्वारके पास भारत में केन्द्रीय या राज्य विधान मण्डलों के अधिनियम द्धारा निर्गमित/समाविष्ट विश्वविद्यालयों में से किसी विश्वविद्यालय की या संसद के किसी अधिनियम द्धारा स्थापित या विश्वविद्यालय अनुदान आयोग 1956 की धारा 3 के अधीन विश्वविद्यालय मानी गई किसी शैक्षणिक संस्था की उपाधि होनी चाहिऐ अथवा उसके समकक्ष अर्हतांए होनी चाहिए।

आयु –उम्मीद्वार ने प्रतियोगी परीक्षा प्रारंभ होने की तारिख के बाद की 1 जनवरी 21 वर्ष की आयु पूरी कर ली हो और 40 वर्ष की आयु पूरी न की गई हो। परन्तु यह कि राज्य शासन सेंवाओं की अत्यावश्कताओं को देखते हुए इन नियमों में शामिल सेंवाओं में से किसी सेवा के लिए न्यूनतम आयु सीमा और अधिकतम आयु सीमा में परिवर्तन कर सकता हैं।

मुख्य परीक्षा – म.प्र. लोक सेवा आयोग में मुख्य परीक्षा में वे उम्मीद्वार ही बैठते हैं जिन्होने प्रारंभिक परीक्षा उत्तीर्ण कर ली हो। मुख्य परीक्षा लिखित

* प्राध्यापक (वाणिज्य) स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

रूप में होती हैं। इसमें कुल सात प्रश्न पत्र होते हैं। मुख्य परीक्षा में उम्मीद्वार को दो वैकल्पिक विषय चुनने होते हैं। जिसके अंतर्गत चार प्रश्न पत्र होते हैं तथा तीन प्रश्न पत्र सामान्य अध्ययन के होते हैं। इस प्रकार उपर्युक्त सात प्रश्नपत्रों के अंक लोक सेवा आयोग द्वारा निर्धारित रहते हैं। मुख्य परीक्षा में सर्वाधिक अंक प्राप्त करने वाले उम्मीद्वार ही साक्षात्कार के लिये चयनित होते हैं। लोक सेवा आयोग की मुख्य परीक्षा में लेखन की बहुत बड़ी भूमिका रहती हैं। लेखन में सुन्दर हस्तलेखन, तार्किक अभिव्यक्ति एवं शब्द सीमा का ख्याल रखा जाता हैं।

साक्षात्कार परीक्षा – म.प्र. लोक सेवा आयोग में मुख्य परीक्षा में उत्तीर्ण उम्मीद्वार का ही साक्षात्कार लिया जाता हैं। जैसा कि साक्षात्कार का लक्ष्य वैयक्तिक गुणों, रूचियों, दृष्टिकोण का परीक्षण करना होता हैं। राज्य लोक सेवा आयोग की साक्षात्कार नीति इसी पर आधारित होती हैं। उम्मीद्वार का साक्षात्कार एक बोर्ड द्वारा होगा। जिसके सामने उम्मीद्वार के परिचय वृत्त (Bio-Data) का अभिलेख (Record) रहेगा। साक्षात्कार में वार्तालाप के जरिये सहज रूप से उम्मीद्वार के व्यक्तित्व को परखा जाता हैं। सामान्य रूप से साक्षात्कार बोर्ड उम्मीद्वार के निम्नलिखित वैयक्तिक गुणों की जांच करता हैं।

- मानसिक सर्तकता।
- आलोचनात्मक ग्रहण शक्ति।
- संतुलित निर्णय लेने की शक्ति।
- नेतृत्व एंव सामाजिक संगठन की योग्यता।
- व्यक्तिगत परिचय एंव सम्बधित आवेदित पद के लिये प्रशासनिक क्षमताएं।

इसी के आधार पर जो उम्मीद्वार सक्षम एवं निष्पक्ष प्रेक्षकों के बोर्ड के समक्ष अपनी वैयक्ति खुबियों को आत्मविश्वास के साथ प्रस्तुत करने में सफल हो जाते हैं उन्हें अंतिम रूप से राज्य लोक सेवा आयोग में चयनित कर लिया जाता हैं। जिनमें आत्म विश्वास, सजगता , सन्तुलन, तार्किकता एवं नेतृत्वशीलता का अभाव होता हैं वे असफल हो जामे हैं।

जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए सही मार्गदर्शन परम् आवश्यक होता हैं। परीक्षाओं के संदर्भ में सही मार्गदर्शन को नकारा नहीं जा सकता। बल्कि इसका अलग ही महत्व हैं। लिखित एवं साक्षात्कार दोनों ही परिक्षाओं में छात्रों को पठनीय सामग्री एवं सहायक सामग्री की आवश्यकता होती हैं। जैसे **The Hindu, Times of India** समाचार पत्र,राष्ट्रीय सहारा, राजस्थान पत्रिका , रोजगार समाचार आदि।

समाचार पत्रिकाऐं – इंडिया टुडे, द टाइम्स फन्ट लाइन, आइट लुक आदि।

कैरियर मैगजीन्स – प्रतियोगिता दर्पण, योजना कुरूक्षेत्र विज्ञान, प्रगति इत्यादि।

रेडियो एवं इलेक्ट्रानिक मिडियां – आज तक न्यूज चैनल, एन.डी.टी.वी., डी.डी.न्यूज, रेडियों।

उपर्युक्त सामग्री सफलता के लिये अत्यन्त आवश्यक होती हैं परन्तु ग्रामीण प्रतियोगी छात्रों की आर्थिक स्थिति कमजोर होती हैं। अत: वे इन उचित सामग्री का उपयोग नहीं कर पाते हैं। ग्रामीण प्रतियोगी को परीक्षा की तैयारी करते समय अनके कठिनाइयों का सामना करना पड़ता हैं। जैसे–

- पाठ्य वस्तु का वर्गीकरण कर अध्ययन करने की।
- लेखन का नियम समय एंव शब्द सीमा के आधार पर नियमित अभ्यास करने की।
- प्रमाणिक पाठ्य सामग्री न प्राप्त होने की।

साथ ही साक्षात्कार कक्ष के अन्दर बैठने का तरीका प्रश्न काल के दौरन जवाब देने का तरीका आदि बातों का इन्हें ज्ञान नहीं रहता हैं। ये ग्रामीण प्रतियोगी शब्दों का उच्चारण भी ठीक नहीं कर पाते हैं। जबकि शब्दों का उच्चारण बहुत मायने रखता हैं। यदि ठीक उच्चारण नहीं कर सकते तो मधुरता और शिष्टता की भूमिका भी अधिक ठीक नहीं रहती हैं। इस प्रकार किसी तरह से वे प्रारंभिक परीक्षा तो उत्तीर्ण कर लेते हैं परन्तु मुख्य परीक्षा के लिये उनके पास अच्छी शिक्षण सामग्री नहीं मिल पाती हैं इसलिये उन्हें प्रशिक्षण की आवश्यकता होती हैं परन्तु आर्थिक स्थिति अच्छी न होने की वजह से वे प्रशिक्षण पाने से वंचित रह जाते हैं।ये छात्र ग्रामीण होने के कारण इन्हें शुद्ध भाषा का ज्ञान नहीं रहता अत: ये साहित्यिक भाषा का उयोग मुख्य परीक्षा में नहीं कर पाते हैं। मिश्रित भाषा के लेखन के कारण इन्हें उचित अंक प्राप्त नहीं होते। कई बार ग्रामीण छात्र मुख्य परीक्षा उत्तीर्ण कर साक्षात्कार के लिये चयनित हो जाते हैं। परन्तु वे किसी तरह से किताबी ज्ञान तो अर्जित कर लेते हैं लेकिन दैनिक जीवन में उनका बात चित्त करने का तरीका क्षेत्रीय भाषा में होता हैं। साथ ही मित्रगणों के बीच सम्प्रेषण कौशलों का विकास नहीं हो पाता हैं। भाषा अभिव्यक्ति का एक मात्र माध्यम होता हैं। प्रभावी सम्प्रेषण के लिए भाषा में संशक्तता का होना अपरिहार्य हैं। भाषा आपके आत्म विश्वास को सशक्त बनाने का सर्वश्रेष्ठ साधन हैं। साक्षात्कार के दौरान बोर्ड के सदस्यों द्वारा उम्मीद्धारों के शब्दों के तरीकों को भी परखा जाता हैं। अत: वे साक्षात्कार में अपनी बात की अभिव्यक्ति ठीक से नहीं कर पाते हैं। इसलिये वे असफल हो जाते हैं। ग्रामीण छात्रों का पूर्णत: मानसिक विकास नहीं हो पाता हैं।

निष्कर्ष – इस तरह हम पाते हैं कि म.प्र. लोक सेवा आयोग परीक्षा में ग्रामीण छात्रों में अनेक कठिनाइयां आती हैं। इसके अतिरिक्त ग्रमीण प्रतियोगी उचित मार्गदर्शन व अच्छी अध्ययन सामग्री के अभाव में प्रतियोगी परीक्षाओं से वंचित रह जाते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. समाचार पत्र, रोजगार समाचार आदि।
2. इंडिया टुडे, द टाइम्स फन्ट लाइन, आइट लुक आदि।
3. प्रतियोगिता दर्पण योजना कुरूक्षेत्र विज्ञान, प्रगति इत्यादि।

****

कृषि उत्पादकता का ग्रामीण जीवन पर सामाजिक – आर्थिक प्रभाव का अध्ययन

डॉ. सतीश माहेश्वरी * मोहनसिंह वास्केले * *

प्रस्तावना– भारत एक कृषि प्रधान देश है। जिसके 75 फीसदी से अधिक जनसंख्या कृषि पर आधारित है। झाबुआ जिला विकास की ओर जा रहा है। विकसित देशों की तुलना में भारत पिछड़े देशों में गिना जाता है। यहॉ पर 90 प्रतिशत जनसंख्या आदिवासी है। यहां की भूमि पथरीली, ढालू और उबड़ खाबड़ है। इसके बावजूद भी झाबुआ जिले की 80 से 90 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है।ऐसे में कृषि के ऊपर जनसंख्या का काफी भार दिखाई देता है। अधिकतर वर्षा आधारित कृषि ही संभव हो पाती है। चूँकि वर्षा भी विगत कई सालों से अपर्याप्त हो रही है, जिससे इस जिले को सूखे का सामना करना पड़ रहा है। इस स्थिति में पानी रोको अभियान कार्यक्रम की दृष्टि से सफल संचालन होना सैद्धान्तिक रूप से यह दर्शाता है, कि वर्षा पर निर्भरता कम हुई है, सरकारी ऑकड़े भी यही दशति है। परन्तु यह जानना आवश्यक है कि इस अभियान से ग्रामीणों को कितना लाभ हुआ है

उद्देश्य – कृषि उत्पादकता का ग्रामीण पर प्रभाव का अध्ययन करना है।

क्षेत्र एवं चुनाव – झाबुआ जिले की थॉदला ब्लॉक के निम्न गॉव का चयन किया गया, जो निम्नानुसार है–छोटी धामनी, सेमलिया, बोरडी, परवलिया, नाहरपुरा, कलदेला।

उत्तरदाताओं का चुनाव – गॉव के पॉच फलियों का चयन किया गया और एक परिवार से एक उत्तरदाता को चुना गया। इस प्रकार अध्ययन के दौरान सामाजिक, आर्थिक एवं अन्य गतिविधियों को जानने के लिए गॉव में बने फलियों से सीधा सम्पर्क किया।

सूचनाओं और ऑकड़ों का एकत्रीकरण – ऑकड़ों एवं सूचनाओं को एकत्रित करने के लिये स्वयं गॉव के प्रत्येक फलिये के निर्धारित उत्तरदाता से संपर्क स्थापित किया है। ऑकड़ें एकत्रीकरण के लिए जो पद्धति ली गयी है, उसमें सरल प्रश्नों का समावेश किया गया है ताकि सामान्य व्यक्ति को प्रश्न समझने में और उत्तर देने में कठिनाई न हो। इस प्रकार घर, खेत और जहां से भी सूचनायें प्राप्त हो सकती थी वहॉ जाकर सूचनाऐं प्राप्त की है।

परिकल्पना –'पानी रोको अभियान' कार्यक्रम से कृषि उत्पादकता का ग्रामीण पर प्रभाव हो रहा है।

कृषि उत्पादकता का ग्रामीण स्तर पर सामाजिक प्रभाव–कृषि उत्पादकता का ग्रामीण स्तर पर सामाजिक प्रभाव पानी रोको अभियान में देखने पर यह विदित हुआ है कि एक ओर जहॉ पानी का कटाव रूका है, वहीं दुसरी ओर पानी के जलस्तर में वृद्धि हुई है जहॉ परम्परागत स्त्रोतों में भण्डारण क्षमता अधिक हुई है, वहीं केवल थांदला ब्लॉक में 6.2 करोड़ के कार्य करवाये गये है। जिससे कम से कम 20 हजार मजदूरों को थॉदला ब्लॉक में ही निरन्तरकार्य करवाये गये है इससे यह प्रतीत होता है कि क्षेत्र में सुखे के बावजूद पलायन को रोका जा सका है। साथ ही खरीफ की फसल में 20 प्रतिशत धान के रकबे में वृद्धि हुई है। सूखे की स्थिति में जहॉ गत वर्ष अङ्गवारी 10 प्रतिशत थी। पानी रोको अभियान के बाद इस वर्ष भी सूखे की स्थिति में अङ्गवारी 40 प्रतिशत के लगभग हुई। कपास की फसल को पानी के अभाव में रूके हुये जल को बचाया जा सका है। जिससे फायदे के कारण मक्के की फसल अधिकतम ही है। जिसकी प्रतिहेक्टेयर 4 क्विंटल की वृद्धि उत्पादन में की गयी है। अत: खरीफ की फसल में लक्ष्य के अनुरूप अधिकतम उत्पादन प्राप्त किया गया है। रबी की फसल में सूखे के उपरान्त पिछले वर्ष जहॉ 17 प्रतिशत बोवनी की गयी थी, वहीं इस वर्ष के सूखे के बावजूद 40 प्रतिशत रकबे में बोवनी की गयी जिसमें कृषि उत्पादकता में वृद्धि का प्रभाव देखने को मिलता है। पानी रोको अभियान के पूर्व जहॉ अपराधिक गतिविधियॉ अधिक थी, वहीं इस वर्ष सरकारी ऑकड़ों के अनुसार अपराधियों में आशातीत कमी आयी है। सामाजिक रूप से पलायन रोकने के कारण गॉव में ही रूकने पर ग्रामीण संगठनों को मजबुती मिली है। आपसी सहयोग हेतु जहॉ स्वयं सहायता समूह के संगठन को उनके संचालन में मदद मिली है, वहीं साफ सफाई, स्वास्थ व शिक्षा के प्रचार प्रसार के लिये ग्रामीणों की सक्रिय भागीदारी रही है। सामाजिक संस्थायें जैसे परिवार आदि में धार्मिक आस्था, विवाह उत्सव आदि की अधिकता रही है। साथ ही सामाजिक प्रभाव में यह भी देखने में आता है। कि ग्रामीण जन अब संयुक्त परिवारों की बजाय एकांकी परिवारों में रहना अधिक पसंद करते है।

परिवारों के प्रकार का विश्लेषण

क्रं.	परिवार का प्रकार	आवृति	प्रतिशत
1.	संयुक्त परिवार पाँच से अधिक	25	27.77
2.	एकांकी परिवार एक से पाँच	65	72.23
	योग	90	100

स्त्रोत–सर्वेक्षण के आधार पर

परिवार के प्रकार के आधार पर किये गये सर्वेक्षण के आधार पर संयुक्त परिवार के 25 लोग 27.77 प्रतिशत में, एकांकी परिवार के 65 लोग 72.23 प्रतिशत में पाये गये। इस आधार पर सर्वाधिक एकांकी परिवार के 65 लोग पाये गये।

मकान के प्रकार का विश्लेषण

क्रं.	प्रकार	आवृति	प्रतिशत
1.	सामान्य	78	86.67
2.	पक्का	7	7.77
3.	अर्द्धकच्चा	5	5.56
	योग	90	100

स्त्रोत–सर्वेक्षण के आधार पर

मकान के प्रकार के आधार पर किये गये सर्वेक्षण के आधार पर सामान्य मकान वाले 78 लोग 86.67 में पक्के मकान वाले 7 लोग 7.77 प्रतिशत में एवं अर्द्धकच्चे मकान वाले 5 लोग 5.56 प्रतिशत में मिलें। इस आधार पर सर्वाधिक सामान्य मकान वाले 78 लोग मिले, जिनके आधार पर विश्लेषण किया गया। जाति के आधार पर किये गये विश्लेषण में दो औसत अनुसूचित

* प्राध्यापक, स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
* * शोधार्थी, स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

जनजाति एवं सामान्य में बॉटे गये।

जाति के आधार पर विश्लेषण

क्रं.	जाति	आवृति	प्रतिशत
1.	अ.ज.जा.	90	100
2.	सामान्य	–	
	योग	90	100

स्त्रोत–सर्वेक्षण के आधार पर

जाति के आधार पर किये गये सर्वेक्षण के आधार पर अ.ज.जा. के 90 लोग एवं सामान्य जाति के एक भी लोग नहीं मिले।

कृषि उत्पादकता का ग्रामीण स्तर पर आर्थिक प्रभाव–कृषि उत्पाद अधिकतम होने से ग्रामस्तर के आर्थिक संरचनाओं में वृद्धि दिखायी देती है। बाजारों से लिये गये गेहूं का भुगतान एवं खाद बीज का नकद क्रय इस बात का प्रमाण है कि ग्रामीण परिवारों में समृद्धता आयी है। यूँ तो भारतीय बाजार व्यवस्था कृषि उत्पादकता पर ही निर्भर करती है, लेकिन आर्थिक उन्नति व्यक्ति की संपूर्ण उन्नति का कारण नहीं बनती नि:सन्देह आर्थिक स्थिति में तेजी परन्तु खर्च करने के परम्परागत तरीकों के कारण पर्याप्त धन का सदुपयोग नहीं होता।सर्वेक्षण कलदेला, बोरडी,छोटी धामनी, नाहरपुरा,परवलिया एवं सेमलिया में भ्रमण के दौरान यह चित्रण देखने को मिला है कि कृषि के लिये पर्याप्त जागृति तो है, परन्तु रहन–सहन का स्तर परम्परागत वही है।

आय के स्त्रोत के आधार पर विश्लेषण

क्रं.	आय के स्त्रोत	आवृति	प्रतिशत
1.	कृषि	66	73.33
2.	मजदूरी	24	26.67
3.	पशुपालन	–	–
	योग	90	100

स्त्रोत–सर्वेक्षण के आधार पर

आय के स्त्रोत के आधार पर किये गये सर्वेक्षण के आधार पर कृषि पर निर्भर 66 लोग 73.33 प्रतिशत में, मजदूरी पर निर्भर 24 लोग 26.67 प्रतिशत में, पशुपालन पर निर्भर एक भी लोग नहीं मिले। इस आधार पर सर्वाधिक कृषि पर आधारित 66 लोग मिले, कृषि उत्पादकता का ग्रामीण स्तर पर आर्थिक प्रभाव यह भी पडा कि आय का विश्लेषण करने पर पाया गया कि 15 हजार से अधिक आय वाले 68 लोग मिले।

परिवार की वार्षिक आय का विश्लेषण

क्रं.	आय	आवृति	प्रतिशत
1.	15 हजार से कम	68	75.56
2.	15से 45 हजार	20	22.22
3.	45 हजार से अधिक	2	2.22
	योग	90	100

स्त्रोत–सर्वेक्षण के आधार पर

परिवार की वार्षिक आय के आधार पर किये सर्वेक्षण के आधार पर 15 हजार से कम आय वाले 68 लोग 75.56 प्रतिशत में 15 से 45 हजार वाले 20 लोग में 45 हजार से अधिक आय वाले 2 लोग मिले।ग्रामीण जन अब विभिन्न विकास एजेंसी एवं संस्था से जुड़ने लगे है। कृषि उत्पादकता में वृद्धि होने से इन्हें भी ग्राम सेवक, विकास अधिकारीयों से काम पड़ने लगे है।

विकास एजेंसी एवं संस्था से परिवारों का विश्लेषण

क्र.	विकास एजेंसी	आवृति	प्रतिशत
1.	ग्राम सेवक	62	68.88
2.	वि.खं.अ.	13	14.44
3.	कृ. वि. अ.	12	13.33
4.	जि.वि.अ.	3	3.33
5.	अन्य	–	–
	योग	90	100

स्त्रोत–सर्वेक्षण के आधार पर

विकास एजेंसी एवं संस्था से जुड़े परिवार के आधार पर किये गये सर्वेक्षण में ग्रामसेवक से जुड़े 62 लोग। विकास खण्ड अधिकारी से जुडे 13 लोग। कृषि विस्तारअधिकारी से जुड़े 12 लोग। जिला वित्त निगम से जुड़े 3 लोग मिले।

पलायन में कमी–झाबुआ जिला जहां की ग्रामीण अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित है। तीन साल से लगातार सूखा पड़ने के कारण इस अर्थव्यवस्था को काफी आघात पहुँची है। 2001 में पानी रोको अभियान के माध्यम से पलायन को रोकने के प्रयास किये गये, जिसमें केवल उन्हीं ग्रामों में सफलता मिली जहां पानी रोको अभियान के अन्तर्गत ऐसे कार्य संचालित किये गये, जिसमें 150 से 200 मजदूर निरस्तर कार्य कर सके और उन्हीं क्षेत्रों में पलायन की कमी देखी गयी, जैसे बोरडी, छोटी धामनी, सेमलिया, कलदेला व परवलिया में चूँकि पानी रोकने के कार्य तो हुए किन्तु कार्य के दौरान ऐसे कार्यों को हाथ में लिये गये जिनमें अधिक मजदूर काम न कर सके। कार्यक्रम के बाद नि: संदेह इन ग्रामों में जहां रबी के समय 50 प्रतिशत लोग पलायन कर जाते थे वही उस वर्ष 25 लोग ने ही पलायन किये है और ये वो लोग है जो संयुक्त परिवार होने के कारण सदस्यों की संख्या अधिक होने से परिवार के एक दो सदस्य मजदूरी करने बाहर जाते है। ऐसे लोगों की संख्या बहुत कम है जो मजबूरीवश मजदूरी के लिये पलायन करे।

शिक्षा–शिक्षा के क्षेत्र में यह क्षेत्र बहुत पिछड़ा है। यहां का शैक्षणिक स्तर फिर भी औसतन ठीक है स्कूली शिक्षा में प्रत्येक परिवारों से जिसमें करीब 42 परिवारों से 2 बच्चे, 32 परिवारों से 1 बच्चा एवं 25 परिवारों से 3 पढ़ने जाते है इस प्रतिशत को पर्याप्त तो नहीं कहां जा सकता परन्तु यह कहा जा सकता है कि संख्या ठीक है और ग्रामीणों में स्कूली शिक्षा की और रूझान बढ़ रहा है इसका मुख्य कारण यह भी है कि ये ग्राम तहसील मुख्यालय ये नजदीक है और शिक्षा के प्रति लोगों में जागरूकता अच्छी है साथ ही ये भी कह सकते है कि पलायन में कमी के कारण इसका उत्तरोत्तर विकास हुआ है।

पढ़ने–लिखने वाले बच्चों का विश्लेषण

क्र.	पढ़ने–लिखने वाले बच्चों की संख्या	आवृति	प्रतिशत
1.	एक बच्चा पढ़ता है	29	32.22
2.	दो बच्चे पढ़ते है	38	42.22
3.	तीन या अधिक बच्चे पढ़ते है	23	25.55
	योग	90	100

स्त्रोत–सर्वेक्षण के आधार पर

पढ़ने लिखने वाले बच्चों के आधार पर सर्वाधिक दो बच्चों की रही वही सबसे कम तीन से अधिक बच्चों की रही है।

निष्कर्ष– सर्वेक्षण के आधार पर चयनित किये गये गॉवों में शिक्षा का स्तर 55.45 प्रतिशत के लगभग है। जो शैक्षणिक स्तर से ठीक है। ग्रामीण क्षेत्र में अधिक संख्या एकांकी परिवार निवास करते है, जिससे खेत की जोत बहुत छोटी है। परिवार का आकार 5 से अधिक 65 प्रतिशत परिवारों में जो कृषि पर जनसंख्या के दबाव को निरूपित करता है ऐसी स्थिति में पलायन होना सम्भव है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अनिल अग्रवाल व सुनिता नारायण, बूँदों की संस्कृति
2. बूँद–बूँद पानी, जिला झाबुआ
3. रेखा गिरी, लघुशोध प्रबंध वाटररोड़

प्रधानमंत्री जन-धन योजना

डॉ. अंतिम बाला जैन *

शोध सारांश – 28 अगस्त 2014 को भारत सरकार द्वारा प्रवर्तित प्रधानमंत्री जन-धन योजना सरकार के पंचायती साम्राज्य के मुख्य स्तभं के रूप से अवतरित हुआ है। समाज के अंतिम छोर का व्यक्ति तक इस योजना का लाभ पहुंचाना और असंगठित साहूकारों से निर्धन व्यक्ति को छुड़ाकर देश की आर्थिक मुख्य धारा से जोड़ना यही अंतिम लक्ष्य है।

प्रस्तावना – भारत की आजादी के बाद भी देश में वित्तीय साख बाजार में असंगठित क्षेत्र अर्थात साहूकार एंव उसकी प्रणाली का असर बराबर है। बैकिंग प्रणाली का मुख्य कार्य मुद्रा जमा करना एवं साख का सृजन करना है। इन दोनों में असंगठित क्षेत्र द्वारा कोई योगदान नहीं होता।

स्वतंत्रता के पश्चात् देशकी बैकिंग व्यवस्था पूर्णत: निजी क्षेत्र में केन्द्रित थी। प्रधानमंत्री स्व. इंदिरा गांधी ने बैंकों के राष्ट्रीयकरण का अहम फैसला लेते हुए 19 जुलाई 1969 में 14 बैंकों का एवं 15 अप्रैल 1980 को 7 बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया।

आजादी के 67 साल बाद भी केवल 40 प्रतिशत भारतीयों के बैंक में बचत खाते है। भारत में लगभग 650000 गांवों में से मार्च 2013 तक सिर्फ 268454 गाँवों तक ही बैकिंग व्यवस्था पहुंच पाई है।

योजना का परिचय – भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने 15 अगस्त 2014 को लाल किले की प्राचीर से देश को दिये सम्बोधन में प्रधानमंत्री जन-धन योजना की घोषणा की और 28 अगस्त 2014 को इस योजना का शुभारंभ किया।

इस योजना का मुख्य उद्देश्य देशभर के सभी परिवारों को बैंकिंग सुविधा उपलब्ध कराना एवं हर परिवार से कम से कम दो बचत खाते खुलवाना है।

इस अनुपम बचत खाते से खाताधारक को बैकिंग साक्षरता के ज्ञान दिया जायेगा साथ ही डेबिट कार्ड एवं किसान कार्ड जारी किया जायेगा। खाताधारक को एक लाख का दुर्घटना बीमा कवर एवं 6 महिने बाद रू. 5000/- का ओवर ड्राफ्ट सुविधा दी जायेगी यदि खाता धारक ओवर ड्राफ्ट की सुचित उपयोग एवं भुगतान कर देता है तो अगले छ: माह अर्थात 01 साल बाद यह सुविधा रूपये 10,000/- की हो जायेगी। अर्थात् समाज के अंतिम बिन्दु को आर्थिक समरसता में जोड़ना एवं उसको बचत के लिये प्रोत्साहित करना है।

योजना से लाभ – प्रधानमंत्री जन-धन योजना गरीबों के लिये वरदान साबित होगी। गरीबों को कर्ज के लिये साहूकारों के पास जाने की जरूरत नहीं होगी। बैंक खाते में 6 माह सफलतापूर्वक लेन-देन करने पर खातेदार को 5000/- रूपये का आवेर ड्राफ्ट की सुविधा मिलेगी। आकस्मिक आवश्यकता के समय एवं छोटे-मोटे व्यवसाय शुरू करने के लिये इस राशि का उपयोग कर सकते हैं।

महिलाओं की बचत की स्वाभाविक प्रवृत्ति इस योजना को नये आयाम देगी। अब छोटी-छोटी बचत छुपाने की जगह बैंक में जमा कर सकेगी। इन छोटी बचत से माइक्रो फायनेंस द्वारा बड़े सपने पूरा कर सकेगी।

इस योजना के क्रियान्वयन के लिये वर्तमान बैकिंग ढांचे का उपयोग करते हुये ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में कवर न हुऐ परिवारों के बैंक खाते खोले जायेंगे। । विस्तार कार्य के अंतर्गत 50000 अतिरिक्त व्यापार प्रतिनिधियों की व्यवस्था, 7000 से अधिक शाखाओं और 20000 से अधिक नए एटीएम भी स्थापित करने का प्रस्ताव है।

नये कार्यक्रम में सभी सरकारी लाभों को बैंकों के जरिए प्रत्यक्ष लाभ अंतरण के तहत लाने का प्रस्ताव है। ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा प्रायोजित महात्मा गांधी नरेगा कार्यक्रम को भी प्रत्यक्ष लाभ अंतरण योजना में शामिल किये जाने की संभावना है।

योजना की स्थिति – 28 अगस्त 2014 को योजना के उद्घाटन दिवस पर देशके समस्त बैंकों ने पूरे देशमें लगभग 77000 शिविर लगाये जो कि अपने आप में एक इतिहास है। इन शिविरों में 1.50 करोड़ बैंक खाते खोले गये। प्रधानमंत्री ने इस अवसर को भारत के लिये '**वित्तीय स्वतंत्रता दिवस**' बताया एवं यह विश्वास जताया कि इससे देशकी **आर्थिक छुआछूत** समाप्त होगी।

वित्त मंत्रालय के अनुसार जन-धन योजना में 8 सितम्बर, 2014 तक अर्थात मात्र 12 दिनों में अब तक 3.02 करोड़ खाते खोले जा चुके है, जिनमें 1.89 करोड़ खाते ग्रामीण क्षेत्र में एवं 1.13 करोड़ शहरी क्षेत्रों में खोले जा चुके है। इन खातों में अब तक 1496.51 करोड़ रूपया जमा हो चुका है एवं 33.6 लाख लोगों को डेबिट कार्ड जारी किये जा चुके है।

उपसंहार – भारत की अर्थव्यवस्था में प्रधानमंत्री जन-धन योजना एक मील का पत्थर साबित होगी और प्रत्येक भारतीय का अपना बैंक खाता अपना रूपये डेविट कार्ड होगा, उसी प्रकार जैसे आधार कार्ड है और इसी खाते द्वारा सरकार की समस्त योजनाओं का सीधा लाभ ले सकेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. विकिपीडिया
2. भारत में बैकिंग विधि एवं व्यवहार -डॉ. यू.एस. रस्तोगी एवं बी.के. अग्रवाल
3. रोजगार एंव निर्माण
4. दैनिक भास्कर
5. दैनिक जागरण

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

उद्यानिकी का ऐतिहासिक महत्व (म.प्र. के संदर्भ में)

डॉ. सतीश माहेश्वरी * तृप्ति माहेश्वरी * *

प्रस्तावना – प्रकृति ने हमें बहुआयामी सुविधायें उपलब्ध कराई है। प्राकृतिक सौन्दर्य की छटा तथा उसके विभिन्न गुणों से मनुष्य को बहुत अधिक लाभान्वित किया है। उद्यानिकी प्राकृतिक सौन्दर्य को देने के साथ-साथ मनुष्य की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। प्राचीन समय से ही हमारे ऋषि मुनि अपने प्रवचनों तथा आश्रमों के माध्यम से समाज को दिशा देते रहे हैं। ये आश्रम ही उद्यान के रूप में रहते थे। इन आश्रमों में अपने शिष्यों को प्राकृतिक सौन्दर्य की छटा के विश्लेषण के साथ विद्या अध्ययन कराया जाता था ताकि उन्हें विद्या किसी भी दृष्टि से बोझ न लगे। हमारे प्राचीन कवियों में काग भड्डरी, कबीर आदि ने प्राकृतिक स्थितियों के अनुरूप अपनी पद रचनाएं करके उद्यान तथा उद्यानिकी से परिचित कराया। धीरे-धीरे उद्यानिकी के क्षेत्र में वैज्ञानिक विकास के साथ-साथ परिवर्तन होता गया और जैसे-जैसे परिवर्तन होता गया वैसे-वैसे उद्यानिकी को महत्व मिलता गया। जहाँ फल, फूल, सब्जी, मसाले, मेवे और अन्य प्रकार की औषधियाँ, चाय रबर, कोको भी उद्यानिकी के अंग बन गये। वाल्मिकी रामायण में उद्यानिकी का एक अच्छा उदाहरण ऐतिहासिक महत्व का प्रमाण है। हालांकि उद्यानिकी के प्रारंभिक विकास के सन्दर्भ में कोई स्पष्ट तिथि या स्थान निर्धारित नहीं हैं, लेकिन इसमें भारत अग्रणी राष्ट्र रहा है, आयुर्वेद की जड़ी-बुटियाँ तथा चरक संहिता इसी राष्ट्र की देन है। इससे स्पष्ट होता है कि उद्यानिकी के क्रमागत विकास की स्थिति से आगे बढ़ते हुये आज की जो स्थिति निर्मित हुई हैं इसका जनक एवं प्रेरणा भारत ही हो सकता है।

मनुष्य अपने स्वास्थ्य के लिए सदियों से जड़ी-बूटियों का उपयोग करता आ रहा है। भारतीय आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति में करीब दो हजार औषधीय गुणों वाले पेड़-पौधों का उल्लेख है। चरक संहिता में 350 जड़ी-बूटियों का वर्णन किया गया है। इसी प्रकार ऋग्वेद में 67 और यजुर्वेद में 81 जड़ी-बूटियों की विशेषताओं का उल्लेख है। वानस्पतिक इतिहास में वर्णन मिलता है ग्रीक में पिरामिडो के निर्माण में लगे कारीगरों को स्वास्थ वर्धन के लिए लहसुन दिया जाता था। मध्यप्रदेश की भूमि में औषधीय पौधों की प्रचुर सम्पदा बिखरी पड़ी है। भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण ने देश में कुल 47,688 पौधों की गणना की है, जिसमें से 10,400 पौधे औषधीय महत्व के है। मध्यप्रदेश में 1,54,506 वर्ग कि.मी. में एक हजार से ज्यादा पौधे पाए गए है। यह क्षेत्र प्रदेश के कुल वन क्षेत्र का 34.88 प्रतिशत है।

जंगलो और उनके आसपास रहने वाले आदिवासी परिवार जड़ी-बूटियों का संग्रहण कर वर्षो से अपनी जीविका चला रहे है। जड़ी-बूटियों की पहचान और उपयोग में उन्हें निपुणता हासिल है। केन्द्रीय आयुर्वेद और सिद्ध अनुसंधान परिषद् ने प्रदेश में 750 प्रकार के औषधीय पौधों-झाड़ियों की पहचान की है। प्रदेश में मालवा, विंध्य बुन्देलखण्ड क्षेत्रों, चंबल में बीहड़ के कछार क्षेत्र, सतपुड़ा और कांगेर घाटियों सर्पगंधा, अश्वगंधा, सफेद मूसली, नागरमोठा, भृंगराज, शंखपुष्पी जैसी कई जड़ी-बूटियाँ बहुतायात में पाई जाती है। आदिवासी समाज सदियों से इनका उपयोग कर रहा है। इसके संरक्षण और संवर्धन के लिए राज्य शासन ने एक टास्क फोर्स का गठन किया है, जिसका उद्देश्य जैव विविधता वाले क्षेत्रों की पहचान करना, आदिवासी कृषकों को औषधीय पौधों की वैज्ञानिक खेती के लिए प्रशिक्षण देना, जड़ी-बूटियों के विपणन की व्यवस्था कर आदिवासी समाज को उचित आर्थिक लाभ दिलवाना है। वन अनुसंधान, जबलपुर ने जानकारी दी है कि प्रदेश में 49 प्रकार के औषधीय गुण वाले पौधें विलुप्ति की कगार पर है। जनसंख्या के दबाव और अन्य कारणों से प्रदेश की समृद्ध जैव विविधता पर मंडराते खतरे से निपटने के लिए प्रदेश सरकार ने समय रहते राज्य जैव विविधता बोर्ड गठित करने का निर्णय लिया है। आम लोगों को जैव विविधता संरक्षण से जोड़ने के लिए जनभागीदारी पर आधारित जैव विविधता प्रबंधन योजना तैयार की जाएगी। यह बोर्ड अपनी तीन स्थाई समितियों के माध्यम से कार्य करेगा। पंचायत स्तर पर भी जैव विविधता क्षेत्रों में जैव विविधता समितियों का गठन किया जाएगा ताकि जैव विविधता संपदा का निचले स्तर तक वैज्ञानिक आधार पर संवर्धन और संरक्षण हो सके। इसका आर्थिक लाभ आदिवासी समुदाय को मिल सके। जड़ी-बूटियों के संरक्षण और संवर्धन हेतु जैव विविधता बोर्ड का गठन महत्वपूर्ण साबित होगा। प्रदेश में औषधीय के पौधे, झाड़ियाँ, बीज, जडे, फल, फूल, लघु वनोपज सहकारी समितियों के माध्यम से संग्रहित किये जाते है। वर्तमान में कुल 1947 प्राथमिक लघु वनोपज सहकारी समितियाँ है, जिनमें 2.4 मिलियन से ज्यादा आदिवासी लोग सदस्य है। वर्ष 1995-96 में इन समितियों के माध्यम से 20 प्रकार के 3,58,759 क्विंटल औषधीय पौधों, झाड़ियों का संग्रहण किया गया था, जिससे 81.33 लाख रूपये का राजस्व मिला। इसी प्रकार वर्ष 96-97 में 35 प्रकार की 70,045 क्विंटल जड़ी-बूटियों, झाड़ियों के संग्रहण से 2.47 करोड़ का राजस्व मिला। राज्य सरकार ने वास्तविक संग्राहकों को लघु वनोपज पर स्वामित्व का अधिकार दिया है। अब उन्हें लघु वनोपज से प्राप्त कुल लाभ का 50 प्रतिशत लाभ मिल रहा है। हाल ही में राज्य शासन ने शासकीय वनों से हर्रा संग्रहण की दर 2200 प्रति क्विंटल से 3000 रूपए प्रति क्विंटल तक बढ़ा दी गई है। इन दरों के बढ़ाने से हर्रा और गोंद के संग्राहकों को प्रतिवर्ष निजी भूमि से हर्रा संग्रहण की दर 210 से 325 रूपए प्रति क्विंटल बढ़ा दी गई है। इसी प्रकार धावड़ा, बबूल और खेर, गोंद के संग्रहण की दर 2200 प्रति क्विंटल से बढ़ाकर 3000 रूपए प्रति क्विंटल कर दी गई है। इन दरों के

* प्राध्यापक (वाणिज्य) स्वामी विवेकानन्द वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
* * शोधार्थी, स्वामी विवेकानन्द वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

बढ़ाने से हर्रा और गोंद के संग्राहको को प्रतिवर्ष 4.50 करोड़ रूपए की मजदूरी मिलेगी। इससे पहले बिचौलिए उनसे कम दामों से जड़ी-बूटियों की खरीदी कर आयुर्वेदिक दवा कम्पनियों को महँगे दामों में बेच दिया करते थे। वर्तमान में आयुर्वेदिक दवा कम्पनियों को प्रदेश से 31 प्रकार के औषधीय पौधों का प्रदाय किया जा रहा है।

भारतीय आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति की देश-विदेश में बढ़ती लोकप्रियता के कारण अब घरेलू और अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में जड़ी-बूटियों की मांग लगातार बढ़ रही हैं। वर्ष 1991 में 100 करोड़ रूपए की आयुर्वेदिक औषधियों का निर्माण हुआ था, जो इस सदी के अन्त तक 400 करोड़ का आँकड़ा पार कर लेगा। भारत सरकार ने जड़ी-बुटियों के संरक्षण और संवर्धन के लिए 2.41 करोड़ रू. की एक परियोजना प्रदेश हेतु मंजूर की है इसके अलावा केन्द्रीय कल्याण मंत्रालय ने भी औषधीय महत्व के भण्डारण और प्राथमिक उपचार के लिए 50 लाख रूपए स्वीकृत किए है। प्रदेश में पाई जाने वाली जड़ी-बूटियों और झाड़ियों की एक सूची 180 आयुर्वेदिक कम्पनियों को उपलब्ध कराई गई है।

औषधीय पौधों के संरक्षण के लिए राज्य शासन ने खरगोन, बिलासपुर, सागर, कांकेर और मंडला जिले के 1600 हेक्टेयर बिगड़े वन क्षेत्रों में औषधीय पौधों के रोपण की महत्वाकांक्षी योजना बनाई है। प्रत्येक वर्ष 400 हेक्टेयर में इन पौधों का रोपण किया जाएगा। प्रदेश में मुख्यत: आँवला, नीम बीज, आम गुठली, इमली, जामुन, बेल, महुआ, वन तुलसी, सफेद मूसली, अश्वगंधा, शतावर, धवई फूल, बायबरग, सर्वगंधा, नागर मोथा, चिरायता, मरोडफली, रतनज्योति, अर्जुन, माहुल पत्ता, चिरौटा बीज, करंज, कुसुम, पलास, कटबेर, भिलावा, निखुर और बैंचागी बहुतायात में उपलब्ध है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. श्याम सुन्दर - उद्यान नर्सरी, 1992
2. रिसर्च स्कालर

****

उद्यानिकी उत्पादन की समस्याऐं (म.प्र. के संदर्भ में)

डॉ. सतीश माहेश्वरी * तृप्ति माहेश्वरी * *

प्रस्तावना – किसी भी विषय को प्रतिपादित करने के बाद उस विषय पर गंभीरतापूर्वक अध्ययन करना होता है, जिसके गारे में अनेक जानकारियों को प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से संकलित करना होता है। उस संकलित जानकारी को मूर्त रूप देते समय अनेक कठिनाईयों व समस्याओं से जूझना पड़ता है न केवल अध्ययन से संबंधित समस्याएँ आती है, बल्कि विषय के जानकार विशेषज्ञों से तथा कार्य को प्रत्यक्ष रूप से अंजाम देने वाले परिश्रमी व्यक्तियों से सम्पर्क करना होता है, तो अनेक समस्याएँ उत्पन्न होती है। मुझे अपने सर्वेक्षण के दौरान व उद्यानिकी विभाग, कृषि विभाग, सांख्यिकी विभाग व कृषकों से सम्पर्क करते समय जो समस्याएँ ज्ञात हुई, उन्हें निम्न वर्गों में बाँटा गया है–

1. कृषकों की समस्याएँ
2. उद्यानिकी विभाग की समस्याएँ
3. विपणन संबंधी समस्याएँ

किसी भी कार्य को सम्पादित करने के लिए उससे संबंधित प्रशिक्षण आवश्यक है। यह प्रशिक्षण कृषकों को स्थानीय स्तर पर न तो उद्यान विभाग द्वारा दिया जाता है और न ही कोई ऐसी प्रशिक्षण संस्था यहाँ पर है।

हालांकि कृषकों ने स्वयं अपने प्रयासों से देश के विभिन्न भागों में जाकर स्वयं प्रशिक्षण लेकर उद्यानिकी के विकास में महती भूमिका अदा की है, लेकिन उसे क्षेत्र विस्तारित करने में विशेष सफलता नहीं मिली है। चूंकि उद्यानिकी विकास जल पर निर्भर है और जल प्रचुर मात्रा में आवश्क होता है, जो प्रति हेक्टेयर कम से कम दो लाख लीटर आवश्यक है। जिसके अभाव में जिले में उद्यानिकी की बहुत अधिक सम्भावना होने के बावजूद सफलता में रूकावट हैं। मुझे सर्वेक्षण के दौरान यह भी ज्ञात हुआ कि यदि रतलाम जिले में सिंचाई साधनों में वृद्धि नहीं हुई तो कृषकों को मजबूर होकर राजस्थान के बाँसवाड़ा जिले में माही नदी के तट पर उद्यानिकी के बगीचे लगाने पड़ेंगे। जिले में उद्यानिकी से संबंधित प्रामाणिक बीज व खाद उपलब्ध नहीं हो पाते, इसलिए यहाँ के कृषकों को बार–बार उन क्षेत्रों में जाना पड़ता है, जहाँ पर उपलब्ध होते है। इससे भारी मात्रा में खर्च करना पड़ता है, जो कृषक इन क्षेत्रों में नहीं जा पाते, उनका उत्पादन कम व बढ़िया किस्म का नहीं होता है। वर्तमान वैज्ञानिक युग में किसी भी फसल को लेने के लिए यह आवश्यक है कि मिट्टी की जाँच करवाकर उसमें पाये जाने वाले तत्वों के अनुरूप फसल ली जाय तथा उस मिट्टी में जिस तत्व की कमी है, उस तत्व को खाद डालकर पूरा किया जा सकता है, लेकिन रतलाम जिले में मिट्टी परीक्षण की चलित प्रयोगशाला का अभाव है। जिले में कृषकों को परम्परागत फसल हेतु ऋण तो बैंकों द्वारा दे दिया जाता है, लेकिन उद्यानिकी के विकास के लिए बैंकों द्वारा ऋण देते समय आनाकानी की जाती है, क्योंकि उन्हें यह डर रहता है कि यदि यह उद्यानिकी कार्यक्रम सफल नहीं हुआ तो ऋण वसूली में कठिनाई हो सकती है।

उद्यानिकी विभाग से जानकारी लेते समय यह प्रतीत हुआ है कि विभाग में कार्यरत लोग काफी लगनशील है व वे समस्त जानकारियों को उपलब्ध कराने का प्रयास भी करते है, लेकिन फिर भी उद्यानिकी विशेषज्ञों का अभाव पाया गया। कृषकों ने भी हमेशा इस बात की और ध्यान आकर्षित किया कि उन्हें उद्यानिकी विभाग से विशेषज्ञों सम्बंधी विशेषज्ञ सहयोग नहीं मिलता। उद्यानिकी विभाग को कृषि विभाग के अन्तर्गत ही संचालित किया जाता है, जबकि वर्तमान में उद्यानिकी का क्षेत्र इतना अधिक विस्तृत हो गया है कि एक ही विभाग में दोनों का संचालन उचित रूप से नहीं हो सकता। उद्यानिकी की विभाग के पास जिले में भ्रमण के लिए कोई वाहन सुविधा नहीं है और यातायात के स्थान जिले में इतने अच्छे नहीं है कि बिना वाहन के वे अन्य साधनों से पूरे जिले में अपना सम्पर्क स्थापित कर सके।

स्थानीय स्तर पर उत्पादित वस्तु की मांग इतनी अधिक नहीं है व पास में कोई अच्छा बाजार भी नहीं है जहाँ पर उद्यानिकी उत्पादनों का उचित विक्रय किया जा सके। अत: उन्हें प्रदेश के बड़े शहरों या पास के राज्यों में भेजना पड़ता है। कृषकों द्वारा उत्पादित फल, फूल, सब्जी जो कि अल्पजीवी है को द्रुतगति से एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने के लिए तत्संबंधी वाहनों का अभाव है।

जिले में स्ट्राबेरी की फसल ऐसी है, जो न केवल राष्ट्र के चार बड़े महानगरों के ऊँची दरों पर बेची जाती है बल्कि खाड़ी के देशों में निर्यात भी की जाती है, परन्तु जिले में कोई निर्यात एजेन्सी नहीं होने से उचित मूल्य नहीं मिल पाता। राज्य शासन ने उद्यानिकी को बढ़ावा देने के लिए विभाग व विभागीय अमला तो उपलब्ध कराया है, लेकिन विपणन हेतु उचित बाजार उपलब्ध नहीं कराया गया है व प्रदेश में नर्सरी एक्ट भी लागू नहीं किया गया है, केवल जिले को 'फल श्री' घोषित करने से शासन का कर्तव्य पूरा नहीं हो जाता।

इस प्रकार विभिन्न क्षेत्रों की समस्याओं को मैने अध्ययन के दौरान गंभीरतापूर्वक महसूस किया तथा इन समस्याओं को दूर करने के लिए उन्हीं लोगों से सम्पर्क कर यह जानने का प्रयास किया कि इन समस्याओं का निदान कैसे किया जा सकता है। अतैव समस्याओं से मुक्ति पाने के लिए मेरे निम्न सुझााव है, जिन्हें यदि मानकर उनकी विश्वसनीयता को ध्यान में रखकर निर्णय लिया जाय, तो मेरा ऐसा मत है कि जिले को एक आर्थिक समृद्धि की और ले जाने में महती भूमिका होगी, क्योंकि जिस जिले का मुख्यालय प्रदेश का सर्वाधिक साक्षर नगर हो, जिले की साक्षरता का प्रथम पुरस्कार मिला हो, जिले को पंचायती प्रदेश में अग्रगण्य माना जाता है, वहाँ इस उपलब्धि से निश्चित रूप से एक और महत्वपूर्ण कार्य सम्पादित होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. श्याम सुन्दर – उद्यान नर्सरी, 1992
2. संभागीय उद्यानिकी विभाग

* प्राध्यापक (वाणिज्य) स्वामी विवेकानन्द वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
* * शोधार्थी, स्वामी विवेकानन्द वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

छत्तीसगढ़ में साक्षरता एवं आर्थिक विकास

डॉ. आर. पी. सहारिया *

शोध सारांश – किसी भी देश के आर्थिक विकास के निर्धारक घटकों में प्रमुख घटक साक्षरता है। राज्य के विकास हेतु प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है, परन्तु अभी भी राज्य में विकास हेतु आवश्यक कुशल एवं प्रशिक्षित जनशक्ति का अभाव है। साक्षरता एक ऐसा आर्थिक एवं सामाजिक घटक है जो व्यक्ति की उत्पादकता में वृद्धि के साथ–साथ एक सुदृढ़ परिवार एवं समाज के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

प्रस्तावना – किसी भी देश के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक प्रगति के मापदण्ड का आधार पर क्षेत्र की जनसंख्या की साक्षरता से निर्धारित होता है। प्रजातांत्रिक शासन में शिक्षित नागरिक ही मताधिकार का उपयोग एक निश्चित दिशा में करता है। साक्षरता जन्मदर, मृत्युदर, विवाह का समय महिला आयु आदि को प्रभावित करता है। अत: किसी क्षेत्र के सम्पूर्ण सामाजिक, आर्थिक क्रियाकलापों के अध्ययन हेतु साक्षरता का ज्ञान आवश्यक है। दशक में राज्य की साक्षरता में परिवर्तन महत्वपूर्ण स्थान रखता है। क्योंकि इसके द्वारा ही प्रदेश में विकास एवं आयोजन हेतु रूपरेख,ाा निर्धारित की जाती है। भारतीय जनगणना की समृद्ध परम्परा है और इसे विश्व की सर्वश्रेष्ठ जनगणना होने का गौरव प्राप्त है। सर्वप्रथम भारत में पहली जनगणना लार्डमेयो के शासन काल में 1872 में करायी गयी थी। यह देश के भिन्न–भिन्न भागों में अलग–अलग समय में हुई थी। नियमित जनगणना लार्ड रिपन के शासन काल से वर्ष 1881 से ही मानी जाती है। तभी से अबोध रूप से प्रत्येक 10 वर्ष में जनगणना की जाती रही है। इस प्रकार भारत की जनगणना 2011 वर्ष 1872 के पश्चात् इस अबाध श्रृंखला में 15वीं और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 7वीं जनगणना है। जनगणना में लोगों की भागीदारी से अनेकता में एकता की झलक मिलती है। भारत एक कल्याणकारी राज्य है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से आम आदमी के हित के लिये पंचवर्षीय योजनाएं, वार्षिक योजनाएं और विभिन्न कल्याणकारी योजनाएं शुरू की गई है। इन सभी के लिये बुनियादी स्तर के समंकों की उपलब्धता अपेक्षित हैं। जनगणना द्वारा यह आँकड़े उपलब्ध कराये जाते है । छत्तीसगढ़ राज्य 1 नवम्बर, 2000 को अस्तित्व में आया। 1 नवम्बर, 1956 से लेकर अस्तित्व में आने तक यह मध्यप्रदेश का हिस्सा था। 1 नवम्बर, 1956 से पहले यह महाकौशल क्षेत्र में शामिल रहकर सी.पी.एण्ड बरार का हिस्सा था वर्ष 1941 में छत्तीसगढ़ क्षेत्र की जनगणना बिहार के साथ तथा 1951 में सी.पी. एण्ड बरार में हुई थी। भारतीय जनगणना अधिनियम 1948 एवं जनगणना नियमावली 1990 के तहत् देश में दशकीय जनगणना सम्पन्न की जाती हैं विगत जनगणनाओं की भांति, जनगणना 2011 का कार्य दो चरणों में सम्पादित हुआ। राज्य में प्रथम चरण का कार्य 1 मई से 15 जून 2010 में सम्पन्न हुआ। जनगणना का दूसरा चरण 09 से 28 फरवरी के मध्य किया गया । किसी देश की साक्षरता का विकास के स्तर में सीधा संबंध होता है।

अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तुत शोध भारतवर्ष के हृदय स्थल में स्थित छत्तीसगढ़ से संबंधित है। छत्तीसगढ़ राज्य का क्षेत्रफल 1,35,195 वर्ग किलोमीटर हेक्टेयर है। छत्तीसगढ़ में 18 जिले है। छत्तीसगढ़ राज्य के उत्तर में उत्तरप्रदेश, उत्तरपूर्व में झारखण्ड, पूर्व में उड़ीसा, दक्षिण में आन्ध्रप्रदेश, दक्षिण पश्चिम में महाराष्ट्र, पश्चिम में मध्यप्रदेश स्थित है।

उद्देश्य –

1. साक्षरता में विभिन्न दशकों में हुए परिवर्तन का अध्ययन एवं विश्लेषण करना है।
2. जनसंख्या के इन विश्लेषणों के आधार पर नागरिकों के विकास हेतु नियोजन इस अध्ययन का मूल उद्देश्य है।

शोध प्रविधि – 0–7 वर्ष और उसे अधिक आयु का व्यक्ति जो किसी भाषा को समझ सकता हो उसे लिख औरपढ़ सकता हो साक्षर कहलाता है। प्रस्तुत शोध द्वितीयक समंकों पर आधारित है। समंको के संकलन हेतु जनगणना 2001, जनगणना 2011 तथा जिला सांख्यिकी पुस्तिका का उपयोग किया गया हैं। संकलित समंको का प्रतिशत, मानचित्र एवं आरेखों द्वारा उनका प्रस्तुतीकरण किया गया है। साक्षरता का अध्ययन जिले अनुसार किया गया है।

Table - 1 Literacy in Chhattisgarh

State/District	Person	Male	Female
India	74.04	82.14	65.46
Chhattisgarh	71.04	81.45	60.59
Koria	71.41	81.52	60.01
Sarguja	61.16	71.23	50.88
Jashpur	68.6	78.24	59.05
Raigarh	73.3	84.17	63.25
Korba	73.22	83.88	62.26
Janjgir-Champa	73.7	85.59	61.72
Bilaspur	71.59	82.77	60.12
Kabirdham	61.95	74.99	48.94
Rajnandgaon	76.97	87.19	66.98
Durg	79.69	88.8	70.51
Raipur	76.43	86.5	66.21
Mahasamund	71.54	83.01	60.37
Dhamtari	78.95	88.84	69.24
Kanker	70.97	80.98	61.08
Bastar	54.94	65.97	44.49
Narayanpur	49.59	58.97	40.22
Dantewada	42.67	52.69	32.88
Bijapur	41.58	51.42	31.56

Source- Census 2011

* विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र विभाग) शासकीय जे. एम. पी. महाविद्यालय, तखतपुर, जिला बिलासपुर (छ.ग.) भारत

जनगणना 2011 के अनन्तिम समंको के अनुसार 1 मार्च, 2011 को देश की कुल जनसंख्या 1,21,01,93,422 है। इसमें छत्तीसगढ़ राज्य की कुल जनसंख्या 2,55,40,196 है। जिसमें पुरूषों की संख्या 1,28,27,915 और महिलाओं की संख्या 1,27,12,281 है। यह देश की कुल जनसंख्या का 2.11 प्रतिशत है। जनसंख्या के आधार पर छत्तीसगढ़ राज्य 16वां राज्य है।

साक्षरता में वृद्धि – साक्षरता में वृद्धि किसी क्षेत्र के आर्थिक विकास, जनजीवन की सामाजिक एवं सांस्कृतिक एवं जागरूकता, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि तथा राजनैतिक चिंतन की उत्कृष्टता को दर्शाती है। संसाधनों की उपलब्धता, क्षेत्र के संसाधन विकास से ही साक्षरता मे वृद्धि अथवा ह्रास प्रभावित होता है। अत: किसी क्षेत्र की साक्षरता वृद्धि के विश्लेषण के द्वारा सम्पूर्ण जनसंख्या संरचना का प्रतिबिम्ब देखा जा सकता है।

2011 की जनगणना में 0–6 की आयु के बच्चों को निरक्षर माना गया है। 2001 में भारत की 64.83% जनसंख्या साक्षर थी। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में 74.04% साक्षरता है। पुरूषों में 82.14% तथा महिलाओं में 65.46% साक्षरता है।

दोनों अवधि में साक्षरता में दशकीय अंतराल 9.21% है। छत्तीसगढ़ में साक्षरता का प्रतिशत 71.04% है। पुरूषों में 81.45% तथा महिलाओं में 60.59% जनसंख्या साक्षर है। 2011 में छत्तीसगढ़ का स्थान भारतीय राज्यों में 27 वाँ हो गया है। जो 2001 में 23वाँ था। 2001 में छत्तीसगढ़ की 64.66%जनसंख्या साक्षर थी। साक्षरता दर में दशकीय अंतराल 6.38% है। सर्वाधिक साक्षर जिला दुर्ग है जहाँ साक्षरता 79.69%है,द्वितीय स्थान धमतरी जिले का है जहाँ साक्षरता 78.95% है। तृतीय स्थान राजनांदगांव (76.97%), तथा रायपुर (76.43%) है। इन चार जिलों के अतिरिक्त कोरिया (71.41%), रायगढ़ (73.70%), कोरबा (73.22%), जांजगीर-चांपा (73.70%),बिलासपुर (71.59%), महासमुंद (71.54%) है।इनजिलों में साक्षरता का स्तर छत्तीसगढ़ की साक्षरता के औसत स्तर से अधिक हैं सरगुजा (61.16%) जशपुर (68.60%), कबीरधाम (कवर्धा) (61.95%), कांकेर (70.97%), बस्तर (54.94%), नारायणपुर (49.59%), दंतेवाड़ा (42.67%), बीजापुर (51.58%) में साक्षरता का स्तर राज्य के औसत स्तर से नीचे है।बीजापुर (41.58%) साक्षरता में सबसे अधिक पिछड़ा हुआ है।

साक्षरता में जहाँ दुर्ग जिले का (79.69%) प्रथम स्थान है। वहीं पुरूष साक्षरता में धमतरी जिला (88.84%) प्रथम स्थान पर है। पुरूष साक्षरता में राज्य का प्रतिशत (81.45%), है। दुर्ग (88.8%), राजनांदगांव (87.19%), रायपुर (86.50%), जांजगीर-चांपा (85.59%), रायगढ़ (84.47%), कोरबा (83.88%), महासमुंद (83.01%), बिलासपुर (82.77%), कोरिया (81.52%), पुरूष साक्षरता हैं इन जिलों में साक्षरता राज्य के औसत (81.45%) से अधिक है। सबसे कम पुरूष साक्षरता बीजापुर में (51.42%) है। कुल साक्षरता में जो जिले राज्य के औसत स्तर से नीचे है, वहाँ पुरूष साक्षरता भी राज्य के औसत स्तर से नीचे है। ये जिले कांकेर (80.98%), जशपुर (78.24%), कबीरधाम (74.99%), सरगुजा (71.23%), बस्तर (65.70%), नारायणपुर (58.97%), दंतेवाड़ा (52.69%), बीजापुर (51.42%), है।

साक्षरता दर की प्रवृत्ति – साक्षरता में वृद्धि उन जिलों में अधिक है जहां औद्योगीकरण एवं नगरीकरण अधिक हुआ है। आदिवासी वनांचल क्षेत्र साक्षरता में पिछड़े हुये हैं इस दशक में औद्योगीकरण एवं नगरीकरण तेजी से हुआ है। जिससे जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों से नगरों में प्रवासित हुई। यातायात के साधनों, संचार साधनों के विकसित होने के कारण नगरों में जनसंख्या वृद्धि पायी गयी। शिक्षा के अवसर बढ़े है,महिलाओं का कार्यक्षेत्र व्यापक हो गया है। जिससे साक्षरता में वृद्धि हुई है।

जनगणना 2011 में महिला साक्षरता दर छत्तीसगढ़ में 60.59% है। महिला साक्षरता में दुर्ग जिला (70.51%) प्रथम स्थान पर है। धमतरी (69.24%), राजनांदगांव (66.98%), रायपुर (66.21%), रायगढ़ (63.25%), कोरबा (62.26%), जांजगीर-चांपा (61.72%), कांकेर (61.08%), कोरिया (61.01%) महिला साक्षरता है। इन जिलों में महिला साक्षरता राज्य के औसत स्तर से अधिक है। कोरिया, महासमुंद, बिलासपुर जिलों में जहाँ कुल साक्षरता एवं पुरूष साक्षरता राज्य के औसत से अधिक हैं, लेकिन महिला साक्षरता में ये जिले राज्य के औसत स्तर से नीचे है। कोरिया (61.01%), महासमुंद (60.37%), बिलासपुर (60.12%), जशपुर (59.05%), सरगुजा (50.88%), नारायणपुर (40.22%), दंतेवाड़ा (32.88%), बीजापुर (31.56%), में महिला साक्षरता है।

Table - 2 Literacy Rate & Literacy Gap

Year	Person	Male	Female	Gender Wise Literacy Gap
1951	9.41	16.25	2.66	13.59
1961	15.35	25.57	5.22	20.35
1971	20.29	31.31	9.25	22.06
1981	26.62	38.82	14.38	24.44
1991	42.91	58.07	27.52	30.55
2001	64-66	77.38	51.85	25.53
2011	71-04	81.45	60.59	20.86

लिंगानुसार साक्षरता अंतराल – प्रदेश में महिला पुरूष साक्षरता अनुपात में भिन्नता पायी गयी है। महिला साक्षरता का प्रतिशत पुरूषों से बहुत कम है। महिलाओं में अल्प शिक्षा हेतु ऐतिहासिक, परम्परागत और सामाजिक, आर्थिक कारण उत्तरदायी है। लिंगानुसार साक्षरता अंतराल ग्रामीण क्षेत्र में अधिक हैं। निर्धनता एवं अज्ञानता के कारण महिला शिक्षा को प्रोत्साहन नहीं मिलता।

2001 में जहाँ पुरूष साक्षरता 75.2% तथा महिला साक्षरता 53.67% है। साक्षरता में लिंगानुसार अंतराल 21.59% था। पुरूष साक्षरता 2011 में 82.14% तथा महिलाओं में 65.46% थी। साक्षरता में लिंगानुसार अंतराल 16.68% है। छत्तीसगढ़ में 2001 में पुरूष साक्षरता 77.38% तथा महिला साक्षरता 51.85% है तथा लिंगानुसार साक्षरता अंतराल 25.53% था। 2011 में पुरूषों में साक्षरता 81.45% तथा महिला 60.59% है। लिंगानुसार साक्षरता, अंतराल 20.86% है। भारत में पुरूषों में दशकीय अंतराल 6.88% तथा महिलाओं में 11.79%है। छत्तीसगढ़ में पुरूषों में 4.07% तथा महिलाओं में 8.74% दशकीय अंतराल है।

1951 में लिंगानुसार साक्षरता अंतराल (13.59%)था। 1961 में (20.35%) हो गया जो 1971 में पुन: बढ़कर (20.06%) एवं 1981 में (24.44%), 1991 में (30.55%) साक्षरता अंतराल हो गया। 2001 में कमी की प्रवृत्ति (25.53%) दृष्टि गोचर हुई जो 2011 में (20.86%) तक पहुंच गयी। जिले अनुसार यदि हम लिंगानुसार साक्षरता अंतराल पर दृष्टि डालें तो जहाँ 2001 में सबसे अधिक जांजगीर-चांपा (31.68%) था, जो 2011 में (23.87%) हो गया। जगणना 2011 में कबीरधाम (कवर्धा) में सर्वाधिक (26.05%) साक्षरता अंतराल हो गया। 2001 में कबीरधाम (कवर्धा) का स्थान जांजगीर-चांपा के बाद स्थान द्वितीय स्थान था, जो जनगणना 2011 में प्रथम एवं जांजगीर-चांपा का स्थान द्वितीय हो गया।

जनगणना 2011 में कम साक्षरता अंतराल दुर्ग (18.29%) है।जनगणना 2001 में दुर्ग में साक्षरता अंतराल(21.79%) था एवं जिलों में क्रम 11 वाँ था। 2001 में सबसे कम साक्षरता अतंराल राजनांदगांव (19.62%) था, वहाँ 2011 में (21.21%) हो गया एवं साक्षरता अंतराल में क्रम 11 वाँ हो गया। 1951 में छत्तीसगढ़ में कुल साक्षरता 9.41% थी जो 1961 में 15.35% हो गयी। दशकीय वृद्धि 5.3% थी। 1971 में साक्षरता (20.29%) दशकीय वृद्धि 4.94% थी। 1981 में छत्तीसगढ़ की साक्षरता 6.33%से बढ़कर 26.62% हो गयी। 1991 में साक्षरता बढ़कर 42.91% हो गया। यह वृद्धि 16.29% थी। 2001 में साक्षरता का प्रतिशत बढ़कर 64.66% तथा 2011 में 71.04% हो गया। दशकीय वृद्धि क्रमश: 6.38% तथा 21.75% थी। सर्वाधिक वृद्धि दर 1991 से 2001 तक सर्वाधिक तथा 1961 से 1971 की अवधि में सबसे कम वृद्धि 4.94% थी।

2001-2011 में भारत में साक्षरता दर (17.64%) है, जो 1991-2001 की साक्षरता दर (21.54%) से कम है। छत्तीसगढ़ में 2001-2011 में साक्षरता दर (22.59%) है जो 1991-2001 की साक्षरता दर (18.27%) से अधिक है।छत्तीसगढ़ में सर्वाधिक कबीरधाम में (40.66%) साक्षरता वृद्धि दर है जो 1991-2001 में (13.84%) थी। द्वितीय स्थान रायपुर (34.65%), तृतीय बिलासपुर (33.21%), महासमुंद (20.00%) 2001-11 में सबसे कम साक्षरता दर बीजापुर में (8.76%) है, जो 1991-2001 में (19.30%) थी। द्वितीय दंतेवाड़ा (11.9%) है जो 1991-2001 में (14.09%) वृद्धि दर थी। 1991-2001 में नारायणपुर में सर्वाधिक (23.42%) साक्षरता वृद्धि दर तथा महासमुन्द में सबसे कम साक्षरता वृद्धि दर (8.79%) थी।

ग्रामीण एवं नगरीय साक्षरता – भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ लगभग 70% जनसंख्या गाँवों में निवास करती हैं। भारतीय आर्थिक नियोजन की नीतियों से संबंधित विकास के गाँधीवादी मॉडल का मुख्य उद्देश्य ग्रामों में आत्मनिर्भरता प्राप्त करना था, जो साक्षरता के बिना असंभव है।

Table 3 Rural Literacy in Chhattisgarh

Districts	2001% Rural Literacy (in total Rural Population)			Urban Literacy (%)
Raipur	P63.48	M 79.02	F48.11	P80.3
Mahasamund	65.6	85.6	51.57	78.6
Dhamtari	74.18	86.06	62.43	79.6
Durg	71.33	83.68	59.27	80.3
Rajnandgaon	66.01	86.29	66.17	82.9
Kabirdham	53.42	69.56	37.54	75.5
Bastar	39.58	52.41	26.98	80.8
Kanker	72.28	82.18	62.50	85.3
Dantevvada	26.17	35.5	17.06	78.4
Bilaspur	57.64	74.49	40.55	81.9
Janjgir-Champa	64.33	80.73	48.13	78.9
Korba	51.46	67.76	35.01	79.7
Sarguja	52.39	65.63	38.83	84.9
Koria	56.77	70.68	42.42	79.6
Raigarh	68.55	81.53	55.69	80.6
Jaspur	62.8	74.36	51.33	81.7
Total	60.48	74.09	46.99	81.1

स्रोत – छत्तीसगढ़ राज्य के जिला स्तरीय सामाजिक विकास संकेतक 2005 पृ.क्रं. 61तालिका से स्पष्ट है कि राज्य में सर्वाधिक ग्रामीण साक्षर जनसंख्या राजनांदगांव (66.01%) जिले में निवास करती है। दंतेवाड़ा जिले में न्यूनतम (26.17%) दर्ज की गई है। 2011 में जहाँ ग्रामीण साक्षरता (60.4%) है तथा नगरीय साक्षर जनसंख्या (81.08%) है। छत्तीसगढ़ में कुल साक्षरता दर एवं उसे निर्धारित करने वाले कारकों के मध्य संबंधों का अध्ययन करने पर यह ज्ञात हुआ कि राज्य का जनसंख्या घनत्व, नगरीय जनसंख्या दर, प्रति व्यक्ति आय, औद्योगीकरण नगरीकरण का साक्षरता दर पर धनात्मक प्रभाव पड़ा हैं। नगरीय साक्षरता प्रत्येक जिले में ग्रामीण साक्षरता से अधिक है। नगरीकरण एवं साक्षरता में उच्चकोटि का धनात्मक सहसंबंध है।

अनुसूचित जाति एवं जनजातियों में साक्षरता – जनगणना 2001 में अनुसूचित जातियों में 64 प्रतिशत साक्षरता थी, अनुसूचित जातियों में पुरूष साक्षरता 78.7 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता 49.2 प्रतिशत थी, अनुसूचित जनजातियों में पुरूष वर्ग में साक्षरता का प्रतिशत 78 प्रतिशत हैजो छत्तीसगढ़ के पुरूष वर्ग की साक्षरता 77.9 प्रतिशत से अधिक है। जनगणना 2001 में अनुसूचित जनजातियों में साक्षरता 52.1 प्रतिशत थी, पुरूष वर्ग में साक्षरता 65 प्रतिशत तथा महिलाओं में 39.3 प्रतिशत साक्षरता थी। छत्तीसगढ़में अधिकांश जनजाति बस्तर, दंतेवाड़ा, नारायणपुर, बीजापुर, कांकेर, सरगुजा, कोरिया आदि जिलों में निवास करते है। जो वनांचल एवं दुर्गम यातायात वाले क्षेत्र है जहाँ नक्सल समस्या भी विद्यमान हैं। ये जनजाति रूढ़ियों तथा परम्पराओं से बंधी होती हैं विशेष कर महिलाओं की शिक्षा के प्रति।

धार्मिक समुदायों में साक्षरता – भारत एक धर्म प्रधान देश है यहाँ अनेक धर्म के अनुयायी रहते है। 2001 में जैन धर्म में सर्वाधिक साक्षरता 96.8 प्रतिशत थी। सिक्ख धर्म में 89.0 प्रतिशत, बौद्ध धर्म में 84.9 प्रतिशत, तथा ईसाई धर्म में 75.34% साक्षरता थी। मुस्लिम धर्म में 82.5 प्रतिशत, हिन्दू धर्म में 63.9प्रतिशत, साक्षरता दर्ज की गई। अन्य धर्मो में 53.6 प्रतिशत साक्षरता थी। पुरूष वर्ग में भी सर्वाधिक साक्षरता जैन धर्म में 98.7 प्रतिशत, बौद्ध धर्म में 93.0 प्रतिशत, सिक्ख धर्म 92.7 प्रतिशत, ईसाई धर्म 82.6 प्रतिशत साक्षरता पायी गयी। महिलाओं में सबसे कम साक्षरता, अन्य धर्म 69.0 प्रतिशत दर्ज की गई।

Table 4 Religionwise Literacy (2001)

Religion (%)	Male (%)	Female (%)	Total (%)
Hindu	76.9	50.8	63.9
Muslim	90.5	74.0	82.5
Christian	82.6	78.2	75.3
Sikh	92.6	84.7	89.0
Buddhishm	93.0	76.9	84.9
Jain	98.7	94.8	96.8
Other	69.0	38.4	53.6
Total	77.9	52.3	65.2

साक्षरता स्तर – तालिका से स्पष्ट है सर्वाधिक साक्षरता प्राथमिक स्कूल से निम्न (34 प्रतिशत) तथा प्राथमिक स्कूल में (22.3 प्रतिशत) है। स्नातक तथा उससे अधिक में (5.2 प्रतिशत) है। साक्षरता का स्तर ज्यों-ज्यों बढ़ते जा रहा है, महिलाओं का प्रतिशत कम होते जा रहा है।

Table - 5 Education Level (2001)

Religion (%}	Total (%)	Male(%)	Female (%)
Literate without Education Level	6.2	4.69	8.4
Below Primary	34	32.3	36.5
Primary	22.3	25.4	27.6
Middle	14.0	14.6	12.9

High School	8.8	10.2	6.7
Higher Secondary	5.3	6.3	3.8
Non tec Diploma	0.03	0.04	0.01
Tec Diploma	0.33	0.5	0.2
(Graduate& Above	5.2	6.1	3.8
Unclassified	0.01	0.01	0.01

छत्तीसगढ़ राज्य में जनगणना 2001 के अनुसार 0-6 आयु समूह की जनसंख्या का प्रतिशत 17.06% था। जिसमें पुरूषों का प्रतिशत 17.19% तथा महिलाओं का 16.94% था। जनगणना 2011 में 0-6 आयु समूह में कुल जनसंख्या कम होकर 14.23% हो गयी और महिलाओं में 13.84% हो गयी। 2001 में नारायणपुर जिले में सर्वाधिक 20.23% जनसंख्या0-6 के समूह में थी। पुरूषों में 20.33% तथा महिलाओं में 20.13% जनसंख्या 0-6 आयु समूह में थी। जनगणना 2011 में 0-6 आयु समूह में सर्वाधिक कबीरधाम में 17.12 प्रतिशत है। पुरूषों में 17.33 प्रतिशत एवं महिलाओं में 16.9 प्रतिशत है। जनगणना 2001 में 0-6 आयु समूह में सबसे कम जनसंख्या का प्रतिशत दुर्ग जिले में 15.59% था पुरूष वर्ग में 15.72% तथा महिलाओं में 15.46% था। जनगणना 2011 में 0-6 आयु समूह में सबसे कम जनसंख्या का प्रतिशत धमतरी में 12.58% है। पुरूषों में 12.86% और महिलाओं में 12.32% है।

Table - 6 Population in 0-6 Group

State / District	Person	Male	Female
India	13.12	13.3	12.93
Chhattisgarh	14.03	14.23	13.84
Koria	14.15	14.17	14.13
Sarguja	15.75	15.91	15.58
Jashpur	14.09	14.31	13.87
Raigarh	12.81	13.14	12.48
Korba	13.96	14.01	13.91
Janjgir-Champa	13.52	13.8	13.24
Bilaspur	15.05	15.17	14.93
Kabirdham	17.12	17.33	16.9
Rajnandgaon	13.42	13.71	13.14
Durg	12.6	12.79	12.4
Raipur	14.02	14.15	13.89
Mahasamund	12.73	13.11	12.35
Dhamtari	12.58	12.86	12.32
Kanker	13.02	13.23	12.82
Bastar	15.08	15.33	14.83
Narayanpur	16.29	16.47	16.1
Dantewada	14.35	14.47	14.23 .
Bijapur	15.66	15.69	15.63

Source - Census 2011

छत्तीसगढ़ एवं पड़ोसी राज्यों में साक्षरता – जनगणना 2011 के अनन्तिम आँकड़ों के अनुसार छत्तीसगढ़ में साक्षरता 71.04%तथा महाराष्ट्र में सबसे अधिक 82.91% जनसंख्या साक्षर है। उड़ीसा में 73.45% जनसंख्या साक्षर है। शेष सभी राज्यों उत्तरप्रदेश (69.72%), बिहार (63.82%), झारखण्ड (67.63%), मध्यप्रदेश (70.63%), आन्ध्रपदेश (67.66%) साक्षरता है। इन सभी राज्यों में साक्षरता का स्तर छत्तीसगढ से निम्न हैं। छत्तीसगढ़ में पुरूष साक्षरता (81.45%) हैं।छत्तीसगढ़ के पड़ोसी राज्यों में महाराष्ट्र (89.82%), उड़ीसा (82.04%), साक्षरता हैं, जो छत्तीसगढ़ की पुरूष साक्षरता से अधिक है। शेष सभी राज्यों में उत्तरप्रदेश (79.24%), बिहार (73.39%), झारखण्ड (78.45%), मध्यप्रदेश (80.53%), आन्ध्रप्रदेश (75.56%), महिला साक्षरता में भी महाराष्ट्र (75.48%) उड़ीसा (64.36%) है जो छत्तीसगढ़ की महिला साक्षरता (60.59%) से अधिक हैं। छत्तीसगढ़ के शेष सभी पड़ोसी राज्यों में साक्षरता का स्तर छत्तीसगढ़ से निम्न है।

Table - 7 Literecy in Chhattisgarh &Neighbour State

State	Person	Male	Female
India	74.04	82.14	65.46
Uttarpradesh	69.72	79.24	59.26
Bihar	63.82	73.39	53.33
Jharkhand	67.63	78.45	56.21
Orissa	73.45	82.4	64.36
Chhattisgarh	71.04	81.45	60.59
Madhya Pradesh	70.63	80.53	60.02
Maharastra	82.91	89.82	75.48
Andhra Pradesh	67.66	75.56	59.74

Source -Census 2011

निष्कर्ष – प्रदेश में साक्षरता में वृद्धि हुई है। साक्षरता का प्रतिशत उन जिलों में अधिक है जहाँ औद्योगीकरण एवं नगरीकरण में तीव्र वृद्धि हुई है। ये जिले दुर्ग राजनांदगांव, रायपुर तथा धमतरी है। मध्यम जनसंख्या साक्षरता का प्रतिशत उन जिलों में है, जहाँ औद्योगीकरण की ओर रूझान बढ़ा है। जिससे शिक्षा के प्रति रूचि उत्पन्न हुई तथा महिला शिक्षा को प्रोत्साहन मिला है। कोरबा, बिलासपुर, जांजगीर चांपा, रायगढ़, सरगुजा, कोरिया, जशपुर, कबीरधाम (कवर्धा), कांकेर, महासमुंद आदि जिले है। निम्न साक्षरता का क्षेत्र आदिवासी जनजातियों के निवास स्थल हैं जो आज भी सभ्यता से परे वनांचल क्षेत्र है। जहाँ विद्यालयों की कमी है। नक्सलवाद की समस्या है, जिससे साक्षरता प्रभावित हुई है। ये जिले बस्तर, नारायणपुर, बीजापुर तथा दंतेवाडा हैं, राज्य में साक्षरता दर में वृद्धि के साथ-साथ औद्योगीकरण एवं नगरीकरण पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है, साथ ही कुशल जनशक्ति के निर्माण हेतु शिक्षण एवं प्रशिक्षण कार्यशालाओं एवं संस्थाओं का तीव्रगति से विकास हो रहा है। जिससे नागरिकों में जागरूकता की भावना का संचार होने के साथ – साथ वे शासन द्वारा चलायी जा रही विभिन्न योजनाओं से लाभ प्राप्त करने में सक्षम हो रहे है। वर्ष 2010 में छत्तीसगढ सबसे तीव्रगति से विकास करने वाला राज्य घोषित किया गया है, जिसका सीधा संबंध प्रदेश में साक्षरता में तीव्र वृद्धि से है, साक्षरता एवं औद्योगीकरण का धनात्मक संबंध है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Agrawal P.C. "The Growth of Urban Population in Chhattisgarh. The Indian Geographical Journal Vol. VII. 1970-71
2. Agrawal, S.N. "Some Problems of India Population",Vora Press. 1866
3. Ayyar, N.P. "Population Geographical" ,The Indian Geographical. Vol. -XIII, January- December 1968, PP,4
4. Gosat, G.S. "Literacy in India a interpertive study" Rural Socilogy, Vol-29, 1964, PP, 261-277

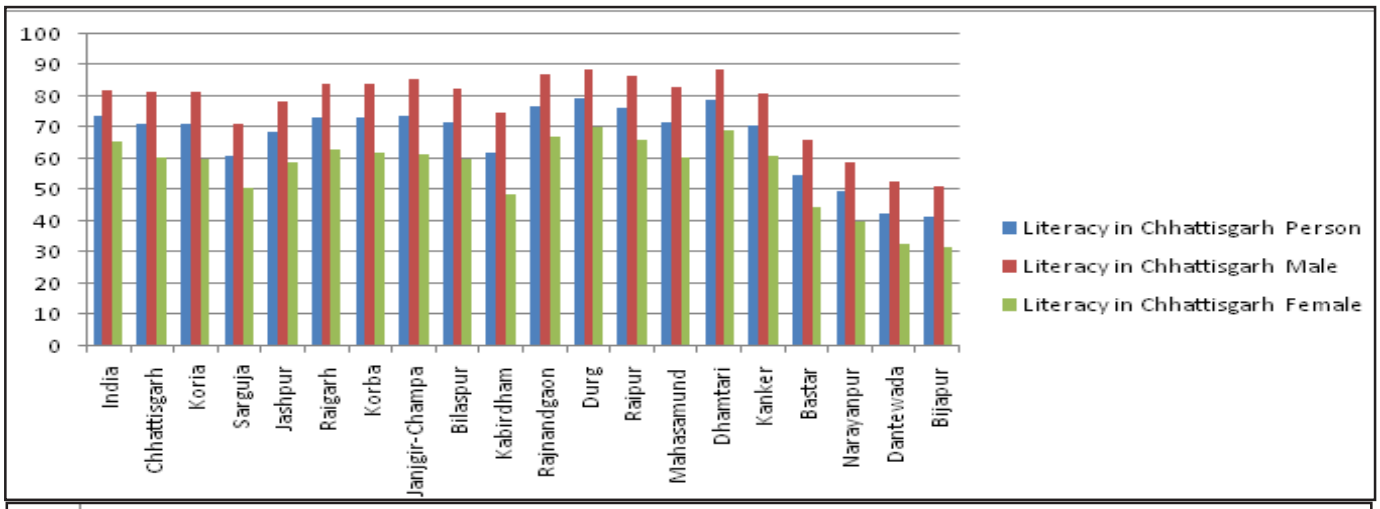
100
90
80
70
60
50
40
30
20
10
0
India
Chhattisgarh
Koria
Sarguja
Jashpur
Raigarh
Korba
Janjgir-Champa
Bilaspur
Kabirdham
Rajnandgaon
Durg
Raipur
Mahasamund
Dhamtari
Kanker
Bastar
Narayanpur
Dantewada
Bijapur
Literacy in Chhattisgarh Person
Literacy in Chhattisgarh Male
Literacy in Chhattisgarh Female

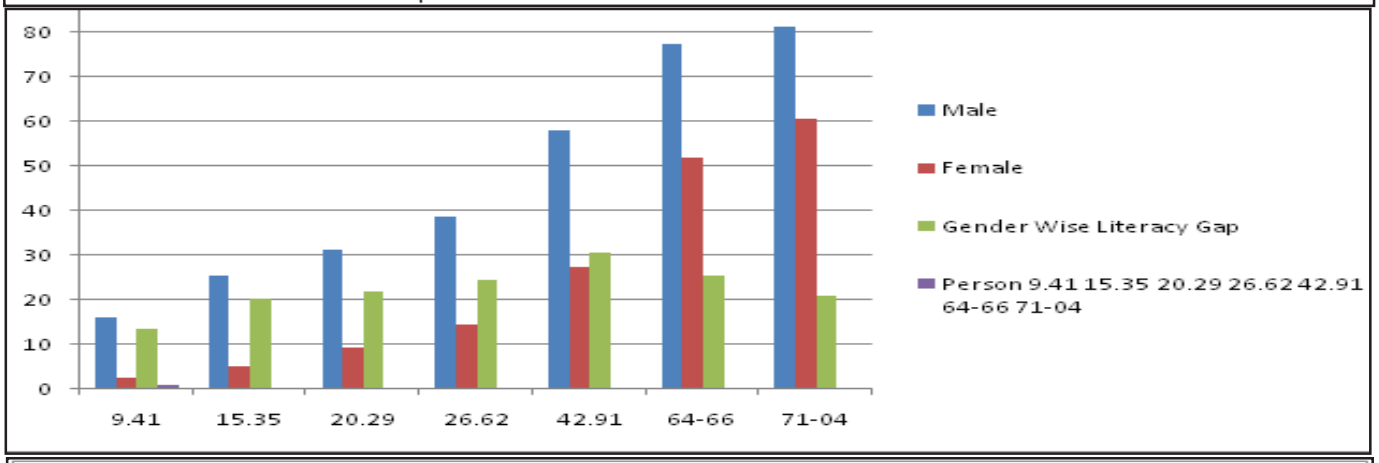
80
70
60
50
40
30
20
10
0
9.41
15.35
20.29
26.62
42.91
64-66
71-04
Male
Female
Gender Wise Literacy Gap
Person 9.41 15.35 20.29 26.62 42.91
64-66 71-04

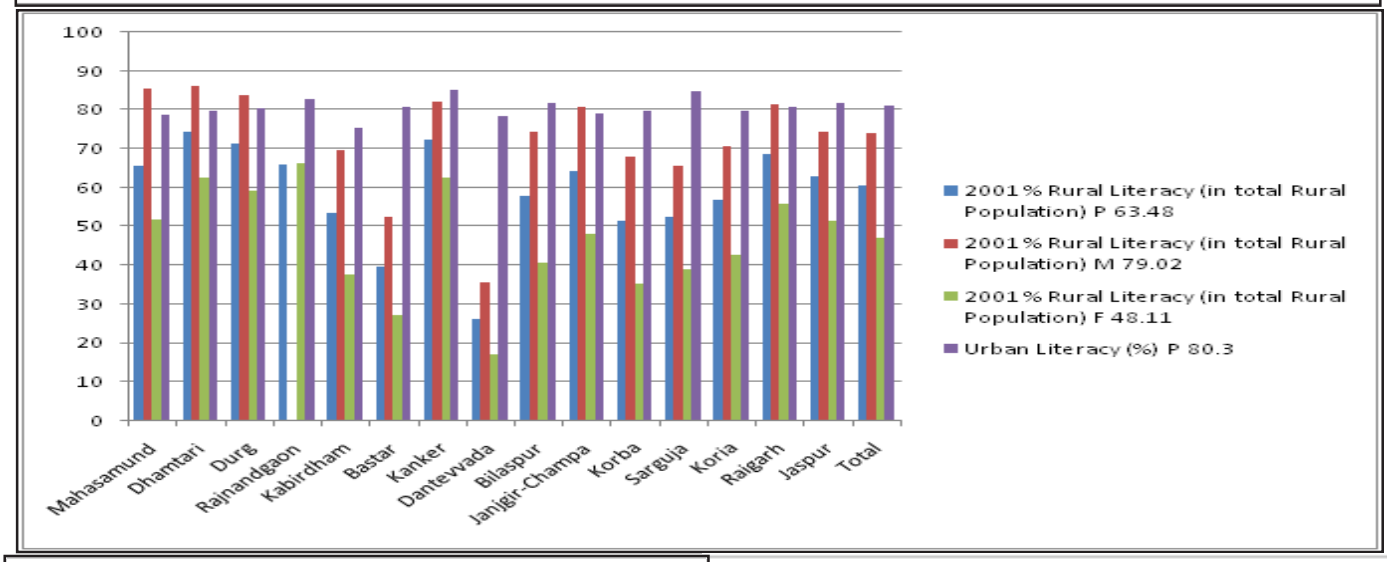
100
90
80
70
60
50
40
30
20
10
0
Mahasamund
Dhamtari
Durg
Rajnandgaon
Kabirdham
Bastar
Kanker
Dantewada
Bilaspur
Janjgir-Champa
Korba
Sarguja
Koria
Raigarh
Jaspur
Total
2001% Rural Literacy (in total Rural Population) P 63.48
2001% Rural Literacy (in total Rural Population) M 79.02
2001% Rural Literacy (in total Rural Population) F 48.11
Urban Literacy (%) P 80.3

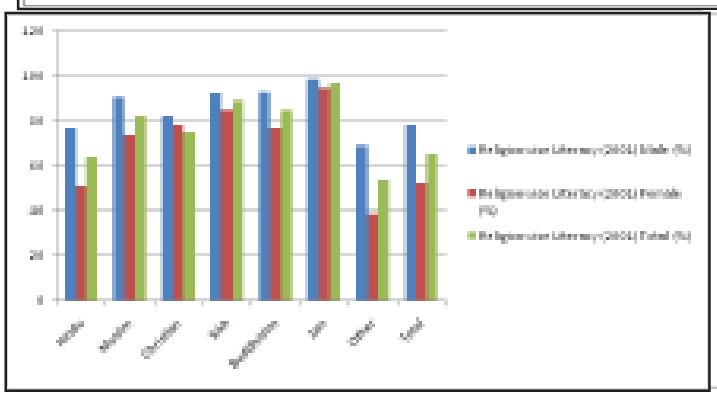

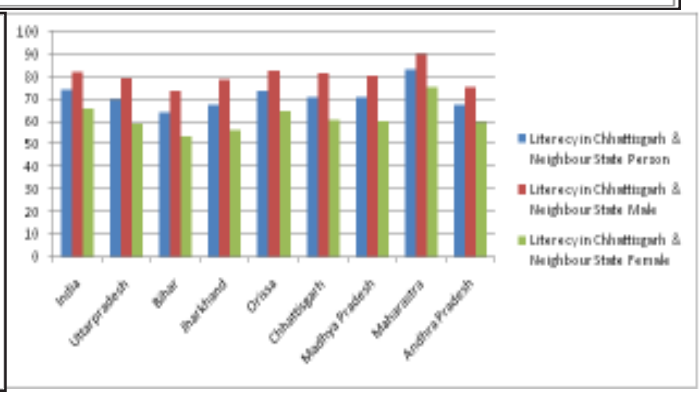
100
90
80
70
60
50
40
30
20
10
0
India
Uttarpradesh
Bihar
Jharkhand
Orissa
Chhattisgarh
Madhya Pradesh
Maharastra
Andhra Pradesh
Literacy in Chhattisgarh & Neighbour State Person
Literacy in Chhattisgarh & Neighbour State Male
Literacy in Chhattisgarh & Neighbour State Female

छत्तीसगढ़ राज्य में वन स्थिति एवं अराष्ट्रीयकृत औषधीय वनोपज के उत्पादन एवं विपणन का अध्ययन

राकेश कुमार गुप्ता *

शोध सारांश – हमारी सभ्यता और संस्कृति का वन वृक्षों से अत्यंत घनिष्ट सम्बंध है। वन हमारी सभ्यता और संस्कृति के जन्मदाता और हमारी आध्यात्मिक और भौतिक समृद्धि के उन्नायक है; कहा जाता है कि वृक्ष ही जल है, जल ही अन्न है और अन्न ही जीवन है। देश की आर्थिक समृद्धि के लिए भी वनों के संरक्षण की तीव्र आवश्यकता है। अतिवृष्टि, अकाल, बाढ़, रेगिस्तान आदि विषम समस्याओं पर काबू पाने के लिए वनों के संरक्षण के हर संभव प्रयास करने होंगें। पर्यटन की दृष्टि से भी वनों का विकास एवं संरक्षण होना चाहिए क्योंकि इससे विदेशी मुद्राएं प्राप्त होती है। लघु वनोपज का उपयोग अनेक उद्योगों में कच्चे माल के रूप में किया जाता है इनसे अनेक लघु तथा कुटीर उद्योग चलाये जाते हैं वनों से पशुओं के लिए चारा भी मिलता है जिससे वन्य पशु-पक्षियों का पालन-पोषण होता है। यहां कुछ ऐसी वनस्पतियॉ तथा जड़ी-बूटियां वृक्षारोपण के साथ-साथ वृक्षों की रक्षा तथा उनकी उचित देखभाल के लिए चेतना उत्पन्न करने पर ही देश की खुशहाली एवं सुंदरता निर्भर है।

प्रस्तावना – छत्तीसगढ़ राज्य के वन क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की अकाष्ठीय वनोपज बहुतायत में उपलब्ध हैं। राष्ट्रीयकृत वनोपज के सम्बन्ध में लघु वनोपज संघ के पास विस्तृत जानकारी उपलब्ध है, परन्तु अराष्ट्रीयकृत वनोपज पर कोई रायल्टी न होने के कारण संग्रहण अपनी इच्छानुसार किसी को भी विक्रय का संग्रहण कर स्थानीय ग्रामीणों द्वारा वर्ष के विभिन्न समय में इन वनोपजों का संग्रहण कर स्थानीय हाट बाजारों में छोटे व्यापारियों को विक्रय किया जाता हैं। ये छोटे व्यापारी राज्य की मुख्य लघु वनोपज बाजारों के व्यापारियों को माँग के अनुरूप वनोपज उपलब्ध कराकर अपना कमीशन या मूल्य प्राप्त करते है। बड़े व्यापारियों द्वारा उपरोक्तानुसार संग्रहित वनोपज को आवश्यकतानुसार ग्रेडिग करते हुए देश की विभिन्न मंडियों में या लघु वनोपज पर आधारित उद्योगों को विक्रय किया जाता है। प्रत्येक वर्ष राज्य में संग्रहित किए जाने वाले लघु वनोपज की अधिकांश मात्रा इस प्रकार अन्य राज्यों की मंडियों या उद्योगों हेतु भेजी जाती है क्योंकि राज्य के अंतर्गत लघु वनोपज आधारित उद्योगों का विकास अपर्याप्त है। अकाष्ठीय वनोपज संग्राहकों को उचित मूल्य दिलाने हेतु छत्तीसगढ़ शासन द्वारा छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज संघ की स्थापना की गई है। छत्तीसगढ़ लघु वनोपज संघ द्वारा राष्ट्रीयकृत लघु वनोपज जैसे- तेन्दूपत्ता, साल बीज, हर्रा, गोंद वर्ग 1 एवं 2 को प्राथमिक वनोपज समितियों के माध्यम से संग्रहण कर निविदा/नीलाम के द्वारा विक्रय किया जाता है। इसके अतिरिक्त लघु वनोपज अराष्ट्रीयकृत होने के कारण, ग्रामीण बिना रायल्टी के संग्रहण कर स्थानीय बाजार में विक्रय करने हेतु स्वंतत्र है।

अध्ययन का उद्देश्य –

- छत्तीसगढ़ राज्य में अराष्ट्रीयकृत औषधीय वनोपज के उत्पादन एवं विपणन का अध्ययन करना।
- छत्तीसगढ़ राज्य की आर्थिक स्थिति में अराष्ट्रीयकृत औषधीय वनोपज के उत्पादन एवं विपणन संभावनाओं का अध्न करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ –

- छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत औषधीय वनोपज के विकास एवं विपणन की पद्धति असंतोषजनक है।
- छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत औषधीय वनोपज के विकास एवं विपणन की महत्वपूर्ण संभावनाएँ हैं।

अध्ययन की सीमाएँ –

- छत्तीसगढ़ राज्य की मुख्य अराष्ट्रीयकृत औषधीय लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन पर आधारित हैं।

अराष्ट्रीयकृत औषधीय लघु वनोपज उत्पादन एवं विपणन –

मुख्य वनौषधियों की मात्रा एवं मूल्य – राज्य के वन क्षेत्रों से संग्रहित की जाने वाली मुख्य वनौषधियाँ, उपयोग किये जाने वाले भाग, उनकी मात्रा एवं अनुमानित मूल्य दिए गए हैं। दर्शायी गई वनौषधियों की उपलब्ध वार्षिक मात्रा अनुज्ञा पत्र के आधार पर है परन्तु वास्तविक उत्पादन दर्शायी गई मात्रा से कहीं अधिक है। इससे यह स्पष्ट होता है कि राज्य में विक्रय की जाने वाली वनौषधियों में कुछ की मात्रा अधिक एवं शेष की मात्रा कम है। प्रत्येक प्रजाति के उपयोगी भाग को उनके औषधीय गुणों के आधार पर विभिन्न प्रकार की दवाओं एवं अन्य उपयोग में लिया जाता हैं। उपयोग के आधार पर राज्य की व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण वनौषधियों का विवरण निम्नलिखित है –

तालिका 2 – (अगले पृष्ठ पर देखें)

राज्य के वनौषधि बाजार – छत्तीसगढ़ राज्य में उत्पादित वनौषधियों के लिए राज्य में ज्यादा बड़े बाजार उपलब्ध नहीं है। राज्य के मुख्यत: धमतरी एवं रायपुर मुख्य वनौषधि बाजार के रूप में विकसित हुए है। इन बाजारों के व्यापारियों द्वारा परम्परागत रूप से वनौषधि का क्रय-विक्रय कार्य किया जाता है। इसके अलावा छत्तीसगढ़ राज्य में अन्य बाजार भी उपलब्ध हैं। विक्रय की जाने वाले मात्रा कम होने पर या बाजारों में संपर्क करना कठिन होने पर क्षेत्र के स्थानीय बाजारों में भी विक्रय होता है। राज्य में वनौषधि विक्रय हेतु कोई भी मंडी नही है। सामान्यत: संग्रहणकर्ता द्वारा वनौषधियों को संबंधित बाजार के स्थानीय व्यापारी (कोचिया) से संपर्क कर वनौषधि की मात्रा एवं गुणवत्ता के आधार पर व्यापारी द्वारा निर्धारित दर/प्रचलित स्थानीय दर पर विक्रय किया जाता है। वनौषधि विक्रय दर विश्लेषण करने पर यह पाया गया कि वनौषधि की वार्षिक दर में बहुत उतार-चढ़ाव रहते है।

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डॉ. सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

कभी-कभी इनकी दरे सामान्य से दुगुनी तथा आधी टन हो जाती है। दरों में ये उतार चढ़ाव वनौषधियों की मांग तथा उपलब्धता के आधार पर होते हैं।

इसके अतिरिक्त वनौषधियों के उत्पादन में स्थानीय सीजन तथा अन्य कारणों से भी बहुत उतार-चढ़ाव होता है। किसी वर्ष में वनोपज का सामान्य दुगना या तिगुना उत्पादन रहता है और किसी वर्ष उत्पादन बहुत कम होता है, इस कारण भी वनोपज की मांग एवं दर प्रभावित होते है। वनौषधियों की दर मुख्यत: उसकी गुणवत्ता पर आधारित होती है। सही रूप से प्रसंस्करण कर ग्रेडिग की गई, उत्तम गुणवत्ता वाली वनौषधियों के मूल्य अधिक रहते हैं। अत: उत्पादक या संग्राहक वनौषधि के संग्रहण, प्रसंस्करण एवं भंडारण में पर्याप्त ध्यान देते हुए, बाजार की मांग के अनुरूप उनकी उपलब्धता सुनिश्चित कराते हुए उचित मूल्य प्राप्त कर सकते हैं।

सारांश, निष्कर्ष एवं सुझाव - प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध में अध्ययन से स्पष्ट होता है कि छत्तीसगढ़ राज्य में वन क्षेत्रों से संग्रहित की जाने वाली मुख्य वनौषधियों का लगभग एक लाख पछत्तर हजार क्विंटल से अधिक का उत्पादन वार्षिक रूप में होता है (स्त्रोत अनुज्ञा पत्र के आधार पर) परन्तु वास्तविक उत्पादन दर्शायी गयी मात्रा से कही अधिक है। अध्ययन से स्पष्ट है कि छत्तीसगढ़ राज्य में विक्रय की जाने वाली वनौषधियों में कुछ की मात्रा अधिक एवं शेष की मात्रा कम हो सकती है। प्रत्येक प्रजाति के उपयोगी भाग को उनके औषधीय गुणों के आधार पर विभिन्न प्रकार की दवाओं एवं अन्य उपयोग के लिया जाता है। छत्तीसगढ़ राज्य की महत्वपूर्ण वनौषधियों के विक्रय से वार्षिक अनुमानित मूल्य अनुज्ञा पत्र के अनुसार लगभग दो हजार दो सौ पचास लाख रूपये से अधिक का विकास होता है।

प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध का अध्ययन का सार यह है कि छत्तीसगढ़ राज्य वनोपज से विपुल राज्य है। छत्तीसगढ़ राज्य सरकार की आय का एक महत्वपूर्ण हिस्सा लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन से प्राप्त होता है। सारत: यह बात स्पष्ट है कि प्रकृति द्वारा प्रदत्त इस अनमोल उपहार को सम्पोषणीय विकास दीर्घकाल तक वन की सुरम्य को अक्षुष्ण बनाए रखेगा साथ ही देश की विरासत की हरितिमा बनाये रखकर सर्वदा धन-वन की वर्षा करेगा।

शोधार्थी ने अपने लघु शोध प्रबंध में दो परिकल्पनाओं को आधार बना कर अध्ययन किया है -

1. प्रथम परिकल्पना इस बात पर अवलंबित थी कि ' छत्तीसगढ़ राज्य की लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन की पद्धति असंतोषजनक है।' शोधार्थी ने अध्ययन के दौरान पाया कि वास्तव में छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज के उत्पादन में धनी राज्य है किन्तु वनोपज उत्पादन की संपूर्ण मात्रा का विदोहन करने में छत्तीसगढ़ राज्य को और बेहतर उपाय करने होंगे। छत्तीसगढ़ राज्य, लघु वनोपज के संग्राहक वनवासी के लिए सतही स्तर पर वनोपज संग्रहण के द्वार खोल दे जिससे बिचौलियों द्वारा इनका अनुचित संग्रहण एवं शोषण न हो सके। बिचौलियों की समाप्ति हेतु छत्तीसगढ़ राज्य की महत्वपूर्ण एवं कठोर कदम उठाने होंगे एवं छत्तीसगढ़ राज्य जब वनोपज से प्राप्त समस्त आय प्राप्त करेगी तब उसका आर्थिक स्तर लगातार सुधरता जाएगा। इस प्रकार प्रथम परिकल्पना सत्य सिद्ध हुई है कि छत्तीसगढ़ राज्य में लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन की पद्धति संतोषजनक है।
2. शोधार्थी की द्वितीय परिकल्पना ' छत्तीसगढ़ राज्य की लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन की महत्वपूर्ण संभावनाएँ हैं।' अध्ययन से यह स्पष्ट है कि छत्तीसगढ़ एक वन विपुलता वाला राज्य है। छत्तीसगढ़ में लघु वनोपज का उत्पादन बड़े पैमाने पर होता है साथ ही वह क्षेत्र जो मिश्रित एवं अवर्गीकृत वन है यदि वहां औषधीय एवं गैर औषधीय वनों का उत्पादन करके उचित देखभाल की व्यवस्था की जाए। वन विभाग का विस्तार करके वनवासी को रोजगार देते हुए उत्पादन की संभावनाओं में संवृद्धि लायी जा सकती है। लघु वनोपज के उत्पादन के लिए यह अनुकूल क्षेत्र है जहां विविध प्रकार की जड़ी बूटियां न केवल छत्तीसगढ़ राज्य के रहवासी को चिरयौवन स्वस्थ्य एवं दीर्घायु बना सकता है यह देश-दुनिया के नश्वरता में कुछ सीमा तक प्रतिबंध लगाने में सहायक होगा।

शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत अध्ययन छत्तीसगढ़ राज्य सरकार एवं विद्वान नीति निर्माताओं के लिए यदि आंशिक पूर्ति भी कर पाती है तो यह छत्तीसगढ़ राज्य के लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन की दशा में सुधार की एक पहल होगी साथ ही लघु वनोपज के विपणन हेतु उपयुक्त बाजार का चयन कर इसकी सही दिशा को निर्देशित करने में सफल होगी, यदि ऐसा होता है तो शोधार्थी के अध्ययन की यही सार्थकता होगी और तभी शोधार्थी द्वारा किये गये अध्ययन की उपादेयता सिद्ध होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. खन्ना लक्ष्मण सिंह, वन विज्ञान
2. खन्ना लक्ष्मण सिंह, वन उद्योग
3. डी.एन., वन आदिवासी एवं पर्यावरण
4. सिन्हा वी.सी.,श्रम अर्थव्यवस्था
5. डॉ. जथार एवं बैरी, श्रम अर्थशास्त्र
6. सक्सेना, आर.सी.एवं मिश्र पी.एल., भारतीय अर्थशास्त्र
7. गुप्ता के.एल., भारतीय अर्थव्यव्यथा
8. कुमार प्रमिला, म.प्र. के प्रमुख आदिवासी
9. शुक्ला हीरालाल, छत्तीसगढ़ ज्ञानकोष
10. शर्मा डॉ ब्रम्हदेव - आदिवासी विकास एवं सैद्धांतिक विवेचन, म.प्र. हिन्दी अकादमी,1972 भोपाल

छत्तीसगढ़ राज्य की महत्वपूर्ण वनौषधियाँ

क्र.	प्रजाति	उपयोगी भाग	वानस्पतिक नाम	मात्रा(क्विं. में)	दर(प्रति क्विं.)	राशि(लाख में)
1	आंवला	फल	Emblica cfficinalis	31,000.00	3,000.00	930.00
2	शहद	शहद	Honey	3,750.00	5,000.00	187.50
3	बायबिडिंग	फल	Embelia pjericottam	11,300.00	3,000.00	339.00
4	बेल गुदा		Aegle marmelos	15,600.00	700.00	109.20
5	कालीजीरी	बीज	Vernonia anthelmintica	6,800.00	2,400.00	163.20
6	धवई	फूल	Woodfordia fruticosa	26,250.00	400.00	105.00
7	सतावर	जड़	Asparagus racemosus	2,600.00	3,000.00	78.00
8	कालमेघ	पंचांग	Andrographis paniculata	13,950.00	500.00	69.75
9	नागरमोथा	जड़	Cyperus esculetus	14,800.00	550.00	81.40
10	बेहड़ा	फल	Terminalia bellerica	29,700.00	250.00	74.25
11	मालकांगनी	बीज	Celastrus paniculatus	3,200.00	2,300.00	73.60
12	भेलवा	बीज	Semecarpus anacardium	12,250.00	250.00	30.63
13	मरोड़फली	फल	Helicteres isora	3,900.00	400.00	15.60
		योग		**175100.00**		**2,257.13**

छत्तीसगढ़ राज्य की महत्वपूर्ण वनौषधियाँ
मात्रा (क्विं. में)

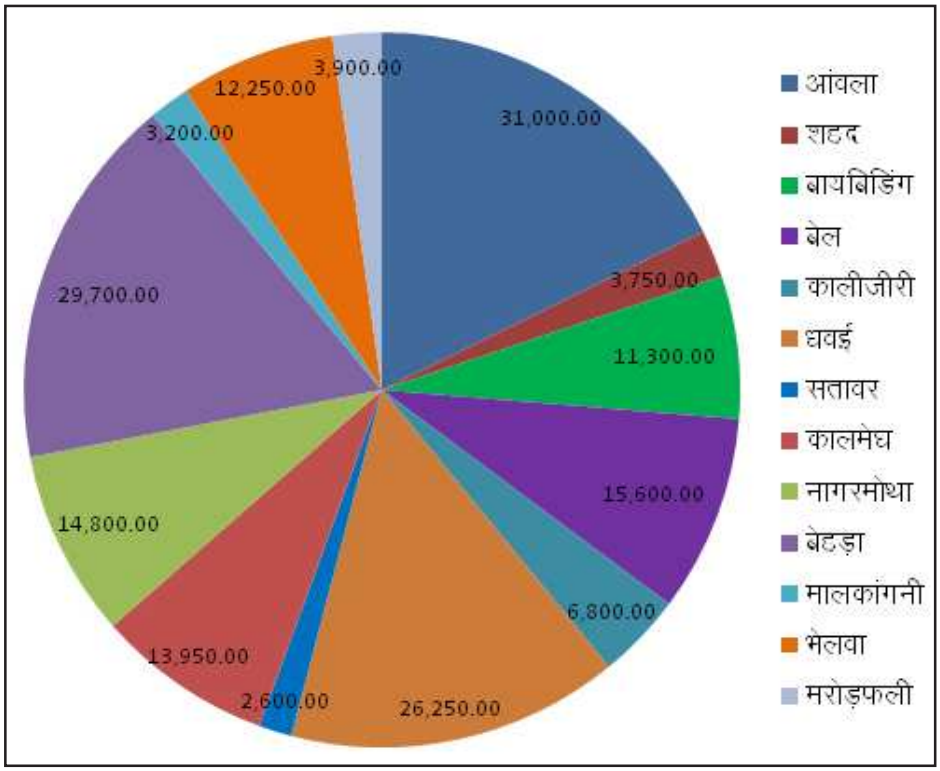

****

बैतूल जिले में जैविक खेती की संभावनाएँ

सुरेखा यादव *

प्रस्तावना – अनादि काल से कृषि हमारी अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी है। भारत कृषि प्रधान देश कहलाता है। भारतीय कृषि प्रणाली के स्वरूप में 1960 के दशक में नवपरिवर्तन हुआ जिसे हरित क्रान्ति का नाम दिया गया था। सन् 1960 के दशक के पूर्व भारतीय कृषि प्रणाली में कृषक अपने खेतों में गौ, पशुओं का गोबर व गौमूत्र से बनी खाद, हरी खाद (मूंग, बर्सिम लोबिया) आदि का उपयोग करते थे। जब देश में हरित क्रांति का आगमहुआ जिसके अंतर्गत कृषकों ने अपने खेतों में रासायनिक उर्वरक, उन्नत किस्म के बीजों, ट्रेक्टर आदि का उपयोग कर उत्पादन को बढ़ाया। वर्तमान में भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि में एक नई अवधारणा ने जन्म लिया है जिसे जैविक खेती का नाम दिया जा रहा है। यह किसानों द्धारा 1960 के दशक से पूर्व की जाने वाली परम्परागत खेती के समान है। परंतु वर्तमान में इस खेती को वैज्ञानिक तरीके से किया जा रहा है। जैविक खेती के प्रमुख घटक नाडेप खाद, केचुआ खाद, वर्मीवाश, मटका खाद, बायोगैस संयत्र, हरी खाद, राइजोबियम कल्चर आदि है। जिनका प्रयोग कर कृषक फसल उत्पादन का कार्य करते हैं। रासायनिक उर्वरकों के उपयोग को हतोत्साहित करते हुये जैविक खेती को प्रोत्साहन देना समय की मांग है। जैविक खेती रासायनिक उर्वरकों के उपयोग के बिना स्थानीय रूप में उपलब्ध संसाधनों (गोबर, गोमूत्र, सड़.ने योग्य कचरा, जीवाणु, खाद आदि) का उपयोग कर की जाती है। अत: जैविक खेती हेतु पशुधन आवश्यक है।

भारत में वर्ष 2003-04 में जैविक खेती को लेकर गंभीरता दिखाई गई और 42000 हेक्टेयर क्षेत्र में जैविक खेती की शुरूआत हुई। भारत में वर्ष 2008-09 के दौरान भारत ने करीब 1878 लाख टन प्रमाणित जैविक उत्पादों का उत्पादन किया है। जैविक खेती में प्रसार हेतु पशुधन होना भी जरूरी है। भारत में वर्ष 2008 में पशुधन संख्या जो कि जैविक खेती का आधार है, की संख्या यथा भैंस 99.00 मिलियन तथा गाय 175.00 मिलियन हैं विश्व परिपेक्ष्य में भारत का स्थान पशुधन संख्या की दृष्टि से गौ-वंश में द्धितीय तथा भैंस में प्रथम स्थान हैं। अत: कहा जा सकता है कि भारत में जैविक खेती की अपार संभावनाएं है। वर्ष 2007 के समंकों के अनुसार शीर्ष गौ पशु संख्या वाले राज्यों में म.प्र. का प्रथम स्थान है। यहाँ कुल गौपशुधन संख्या 2.17 करोड़ थी।

इसी प्रकार बैतूल जिले में वर्ष 2009-10 के समंकों के अनुसार कुल पशुधन में 59.85 प्रतिशत गौवंशीय पशु है जबकि 16.90 प्रतिशत भैसवंशीय पशु हैं, जो जैविक खेती की आवश्यकता को पूरा करते हैं।

उद्देश्य – शोध पत्र के निम्न उद्देश्य हैं –

1. म.प्र के बैतूल जिले में पशुधन एवं जैविक खेती के प्रसार के मध्य संबंध का अध्ययन करना है।
2. बैतूल जिले में व्यवसाय एवं जैविक खेती के प्रसार के मध्य अध्ययन करना।

शोध प्रविधि – शोधकर्ता ने प्रस्तुत शोध पत्र में म.प्र. के बैतूल जिले का अध्ययन किया है तथा अध्ययन हेतु प्राथमिक समंकों का संग्रहण किया है। शोधकर्ता द्धारा समंक किसान कल्याण तथा कृषि विभाग जिला बैतूल से संग्रहित से संग्रहित किये हैं एवं प्राथमिक समंक बैतूल जिले के 4 विकासखण्ड (बैतूल, मुलताई, भैंसदेही, चिचोली) से संग्रहित किये हैं। प्रत्येक विकासखण्ड में जैविक ग्राम के कृषकों से अनुसूची द्धारा सर्वे किया गया है। कुल 400 कृषकों का सर्वे कर शोधकर्ता ने किया है, समंक संग्रहण के पश्चात् आकड़ों का सारणीयन कर विश्लेषण किया गया है। समंक वर्ष 2011-12 से संबंधित है। अध्ययन क्षेत्र में सर्वेक्षण के दौरान ज्ञात हुआ कि शत् प्रतिशत जैविक खेती अपनाने वाले कृषकों की संख्या नगण्य हैं इस स्थिति को दृष्टिगत रखते हुए जैविक खेती के निर्धारण हेतु शोधकर्ता द्धारा एक पैमाने का निर्धारण किया गया है, इस कार्य हेतु जजमेन्ट शीट में कृषि विज्ञान केन्द्र तथा किसान कल्याण तथा कृषि विभाग के कृषि विशेषज्ञों के मतानुसार आकड़े एकत्रित किये गये हैं। प्राप्त जजमेन्ट शीट में कृषि विशेषज्ञों द्धारा दी गई अनुसंशित मात्रा व उसके समक्ष दिये गये प्रत्येक जैविक खेती के घटकों के औसत की गणना की गई तथा प्राप्त औसत से व्यक्तिगत कृषक द्धारा जैविक खेती के घटकों की गणना कर निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग कर कृषकों को तीन श्रेणियों में निम्न जैविक खेती : अंगीकारक कृषक, मध्यम जैविक खेती, तथा उच्च जैविक खेती अंगीकारक कृषकों में बांटा गया है।

कृषक वर्ग के वर्गीकरण का सूत्र –

निम्न जैविक खेती अंगीकारक – सामान्तर माध्य – प्रमाप विचलन

मध्यम जैविक खेती अंगीकारक – निम्न तथा उच्च अंगीकारक

सीमा के मध्यउच्च जैविक खेती अंगीकारक – समान्तर माध्य प्रमाप विचलन

तालिका विश्लेषण – जिले में पशुधन संख्या एवं जैविक खेती के प्रसार में संबंध से संबंधित समंकों की जानकारी निम्न तालिका में प्रस्तुत है –

तालिका क्रमांक –1 (अगले पृष्ठ पर देखें)

तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट है, कि निम्न जैविक खेती अपनाने वाले कृषकों के पास 4 पशुधन है जबकि उच्च जैविक के अपनाने वाले कृषकों के पास 13 पशुधन हैं अर्थात् पशुधन बढ़ने के साथ-साथ जैविक खेती अंगीकारक के प्रतिशत में भी वृद्धि हुई है। अत: स्पष्ट है कि जैविक खेती व पशुधन संख्या में सकारात्मक सहसंबंध है इसका मुख्य कारण यह है कि अधिकांशत: जैविक खादों का निर्माण (जैसे सड़ी गोबर खाद, केचुआ खाद, बायोगैस से निर्मित खाद आदि) पशुओं के गोबर से किया जाता है।

तालिका क्रमांक – 2 (अगले पृष्ठ पर देखें)

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) सरोजनी नायडू शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, शिवाजी नगर, भोपाल (म.प्र.) भारत

तालिका क्रमांक 2 से शोधकर्ता ने ज्ञात किया है कि उच्च जैविक खेती अपनाने वाले कुल 44 कृषकों में से 2272 प्रतिशत कृषक द्धितीयक व्यवसाय कर रहे हैं, अर्थात् पशुपालन कर रहे हैं जिनका प्रतिशत तीनों वर्गो के कृषको से ज्यादा है अर्थात जैविक खेती अपनाने के लिए कृषक को पशुपालन अपनाना ही होगा। इससे कृषकों को दो अतिरिक्त लाभ है,उन्हें जैविक खेती की आवश्यक गोबर, गौमूत्र प्राप्त हो जाएगा एवं पशुधन का दूध भी मिलेगा, जिससे वे गृह आवश्कता पूरी कर सकते है विक्रय से आय भी प्राप्त कर सकते है मध्यम जैविक खेती अपनाने वाले कृषकों के समंको से ज्ञान होता है कि उनमें से 7.31 प्रतिशत कृषक तृतीय व्यवसाय जैसे – कृषि मजदूरी, दुकान में काम करना, कारखानों में मजदूरी, शिक्षक आदि लगे है, जिससे उसके पास का अभाव है और वे जैविक खेती अपनाने में असमर्थ है।

समस्याएँ – जैविक खेती अपनाने में आने वाली समस्याएँ निम्न है –

1. पशुधन जैविक खेती का आधार है, जिनके पास कम पशुधन है जैविक खेती अपनाने में असमर्थ है।
2. तृतीयक व्यवसाय भी करने वाले कृषक जैविक खेती को अंगीकृत नहीं कर पाते।
3. कृषकों के पास समय के अभाव के कारण भी वे जैविक खेती करने में असमर्थ है।

सुझाव – जिले में जैविक खेती खेती के प्रसार हेतु निम्न सुझाव दिय जा रहे हैं –

1. पशुधन में वृद्धि हेतु कृषकों को उचित शासकीय सुविधायें दी जाए।
2. कृषि विभाग द्धारा जैविक खेती के प्रसार हेतु शासकीय योजनाओं का संचालन किया जाए एवं लघु व सीमांत कृषकों तथा अशिक्षित कृषकों तक इनकी सूचनाएं सरल भाषा में पहुॅचाए।
3. जैविक खेती के घटकों के निर्माण का प्रशिक्षण कृषकों को दिया जाए।

नष्कर्ष – शोध पत्र में उपयोग किये गये प्राथमिक समंकों से ज्ञात है कि पशुधन प्रसार व जैविक खेती के प्रसार में सकारात्मक संबंध है एवं प्राथमिक व द्धितीयक व्यवसाय वाले कृषक जैविक खेती की ओर अधिक आकर्षित हो रहे हैं। अत: जिले में पशुधन की उपलब्धता होने से जैविक खेती की संभावना है, इसके साथ ही कृषकों में जैविक खेती के प्रति जागरूकता बढ़ाना भी आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कौशल डॉ.जी.एस. (2008) 'श्रृद्धा के फूलों से सोना' म.प्र. विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद विज्ञान भवन नेहरू नगर ,भोपाल।
2. ओझा एस.के. (2012-13) 'कृषि एवं प्रौद्योगिकी' बौद्धिक प्रकाशन, इलाहाबाद।

तालिका क्रमांक –1

सर्वेक्षित कृषकों की पशुधन सम्बन्धी जानकारी (इकाई-संख्या)

पशुधन	जैविक खेती अपनाने वाले कृषक वर्ग			औसत
	निम्न जैविक अंगीकारक (कुल कृषक-28)	मध्यम जैविक अंगीकारक (कुल कृषक-328)	उच्च जैविक अंगीकारक (कुल कृषक-44)	
गाय	2	3	4	3
बैल	1	1	2	1
साण्ड	0	0	0	0
भैंस	0	2	4	2
बकरा	1	2	3	2
बकरी	0	0	0	0
कुल योग	**4**	**7**	**13**	**8**

स्त्रोत – सर्वेक्षण पर आधारित

तालिका क्रमांक – 2

सर्वेक्षित कृषकों की व्यवसाय संबंधी जानकारी (इकाई-संख्या)

क्र.	व्यवसाय	जैविक खेती अपनाने वाले कृषक वर्ग		
		निम्न जैविक अंगीकारक (कुल कृषक-28)	मध्यम जैविक अंगीकारक (कुल कृषक-328)	उच्च जैविक अंगीकारक (कुल कृषक-44)
1.	प्राथमिक	28(100)	328(100)	44(100)
2.	द्धितीयक	0(0)	40(12.19)	10(22.72)
3.	तृतीय	1(3.57)	24(7.31)	2(4.54)

स्त्रोत – सर्वेक्षण पर आधारित

नोट – कोष्ठक में प्रतिशत संख्या दर्शाई गई है।

****

मध्यप्रदेश के विकास में पर्यटन का योगदान

डॉ. दीपाली बेहेरे *

प्रस्तावना – भारत की प्राचीनतम संस्कृतियों में मध्यप्रदेश की नर्मदाघाटी सभ्यता को माना जा सकता है। मध्यप्रदेश की राजाानी भोपाल से लगभग 30 किमी. दूर स्थित प्रागेतिहासिक महत्व का स्थल **भीमबैठका** आदिमानव की विश्व की सर्वाधिक प्राचीन व विशाल बस्ती है, जिसे यूनेस्को द्वारा वर्ल्ड हेरीटेज श्रृंखला में शामिल किया गया है। इसी प्रकार रायसेन जिले में ही मौर्यकालीन विश्वविख्यात स्तूप सांची में स्थित है जो विश्व का महत्वपूर्ण बौद्ध केन्द्र है। इसे भी यूनेस्को द्वारा वर्ल्ड हेरीटेज श्रृंखला में शामिल किया गया है। इस प्रकार मध्यप्रदेश वैदिक काल से ही देश की हृदयस्थली के रूप में प्रसिद्ध रहा है। मध्यप्रदेश की विरासत, प्राचीन स्मारक, नैसर्गिक सुन्दरता तथा नदियाँ पर्यटकों के लिये एक सुखद अहसास है। इसका व्यापक प्रचार-प्रसार पर्यटन के लिये किया जाना चाहिये।

भारत की हृदयस्थली के रूप में स्थापित मध्यप्रदेश अपने विस्तृत क्षेत्र में पर्यटन की असीम सम्भावनाओं को समेटे हुए है। सतपुड़ा एवं विंध्याचल पर्वत श्रृंखलाओं से आच्छादित इस प्रदेश में विभिन्न रूचि के पर्यटकों के लिए सांस्कृतिक विरासत, नैसर्गिक सौन्दर्य कलात्मक मंदिर, स्तूप, वैभवशाली किले एवं राजप्रसाद पुरातत्वीय महत्व के स्मारक उपलब हैं। देश एवं प्रदेश के आर्थिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक विकास में पर्यटन के महत्वपूर्ण योगदान को दृष्टिगत रखते हुए प्रदेश के पर्यटन केन्द्रों के विकास, बुनियादी सुविधाओं को उपलब्ध कराये जाने, स्थलों के प्रचार प्रसार के दृष्टिकोंण से प्रदेश में इस कार्य हेतु पृथक रूप से विभाग बनाये जाने की आवश्यकता महसूस की गई। सचिवालय स्तर पर वर्ष 1972 में पर्यटन विभाग को स्वतंत्र रूप से अस्तित्व में लाया गया।

अविभाजित मध्यप्रदेश में लगभग 453 पर्यटन केन्द्र थे जिनमें से 71 पर्यटन केन्द्र पृथक छत्तीसगढ़ राज्य में स्थानांतरित होने के पश्चात वर्तमान में 382 पर्यटन आकर्षण केन्द्र मध्यप्रदेश में स्थित हैं जिन्हें 4 श्रेणियों में बांटा गया है इन केन्द्रों में से 20 केन्द्र राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त है। जिन्हें निम्नानुसार वर्गीकृत किया जा सकता है –

1. ऐतिहासिक एवं पुरातत्वीय महत्व के स्थान।
2. प्राकृतिक सौन्दर्य के स्थान।
3. धार्मिक महत्व के स्थान।
4. वन्यप्राणी पर्यटन स्थल।

वित्तीय साधनों को दृष्टिगत रखते हुए प्रदेश में स्थित पर्यटन केन्द्रों में से निम्न 18 प्रमुख पर्यटन एवं धार्मिक स्थानों को विकास के लिये चुना गया है खजुराहो, कान्हा, साँची, भीम बेठिका, भोजपुर, माण्डू, इन्दौर, पचमढ़ी, शिवपुरी-ग्वालियर, बांवगढ़, अमरकंटक, उज्जैन, ओंकारेश्वर, महेश्वर, चित्रकूट, भेड़ाघाट, ओरछा, पेंच, बस्तर।

मध्यप्रदेश राज्य के पर्यटन विकास के अन्तर्गत पर्यटकों की संख्या में वृद्धि एवं प्रदेश को देश के प्रथम पर्यटक गन्तव्य स्थल के रूप में स्थापित करने के लिये प्रदेश सरकार सतत प्रयत्नशील है एवं इस दिशा में परिवहन स्थलों तक आवागमन सुविधा, अधोसंरचना विकास एवं प्रचार-प्रसार को बढ़ावा दिया जा रहा है। कनेक्टिविटी एवं त्वरित आवागमन को सुलभ बनाये जाने हेतु प्रदेश में आंतरिक वायु सेवा निजी क्षेत्र के माध्यम से संचालित किये जाने की कार्यवाही की गयी है। भोपाल इन्दौर मार्ग के अतिरिक्त इन्दौर-मांडव उज्जैन-ओंकारेश्वर-उज्जैन के मय निगम द्वारा पर्यटकों हेतु वाहन सेवा उपलब कराई गयी है।

प्रदेश के सत्रह प्रमुख पर्यटन केन्द्रों को जोड़ने वाले 32 मार्गो को चयनित किया जाकर इन्हें प्राथमिकता के आधार पर उच्च स्तरीय बनाये जाने हेतु कार्यवाही की जा रही है इसके अतिरिक्त अन्य पर्यटन महत्व के मार्गो का विकास किया जा रहा है।

पर्यटन नीति – पर्यटन के क्षेत्र में निजी भागीदारी तुलनात्मक रूप से काफी कम है। निजी क्षेत्र की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिये विभाग द्वारा पूर्व में घोषित पर्यटन नीति 1995 तथा पश्चातवर्ती ईको एवं एडवेंचर नीति 2000 तथा हेरीटेज पर्यटन नीति 2002 को नया स्वरूप दिया जाकर पर्यटन नीति 2010 लागू की गई है। जिसमें निजी निवेश को बढ़ावा देने हेतु समुचित प्रावधान किये गये हैं।

मध्यप्रदेश राज्य को राजस्थान केरल तथा गोवा की तरह पर्यटन के क्षेत्र में अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाने का कार्य किया जा रहा है, जिससे प्रदेश को आर्थिक लाभ के साथ-साथ रोजगार के अवसर भी प्राप्त होंगे।

पर्यटन विभाग का दायित्व – पर्यटन विभाग का मुख्य दायित्व प्रदेश में पर्यटन स्थलों को चिन्हित किया जाना पर्यटन स्थलों पर अधोसंरचना का विकास, आवास, परिवहन सुविधा उपलब्ध कराया जाना प्रदेश के पर्यटन स्थलों की जानकारी उपलब्ध कराये जाने हेतु प्रचार-प्रसार, पर्यटन साहित्य का प्रकाशन उत्सव मेलों का आयोजन बजट नियंत्रण केन्द्र शासन से आर्थिक सहायता प्राप्त करना मंत्री परिषद के निर्णयों का क्रियान्वयन और अन्य विभागों से समन्वय आदि है।

मध्यप्रदेश राज्य पर्यटन विकास निगम – मध्यप्रदेश के पर्यटन स्थलों का विकास करने की दृष्टि से वर्ष 1978 में मप्र.राज्य पर्यटन विकास निगम का गठन किया गया। निगम का कार्य पर्यटन स्थलों पर आवासीय, गैर आवासीय इकाइयों का संचालन पर्यटकों को पर्यटन स्थलों की जानकारी सुलभ कराना, पर्यटन स्थलों पर साहित्य का प्रकाशन तथा पर्यटकों को परिवहन सुविधा उपलब्ध कराना है। निगम द्वारा कई अन्य कार्य भी सम्पादित किये जाते है, जिसमें आवासीय इकाईयों में आरक्षण, पर्यटन

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) केरियर महाविद्यालय बी.एच.ई.एल., भोपाल (म.प्र.) भारत

स्थलों का अखिल भारतीय स्तरों पर प्रचार-प्रसार, पर्यटन क्षेत्र से जुड़े ट्रेवल एजेंट्स, लेखक, फोटोग्राफर्स, विशिष्ट व्यक्तियों के लिए टूर का आयोजन, निगम द्वारा प्रदेश के पर्यटन स्थलों पर आवास, खान-पान, परिवहन सुविधा आदि उपलब्ध कराई जाती है।

निगम द्वारा वर्ष 1996 में पर्यटकों को अधिक अधिक सुविधाऐं मुहैया कराने की दिशा में महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए। नई पर्यटन नीति के अन्तर्गत निजी निवेशकों को आकर्षित करने की दृष्टि से राजस्व विभाग द्वारा खजुराहो, ओरछा, बाधँवगढ़, जबलपुर, गांधीसागर, चित्रकूट में आवंटित शासकीयभूमि का आधिपत्य ग्रहण कर लिया गया है निगम द्वारा भोपाल में संचालित जलक्रीड़ा संबंधी सुविधाओं में व्यापक विस्तार किया गया है। भोपाल के बोट क्लब में नई स्वान बोट शिकारा मोटल, बोट, पैडल बोट बढ़ाई गई है। भोपाल दर्शन, ग्वालियर दर्शन, पचमढ़ी दर्शन के अलावा भोपाल से झांसी उदयगिरी एवं इन्दौर के समीप मुख्य पर्यटन स्थलों के लिये परिचालित भ्रमण शुरू किया गया है।

नई पर्यटन नीति के तहत हेरिटेज होटल की योजना प्रदेश में लागू की गई है। इस योजना के अन्तर्गत पुराने महल, हवेलियाँ, किलों को होटलों में परिवर्तित किया जाना है। इनमें छतरपुर स्थित राजगढ़ पैलेस को होटल का स्वरूप दिए जाने का निर्णय लिया जा चुका है इसके अलावा पचमढ़ी स्थित शेखर सुमन एवं डीआईज़ी बंगले को हेरिटेज होटल में परिवर्तित किया जाएगा।

पर्यटन को बढ़ावा देने के लिये निजी निवेशकों की भागीदारी को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। निजी निवेशकों को राज्य शासन की ओर से सरकारी जमीन निर्धारित नियमों के तहत उपलब्ध कराई जाएगी। राजस्व विभाग ने खजुराहो, मंदसौर, ओरछा, चित्रकूट, बांधवगढ़ में सरकारी जमीन पर्यटन विकास निगम को दे दी है। इन स्थलों का भूमि आधिपत्य निगम द्वारा ग्रहण किया जा चुका है।

वर्ष 2011 में मप्र.के विभिन्न पर्यटन केन्द्रों में पर्यटक आगमन

क्र.	पर्यटन केन्द्र	भारतीय	विदेशी	योग
1.	अमरकण्टक	1642000	17	1642017
2.	भेड़ाघाट	326557	589	327146
3.	बांधवगढ़	48028	16180	64208
4.	चित्रकूट	5401245	1092	5402337
5.	ग्वालियर	142854	8144	150998
6.	कान्हा	73098	11366	84464
7.	खजुराहो	157754	42223	199977
8.	महेश्वर	211298	2563	213861
9.	माण्डू	483829	4514	488343
10.	ओरछा	72493	24897	97390
11.	ओंकारेश्वर	2364000	447	2331565
12.	पचमढ़ी	685083	123	685206
13.	शिवपुरी	19374	71	19445
14.	सांची	11597	3194	119168
15.	बुरहानपुर	48551	75	48626
16.	भीम बैठक	25209	712	25921
17.	पन्ना	27515	6183	33718
18.	पेंच	36636	3212	39848
19.	उज्जैन	3850000	943	385093
	योग -	22088927	251733	22340660

आय - वर्ष 2010-11 में निगम को लगभग 70 करोड़ रूपये पर्यटन आय के रूप में प्राप्त हुई है जो गत वर्ष प्राप्त आय 6000 करोड़ से 1667 प्रतिशत अधिक है वर्ष 2011-12 में माह नवम्बर 2011 तक 3844 करोड़ रूपये की आय प्राप्त हुई इस दौरान माह अगस्त 2011 तक लगभग 272 करोड़ पर्यटक मध्यप्रदेश के विभिन्न पर्यटन स्थलों पर भ्रमण हेतु आये।

इको टूरिज्म - ईको टूरिज्म एवं रोमांचक पर्यटन के तहत प्रदेश में उपलब्ध विभिन्न जलाशयों एवं केन्द्रों पर जलक्रीड़ा एवं साहसिक खेलों की सुविधाएँ पर्यटकों को उपलब कराई जा रही है इसके तहत भोपाल स्थित बोट क्लब पर क्रूज बोट का संचालन, बरगी डेम में आधुनिक सुविधा युक्त याट क्लब का संचालन प्रारम्भ कर दिया गया है तथा शीघ्र ही बरगी डेम से मण्डला तक 60 किलोमीटर तक रीवर क्रूज की सुविधा उपलब्ध कराई जा रही है। भोपाल में निगम द्वारा कलियासोत डेम पर एक बोट क्लब स्थापित किये जाने की नवीन योजना तैयार की गई है। जहाँ पर कृत्रिम तट, म्यूजिकल फाउंटेन सहित मनोरंजन केन्द्र भी स्थापित किए जा रहे हैं। आगामी वर्षो में बाणसागर डेम, शहडोल इंदिरासागर आदि स्थलों पर जलक्रीड़ा सुविधाएँ सहित साहसिक खेलों को बढ़ावा देने के उद्देश्य से भोपाल में कलियासोत के समीप बुलमदर फार्म की भूमि पर तथा पचमढ़ी में एडवेंचर जोन स्थापित किए जारहे हैं भोपाल में निगम द्वारा कलियासोत डेम पर एक बोट क्लब स्थापित किये जाने की नवीन योजना तैयार की गई है जहाँ पर कृत्रिम तट म्यूजिकल फाउण्टेन सहित मनोरंजन केन्द्र आदि स्थापित किये जा रहे हैं।

वर्ष 2009-10 के लिये विदिशा, महेश्वर फेज-2 बैतूल, समर्धा जिला रायसेन बुरहानपुर फेज-2, मेगा डेस्टिनेशन चित्रकूट कनवेशन सेंटर भोपाल केरेवान टूरिज्म आईएचएम.इन्दौर लोकरंग, मध्यप्रदेश पर्यटन दिवस आदि की कुल 11 योजनाएँ जिनकी लागत 609928 लाख रूपये की स्वीकृत केन्द्र शासन से प्राप्त की गई जबकि वर्ष 2011-12 के लिये रतलाम मन्दसौर नीमच पर्यटन दिवस सलकनपुर फेज-2 महू इंदिरा सागर हण्डिया एडवेंचर केम्प लोकरंग आदि (कुल आठ योजनाऐं जिनकी लागत 255581 लाख रूपये की है) की स्वीकृति केन्द्र शासन से प्राप्त की गई है।

निष्कर्ष - मध्यप्रदेश में अनेक स्थल पर्यटन के आकर्षण का केन्द्र है, आवश्यकता है उनको निखारने, सजाने, संवारने, संरक्षित रखने एवं प्रचारित करने की। मप्र.के पर्यटन को अधिकाधिक बढ़ावा देने के लिये ऐसे प्रयास किये जाने चाहिये जो अधिक प्रभावशाली तथा नये आयामों से युक्त हो। मध्यप्रदेश में पर्यटन के विकास से न केवल प्रदेश का विकास होगा बल्कि लोगों को रोजगार भी प्राप्त होगा। सभी क्षेत्रों में नियोजित विकास किया जाना चाहिये। जिससे न केवल मध्यप्रदेश का समुचित आर्थिक विकास होगा, बल्कि आय प्राप्ति के स्त्रोतों में वृद्धि होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सेतिया सुभाष 'भारतीय पर्यटन के नये आयाम' योजना नई दिल्ली।
2. वार्षिक रिपोर्ट - पर्यटन मंत्रालय (वर्ष 2001-2009) भारत सरकार नई दिल्ली।
3. म.प्र.ट्रेवल गाईड, भोपाल (म.प्र.)
4. कला एवं संस्कृति विभाग भोपाल (म.प्र.) म.प्र. विकास वार्षिकी 2013 कुशवाह

विदेशी सहायक और भारत का आर्थिक विकास

डॉ. अशोक शर्मा * डॉ. अरुणा शर्मा **

शोध सारांश – विदेशी पूँजी का प्रावधान बेहतर आधार संरचना तो उपलब्ध तो करा सकता है लेकिन जब तक निवेश के अधिक अवसर उपलब्ध नहीं होते यह अपने आप में विकास को तेज नहीं कर सकता।

प्रस्तावना – विश्व में औद्योगिक विकास में अग्रणी इंग्लैंड को छोडकर आर्थिक विकास हेतु अग्रसर सभी देशों को किसी न किसी सीमा तक विदेशी सहायता पर निर्भर रहना पड़ता है। देशीय साधनों को गतिमान करने की सीमा तकनीकी प्रगति की दृष्टि से देशीय अर्थव्यवस्था की स्थिति और अपनी अपनी सरकारों के रवैये के कारण विदेशी सहायता पर निर्भरता की मात्रा भिन्न भिन्न रही है। फिर भी इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि विदेशी सहायता से आर्थिक विकास संभव होता है और यह औद्योगिकीकरण अति महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

भारत जैसे अल्पविकसित देश में पूँजी की कमी रही है। विकास की गति तीव्र करने के लिये पूँजी की आवश्यक वृद्धि हुई है और चूंकि आय की वृद्धि के साथ बचत में समानांतर वृद्धि नहीं होती है इसलिये विदेशी पूँजी इस कमी की पूर्ति कर सकती है।

विदेशी सहायता का भारत में प्रारुप – 51 प्रतिशत अनुपात तक के विदेशी निवेश के लिए स्वत: स्वीकृत हेतु 1991 की औद्योगिक नीति में विदेशी निवेश नीति को उदार बनाने का निर्णय लिया गया।विदेशी निवेश संवर्धन बोर्ड स्थापित किया गया ताकि स्वत: स्वीकृति के अधीन न आने वाले आवेदनों की स्वीकृती त्वरित की जा सके।

आयोजन के प्रारंभिक चरण में विदेशी पूँजी के प्रति राष्ट्रीय नीति के रुखे व्यवहार ने भारत के आर्थिक विकास पर अवरुद्ध उत्पन्न किया। परिणामत: 80 के दशक के दौरान विभिन्न सरकारी विदेशी निवेश नीति में निम्न प्रकार उदार नीति अपनायी गयी ताकि सहायता का लाभ उठाया जा सके।

- 26 उद्योगों को छोडकर अन्य सभी को लाइसेंस प्राप्त करने की छूट दी गई।
- विदेशी कम्पनियों को इलेक्ट्रानिक हिस्से के निर्माण की इजाजत दी गई।
- टेलीसंचार कम्पनियों का निजीकरण किया जिससे विदेशी कम्पनी प्रोत्साहित हुई।

शोध उद्धेश्य –

- भारत में विदेशी निवेश के प्रवाह का स्तर।
- विदेशी सहायता भारत के विकास में किस प्रकार सहायक है।
- विदेशी निवेश स्वीकृतियों और वास्तविक अंतर्प्रवाह के मध्य संबंध।
- विदेश निवेश का प्रोत्साहन में उपयोगिता।

विदेशी निवेश स्वीकृतियॉ और वास्तविक अन्तर्प्रवाह – 1991 की औद्योगिक नीति की घोषणा के बाद भारत में विदेशी पूँजी के अन्तर्प्रवाह को रिर्जव बैक ऑफ इण्डिया द्वारा उपलब्ध कराये गये आंकडों के अनुसार 1991–1992 एवं 2010–2011 के अवधि के प्रत्यक्ष निवेश तालिका अग्रकिंत है–

तलिका– प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की स्वीकृतियां एवं वास्तविक प्रवाह

क्र.	स्वीकृत राशि	वास्तविक प्रवाह	प्रतिशत रुप में
1.	534	351	65.73
2.	3888	678	17.44
3.	8859	1784	20.10
4.	14187	3289	23.18
5.	32072	6820	21.26
6.	36147	10389	28.74
7.	54891	16425	29.92
8.	30814	13340	43.29
9.	28367	16868	59.46
10.	37039	19342	52.22
11.	26875	19265	71.68
12.	11140	21286	191.08
13.	6042	14301	236.69
योग	290855	144135	49.56

स्त्रोत – रिर्जव बैंक ऑफ इण्डिया, बुलेटिन मार्च 2008. जून 2011

उक्त आंकडों से पता चलता है कि प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के रुप में 290855 रु करोड़ के कुल प्रस्तावों को स्वीकृत दी गयी जबकि इसके विरुद्ध पिछले पूरे दशक के दौरान केवल 1.274 करोड रुपये के विदेशी निवेश की स्वीकृती दी। आंकडो से पता चलता है कि वास्तविक प्रवाह कुल स्वीकृतियों से कम थी किन्तु आगे जाकर स्थिती में सुधार होता दिख रहा है।

आर्थिक विकास पर विदेशी सहायता का प्रभाव – विदेशी सहायता से किस हद तक विकास संभव है यह इसके विवेकपूर्ण उपयोग पर निर्भर करता है तथा साथ ही प्रापक देश के प्रयास और कुछ विनियोज्य साधनों पर निर्भर करता है।भारत के आथिक विकास के विदेशी सहायता के योगदान का निम्न बिंदुओं में व्यक्त कर सकते है।

- निर्माण उद्योग में विदेशी सहायता का 80 प्रतिशत से अधिक मात्रा का प्रयोग कर इसके क्षमता का विस्तार तथा निर्माणी व्यय की वृद्धि हुई है।

* सहायक प्राध्यापक, छत्तीसगढ महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, छत्तीसगढ महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत

- विदेशी तकनीकी के सहायता से नये कर्मचारियों को प्रशिक्षण प्रदान करके कुशल बनाया जा सकता है।
- निवेश दर प्रारंभ में राष्ट्रीय आय का 5 प्रतिशत थी जो अब वर्तमान में बढकर 36 प्रतिशत हो गई।
- सिंचाई तथा बिजली बमन 195025 में भी वृद्धि हुई है।
- रेल्वे परिवहन को पुन: स्थापित करने विदेशी सहायता का योगदान सबसे अधिक रहा है।

विदेशी सहायता की समस्यायें –

- राजनितीक दबाव विदेशी सहायता को हतोत्साहित करती है।
- एक अवधि में प्राप्त होने वाले सहायता एवं प्रयोग परिणाम में भिन्नता व अनिश्चितता से कठिनाई उत्पन्न होना।
- विदेशी निवेश हेतु पोर्टफोलियों की सुविधा नहीं है।

सुझाव एवं निष्कर्ष– भारत जैसे अल्पविकसीत देश में पूँजी की कमी रही है।विकास की गति तीव्र करने के लिये पूँजी की अतिशीघ्र आवश्यकता होती है जोकि विदेशी आर्थिक सहायता से संभव होता है। अत: 1991 के उदारीकरण, भू मण्डलीयकरण एवं निजीकरण के द्धारा विदेशी निवेश नीति को प्रोत्साहित किया गया परिणामत: आधारभूत संरचना के उपयोग जैसे शिक्षा चिकित्सा एवं रोजगार इत्यादि क्षेत्रों में इसके विस्तृत प्रभाव देखे जा सकते है।

इस प्रकार किसी अल्पविकसित देश की आर्थिक विकास को तीव्र करने में विदेशी पूँजी महत्वपूर्ण योगदान प्रदान कर सकता है किन्तु यह विदेशी सहायता निवेश के रुप में होना चाहिये न कि ऋण के रुप में क्योंकि विदेशी ऋण पर ब्याज अधिभार होगा जो सहायता की तुलना में अत्यधिक भार हो जायेगा अतएव आर्थिक विकास पर विपरित प्रभाव डालेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रुद्र दत्त, के.पी.एम. सुन्दरम भारतीय अर्थव्यवस्था नवीन संस्करण एस. चन्द्र पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
2. आर्थिक विकास एवं नियोजन एस.पी. सिंह संस्करण 2007, एस. चन्द्र पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
3. डॉ. जगदीश नारयण मिश्र भारतीय अर्थव्यवस्था संस्करण 2008, किताब महल।
4. डॉ. विमल कुमार जैन भारत में आर्थिक नियोजन ,कॉलेज बुक डिपो ,नई दिल्ली।
5. आर्थिक समीक्षा 2008–09 भारत सरकार।
6. प्रतियोगिता दर्पण।
7. दैनिक समाचार पत्र।

****

बदलते परिवेश में भारतीय कृषि की दशा व दिशा -एक अवलोकन

डॉ. आभा दीक्षित *

प्रस्तावना – भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए कृषि सदैव ही जीवन रेखा रही है। हालांकि जी.डी.पी. में कृषि का योगदान कम होकर 13.7 प्रतिशत ही रह गया है तथापि, वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार अभी भी देश की अर्थव्यवस्था में कुल रोजगार में कृषि क्षेत्र का अंश 58.2 प्रतिशत बना हुआ है। उदारीकरण व वैश्वीकरण के दौरान सरकार ने कृषि क्षेत्र पर समुचित ध्यान नहीं दिया। सरकार का मानना था कि उद्योग और सेवा क्षेत्र पर ध्यान देने से ज्यादा आर्थिक वृद्धि दर हासिल की जा सकेगी और ज्यादा रोजगार का सृजन किया जा सकेगा लेकिन यह सोच गलत साबित हो गई। इसीलिए कई वर्षों से कृषि केंद्र व राज्य सरकारों की शीर्ष प्राथमिकताओं में से एक प्राथमिकता के रूप में उभरी है। केंद्र सरकार की महत्वकांक्षी योजना खाद्य सुरक्षा का आधार भी यही है।

कृषि उत्पादों की बढ़ती महंगाई दर, ऋणग्रस्तता से दु:खी किसानों की बढ़ती आत्महत्याऐं तथा गरीबी, कुपोषण की बुरी स्थितियों ने सरकार को कृषि के आधुनिकीरण की आवश्यकता तथा महत्व समझा दिया है।

कृषि की वर्तमान स्थिति – वर्तमान में कृषि सेक्टर की वृद्धि दर 2.7 प्रतिशत से घटकर 2 प्रतिशत हो जाने की संभावना हे तथा जी.डी.पी. में इसकी हिस्सेदारी 1950-51 में जो 51.9 प्रतिशत थी उससे घटकर 2012-13 में 13.7 प्रतिशत के स्तर पर आ गई। इसकी वजह लोगों का पारंपरिक खेती को छोड़कर उद्योग और सेवा क्षेत्र से जुड़ना रहा है। किसान आयोग की रिपोर्ट के अनुसार देष के 40 प्रतिशत लोग खेती बाड़ी छोड़ना चाहते है। दो दशक के दौरान करीब 2 लाख किसान आत्महत्या कर चुके हैं।

इन सबके बावजूद भारतीय खाद्य निगम और राज्यों की एजेंसियों सहित केन्द्रीय पूल में 1 जुलाई 2012 को कुल भंडार 805.16 लाख टन था। जिसमें 307.08 लाख टन चावल व 498.08 लाख टन गेहूँ सम्मिलित था, जबकि बफर स्टॉक रखने में मानक क्रमश: 118 लाख टन व 201 लाख टन थे। कृषि की वर्तमान स्थिति को निम्न तालिकाओं से समझा जा सकता है।

तालिका क्र. 1 –
प्रमुख फसलों के अन्तर्गत सकल क्षेत्र (2011-12)
(मिलियन हेक्टेयर)

फसल	2011-12
खाद्यान्न	125.00
दालें	24.80
चावल	44.00
गेहूँ	29.90
तिलहन	26.40
स्त्रोत - भारत	2013

तालिका क्र. 2
भारत में कृषिगत उत्पादन
(मिलियन हेक्टेयर)

उपज	2011-12	2012-13 (अनुमानित)
चावल	105.31	101.80
गेहूँ	94.88	92.30
ज्वार	6.01	5.26
बाजरा	10.28	8.15
मक्का	21.76	21.06
कुल मोटे अनाज	**42.04**	**38.47**
तुअर	2.65	2.75
चना	7.70	8.57
उड़द	1.77	1.74
मूंग	1.63	1.27
कुल दालें	**17.09**	**17.58**
कुल खाद्यन्न	**259.32**	**250.14**
मूंगफली	6.96	5.78
रेपसीड व सरसों	6.60	7.36
सोयाबीन	22.21	12.96
सभी नौ तिलहन	**29.80**	**29.47**
कपास (मिलियन गांठे) (170 कि.ग्रा. की गांठ)	35.20	33.80
जूट एवं मेस्ता (180 कि.ग्रा. की गांठ)	11.40	11.13
गन्ना	361.04	334.54

स्त्रोत - आर्थिक सर्वेक्षण 2012-13

तालिका क्रमांक 3
कृषिगत उपजों के अधिकतम उत्पादन करने वाले राज्य (2011-12)

उपज	राज्य	कुल उत्पादन (प्रतिशत)
चावल	प. बंगाल	14.24
गेहूँ उत्तर	प्रदेश	32.26
मक्का	कर्नाटक	18.96
मोटा अनाज	महाराष्ट्र	16.73
दालें	मध्यप्रदेश	24.17
कुल खाद्यान्न	उत्तर प्रदेश	19.53
मूंगफली	गुजरात	38.10
सरसों	राजस्थान	43.81

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

सोयाबीन	मध्यप्रदेश	51.14
सनफ्लॉवर	कर्नाटक	38.00
समस्त तिलहन	मध्यप्रदेश	25.72
गन्ना	उत्तर प्रदेश	36.02
कपास	गुजरात	34.09
जूट/मेस्ता	पं.बंगाल	74.50

स्त्रोत – आर्थिक सर्वेक्षण 2012–13

खाद्यान्नों के रिकार्ड उत्पादन के पश्चात् 2011–12 में देश बागवानी का उत्पादन भी रिकॉर्ड स्तर पर रहा। संदर्भित वर्ष में देश में फलों व सब्जियों का कुल उत्पादन पहली बार 240 मिलियन टन से अधिक रहा। उत्पादन में वृद्धि के साथ ही इनके निर्यात में भी वृद्धि दर्ज की गई। फलों व सब्जियों के निर्यात से रू. 1400 करोड़ की विदेशी मुद्रा अर्जित की गई।

बदलता परिवेश एवं नवीन तकनीक की आवश्यकता – देश की बढ़ती हुई जनसंख्या के परिप्रेक्ष्य में कृषि में दूसरी हरित क्रांति की तत्काल आवश्यकता पूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने बताई। इसके लिए विज्ञान की सर्वश्रेष्ठ तकनीकों के इस्तेमाल व आर्गेनिक फार्मिंग में शोध को बढ़ावा देने की जरूरत है मिट्टी के स्वास्थ्य का उन्नयन करने, लैब टु लैण्ड प्रदर्शनों को बढ़ावा देने, रेन वाटर हार्वेस्टिंग को अनिवार्य बनाने तथा किसानों को उचित मूल्य पर साख उपलबध कराने की आवश्यकता भी है यह बड़ा ही दु:खद है कि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ कृषि पर जी.डी.पी. का मात्र 0.3 प्रतिशत भाग शोध पर व्यय किया जाता है जबकि, अमरीका में यह 4 प्रतिशत है।

वर्तमान में कृषि में कृषि व्यवस्था का आधार ही खिसकने की कगार पर है – बदलती जलवायु, ढहते भू–संसाधन और तबाह होते प्राकृतिक संसाधन इन्हीं सब पर तो हमारी कृषि टिकी हुई है। जरूरत है नवोन्वेश की प्रथम श्रेणी की तकनीकों के विकास की और फिर उन्हें प्रसारित करके गुणवत्ताापूर्ण उत्पादों में बदलने की जो विश्व–स्पर्धा का मुकाबला कर पाए और भरपूर मुनाफा कमाकर कृषि में जुटी जनता के रहन–सहन का स्तर ऊंचा उठा सके।

बदलती जलवायु तथा सिंचाई प्रबंधन – बदलते जलवायु का असर दिखने लगा है। देश के 13 राज्यों के लगभग 100 जिलों को सूखा संभावित या शुष्क व अर्द्ध–शुष्क क्षेत्र चिन्हित किया गया है। वैसे भी भारत में कृषि भूमि का सिर्फ 40 प्रतिशत भाग सिंचित है। कम वर्षा व अधिक वाष्पीकरण के कारण उत्पादन प्रभावित होता है। इसके विपरीत अधिक तापमान व मृदा के रेतीले होने से मृदा की कम उर्वरता हो जाती है।

विभिन्न तकनीकों जैसे भू–समतलीकरण, वृक्षारोपण, मेड़ बंदी व ढलान के विपरीत जुताई व बुवाई करके वर्षा के पानी को रोकना, बहते पानी को कुएं में डालना तथा खेत के निचलें इलाकों में तालाबों का निर्माण करना चाहिए। खरपतवार नियंत्रण व पौधों की संख्या में कमी, जीवनरक्षक सिंचाई जरूरी है ड्रिप सिंचाई विधि विभिन्न फसलों में उच्च गुणवत्ता तथा अधिक पैदावार के लिए अति–उत्तम साबित हुई है।

नये बीज व खाद – उत्तम गुणवत्ता वाला बीज सामान्य बीज की अपेक्षा 20 से 25 प्रतिशत अधिक कृषि उपज देता है अशुद्ध बीज बोने से एक ओर उत्पादन तो कम होता ही है और दूसरी ओर भविष्य के लिए अच्छा बीज प्राप्त नहीं होता है। लागत भी बढ़ जाती है। अत: ट्रांसजैनिक कृषि को बढ़ावा देना आवश्यक है जिसके अन्तर्गत पौधों की प्रजातियों के विकास में प्राकृतिक जीन के कृत्रिम उपायों द्वारा किसी दूसरे उत्तम नस्ल वाले पौधे के जीन का भाग मिला दिया जाता है, अथवा उसकी मूल संरचना को परिवर्तित कर दिया जाता है साथ ही इसी तकनीक के द्वारा अनेक प्रकार के जैनेटिकली मोडीफायड आर्गेनिज्म बीजों का विकास किया जाता है। इस तरह की खेती में रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशियों व्याधिनाशियों, शाकनाशियों, पादप वृद्धि नियामकों का इस्तेमाल की जगह उचित फसल चक्र, फसल अवशेष, पशुओं का गोबर व मलमूत्र, दलहनी फसलों का प्रयोग, हरी खाद द्वारा भूमि की उपजाऊ शक्ति बनाए रखकर पौधों को पोषक तत्वों की प्राप्ति कराना है।

इसके अतिरिक्त अपनी दानेदार प्रकृति के कारण कार्बनिक खाद व वर्मी कम्पोस्ट भूमि के वायु परिसंचरण जलधारण क्षमता को न केवल सुधारता है अपितु जड़ बढ़ाव व फैलाव में भी वृद्धि करता है।

अत: स्पष्ट है कि वैज्ञानिक ढंग से खेती और नई तकनीके कृषि क्षेत्र के उत्थान के लिए समय की आवश्यकता है।

सरकारी प्रयास – यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि भारतीय सरकार ने भी खेती के बदलते स्वरूप को महसूस कर परिवेष के हिसाब से कई नई–नई योजनाऐं बनायी है तथा वैज्ञानिक खेती की ओर किसानों को जागरूक किया ज रहा है। सरकार द्वारा मुख्य निम्नलिखत कार्य किये गये –

- विभिन्न राज्य सरकारो की ओर से 'कृषि विभाग किसान के द्वार' जैसे अभियान चलाए जा रहे है। इन अभियानों में जहाँ किसानों को उन्नत किस्म के बीज मुहैया कराए गए वहीं यह भी बताया गया कि किस तरह से खेती करें। बंजर खेत में खाद और कम पानी के प्रयोग की तकनीकों से भी लाभान्वित किया जा रहा है।
- शुष्क खेती, कम पानी से अधिक पैदावार व ड्रिप सिंचाई जैसी नई प्रणालियों को कृषि में निवेश को प्रोत्साहित किया है।
- देश में कृषि विकास को नया आयाम देने के लिए भूमि संरक्षण पर विशेष जोर दिया जा रहा है। भूमि संरक्षण के कई कार्यक्रम शुरू किए गये।
- कृषि विभाग के जरिये हर गांव और हर खेत की जांच कर उनके पोषण तत्वों के बारें में जानकारी ली जा रही है साथ ही मृदा संरक्षण के लिए किसानों को जागरूक किया जा रहा है।
- राज्य सरकारों की ओर से किसानों को प्रजनन बीज, आधार बीज एवं प्रमाणित बीज उपलब्ध कराया जाता है।
- भारत में सन् 2003 में जैव ईंधन मिशन प्रारंभ किया गया था। इसमें यह कहा गया कि सन् 2017 तक खनिज तेलों में 20 प्रतिशत जैव ईंधन मिलाया जाएगा। जैव ईंधन का उत्पादन करंज, जट्रोफा, नीम, करडी और महुआ जैसे अखाद्य तेलों से किया जाता है।
- मक्का, ज्वार, गन्ना व चुकन्दर आदि से प्राप्त शर्करा का उपयोग इथेनॉल के उत्पादन में किया जा सकता है। अत: सरकार द्वारा इसका उत्पादन बढ़ाया जाने का मंसूबा है।
- सरकार द्वारा 2007 में राष्ट्रीय कृषक नीति घोषित की गई। राष्ट्रीय कृषि नीति और राष्ट्रीय कृषक आयोग की भी स्थापना की गई।
- राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना, कृषि श्रमिक सामाजिक सुरक्षा योजना के अतिरिक्त कृषि सेवा केन्द्र व कृषि निर्यात क्षेत्रों की स्थापना भी गई। इसके साथ ही किसान काल सेन्टर कृषि चैनल तथा रूरल नॉलेज सेन्टर की भी स्थापना की गई।

जाहिर है सरकार द्वारा कृषि को बदलते परिवेश के हिसाब से उन्नत करने हेतु कई प्रयास किये गये है। परंतु इन्हें लागू ठीक ढंग से नहीं किया जा रहा है।

निष्कर्ष व सुझाव – भूमंडलीकरण ने हमारा ध्यान गुणवत्ता की ओर खींचा है और उत्पादन प्रणालियों के साथ-साथ उपभोक्ता प्रणाली, प्रशोधन, अभिमूल्यन तथा उत्पादों में विविधता आदि के अनेक पक्ष क्षितिज पर उभरते आ रहे है। विश्व स्पर्धा में वही माल बिकेगा जो दूसरों से बढ़कर साबित हो इसका मतलब है कि वर्तमान विकास की प्रक्रिया के अंतर्गत आर्थिक दृष्टि से जांच परख के बिना टिक पाना असंभव है। अत: जरूरत है निम्न उपायों की –

- कृषि शिक्षा का व्यापक प्रचार-प्रसार ग्रामीण क्षेत्रों में होना चाहिए और प्रत्येक शिक्षण संस्थान में न्यूनतम माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा अवश्य होनी चाहिए।
- फसल की बुआई के समय कृषि क्षेत्र के तकनीकी विशेषज्ञ, अपनी देखरेख में बुआई कराऐं तथा आवश्यक उर्वरकों, सिंचाई, निराई, गुडाई, बीमारियों का उपचार आदि उनके निर्देशन में हो।
- कृषि उपयोग में लाए जाने वाली भूमि का अधिग्रहण और उस पर निर्माण प्रतिबंधित कर देना चाहिए।
- किसानों को महंगे उपकरण निर्धारित किराए पर उपलब्ध करवाए जाने चाहिए।
- कृषक बीमा की समय-समय पर समीक्षा होनी चाहिए तथा फसल बीमा के अतिरिक्त कृषक बीमा भी कराया जाना चाहिए।
- कृषक क्रेडिट कार्डो को अधिक व्यावहारिक बनाने के साथ-साथ दीर्घकालीन ऋणों की उपलब्धता पर जोर देना चाहिए इसकी ब्याज दरों में कमी की जानी चाहिए।
- क्रय-विक्रय व्यवस्था को मजबूत और पारदर्शी बनाया जाना चाहिए। आधारभूत संरचना विकास पर भी ध्यान देना होगा।
- सबसे जरूरी है भंडारण की समुचित व्यवस्था तथा कृषि आधारित उद्योग-धंधों का विकास किया जाए।
- बंजर भूमि पर महुआ, नीम और इसी प्रकार के अनेक पौधों को लगाना चाहिए।

जवाहर नेहरू ने कहा था कि 'प्रत्येक चीज इंतजार कर सकती है परंतु कृषि नहीं।' भारतीय कृषि में अनंत संभावनाएँ है। जरूरत है वैज्ञानिक खेती अपनाकर कृषकों की समस्याओं का समाधान और सुविधाएँ प्रदान कर हम विश्व स्पर्धा में अग्रणी हो सकेंगे। प्रकृति ने हमें प्रचुर मात्रा में संसाधन परोसे है हमें उनका उचित प्रबंधन करके उसे निराश नहीं करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रूद्र दत्ता एवं के.पी.एम. सुंदरम 'भारतीय अर्थव्यवस्था' एस. चन्द पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली।
2. भारतीय अर्थव्यवस्था अतिरिक्तांक प्रतियोगिता दर्पण 2012-13
3. भारत 2013
4. आर्थिक सर्वेक्षण 2012-13
5. बिजनेस भास्कर 23 नवंबर, 19 दिसंबर 2013
6. योजना मार्च 2013
7. कुरूक्षेत्र - दिसंबर 2011, जून 2013

****

महिला उद्यमिता महिला सशक्तिकरण के लिए अत्यन्त आवश्यक

डॉ. आभा दीक्षित *

प्रस्तावना – सशक्तिकरण की सबसे बड़ी शर्त है चेतना, स्वावलंबन और निज की पहचान। इसके बिना महिला सशक्तिकरण संभव नहीं है। एक महिला पूरी तरह सशक्त तब हो सकती है जब वो आर्थिक रूप से स्वावलंबी और मजबूत होगी। आर्थिक सुरक्षा किसी भी मानव के लिए अहम सुरक्षा है।

यद्यपि सदियों से महिलाऐं आर्थिक प्रवृत्ति में किसी न किसी रूप में अपना योगदान देती रही है जब पुरूष शिकार करने जाते थे तो महिलाऐं घर में बॉस की चीजे बनाने तथा अनाज जमा करने जैसे कार्य करती थी। पशुपालन युग में पशु की देखभाल, दूध उत्पाद बनाने, कपड़े बुनना आदि कार्य करती थी। कृषि युग में कृषि कार्य में सहायता करना, उनको कूटना-पीसना, टोकरियाँ बनाने तथा मिट्टी के बर्तन बनाने आदि कार्य करती रही है। इस तरह विभिन्न प्रकार से महिलायें आर्थिक क्षेत्र में अपना योगदान देती रही है। भारत में उन्नीसवीं सदी के अंतिम चरण से आर्थिक क्षेत्र व्यवसाय एवं धंधों में महिलाओं का स्थान महत्वपूर्ण बनता जा रहा है तथापि उनके किए गए कार्यों को उतना महत्व नहीं दिया गया तथा महिला उद्यमी किन्हीं विशेष सन्दर्भो को छोड़कर उतनी सफल नहीं हो पा रही है, जितने कि पुरूष उद्यमी होते है। संभवतया महिला उद्यमियों को कई बाहरी व घरेलु समस्याओं से जूझना पड़ता है। जैसे - स्वयं निर्णय लेने की क्षमता का अभाव, गतिशीलता की समस्या, घरेलु जिम्मेदारियों के कारण, उद्योग/ व्यवसाय को पूरा समय नहीं दे पाना, पुरूषों की दोहरी मानसिकता आत्मविश्वास का अभाव आदि। नेशनल सेम्पल सर्वे आर्गेनाईजेशन (NSSO) के अनुसार 1990 के मध्य तक राष्ट्रीय श्रम में महिलाओं का योगदान 40 प्रतिशत था जो 2011-12 में 22.5 प्रतिशत तक ही रह गया। इसी तरह अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की रिपोर्ट के अनुसार श्रम शक्ति में महिलाओं के योगदान के मामले में दुनिया के 131 देशों में भारत का स्थान नीचे से 11 वाँ है। अगर भारत में महिलाओं से संबंधित आंकड़ों पर नजर डालें तो कृषि में सबसे ज्यादा 65 प्रतिशत महिलाएं काम में लगी हैं। बैकिंग, सूचना तकनीकी, ट्रेवल्स मार्केट रिसर्च में 20 से 35 प्रतिशत तक तथा निजी क्षेत्र की कम्पनियों में 24.5 प्रतिशत और सार्वजनिक क्षेत्र में 17.9 प्रतिशत, केन्द्र सरकार की नौकरियों में केवल लगभग 10 प्रतिशत महिला कर्मचारी है। इसके विपरीत तुर्कमेंनिस्तान जैसे मुस्लिम बाहुल्य समाज में महिलाएं केयर टेकर, बाजार में दुकानदारी, विदेशो से सामान आयात करके व्यापार, मिलों कारखानों और दस्तकारी के कार्यों विशेषकर कालीन बनाने और राष्ट्रीय पोशाक- कोईनेक (कासीदाकारी) की कढ़ाई, सिलाई सभी कामों में स्त्रियों की ही भागीदारी है अपवाद रूप में भी पुरूष दिखाई नहीं देते।

महिला सशक्तिकरण के अर्थशास्त्र का सामान्य अर्थ है कि समुदाय के अर्थव्यवस्था के संचालन और नियंत्रण में महिलाओं की भागीदारी कितनी है और उससे कितना योगदान हो रहा है। महिलाओं को मुख्य धारा में लाने तथा उनकी क्षमता का पूर्ण उपयोग करने की दिशा में सरकार द्वारा यों तो समय-समय पर कई कार्यक्रम चलाए जाते रहे हैं। लेकिन महिला उद्यमिता के लिए दो कदम सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं -

पहला – स्वयं सहायता समूहों द्वारा महिलाओं को उद्यमिता के लिए प्रेरित किया जाय। स्वयं सहायता समूहों जो अधिकांश रूप से बचत व ऋण गतिविधियों से शुरू किए जाते हैं। महिलाओं को स्व-विकास, दूसरों से मेल-जोल, स्वामित्व की भावना, आत्माभिव्यक्ति, स्वयं व दूसरों की समस्याएं सही परिप्रेक्ष्य में देखने और उनका विश्लेषण करने एवं निर्णय लेने आदि का अवसर उपलब्ध कराते है। ये सभी सशक्तिकरण के महत्वपूर्ण घटक माने जाते हैं। महिलाएं गरीबी और सामाजिक उत्पीड़न से सबसे ज्यादा प्रभावित होती हैं। सरकार व सवैच्छिक संगठन, महिला स्वयं सहायता समूह के माध्यम से महिलाओं का सामाजिक व आर्थिक रूप से सशक्तिकरण कर रहे हैं।

दूसरा – महिला बैंक की स्थापना दूसरा सरकारी कदम है जो सशक्तिकरण की तरफ उठाया गया है। वित्त और बैंकिंग सुविधा की पहुँच से न केवल महिलाओं का सशक्त बनाने में मदद मिलती है। बल्कि विकास का सामाजिक दायरा भी व्यापक होता है। पूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी की जयन्ती के मौके पर 19 नवम्बर 2013 को इसका उद्घाटन प्रधानमंत्री द्वारा किया गया। एक हजार करोड़, रूपये के कोष के साथ शुरू किया गया बैंक पूर्णत: महिलाओं द्वारा और महिलाओं के लिए संचालित बैंक है। बैंक ने 7 शाखाओं के साथ काम-काज शुरू किया है। इस बैंक का आदर्श वाक्य 'महिला सशक्तिकरण, भारत सशक्तिकरण' है।

सरकार द्वारा यह महसूस किया जा रहा है कि आधी आबादी की अवहेलना करके आर्थिक विकास नहीं किया जा सकता है। इसीलिए सरकार द्वारा कई महिला विकास के कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। परन्तु स्वयं सहायता समूह तथा महिला बैंक सबसे महत्वपूर्ण प्रयास हैं। उनका व्यापक प्रचार-प्रसार ही महिला उद्यमिता तथा महिला सशक्तिकरण के लिए नींव के पत्थर साबित होंगे।

संदर्भ –

1. भारतीय महिलाओं का समाजशास्त्र - डॉ. एम.एम. लवानिया - शशि के जैन रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर, नई दिल्ली।
2. स्त्री सशक्तिकरण के विविध आयाम - प्रधानसम्पादक डॉ. ऋषभदेव शर्मा, गीता प्रकाशन, हैदारबाद।
3. महिला विकास कार्यक्रम - डॉ. आशुरानी, इनाश्री पब्लिशर्स, जयपुर।
4. बिजनेस भास्कर, दि. 26 मार्च, 2013
5. कुरूक्षेत्र, अगस्त 2013

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

म.प्र. में कपास उद्यमियों की समस्याओं का अध्ययन (बड़वानी जिले के सन्दर्भ में)

डॉ. पवन कुमार जायसवाल * डॉ. आशा साखी गुप्ता * *

शोध सारांश – किसी भी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को सुदृढ करने का उत्तम साधन औद्योगीकरण है। सुविचारित ढंग से औद्योगिक विकास के कार्यो का सम्पादन ही औद्योगिक नियोजन कहलाता है। इसके अन्तर्गत उपलब्ध भौतिक, आर्थिक एवं बौद्धिक साधनों तथा संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग सुनिश्चित कर, औद्योगिक विकास के बहुमुखी कार्यक्रम बनाये जाते हैं। औद्योगिक विकास से देश में संतुलन एवं स्थिरता आती है। कृषि एवं प्राकृतिक संसाधनों का पूर्ण विदोहन संभव होता है, औद्योगिक विकास से नये-नये उद्योगों की स्थापना होती है, जिससे रोजगार के साधनों का विस्तार होता है। प्रस्तुत शोध पत्र में निष्कर्षो को ज्ञात करने के लिए द्वितीयक समंकों का प्रयोग कपास निगम कार्यालय, सेंधवा, खेतिया, पानसेमल, अंजड़ के विभिन्न संस्थानों से किया गया है।

शब्द कुँजी – 1. कपास उत्पादन 2. उद्यमिता 3. सरकारी नीति

प्रस्तावना – भारतीय वस्त्र उद्योग, जहाँ भारत का सबसे पुराना एवं वृहद् है वही विश्व में इसका दूसरा स्थान है। भारतीय अर्थव्यवस्था में वस्त्र उद्योग की हिस्सेदारी 20 प्रतिशत है। जिसके अन्तर्गत भारत में लगभग 4100 जिनिंग एवं प्रेसिंग उद्योग है, जो कि अपने क्रियान्वयन के लिये पूरी तरह से कपास पर निर्भर है। इस प्रकार देश के लगभग 60 मिलियन आबादी कपास या कपास उद्योग में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप से जुड़े हैं। जिनमें से अधिकांशत: महाराष्ट्र, गुजरात एवं मध्यप्रदेश में केन्द्रीत है। कपास उद्योग की न केवल भारतीय अर्थव्यवस्था में वरन् प्रदेश की अर्थव्यवस्था में भी महत्वपूर्ण भूमिका है। कपास उद्योग ने प्रदेश की अर्थव्यवस्था में बड़ा योगदान दिया है। जिनिंग, प्रेसिंग व ऑईल मिलों के खुलने से एक ओर ग्रामीणों को रोजगार मिला है वहीं सरकार की उपेक्षित नीति ने इस उद्योग को हतोत्साहित किया है।

पूरे मध्यप्रदेश में 20-21 लाख गाँठ प्रतिवर्ष बनती है, जिसमें निमाड़ क्षेत्र कुल प्रदेश की रूई उत्पादन में 65 प्रतिशत की भागीदारी करता है, तथा मध्यप्रदेश सरकार के उद्योग विभाग के अनुसार 1997-98 में बड़वानी जिले में कपास का पैदावार 25 लाख थी, तथा 1998-99 में 28 लाख क्वि. थी, 1999-2000 में फरवरी तक 19 लाख क्विंटल कपास की पैदावार हुई। स्पष्ट है कि पिछले दो दशकों में कपास की पैदावार में गिरावट हुई। म.प्र. में कपास की बडे स्तर पर पैदावार पूर्वी एवं पश्चिमी निमाड़ क्षेत्र (खण्ड़वा, खरगोन, बड़वानी, धार) जिले में होती है।

शोध पत्र के उददेश्य –

- प्रदेश में कपास उत्पादन का क्षेत्र ज्ञात करना।
- प्रदेश में कपास उत्पादकता की स्थिति ज्ञात करना ।
- कपास उद्यम पर सरकारी नीति के प्रभाव ज्ञात करना।

परिकल्पना तथा शोध प्रविधि –

- प्रदेश में पिछले वर्षो में कपास उत्पादन की स्थिति स्थिर है।
- कपास उद्यम में उद्यमिता पलायन प्रमुख समस्या है।
- कपास उद्यमियों के प्रति सरकारी नीति सहयोग पूर्ण नहीं रही है।

तालिका क्रमांक -1- **राज्यवार कपास की क्षेत्र**

(क्षेत्र लाख हेक्टेयर में)

राज्य	2006 07	2007 08	2008 09	2009 10	2010 11
	क्षेत्र				
पंजाब	6.07	6.04	5.27	5.11	5.30
हरियाणा	5.30	4.83	4.56	5.07	4.92
राजस्थान	3.50	3.69	3.02	4.44	3.35
गुजरात	23.90	24.22	23.54	26.25	26.33
महाराष्ट्र	31.07	31.95	31.42	35.03	39.32
मध्यप्रदेश	6.39	6.30	6.25	6.11	6.50

स्त्रोत :- भारतीय कपास निगम लिमिटेड

विश्लेषण – उपरोक्त तालिका क्रमांक-1 के अनुसार वर्ष 2010-11 में महाराष्ट्र में सर्वाधिक 39.32 लाख हैक्टेयर क्षेत्र में कपास लगाया गया, जबकि राजस्थान में सबसे कम 3.35 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में कपास की फसल लगायी गयी, जहाँ तक मध्यप्रदेश में कपास उत्पादित क्षेत्र 6.50 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में कपास उत्पादित किया गया, जो उपरोक्त तालिका में तीसरे स्थान पर रहा। जहाँ तक पिछले चार वर्षो में मध्यप्रदेश में कपास उत्पादित क्षेत्र का अध्ययन किया गया तो, जो आँकडे प्राप्त हुए उसके आधार पर हम कह सकते हैं कि मध्यप्रदेश में कपास क्षेत्र में कुछ विशेष परिवर्तन नहीं हुए वहीं वर्ष 2006-07 में गुजरात में 23.90 लाख हैक्टेयर में कपास का उत्पादन किया गया। वर्ष 2010-2011 में 2.43 लाख हैक्टेयर से बढ़कर 26.33 लाख हैक्टेयर हो गया वही मध्यप्रदेश में यह वृध्दि मात्र 0.11 रही जिसका मुख्य कारण प्रदेश सरकार द्वारा समय पर बिजली, पानी, खाद, बीज में सुलभता न होने से कपास के क्षेत्र में कमी माना जा रहा है।

तालिका क्रमांक-2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखें)

विश्लेषण – कपास उत्पादन एंव उत्पादकता के सम्बन्ध में प्राप्त जानकारी के आधार पर उपरोक्त तालिका क्रं-2 के अनुसार मध्यप्रदेश में 2010-2011 में 17 लाख गठान रुई का उत्पादन किया गया जिसकी उत्पादकता

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अध्ययन शाला, इन्दौर (म.प्र.) भारत
* * विभागाध्यक्ष, प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

445 कि.ग्रा/प्रति हैक्टेयर रही, जबकि वर्ष 2006-2007 में 19 लाख गठान उत्पादित किया गया, जिसकी उत्पादकता 505 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर थी। इस प्रकार वर्ष 2010-2011 2 लाख गठान कमी हुई। जबकि पूर्व तालिका क्रं-1 के अनुसार कपास उत्पादन क्षेत्र में वृध्दि हुई जिसका मुख्य कारण म.प्र. के किसानों द्धारा पारम्परिक कृषि कार्य प्रणाली का उपयोग एवं आधुनिकता की कमी मानी जा सकती है। जहाँ तक गुजरात की बात की जाए तो सर्वाधिक 103 लाख गठान वर्ष 2010-2011 में उत्पादित की गई जिसकी उत्पादकता 665 कि.ग्रा प्रति हैक्टेयर रही। वही 2006-2007 में उत्पादन तो समान था, जबकि उत्पादकता 68 कि.ग्रा प्रति हैक्टेयर अधिक थी। इसके साथ ही महाराष्ट्र में 2007 की तुलना में वर्ष 2010-2011 में उत्पादन एवं उत्पादकता दोनों में वृध्दि हुई जिसका मुख्य कारण महाराष्ट्र सरकार की किसानों के हित में विभिन्न योजनाओं को लागू करना माना जा रहा है।

मध्यप्रदेश में पश्चिम् निमाड़ के बड़वानी जिले मे 'कपास इस जिले की सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसल है, जिसके उत्पादन के लिए बड़वानी जिला देश भर में प्रतिष्ठित है। यहाँ की अर्थव्यवस्था कृषि आधारित लघु उद्योगों पर आधारित है। जिले में रबी व खरीफ की दो फसलें उत्पादित की जाती है। जिले की खरीफ की फसलों में मुख्य रुप से कपास, ज्वार, मुंगफली व दालों की पैदावार होती है। रबी की मुख्य फसलें गेहूँ तथा चना है। कपास बड़वानी जिले की सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसल है, जिसकी खेती यहाँ की 26.12 प्रतिशत कृषि भूमि पर की जाती है। मात्रा की दृष्टि से मध्यप्रदेश में कपास का सर्वाधिक उत्पादन करने वाला यह जिला देश भर में विख्यात है। कपास के उत्पादन के सम्बंध में राज्य में जिले का लम्बे समय से एकाधिकार बना हुआ है।

आथिक सर्वे म.प्र. 2009-10 कपास बड़वानी जिले का प्रमुख एवं परम्परागत लघु उद्योग है। यह उद्योग स्वतंत्रता के पूर्व से जिले का गौरव बना हुआ है। जिलें में लघु उद्योगों की शुरुआत जिनिंग फैक्टरीज से हुई है, बाद में कपास की और भी अधिक पैदावार होने से इस उद्योग की अधिक से अधिक इकाइयाँ लगाई जाने लगी। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् सूती वस्त्र की निरन्तर बढ़ती माँग के कारण जिले में भी इस उद्योग का लगातार विस्तार होता चला गया।

स्वतंत्रता पूर्व कपास उद्योग बड़वानी नगर एवं इस रियासत के निकटस्थ ग्रामों विशेषकर अंजड़ एवं तलवाड़ा में ही अधिक केन्द्रित था, लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति पश्चात् अन्य स्थानों जैसे- सेंधवा, खेतिया, पानसेमल, आदि स्थानों पर भी इसकी इकाइयाँ स्थापित की जाने लगी। स्वतंत्रता से पहले जिलें में जिनिंग-प्रेसिंग उद्योग की भांति तेल उद्योग भी काफी विकसित अवस्था में था। कपास के साथ-साथ तिलहनों के बढ़ते उत्पादन के प्रति कृषकों का आकर्षण बढ़ता गया दूसरी ओर कपास की विपुल एवं बढ़ती पैदावार के कारण जिनिंग उद्योग को भी प्रोत्साहन मिला, जिससे कपास्या (काकड़ा) का उत्पादन निरन्तर बढ़ने लगा फलस्वरुप कपास्या (काकड़ा) से तेल निकालने वाली मिलें भी अधिक संख्या में स्थापित होने लगी।

वर्तमान में जिले में स्थापित सर्वाधिक उद्योग सेंधवा नगर में स्थापित हैं इसके पश्चात् क्रमश: अंजड़, बड़वानी, पानसेमल, खेतिया, राजपुर, ओझर, आदि नगरों का स्थान हैं। जिले के सेंधवा नगर के कपास उत्पादन का महत्व सम्पूर्ण एशिया में माना जाता था इस जिले में गत दो दशकों में जिनिंग, प्रेसिंग व ऑईल मिलों की लगभग 200 इकाइयाँ स्थापित की गई। इनमें से ज्यादातर इकाइयाँ सरकार की उपेक्षापूर्ण नीति के कारण बन्द हो गई हैं। इन इकाइयों के व्यवसायी (उद्यमी) जिले की सीमा से लगे महाराष्ट्र में पलायन कर गए हैं और वहीं अपना व्यवसाय स्थानान्तरित कर लिया है। इस कारण जिले से लगभग एक लाख श्रमिकों का रोजगार छीन गया है।

तालिका क्रमांक-3 (अगले पृष्ठ पर देखें)

विश्लेषण :- प्रस्तुत तालिका क्रमांक-4 के अनुसार सर्वाधिक खपत पंजाब द्धारा वर्ष 2008-2009 में 520173 कि.ग्रा हुई इसका प्रमुख कारण टेक्सटाईल मिलों की माँग की अधिकता माना जा रहा हैं। इसके साथ ही सबसे कम हरियाणा वर्ष 2005-2006 की अपेक्षा खपत घटकर 112916 कि.ग्रा रहा। इसके साथ ही गुजरात में वर्ष 2005-2006 में 244931 कि.ग्रा से घटकर 180483 कि.ग्रा रहा। जबकि पूर्व में किये गये अध्ययन के आधार पर इस क्षेत्र में कपास का उत्पादन बढ़ा है। इसके साथ ही महाराष्ट्र में भी वार्षिक खपत 2005-2006 की अपेक्षा 108 कि.ग्रा. की कमी रही, उपरोक्त अध्ययन के अनुसार म.प्र. में उत्पादकता कम एवं वस्त्रमिलों द्धारा कपास की खपत में पिछले 5 वर्षो में वृध्दि हुई हैं।

पड़ोसी राज्यों की तुलना में मध्यप्रदेश अत्यधिक टेक्स एवं अव्यवहारिक उद्योग नीति के कारण प्रदेश कपास एवं रूई उद्योग चोपट होने की कगार पर है पिछले 10 वर्षो में रूई का उत्पादन गुजरात में 300 एवं महाराष्ट्र 250 प्रतिशत बढा है, जबकि म.प्र. में 23 प्रतिशत गिरावट आई है। इसमें प्रदेश शासन को प्रतिवर्ष करोड़ों का नुकसान हो रहा है।

तालिका क्रमांक-4 (अगले पृष्ठ पर देखें)

विश्लेषण - तालिका क्रमांक-5 के अनुसार कपास विपणन प्रणाली में लगने वाले कर के सम्बन्ध में ज्ञात है कि, म.प्र. में अन्य राज्यों की तुलना में अधिक कर का भुगतान करना पड़ता है। म.प्र. में समस्त शुल्क एवं कर मिलाकर 5.20 पैसे चुकाना पड़ता है, जिसमें से 1 रु मण्डी शुल्क, 0.20 पैसे निराश्रित शुल्क, तथा 4 रु वैट कर के शामिल है। अन्य राज्यों की तुलना में म.प्र. 0.70 पैसे अधिक जबकि निराश्रित शुल्क एवं प्रवेश कर गुजरात एवं महाराष्ट्र में ये निंरक है। जिसके परिणाम स्वरुप कपास आधारित उद्योग इस क्षेत्र से पलायन की ओर अग्रसर हैं।

आजादी के 63 वर्षो बाद भी बड़वानी जिले में बेरोजगारों के लिए कोई सरकारी उपक्रम स्थापित नहीं किया गया है। यहाँ के स्थानीय छोटे-बड़े उद्यमियों के श्रम व धन से कपास उद्योग को राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की पहचान मिली थी। मध्यप्रदेश शासन की उपेक्षापूर्ण नीति के कारण इस उद्योग को इस क्षेत्र में भारी क्षति हुई। लगभग एक हजार करोड़ के इस व्यवसाय ने महाराष्ट्र व गुजरात की ओर रुख कर लिया है। यहाँ की अर्थव्यवस्था पर इस क्षेत्र से उद्यमिता पलायन के प्रभाव को स्पष्टत: देखा जा सकता है।

उद्योगों का प्रत्यक्ष सम्बन्ध रोजगार से होता है, इसलिए सरकार की नीति यह होती है, कि देश के हर क्षेत्र में औद्योगिक विकास हो। बड़वानी जिलें में कपास आधारित उद्योगों की स्थापना हुई, लेकिन दीर्घ अवधि तक इन उद्योगों की इकाइयाँ संचालित नहीं हो सकी। इस उद्योग से बड़वानी जिलें में एक लाख से अधिक श्रमिकों को रोजगार उपलब्ध था। उद्यमिता के पलायन का सर्वाधिक प्रभाव सेंधवा व अंजड़ नगर पर पड़ा है, सेंधवा से ही लगभग 50 हजार श्रमिकों का रोजगार छिन गया है तथा मजदूर पलायन हेतु मजबुर हुए हैं।

इस उद्योग से श्रमिक, मुनिम, अकाउंटेट, दलाल, आढ़तिया, तुलावटी, हम्माल, फीटर, बायलरमेन, तेलवाला, आदि पदों पर रोजगार प्राप्त व्यक्ति प्रभावित हुए हैं। इनमें लगभग 80 प्रतिशत व्यक्ति अनुसूचित जाति व जनजाति परिवारों के हैं। इस उद्योग से इंजीनियरिंग वर्क्स के व्यवसाय, स्थानीय निकायों की आय, किसानों पर, ट्रांसपोर्ट व्यवसाय, कन्सट्रक्शन

व्यवसाय, सरकारी राजस्व में कमी पशुपालन एवं डेयरी व्यवसाय, होटल व्यवसाय, कपड़ा व्यवसाय, इलेक्ट्रानिक्स, जनरल स्टोर्स, स्टेशनरी, अनाज, किराणा, कास्मेटिक्स, चिकित्सा, शिक्षा, बैंकिंग, बीमा, परिवहन, पान-दुकान, हेयर सेलून, फल-सब्जी की दुकान, ड्राइव्हर, टायर एवं ऑटो पार्टस, साबुन उद्योग आदि जैसे अनेकानेक व्यवसाय एवं उद्योग प्रभावित हुए हैं, जिससे कई लोगों के रोजगार छिन गये। जिस समय कपास उद्योग अपने चर्मोत्कर्ष पर था, तब ये सभी व्यवसाय लाभान्वित होकर मिलने वाले रोजगार से अनेक लोगों की जीविकापर्जन के साधन थे।

म.प्र. में बड़वानी जिले की कपास उत्पादन व कपास आधारित उद्यमिता के संदर्भ में पहले जैसी स्थिति नहीं रही है। इस हेतु कुछ सीमा तक सरकारी नीतियाँ जवाबदेह है।

उपसंहार - म.प्र. के बड़वानी जिले में बिजली, पानी, सड़क, आधारभूत संरचना में वृध्दि की आवश्यकता है। ताकि सूत उद्योग,टेक्सटाईल उद्योग को विकसित किया जा सके, इसके साथ ही आवश्यक है, कि उन्नत कृषि उपकरण, उन्नत तकनीक तथा न्यायसंगत समर्थन मूल्य की नीति को अपनाया जाए, ताकि उद्यम तथा मजदूरों के पलायन पर रोक लगाई जा सके तथा राजस्व में वृध्दि संभव हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. लेखक डॉ.एच.सी.शर्मा, भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रकाशक साहित्य भवन, आगरा।
2. लेखक डॉ.ओ.एस.श्रीवास्तव, मध्यप्रदेश का आर्थिक विकास प्रकाशक म.प्र हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल।
3. लेखक प्रेमनारायण श्रीवास्तव,भारतीय गजेटियर (पश्चिम निमाड.) प्रकाशक जिला गजेटियर विभाग म.प्र शासन भोपाल।

संपर्क सूत्र (कार्यालय)

1. जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, बड़वानी
2. जिला सांख्यिकी कार्यालय, बड़वानी
3. अधीक्षक भू-अभिलेख कार्यालय जिला -बड़वानी
4. मध्यप्रदेश शासन वाणिज्य, उद्योग ओर रोजगार विभाग
5. कृषि उपज मण्डी समिति कार्यालय
6. भारतीय कपास निगम नवी मुम्बई

वेबसाइट

1. http://www.Cotcrop.gov.in
2. www.msmeindore.nic.in

तालिका क्रमांक-2 राज्यवार कपास की उत्पादन और उत्पादकता

राज्य	2006-07		2007-2008		2008-2009		2009-2010		2010-2011	
	उत्पादन	उत्पादकता	उत्पादन	उत्पादकता	उत्पादन	उत्पादकता	उत्पादन	उत्पादकता	उत्पादन	उत्पादकता
पंजाब	24.00	672	20.00	563	17.50	565	13.00	432	16.00	513
हरियाणा	15.00	481	15.00	528	14.00	522	15.25	511	14.00	484
राजस्थान	9.00	437	9.00	415	7.50	422	12.00	459	9.00	457
गुजरात	103.0	733	110.00	772	90.00	650	98.00	635	103.00	665
महाराष्ट्र	50.00	274	62.00	330	62.00	335	65.75	319	82.00	355
मध्यप्रदेश	19.00	505	20.00	540	18.00	490	15.25	424	17.00	445

(उत्पादन 170 किलोग्राम प्रति गठान/उत्पादकता प्रति हेक्टेयर कि.ग्रा.)

स्त्रोत - भारतीय कपास निगम लिमिटेड

तालिका क्रमांक -3 राज्य स्तर पर कपास की कुल खपत टैक्सटाईल मिल द्वारा (किलोग्राम में)

राज्य	2005.06	2006.07	2007.08	2008.09
पंजाब	350948	417345	468881	520173
हरियाणा	137386	116909	125704	112916
राजस्थान	125517	134469	144008	139264
गुजरात	244931	256017	204494	180483
महाराष्ट्र	303287	330967	2238220	303179
मध्यप्रदेश	158809	176171	182813	202771

स्त्रोत- टैक्सटाईल कमीश्नर कार्यालय मुम्बई

(तालिका क्रमांक-4) टैक्स में अन्तर

टैक्स	मध्यप्रदेश	गुजरात	महाराष्ट्र
मंडी शुल्क	1	0.50	0.50
निराश्रित शुल्क	0.20	निरंक	निरंक
प्रवेश कर	निरंक	निरंक	निरंक
वेट	4	4	4
योग	**5.20**	**4.50**	**4.50**

स्त्रोत - जिला उद्योग कार्यालय बड़वानी (वर्ष 2011)

ग्रामीण गरीबी एवं निवारण

प्रेमलता एक्का *

प्रस्तावना – 21वीं सदी का सहस्त्राब्दि विकास लक्ष्य एवं विकसित देश बनने के सपने को साकार करने के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा भारत में निर्धनता है। गरीबी वह स्थिति है जिसमें समाज का एक भाग जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ रहता है।

योजना आयोग द्वारा गठित विशेषज्ञ दल की रिपोर्ट के अनुसार, 'ग्रामीण क्षेत्र में प्रतिव्यक्ति 2400 कैलोरी प्रतिदिन तथा ग्रामीण क्षेत्रों में प्रतिव्यक्ति 2100 कैलोरी के हिसाब से भी जिन्हें पोषण आहार नहीं मिल पाता उन्हें गरीबी रेखा से नीचे माना जाता है।'

देश में समय-समय पर गरीबी रेखा को निर्धारित करने वाले विभिन्न फॉर्मूलों के मध्य मतभिन्नता रही है। वी.एस.मिन्हास, ए,वैद्यनाथन, दाण्डेकर एवं रथ, पी.के.वर्द्धन, एम.एस. अहलूवालिया एवं वर्तमान में सुरेश तेन्दुलकर तथा डॉ. सी. रंगराजन आदि विशेषज्ञों/समितियों ने देश में गरीबी रेखा निर्धारण की अपनी-अपनी अनुशंसाए दी हैं।

शोध परिकल्पना – प्रस्तुत शोध पत्र देश में ग्रामीण गरीबी की स्थिति एवं उसके निवारण हेतु किये गयें उपायों की समीक्षा पर केन्द्रित है। स्थापित परिकल्पनाएं निम्न हैं –

1. गरीबी रेखा निर्धारण में स्थानीय परिस्थितियों की उपेक्षा की गई है।
2. देश में गरीबों की संख्या में वृद्धि लेकिन गरीबी दर में कमी हो रही है।
3. गरीबी निवारण के उपाय पर्याप्त एवं विस्तारित हैं।
4. गरीबी निवारक उपायों की जमीनी हकीकत सैद्धांतिक एवं व्यवहारिक दोनों दृष्टिकोणों से प्रभावी परिणाम देने में सक्षम हैं।
5. गरीबी निवारक के लिए वातावरण निर्माण में हम असफल हुए है।

उद्देश्य – देश में गरीबी की स्थिति एवं गरीबी निवारक के उपायों की समीक्षा करना।

शोध विधि – विश्लेषणात्मक शोध प्रविधि एवं द्वितीयक समंकों की सहायता।

गरीबी का अनुमान – आज तक सरकार ने देश में गरीबों की गिनती करने के अनेक प्रयास किये है जिनमें से मुख्य निम्नलिखित हैं –

1. सर्वप्रथम 1992 में आंठवी पंचवर्षीय योजना के समय प्रो. डी.टी. लकड़ावाला की अध्यक्षता में एक विशेष दल द्वारा वार्षिक आय को आधार मानते हुये रू.11000 वार्षिक प्रति परिवार निर्धनता रेखा के लिए तय किया गया। साथ ही इन्होंने सभी राज्यों एवं संघ प्रदेशों में अलग-अलग निर्धनता रेखा अर्थात् कुल 35 गरीबी रेखाएं निर्धारित की। देश में 1993-94 में निर्धनता रेखा से नीचे के लोगो की संख्या लकड़ावाला फार्मूलें के अनूसार 35.97 प्रतिशत आंकलित की गई थी।
2. इसी कड़ी में सुरेश तेन्दुलकर समिति ने निर्धनता रेखा के निर्धारण हेतु उपभोग व्यय को आधार माना। जिसके अनुसार 2004-05 में देश में 37 प्रतिशत जनसंख्या को निर्धनता रेखा से नीचे माना गया। अर्थात् रिपोर्ट के अनुसार भारत का हर तीसरा व्यक्ति गरीब है।
3. 2007 में केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा गठित एन.सी. सक्सेना के अनुसार देश में 50 प्रतिशत लोग यानि आधी आबादी निर्धन पायी गयी।

गरीबी निर्धारण से संबंधित विभिन्न आयोग एवं समितियों ने समय-समय पर अलग-अलग मापदण्डों का उपयोग किया। जिससे गरीबी मापने की कसौटी पेण्डुलम की भांति रिपोर्टों में झूलती रही है।

गरीबी की स्थिति – देश में निर्धनता अनुपात एवं निर्धनों की जनसंख्या के संदर्भ में ताजा आंकड़े योजना आयोग द्वारा 19 मार्च 2012 को जारी किये गयें हैं जिसमें प्रतिव्यक्ति मासिक उपभोग व्यय रू. 672.8/-प्रतिमाह ग्रामीण क्षेत्रों के लिए निर्धनता रेखा का निर्धारण किया गया। इस आधार पर 2009-10 में देश में ग्रामीण निर्धनता अनुपात 33.8 प्रतिशत एवं निर्धनों की संख्या 27.82 करोड़ है।

देश में प्रारंभ से लेकर अब तक ग्रामीण निर्धनता की स्थिति में व्यापक परिवर्तन होते रहें हैं जिसका प्रतिकूल प्रभाव लोगों के जीवन स्तर पर पड़ा है।

देश में ग्रामीण निर्धनता की स्थिति को निम्न सारिणी द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है –

देश में ग्रामीण निर्धनता

वर्ष	ग्रामीण निर्धनता(प्रतिशत में)
1956-57	54.1
1060-61	38.9
1977-78	51.2
1989-90	28.3
2004-05	42.0
2009-10	33.8
2011-12	25.00

स्त्रोत- प्रतियोगिता दर्पण, 'भारतीय अर्थव्यवस्था' - 2013

विश्व बैंक के अनुसार भारत के 70 प्रतिशत लोग 2 डॉलर (120 रू.) प्रतिदिन से भी कम पर अपना जीवन व्यतीत करते हैं।

UNDP के MPI (मल्टी डायमेंशियल इन्डेक्स) के आधार पर भारत के 8 राज्यों में ही निर्धनों की कुल संख्या अफ्रीका के 26 निर्धनतम देशों की संख्या से अधिक है। भारत के इन 8 राज्यों में कुल 42 करोड़ व्यक्ति निर्धन हैं जबकि अफ्रीका के 26 निर्धनतम देशों में कुल 41 करोड़ व्यक्ति ही निर्धन हैं।

गरीबी निवारण के कार्यक्रम – प्रथम पंचवर्षीय योजना से लेकर आज तक गरीबी निवारण हेतू अनेक बहुआयामी कार्यक्रम एवं गरीबी हटाओं जैसे नारों के साथ सरकार भरपूर कोशिश करती हुई दिखाई देती रही है। ग्रामीण रोजगार हेतु शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक सुरक्षा, इंदिरा आवास योजना, सूखा राहत क्षेत्र कार्यक्रम, स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना एवं उच्च आकांक्षापूर्ण मनरेगा जैसे कार्यक्रम चलाए जा रहें हैं। इनका असर भी दिखाई दे रहा है किंतु ये सभी उपाय तात्कालिक एवं अनुदान अवधारणा पर आधारित है। ग्रामीण गरीबी निवारण के लिए जब तक 'स्थाई संसाधन एवं

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अम्बिकापुर (छ.ग.) भारत

अधिकारिता अवलंबित' (अमृत्य सेन) उपाय नहीं किए जाएगे तब तक गरीबी रेखा, अमीरी रेखा के स्थूल आभा मंडल के मध्य एक क्षीण रेखा बनकर रह जाएगी। मेरा मानना है कि देश में 'गरीबी रेखा' कि निर्धारण के बजाय 'अमीरी रेखा' का निर्धारण एवं सीमांकन अधिक आवश्यक है क्यों कि देश प्राकृतिक संसाधन, आर्थिक संसाधन, मानवीय संसाधन एवं मानवीय सामाजिक सौहार्द से सम्पन्न है और एक सच्चाई यह भी है कि इस देश का मूल मालिक (हरिजन, आदिवासी) ही गरीब एवं अति गरीब हैं। तो ऐसा लगता है कि गरीबी हमारे संवैधानिक, न्यायिक, राजनैतिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक अतिरंजनाओं एवं विषमता की उपज है जिसे दूर करने के लिए इन्हीं घटकों पर विचार करना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ.रेणु त्रिपाठी, 'ग्रामीण विकास और निर्धनता उन्मूलन' ओमेगा पब्लिकेशन्स, दिल्ली 2011
2. वी.सी. सिन्हा, पुष्पा सिन्हा-'भारतीय आर्थिक नीति' मयूर पेपर बैक्स, नोएडा, 2008
3. रुद्र दत्त, के.पी. सुन्दरम, 'भारतीय अर्थव्यवस्था' एस.चंद एण्ड कं. लि., नई दिल्ली, 2005
4. आर्थिक समीक्षा- 2011-12
5. भारतीय अर्थव्यवस्था (विशेषांक), प्रतियोगिता दर्पण वार्षिकी, 2012

****

छत्तीसगढ़ राज्य में वन स्थिति एवं अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय वनोपज के उत्पादन एवं विपणन का अध्ययन

डॉ. के. के. शर्मा * राकेश कुमार गुप्ता * *

शोध सारांश– लघुवनोपज से जुड़े समस्त कार्यों के लिए शासन द्वारा छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज संघ (व्यापार एवं विकास सहकारी संघ मर्यादित) को नोडल एजेंसी नियुक्त किया गया है। लघुवनोपज संघ द्वारा 32 जिला यूनियनों तथा संग्राहकों को सदस्यता वाली 913 वनोपज प्राथमिक सहकारी समितियों के माध्यम से राष्ट्रीयकृत एवं अराष्ट्रीयकृत वनोपज के संग्रहण तथा विपणन का कार्य किया जा रहा है। छत्तीसगढ़ राज्य में व्यावसायिक महत्व की लगभग 79 अराष्ट्रीयकृत लघुवनोपज प्रजातियां तथा 7 राष्ट्रीयकृत लघु वनोपज प्रजातियां पायी जाती है। राज्य में अराष्ट्रीयकृत लघुवनोपज का वार्षिक व्यापार लगभग रू. 300 करोड़ तथा राष्ट्रीयतकृत वनोपज का लगभग रू. 225 करोड़ का है। इन अकाष्ठीय लघुवनोपजों का संग्रहण एवपं विक्रय ही वनांचल में रहने वाले आदिवासियों के जीविकोपार्जन का एक महत्वपूर्ण साधन है,परन्तु इन संग्राहकों को उनके श्रम का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है, जिसका मुख्य कारण उचित विधि द्वारा संग्रहण, प्रसंस्करण, मूल्यवर्धन तथा उपलब्ध बाजार एवं व्यापारियों के बारे में ज्ञान का अभाव है।

प्रस्तावना – "वृक्ष कबहूं नहिं फल भखें, नदी न पीवै नीर। परमारथ के कारनै, साधु न धरा शरीर।।"

भारत वर्ष प्राकृतिक संपदा की प्रचुरता हेतु विश्व में प्रसिद्ध रहा है। भारत के प्राकृतिक संसाधन, प्रकृति–प्रदत्त अमूल्य उपहार है, जिनका उपयोग मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए करता है, अत: यह मनुष्य की शांति और समृद्धि का आधार हैं प्राकृतिक संसाधन का रूप एवं विस्तार मनुष्य की प्रतिभा बुद्धि तथा परिश्रम पर आधारित है अत: आज पृथ्वी का संपूर्ण धरातल प्राकृतिक संसाधन कहा जा सकता है। पृथ्वी के संपूर्ण भू–दृश्यों जैसे– पर्वत, पठार, मैदान, नदियां, जलाशय, मिट्टी आदि हमारे प्राकृतिक संसाधन के आधार है और कृषीय उत्पाद, वन, जीव, जन्तु, खनिज आदि हमारे प्राकृतिक संसाधन है।

द स्टेट ऑफ द फारेस्ट रिपोर्ट– 2001 से जारी रिपोर्ट में बताया गया है कि कुल वन आच्छादित क्षेत्र 6,75,538 वर्ग कि.मी. हो गया है। जो देश के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का लगभग 20.55 प्रतिशत है। सन् 1952 में घोषित की गई **राष्ट्रीय वन नीति** में कहा गया कि "भारत के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का एक तिहाई हिस्सा वनाच्छादित होना चाहिए।" सन् 1988 की राष्ट्रीय वन नीति में पुन: इस लक्ष्य को दोहराया गया। पिछले 52 वर्षो में वनों के अंतर्गत अधिक से अधिक भूमि लाने के प्रयास किये गये है, किंतु इस दिशा में प्रगति संतोषजनक नहीं है।

इस दिशा में एक उल्लेखनीय तथ्य यह भी है कि देश में बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण इन वर्षो में 50 लाख हेक्टेयर से अधिक वन भूमि को कृषि कार्यो, वृहत जन परियोजनाओं, उद्योगों आदि के लिए उपयोग में लाया जा चुका है। यह प्रवृत्ति वन विकास की दृष्टि से अत्यधिक चिंतनीय है। भारत सरकार ने इस प्रवृत्ति पर रोक के लिए सन् 1980 में वन संरक्षण एक्ट पारित किया है।

हमारी सभ्यता और संस्कृति का वन वृक्षों से अत्यंत घनिष्ट सम्बंध है। वन हमारी सभ्यता और संस्कृति के जन्मदाता और हमारी आध्यात्मिक और भौतिक समृद्धि के उन्नायक है; कहा जाता है कि वृक्ष ही जल है, जल ही अन्न है और अन्न ही जीवन है। देश की आर्थिक समृद्धि के लिए भी वनों के संरक्षण की तीव्र आवश्यकता है। अतिवृष्टि, अकाल, बाढ़, रेगिस्तान आदि विषम समस्याओं पर काबू पाने के लिए वनों के संरक्षण के हर संभव प्रयास करने होगें। पर्यटन की दृष्टि से भी वनों का विकास एवं संरक्षण होने चाहिए क्योंकि इससे विदेशी मुद्राएं प्राप्त होती है। लघु वनोपज का उपयोग अनेक उद्योगों में कच्चे माल के रूप में किया जाता है इनसे अनेक लघु तथा कुटीर उद्योग चलाये जाते हैं वनों से पशुओं के लिए चारा भी मिलता है जिससे वन्य पशु–पक्षियों का पालन–पोषण होता है। यहां कुछ ऐसी वनस्पतियॉ तथा जड़ी–बूटियां वृक्षारोपण के साथ–साथ वृक्षों की रक्षा तथा उनकी उचित देखभाल के लिए चेतना उत्पन्न करने पर ही देश की खुशहाली एवं सुंदरता निर्भर है।

अध्ययन का उद्देश्य –

- छत्तीसगढ़ राज्य में वन स्थिति एवं लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन का अध्ययन करना।
- छत्तीसगढ़ राज्य में अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय वनोपज के उत्पादन एवं विपणन का अध्ययन करना।
- छत्तीसगढ़ राज्य की आर्थिक स्थिति अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय ति में अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय वनोपज के उत्पादन एवं विपणन संभावनाओं का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ –

- छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय वनोपज के विकास एवं विपणन की पद्धति असंतोषजनक है।
- छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय के विकास एवं विपणन की महत्वपूर्ण संभावनाएँ हैं।

अध्ययन की शोध प्रविधि –

- अध्ययन हेतु द्वितीयक आंकड़ों का सहारा लिया जा रहा हैं।
- यह अध्ययन छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज (व्यापार एवं विकास) सहकारी संघ मर्यादित शंकर नगर रायपुर से प्राप्त आंकड़ों पर आधारित हैं। इनसे प्राप्त आंकड़ों के आधार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जायेगा और निष्कर्ष प्राप्त किये जायेंगे।

अध्ययन की सीमाएँ –

- छत्तीसगढ़ राज्य की मुख्य अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन पर आधारित हैं।

* एसोसिएट प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डी.पी. विप्र. महाविद्यालय, बिलासपुर (छ. ग.) ** सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डॉ. सी.वी. रमन विश्व विद्यालय, कोटा बिलासपुर (छ. ग.) भारत

छत्तीसगढ़ राज्य की लघु वनोपज – छत्तीसगढ़ वास्तव में लघु वनोपज का गढ़ है। छत्तीसगढ़ सरकार ने वनोपजों के व्यापार में वनवासियों और ग्रामीणों को भागीदार बनाते हुए उन्हें ज्यादा से ज्यादा लाभ पहुंचाने की रणनीति अपनाई हैं। लघु वनोपज संग्राहकों की आर्थिक, सामाजिक समस्याओं के निदान के लिए जितना अधिक कार्य छत्तीसगढ़ सरकार कर रही है उतना कोई और राज्य सरकार नहीं कर रही है। अराष्ट्रीयकृत वनोपज के कारोबार को जितना अधिक बाजार से जोड़ा जाएगा, उतना अधिक लाभ संग्राहकों को होगा।

छत्तीसगढ़ राज्य के विकास का प्रयास बैगर वनवासी के विकास के सोचना कोरी कल्पना होगी। यदि हम सोचे कि आखिर किस प्रकार से वनों के समीप रहने वालों की आयु वृद्धि की जावें, तो एक सशक्त विकल्प लघु वनोपज से जुड़े कार्य है। इस हेतु लघु वनोपज का विनाशविहीन विदोहन, संग्रहण के उपरांत सही प्राथमिक उपचार तथा प्रसंस्करण किया जाना अत्यन्त आवश्यक है। जब तक लघु वनोपज का प्रसंस्करण नहीं किया जाता, तब तक संग्राहकों को उनकी वनोपज के सही मूल्य दिलाने का सोच क्रियान्वित नहीं किया जा सकता। प्रत्येक जिला यूनियन में लघु वनोपज आधारित एक बड़ी प्रसंस्करण इकाई तथा अनेक छोटी इकाइयों की स्थापना की जानी चाहिये।

अकाष्ठीय वनोपज संग्राहकों को उचित मूल्य दिलाने हेतु शासन द्वारा छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज संघ की स्थापना की गई है। राज्य लघु वनोपज संघ द्वारा राष्ट्रीयकृत लघु वनोपज जैसे की तेंदू पत्ता, साल बीज, हर्रा, गोंद वर्ग 1 एवं 2 को प्राथमिक वनोपज समितियों के माध्यम से संग्रहण कर, निविदा/नीलाम के द्वारा विक्रय किया जाता है। इसके अतिरिक्त शेष लघु वनोपज अराष्ट्रीयकृत होने के कारण,ग्रामीण बिना किसी रायल्टी के संग्रहण कर स्थानीय बाजार में विक्रय करने हेतु स्वतंत्र है। अराष्ट्रीयकृत वनोपज को वनौषधीय एवं गैर–वनौषधीय लघु वनोपजों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है ।

छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय के उत्पादन एवं विपणन की स्थिति – लघुवनोपज से जुड़े समस्त कार्यों के लिए शासन द्वारा छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज संघ (व्यापार एवं विकास सहकारी संघ मर्यादित) को नोडल एजेंसी नियुक्त किया गया है। लघुवनोपज संघ द्वारा 32 जिला यूनियनों तथा संग्राहकों को सदस्यता वाली 913 वनोपज प्राथमिक सहकारी समितियों के माध्यम से राष्ट्रीयकृत एवं अराष्ट्रीयकृत वनोपज के संग्रहण तथा विपणन का कार्य किया जा रहा है। छत्तीसगढ़ राज्य में व्यावसायिक महत्व की लगभग 79 अराष्ट्रीयकृत लघुवनोपज प्रजातियां तथा 7 राष्ट्रीयकृत लघु वनोपज प्रजातियां पायी जाती है। राज्य में अराष्ट्रीयकृत लघुवनोपज का वार्षिक व्यापार लगभग रू. 300 करोड़ तथा राष्ट्रीयकृत वनोपज का लगभग रू. 225 करोड़ का है। इन अकाष्ठीय लघुवनोपजों का संग्रहण एवं विक्रय ही वनांचल में रहने वाले आदिवासियों के जीविकोपार्जन का एक महत्वपूर्ण साधन है,परन्तु इन संग्राहकों को उनके श्रम का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है, जिसका मुख्य कारण उचित विधि द्वारा संग्रहण, प्रसंस्करण, मूल्यवर्धन तथा उपलब्ध बाजार एवं व्यापारियों के बारे में ज्ञान का अभाव है। इन बातों को ध्यान में रखते हुए एवं संग्राहकों के हित में इस शोध के माध्यम से संग्राहको को राज्य की महत्वपूर्ण व्यापारिक अकाष्ठीय प्रजातियों, उनके उत्पादन क्षेत्र, दर, बाजार तथा व्यापारी आदि के बारे में एक संकलित जानकारी देने का प्रयास किया गया है। व्यापारियों को भी उनके हित में सही बाजार एवं प्रसंस्करण इकाईयों के बारे में जानकारी उपलब्ध हो सकेगी जिससे कि वे उत्पाद का विक्रय उनकी मांग के अनुरूप कर सकेंगे। छत्तीसगढ़ शासन द्वारा राज्य लघु वनोपज संघ (व्यापार एवं विकास सहकारी संघ मर्यादित) मार्केट सर्वे साफ्टवेयर भी तैयार किया गया है जिसे संघ की वेब साइट www.cgmfpfed.org के जरिए उपयोग में लाया जा सकता हैं।

इस शोध के माध्यम से छत्तीसगढ़ राज्य में लघु वनोपज के व्यापार को बढ़ावा देने तथा संग्राहको को उचित मूल्य दिलाने की दिशा में एक प्रयास है। आशा है कि इस शोध के माध्यम से संग्राहकों, प्राथमिक वनोपज सहकारी समितियों, वन समितियों, व्यापारियों तथा उद्योगपतियों को उचित दिशा निर्देश मिल सके।

इस शोध को तैयार करने में छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज संघ, रायपुर द्वारा संपूर्ण राज्य के बाजारों के सर्वेक्षण को आधार बनाकर तथा इन बाजारों में अकाष्ठीय वनोपज का व्यापार करने वाले व्यापारियों से जानकारी एकत्र की गई एवं इन क्षेत्रों में स्थापित प्रसंस्करण इकाईयों से भी जानकारियाँ एकत्र की गई।

गैर–औषधीय लघुवनोपज की मात्रा एवं मूल्य – राज्य के वन क्षेत्रों से संग्रहित की जाने वाली मुख्य गैर–औषधीय अराष्ट्रीयकृत लघुवनोपज, प्रजातिवार उपयोग किये जाने वाले भाग, उनका वार्षिक अनुमानित मात्रा एवं अनुमानित मूल्य राज्य में विक्रय की जाने वाली गैर–औषधीय अराष्ट्रीयकृत लघुवनोपज प्रजातियों में कुछ प्रजातियों की उपलब्धता अधिक एवं शेष की उपलब्धता कम है। अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय लघुवनोपज की मात्रा परिवहन की जानकारी एवं बाजार सर्वेक्षण अध्ययन पर आधारित है। वनोपज की उपलब्धता तथा छत्तीसगढ़ के व्यापारियों के जानकारी के आधार पर देश के अन्य राज्यों के व्यापारी छत्तीसगढ़ के व्यापारियों से सीधे संपर्क कर सकते हैं। राज्य की महत्वपूर्ण अराष्ट्रीयकृत गैर–औषधीय लघुवनोपज तालिका में दर्शायी गयी हैं।

तालिका (अन्तिम पृष्ठ पर देखें)

निष्कर्ष एवं सुझाव – प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध " छत्तीसगढ़ राज्य की लघु वनोपज संपदा के उत्पादन एवं विपणन की दशा एवं दिशाएँ" मूलत: छत्तीसगढ़ राज्य की विपुल वन संपदा पर अवलंबित रहा । छत्तीसगढ़ राज्य में मुख्य वनोपज और गौण वनोपज दोनों बहुतायत में उपलब्ध है । प्रस्तुत लघु शोध में गौण या लघु वनोपज का ही अध्ययन किया गया है । लघु वनोपज को राष्ट्रीयकृत और अराष्ट्रीयकृत लघु वनोपज में वर्गीकृत किया जाता है । प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध में अराष्ट्रीयकृत लघु वनोपज का विस्तारपूर्वक अध्ययन किया गया है । अराष्ट्रीयकृत लघु वनोपज को औषधीय और गैर औषधीय लघु वनोपज के रूप में वर्गीकृत किया गया है ।

प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध के अंतर्गत यह पाया गया कि अराष्ट्रीयकृत वनोपज पर कोई रायल्टी नहीं होने के कारण वनवासी आदिवासी इसका संग्रहण करके स्थानीय हाट बजारो में छोटे व्यापारियों को विक्रय कर देते है। अनुसंधान के द्वारा यह पाया गया कि ये छोटे व्यापारी राज्य की इन लघु वनोपज को मांग के अनुरूप अपना कमीशन या अधिक मूल्य पर बाजारों पर विक्रय करते है । बड़े व्यापारियों द्वारा संग्रहित वनोपज को ग्रडिंग करते हुए देश की विभिन्न मंडियों में या लघु वनोपज पर आधारित उद्योगों को विक्रय कर देते है । प्रत्येक वर्ष छत्तीसगढ़ राज्य में संग्रहित किये जाने वाले लघु वनोपज की अधिकांश मात्रा अन्य राज्यों की मंडियों या उद्योगो को भेज दी जाती है । अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि छत्तीसगढ़ राज्य में लघु वनोपज पर आधारित उद्योगो का विकास अपर्याप्त है साथ ही औषधीय व

गैर औषधीय लघु वनोपज की वार्षिक उत्पादन क्षमता को देखते हुए यह बात स्पष्ट होती है कि छत्तीसगढ़ राज्य में इनका संपोष्य विकास करते हुए संबंधित उद्योगो के विकास की महत्वपूर्ण संभावनाएँ है।

प्रस्तुत अध्ययन के दौरान शोधार्थी ने पाया कि अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय लघु वनोपज के उत्पादन में जो कि परिवहन की जानकारी अनुज्ञा पत्र एवं बाजार सर्वे के अध्ययन पर आधारित है कुछ प्रजातियों की उपलब्धता अधिक एवं शेष की उपलब्धता कम है। अध्ययन से स्पष्ट है कि छत्तीसगढ़ राज्य की महत्वपूर्ण गैर औषधीय लघु वनोपज का वार्षिक अनुमानित उत्पादन पांच लाख पचास हजार क्विंटल से अधिक होता है।

छत्तीसगढ़ राज्य की महत्वपूर्ण गैर औषधीय लघु वनोपज से वार्षिक अनुमानित मूल्य छै: हजार चार सौ लाख रूपये से अधिक विपणन होता है।

प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध का अध्ययन का सार यह है कि छत्तीसगढ़ राज्य वनोपज से विपुल राज्य है। छत्तीसगढ़ राज्य सरकार की आय का एक महत्वपूर्ण हिस्सा लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन से प्राप्त होता है। सारत: यह बात स्पष्ट है कि प्रकृति द्वारा प्रदत्त इस अनमोल उपहार को सम्पोषणीय विकास दीर्घकाल तक वन की सुरम्य को अक्षुष्ण बनाए रखेगा साथ ही देश की विरासत की हरितिमा बनाये रखकर सर्वदा धन-वन की वर्षा करेगा।

शोधार्थी ने अध्ययन के दौरान यह पाया कि छत्तीसगढ़ राज्य में वन्य स्थिति संतुलन के आधार पर उपयुक्त है। वर्तमान में छत्तीसगढ़ राज्य में लघु वनोपज का अधिक मात्रा में उत्पादन हो रहा है किन्तु राज्य में लघु वनोपज पर आधारित उद्योगों का नितान्त अभाव है यदि छत्तीसगढ़ राज्य सरकार इस क्षेत्र पर अपना ध्यान केन्द्रित करे तो न केवल प्राकृतिक हरियाली बढ़ेगी साथ ही राज्य में वित्त के विविध स्त्रोत उपलब्ध हो जायेंगे। शोधार्थी के अध्ययन के अनुसार यदि वनोपज पर आधारित उद्योगों में ग्रामीण क्षेत्रो के रहवासी को सहभागी बनाया जाए तो न केवल उन वनवासियों को रोजगार के अवसर प्राप्त होंगे अपितु वनोपज संग्रहण में उनकी कुशलता भी निखरकर सामने आयेगी।

शोधार्थी ने अपने लघु शोध प्रबंध में दो परिकल्पनाओं को आधार बना कर अध्ययन किया है :

1. प्रथम परिकल्पना इस बात पर अवलंबित थी कि छत्तीसगढ़ राज्य की लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन की पद्धति असंतोषजनक है। शोधार्थी ने अध्ययन के दौरान पाया कि वास्तव में छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज के उत्पादन में धनी राज्य है किन्तु वनोपज उत्पादन की संपूर्ण मात्रा का विदोहन करने में छत्तीसगढ़ राज्य को और बेहतर उपाय करने होंगे। छत्तीसगढ़ राज्य, लघु वनोपज के संग्राहक वनवासी के लिए सतही स्तर पर वनोपज संग्रहण के द्वार खोल दे जिससे बिचौलियों द्वारा इनका अनुचित संग्रहण एवं शोषण न हो सके। बिचौलियों की समाप्ति हेतु छत्तीसगढ़ राज्य को महत्वपूर्ण एवं कठोर कदम उठाने होंगे एवं छत्तीसगढ़ राज्य जब वनोपज से प्राप्त समस्त आय प्राप्त करेगी तब उसका आर्थिक स्तर लगातार सुधरता जाएगा। इस प्रकार प्रथम परिकल्पना सत्य सिद्ध हुई है कि छत्तीसगढ़ राज्य में लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन की पद्धति संतोषजनक है।

2. शोधार्थी की द्वितीय परिकल्पना छत्तीसगढ़ राज्य की लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन की महत्वपूर्ण संभावनाएँ है। अध्ययन से यह स्पष्ट है कि छत्तीसगढ़ एक वन विपुलता वाला राज्य है। छत्तीसगढ़ में लघु वनोपज का उत्पादन बड़े पैमाने पर होता है साथ ही वह क्षेत्र जो मिश्रित एवं अवर्गीकृत वन है यदि वहां औषधीय एवं गैर औषधीय वनों का उत्पादन करके उचित देखभाल की व्यवस्था की जाए। वन विभाग का विस्तार करके वनवासी को रोजगार देते हुए उत्पादन की संभावनाओं में संवृद्धि लायी जा सकती है। लघु वनोपज के उत्पादन के लिए यह अनुकूल क्षेत्र है जहां विविध प्रकार की जड़ी बूटियां न केवल छत्तीसगढ़ राज्य के रहवासी को चिरयौवन स्वस्थ्य एवं दीर्घायु बना सकता है यह देश-दुनिया के नश्वरता में कुछ सीमा तक प्रतिबंध लगाने में सहायक होगा।

शोधार्थी ने अध्ययन के दौरान पाया कि लघु वनोपज के विपणन की व्यवस्था शासन द्वारा वनवासी स्तर तक हो जाए। प्रत्येक प्रकार की औषधीय व गैर औषधीय लघु वनोपज मार्ट के अंतर्गत हो जिससे इन लघु वनोपजों का प्रसंस्करण एवं पैकेजिंग सेन्टर, संजीवनी विक्रय केन्द्र के माध्यम से हो। संबंधित वन वृत्त के अंतर्गत विभिन्न जिला यूनियनों के माध्यम से लघु वनोपजों का संग्रहण एवं प्रसंस्करण कर उत्पाद भंडारित किए जायेंगे जिससे विपणन की मात्रा एवं गुणवत्ता की संवृद्धि की संभावनाएँ है। इस प्रकार अध्ययन से स्पष्ट है कि शोधार्थी की द्वितीय परिकल्पना सत्य है कि छत्तीसगढ़ राज्य में लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन की महत्वपूर्ण संभावनाएँ है।

शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत अध्ययन छत्तीसगढ़ राज्य सरकार एवं विद्वान नीति निर्माताओं के लिए यदि आंशिक पूर्ति भी कर पाती है तो यह छत्तीसगढ़ राज्य के लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन की दशा में सुधार की एक पहल होगी साथ ही लघु वनोपज के विपणन हेतु उपयुक्त बाजार का चयन कर इसकी सही दिशा को निर्देशित करने में सफल होगी, यदि ऐसा होता है तो शोधार्थी के अध्ययन की यही सार्थकता होगी और तभी शोधार्थी द्वारा किये गये अध्ययन की उपादेयता सिद्ध होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

1. खन्ना लक्ष्मण सिंह, वन उद्योग
2. डी.एन., वन आदिवासी एवं पर्यावरण
3. सिन्हा वी.सी.,श्रम अर्थव्यवस्था
4. डॉ. जथार एवं बैरी, श्रम अर्थशास्त्र
5. सक्सेना, आर.सी.एवं मिश्र पी.एल., भारतीय अर्थशास्त्र
6. गुप्ता के.एल., भारतीय अर्थव्यव्यथा
7. कुमार प्रमिला, म.प्र. के प्रमुख आदिवासी
8. शुक्ला हीरालाल, छत्तीसगढ़ ज्ञानकोष
9. शर्मा डॉ ब्रम्हदेव - आदिवासी विकास एवं सैद्धांतिक विवेचन, म.प्र. हिन्दी अकादमी, 1972 भोपाल

CHHATTISGARH GOVERNMENT, RAIPUR

1. Chhattisgarh in chart & Graphs; 2001 and 2011,Directorate of Economic &Statistical, Chhattisgarh. Raipur
2. छत्तीसगढ़ राज्य के जिला स्तरीय सामाजिक विकास संकेतक ;2001 एवं 2011; आर्थिक एवं सांख्यिकीय संचालनालय, रायपुर.
3. छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज (व्यापार एवं विकास) सहकारी संघ मर्यादित, रायपुर 2002-2006.
4. छत्तीसगढ़ ;नये राज्य ; नयी नीतियाँ, जनसंपर्क प्रकाशन ;2001.

तालिका .

छत्तीसगढ़ राज्य की महत्पूर्ण गैर-औषधीय लघुवनोपज

क्र.	प्रजाति	उपयोगी भाग	मात्रा(क्विं में)	दर(प्रति क्विं)	राशि(लाख में)
1	महुआ	बीज	302,000.00	800.00	2,416.00
2	इमली	फल	51,000.00	500.00	255.00
3	कुसुम	लाख	13,200.00	10,000.00	1,320.00
4	चिरौंजी	फल	51,700.00	2,200.00	1,137.40
5	पलाश	लाख	22,050.00	3,500.00	771.75
6	माहुल	पत्तियां	52,600.00	400.00	210.40
7	करंज	बीज	26,500.00	400.00	172.25
8	कुसुम	बीज	27,000.00	400.00	108.00
9	बैचांदी	कंद	2,700.00	400.00	10.80
10	तिखुर	कंद	1,900.00	400.00	7.60
योग			**550650.00**		**6,409.20**

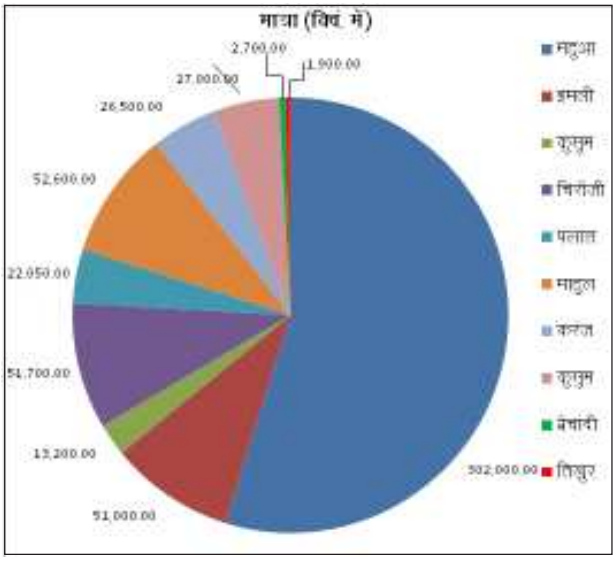

छत्तीसगढ़ राज्य की महत्पूर्ण गैर-औषधीय लघुवनोपज

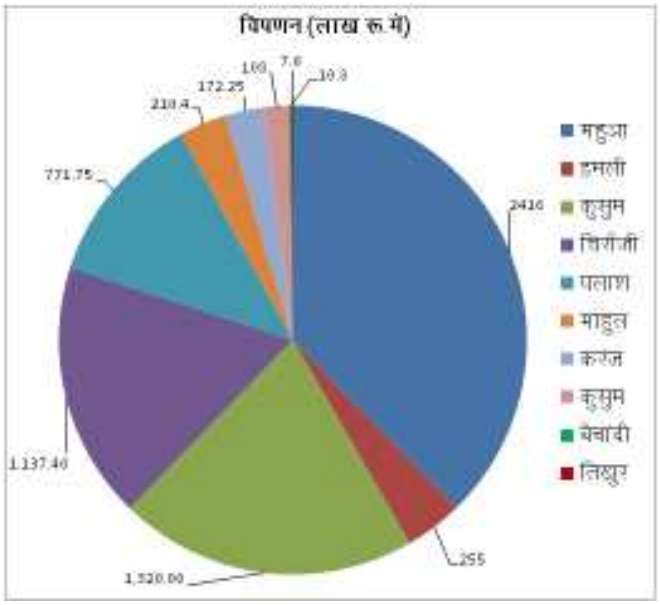

छत्तीसगढ़ राज्य की महत्पूर्ण गैर-औषधीय लघुवनोपज

Women Empowerment Through NGOs In Rural Areas (A Case Study Of Kota Block Of Bilaspur District)

Dr. G.S. Dhurwe *

Abstract - NGOs play a significant role in rural development. These NGOs by and large stimulate civic consciousness, mobilize people and ensure their effective participation and raise their own and out side resources to transact developmental programmes for the weaker segments. The services of the NGOs are provided through the grassroots level people's organizations like Youth Clubs, MahilaMandal, Small and Marginal Farmers Associations, Agricultural Labour Unions, Co-Operative Societies, Panchayat Bodies, Rural Artisans Quid's and Other Organizations of the weaker sections and backward classes.

Introduction - The women's empowerment as a development goal is put into perspective. It is emphasized that empowerment is beyond mere poverty reduction; it should be seen as both a process and outcome of women's agency primarily, in challenging and changing, over time, social structures that perpetuate gender inequality. Women's empowerment is, therefore, argued as the reversal from development for women to women with development. In this study, this reversal is operationalized using the sustainable livelihood approach (SLA) as a lens within which gender reconfiguration can be articulated in a day-to-day social interaction. The use of SLA as a lens within which to explore the link between microfinance and empowerment is because livelihood processes precisely reflecting how gender relations are reproduced in making and deriving meanings from a living. Besides, the importance of livelihood assets and strategies in this process makes them not only centers of human functioning and being, but as highly contested and gendered entities.

It has been pointed out NGOs play a significant role in rural development. These NGOs by and large stimulate civic consciousness, mobilize people and ensure their effective participation and raise their own and out side resources to transact developmental programmes for the weaker segments. The services of the NGOs are provided through the grassroots level people's organizations like Youth Clubs, MahilaMandal, Small and Marginal Farmers Associations, Agricultural Labour Unions, Co-operative Societies, Panchayat Bodies, Rural Artisans Quid's and Other Organizations of the weaker sections and backward classes.

Empowerment is a process having personal, economic, social and political dimensions with personal empowerment being the core of the empowerment process. Political empowerment will not succeed in the absence of economic empowerment. The Scheme of Micro-financing through SHGs create empowerment promoting conditons for women to move from positions of marginalization within household decision making process and exclusion within community, to one of greater centrality, inclusion of voice.

The Governments in developing countries therefore must take effective steps to enroll the members of SHGs in the Schemes of open schooling or any other distance mode to impart education. Although it is also true that economic empowerment alone does not always lead to reversal in gender relationship.

NGOs and Women Empowerment -NGOs can frame many activities for women empowerment. Historians of feminism have long back noted that nineteenth century philanthropy offered a pathway for women in western societies to move from the private to the public sphere. Often denied access political participation and barred from donors, volunteers and organizational entrepreneurs nonetheless left their imprint on national legislation and institutions in a variety of countries. Through, their philanthropic contributions of time, money and possessions carved out a public niche for themselves in diverse religions, political and economic regimes.

The NGOs enable people to gain power and authority so that they access and control over resources. They directly work on the question of community organization and empowerment through educational interventions. These NGOs have begun to address a variety of development concerns like drinking water, economic activities, literacy, adult and non-formal education and social issues against poverty, injustice etc. In fact they try to enhance powerless to become powerful. The adopt macro approach to promote people's solidarity and cohesiveness. The attempt has been to influence government policy in favour of the poor and downtrodden. NGOs play the role of advocacy and facilitate people's movement.

Objectives-

1. To assess the socio economic status of target groups.
2. To assess the impact of micro-credit on employment and income generation.

Methodology - In this paper an attempt is made to analyse the impact of NGO's programmes on women empowerment with the help of the data collected from the NGO area of

* Asst. Professor (Political Science) Govt. College, Pathariya, Mungeli (C.G) INDIA

serveshawari in Chhattisgarh State. Primary data were collected from women beneficiaries in three villages. These villages are **namely** Kargikalan (45beneficaries), Dhanras (45 beneficiaries) and Gobripat (20 beneficiaries). The total 110 beneficiaries were selected from all the selected villages. The list was prepared on basis of employment beneficiaries of SHGs under NGOs. Impact is seen in terms of improved livelihood conditions in borrowing, savings, employment generation, and income of the household.

NGOs and Micro Finance - To bridge the gap between demand and supply of funds in the lower rungs of the rural economy, the formal sector took the initiative to develop a supplementary credit delivery mechanism by encouraging institutional arrangements outside the financial system. With the launching of NABARD's pilot scheme, micro finance as the development buzzword of the nineteen to cure the illness of rural poverty gained visibility in the Indian development.

Micro finance is being referred to as small scale financial services provided to people who work in agriculture and allied sectors; operate small and micro enterprises; provide services; work for wage and commission and other individuals and groups at the local levels of developing countries under rural areas. Indian experience in micro finance is less well known internationally than that of Bangaldesh, Indonesia or some countries in Africa and Latin America, but the SHGs linkage concept might be considered as the uniquely Indian contribution to the field.

With the SHGs linkage, programme was introduced in 1992, the NGOs sector has been recognized as a crucial partner. Recognizing the strengths of the NGOs in organizing the community and the potential in savings and credit programmes (both under the linkage programme and other credit delivery innovations). NABARD has started associating with them increasingly mainly, their services in the area of capacity building, training and promotion of SHGs and to a limited extent as financial intermediaries also (Sheokand,2000).

NGOs has trained and developed the SHGs to a level where it can do business on equal terms with a bank. Social and communication barriers often make it necessary for the group to the bank. Large number of NGOs has responded to this new 'market'.Since,it is a powerful method of empowering and making them independent of future assistance.

According to NABARD data, by the end of the 1990s about 800 NGOs were participating in its SHGs Bank linkage programme (Shunmugam, 2000). Several others have developed micro finance function either with assistance from international donors or exclusively on the strength of individual savings. The loans are also provided to NGOs for on lending to the self-help group members.

serveshwari has made pioneering efforts in this region, in community organization and monitoring the self-help group, in which rural women are largely involved. Women participation in the savings and the credit movement has paved the way for the speedy socio-economic development of rural women.

Serveshawari Organizes SHGs with following objectives -

- To include self-help activities among women folk.
- To develop collective leadership.
- To enhance effective women's participation in their development programmes.
- To promote savings habits and develop an indigenous banking systems within the village among the women folk and
- To federate these SHGs less than one umbrella or apex body not only for credit purpose but also to promote women's solidarity and eventually women's empowerment.

Purpose of Borrowings - In order to meet unforeseen expenditure of family, taking loan is common. In the case of rural women in the present study who are members of SHGs, (who are economically weaker), loan becomes inevitable in order to provide some facility to the family members. The purposes of borrowing are presented in Table-1 .

Table-1 : Purpose of Borrowings

Purpose	Frequency	Percentage
Agriculture	18	16.36
Petty Business	19	17.27
Medical Facility	10	9.09
Children's	08	7.27
Education		
To Clear old	12	10.90
Debts		
Household	43	39.09
Expenditure		
Total	**110**	**100**

Source: Field Survey

Above table indicate that 16.36 percent of the respondents have borrowed for up agriculture have borrowed for up agriculture related activities such as, seed, fertilizers, pesticides etc., and 17.27 percent of the respondents have borrowed to take up petty business such as small kirana shops, poultry, tailoring, cloth business, hotel etc., which brings additional income to the family. The SHGs are meeting different needs of the respondents. The inability of institutions to deal with the credit requirements of the poor effectively has led to the emergency of micro finance or micro credit system as an alternative credit system to the poor. Usually credit institutions provide finance for productive purposes but sometime poor people need money for consumption or for emergency purpose. In this study also majority of the respondents have taken loan to meet out household expenditure (39%) only 7% of the respondents have borrowed to meet the expenses related to their children's education indicating that Common/General admission by Government school in the area/neighbouring area, very few spend on educational needs of their children. About 72% of the respondents stated to have borrowed for purchase of agricultural input, small business and household expenditure.

Amount Borrowed - The information was given about the borrowing amount of loan through the SHGs.

Table-2 shows amount of loan received by the respondents. It increases with increasing amount of borrowed loan. Basically, the respondents who are poor borrow large amount with low rate of interest as compared to other private money lenders in rural areas. The respondents are stated that they conscious that, the interest they pay goes to their own group and shared by all the members of group.

Table-2 : Amount of Loan From SHG

Amount	Frequency	Percentage
Rs.2,000 to 4,000	36	32.72
Rs.4,001 to 6,000	39	35.45
Rs.6,001 and Above	35	31.81
Total	110	100

Source: Field Survey

Savings - The basic objective of SHGs is to develop saving habits among the poor sections of the society, particularly among rural women, which in turn reduces dependency on financial institutions and develops self-reliance. Hence, an attempt has been made to collect information about savings of members. The data was presented in table-3.

Table-3 : Monthly Savings of Respondents

Saving Amount (Rs. Per Month)	Frequency	Percentage
Rs. 30 to 40	25	22.72
Rs. 41 to 60	28	25.45
Rs.61 to 80	36	32.72
Rs.81 to 100	21	19.09
Total	**110**	**100**

Source: Field Survey

Above table clearly shows that a significant number 36 (32.72 percent) respondents have save Rs. 61 to 80 and 28 (25.45 percent) respondents have save Rs.41 to 60. It shows that SHG has developed the saving habit among the rural women with their limited income. Moreover, the benefits of self-help groups are based on co-operation rather than competition. It follows the real principle of "contribute and save according to your ability and extract according to your need" Regular savings by each member is an indication of the members commitment to the group and to personal growth and progress. There is an aphorism in English that the little drops of water makes a mighty ocean and this has made true among SHGs.

The source of saving is an important fact. The respondents have sources of saving as shown in Table-4.

Table-4 : Source of Saving of the Respondents

Source of Saving	Frequency	Percentage
Wage	29	26.36
Tailoring	10	9.09
Petty Business	17	15.45
Dairy	16	14.54
Craft Work	30	27.27
Others	08	7.27

Source: Field Survey

Above table indicates that the major source of saving in craft (27%) and their employment wages (26%) followed by dairying and petty business(15% each). The saving is mainly from their earnings.

Employment Generation -No doubt any financial assistance, if utilized properly, generates gainful employment opportunities in the rural economy. It was observed in the field survey that some members of the sample group also had gainful employment opportunities as shown in table-5.

Table-5 : Impact on Employment Generation

Financing Activity	Respondent (Number)	Total Employment Generated	Average Employment Generated (Per annum)
Agriculture	18	2,304	128
Dairying	04	400	100
Tailoring	10	2,200	220
Cloth Business	03	870	290
Poultry	04	480	120
Hotel Business	02	600	300
Kirana Shops	03	840	280
Total	**44**	**7,694**	**175**

Source: Field Survey

The data in above table-5 shows that on an average, the loans received generated 175 person days of employment per household. In all, 7,694 person days of employment was generated for 44 household members. It was noticed that non-farm activities generated higher number of person days of employment in the sample villages. Hotel business and cloth business generated 300 and 290 person days of employment per annum. On the contrary, agriculture could generate 128 person days of employment on as average per household followed by 120 person days of employment by poultry and 100 person days by dairying. This clearly indicated that the loans provided by SHGs are productive and efficient in generation of employment to rural farm and non-farm workers in general.

Generation of Income -There is a symbolic relationship between generation of income and employment opportunities and the potential of employment can be judged by the amount of income generated in any activity. Table-6 explain the impact of loans provided on generation of income.

Table-6 : Impact on Generation of Income

Financing Activity	Respondent	Total Income Generated (In Rs.)	Average Income Generated (In Rs.)
Agriculture	18	2,16,000	12,000
Dairying	04	20,000	5,000
Tailoring	10	66,000	6,000
Cloth Business	03	18,000	6,000
Poultry	04	24,000	6,000
Hotel Business	02	10,000	5,000
Kirana Shops	03	18,000	6,000
Total	**44**	**3,72,000**	**8,455**

Source: Field Survey

It seems the loans provided by SHGs had a favourable impact on generation, of income in the selected village. On an average, each selected family could get an income of Rs.8,455 which is sufficient to bring the poor families above

the poverty line. No doubt the income generation varies from activity to activity and each activity has its own capacity to generate income. The data also reveals this fact income generated in the selected activities shows that it varies from Rs. 5,000 per annum in the case of dairying and hotel business, Rs. 12,000 in the case of agriculture. Highest amount of income generation is seen from agriculture, tailoring proved an efficient activity as it generated an average income of Rs. 6,600 per household, followed by Rs.6,000 in cloth business, poultry and kirana shops.

Conclusion - The financial assistance provided the SHGs for the development of social-economic status are found to have reached the economically marginalized and socially backward, in the study area. These SHGs have been working in right direction in eradicating the poverty of the rural poor and in the empowerment of the women. Still there is a vast scope for micro entrepreneurial activities in the rural as well as urban areas. Women share in rural employment in the study areas has increased significantly; it is still much lower as compared to other areas. Therefore, more and more SHGs should be encouraged so that they provided development funds to the neglected target groups which in turn lead to socio-economic development of the region.

Suggestions -

- serveshwari organization has been providing loans to the SHGs. But, it is not sufficient. Therefore, efforts are to be made to facilitate more loan facilities for the betterment and improvement of the people.
- Therefore, the concerned NGOs should involve in providing of infrastructure in the area to ensure better progress of the rural poor.
- Organization should be developed to build harmonious relations to rural people, particularly the grass-root level.
- Periodical working awareness programme related to specific skill requirement and upgradation for SHG members would be as step inright direction. Women empowerment is possible with the co-ordination and co-operation of SHG members.

References-

1. CHEN, A.N. (1997), Assessing the impact of microenterprise services at the individual level. USAID-AIMS Brief. No 16.
2. KABBER, N. (1998), Money can't buy me love? Re-evaluating gender, credit, and empowerment in rural Bangladesh. Brighton: IDS, Discussion Paper No. 363.
3. KABEER, N. (2001), Conflict over credit: Re-evaluating the empowerment potential of loans to women in rural development. World Development 29(1): 63-84.
4. MAYOUX, L. (2002), Women's empowerment versus sustainability? Towards a new paradigm in micro-finance programmes. Oxford and New York: Berg Publisher.
5. ODA (1994), Stakeholder participation in aid activities. London: ODA, Draft Technical Note no. 12.
6. PARPART, J.L. (2002), Rethinking participatory empowerment, gender and development. London and New York: Routledge.
7. ROWLANDS, J. (1997) Questioning empowerment: Working with women in Honduras. Oxford: Oxfam UK and Ireland.

****

महिला सशक्तिकरण का बदलता स्वरुप : एक अध्ययन

कमला चौहान *

प्रस्तावना – महिला सशक्तिकरण का अर्थ है महिलाओं में आत्मसम्मान आत्मनिर्भर व आत्मविश्वास होना। यदि कोई महिला अपने अधिकारो के संबंध में सजग है वह आत्मनिर्भर है तो उसके आत्मसम्मान में अवश्य वृद्धि हुई है। जिससे वह सशक्त हुई है। एक स्वस्थ व शिक्षित महिला राष्ट्र के लिए सम्पदा होती है। वह समाज की समृद्धि में उसी प्रकार सहयोग करती है जिस प्रकार एक निरक्षर, निर्धन व अस्वस्थ महिला कमजोर कुपोषित व उपेक्षित बच्चों को जन्म देकर समाज पर बोझ बढ़ाती है। अत: महिलाओं से संबंधित मुद्दे मात्र महिलाओं के ही नही बल्कि उनका संबंध सम्पूर्ण समाज व राष्ट्र से है।

महिला सशक्तिकरण की पहल सर्वप्रथम 1985 में नैरोबी में सम्पन्न हुए अन्तर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन में की गई थी। तदोपरान्त विश्व के सभी मार्गो में नारी संगठन ने एक क्रान्तिकारी आन्दोलन का रूप ले लिया। राज्य महिला सशक्तिकरण सूचकांक के अनुसार महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र में केरल राज्य का सर्वप्रथम स्थान है। उसके बाद तमिलनाडू और पश्चिम बंगाल राज्यों में महिला सशक्तिकरण के अधिकांश कारों ने अच्छा प्रदर्शन किया है, इन प्रांतों में महिलाओं की आर्थिक सहभागिता सर्वेत्कृष्ट है। कर्नाटक, महाराष्ट्र, आन्ध्रप्रदेश, पंजाब, गुजरात, जैसे राज्यों की महिलायें यू.पी. बिहार, राजस्थान की महिलाओं की अपेक्षा अधिक सशक्त है। राष्ट्रीय महिला आयोग के ताजा आंकडे बताते है कि विगत 20 वर्षो के इतिहास में भारतीय नारी ने अपनी स्थिति में अभूतपूर्व परिवर्तन किये है। वर्ष 1901 में भारत वर्ष में मात्र 0.60 प्रतिशत महिलायें साक्षर थी, जब कि 2001 की जनगणना के अनुसार महिला साक्षरता दर 54 प्रतिशत थी। भारत में हर वर्ष डेढ़ लाख महिलायें डॉक्टर बनती है तथा बी.ए. की उपाधि गृहण करने वाले विद्यार्थियों का 50 प्रतिशत साफ्टवेयर व्यावसायिक महिलायें हैं। संगठित क्षेत्रो के कुल कर्मचारियों का 18 प्रतिशत तथा 6.53 लाख गांवों में से 77 हजार गांवों पंचायतो की प्रधान महिलायें है। विभिन्न नागरिक संस्थानों में 10 लाख महिलायें कार्यरत है। भारतीय टी.वी. चैनलों एवं फिल्म उद्योग में भी आधिपत्य है। पुरूष प्रधान समाज इस सत्य को हमेशा झुठलाता रहा है कि समाज की उन्नति और निर्माण में स्त्री और पुरूष समान रूप से सहयोगी है। इस सम्बन्ध में मूर्धन्य विद्वान बाबा साहेब अम्बेडकर ने कहा था – मैं किसी भी समाज की उन्नति का अनुमान इस बात से लगता हूँ कि उस समाज की महिलाओं की कितनी प्रगति हुई है। बाबासाहेब नारी को पुरूष शिक्षा से अधिक महत्तवपूर्ण मानते थे कि ज्ञान ही मानव जीवन का आधारशिला है और शिक्षा के बिना समाज का उत्थान सम्भव नही होगा। नारी शिक्षा की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने आह्वान किया–माता–पिता, संतान को जन्म ही देते बल्कि कर्म भी देते है। वे अपनी संतान के जीवन में दिशा भी दे सकते है यदि माता–पिता अपने लडकों को शिक्षा के साथ–साथ अपनी लड़कियों की शिक्षा के लिए प्रयत्न करें जो भारतीय समाज की प्रगति द्रुतगति से होनी सुनिश्चित है। डॉ. अम्बेडकर की दृष्टि में महिलाओं की सुदृढ और सम्मानजनक स्थिति एक उन्नत समृद्ध और मजबूत समाज का द्योतक है। उनकी नजर में नारी की उन्नति के बिना परिवार, समाज एवं राष्ट्रीय उन्नति के सपने संजोय गूलर के फूल के समान है। वह कहते थे कि सभी मानव यानि स्त्री–पुरूष एक समान के अवसर समान है और सभी को समानतापूर्वक जीने का अधिकार है सबको आगे बढ़ने तथा प्रगति के अवसर मिलने चाहिए।

वर्तमान में नारियाँ जिन पदों पर कार्य कर रही है उनमें वे पुरूषों की अपेक्षा कम बुद्धिमत्ता का परिचय नही दे रही है। जहां सेवाभाव इनकी मूल धरोहर है वही ये शिक्षा, व्यवसाय, प्रशासन, सुरक्षा जैसे क्षेत्रों में कार्यरत है। ये पुलिस अधिकारी, पायलट, जलपोत संचालक आदि के दायित्वों को संभाल रही है। महिलाओं ने अनवरत संघर्ष करके सत्ता के सर्वोच्च शिखर पर चढ़कर हर क्षेत्र में अपने को पुरूष के समकक्ष साबित किया है। सच यह है कि जब तक महिलाएं शिक्षित नही होगी उनमें जागरूकता नही आएगी। उन्हें परम्परागत कार्यो से मुक्ति नही मिलेगी, उन्हें समाज में अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन, अपनी भूमिका अदा करने के लिए स्वतंत्रता नही होगी तब तक वे समाज व देश के विकास के लिए अपना योगदान नही दे सकती।

भारत सरकार ने ग्रामीण विकास में महिला रोजगार की भागीदारी बढ़ाने के लिए समय–समय पर नीतियों का निर्माण किया है। महिलाओं और बच्चो के समग्र विकास को वांछित गति करने के लिए 1995 में मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अधीन महिला और बाल विकास विभाग गठित कया गया है। 2006 से इसे स्वतन्त्र मंत्रालय का दर्जा दिया गया है। और बाल विकास मंत्रालय महिलाओं के विकास की देखरेख करने वाली प्रमुख एजेंसी के रूप में योजनाएं, नीतियां और कार्यक्रम तैयार करता है। महिलाओं के बारे में कानून बनाता है और उनमें संषोधन करता है और महिलाओं के विकास के क्षैत्र में काम करने वाले सरकारी और गैर–सरकारी दोनो तरह के संगठनों के प्रयासों का दिशा–निर्देशन और समन्वय करता है। इसके अलावा विभाग महिलाओं के लिए कुछ अनिवार्य कार्यक्रमों को भी लागू करता है। ये कार्यक्रम प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण, रोजगार एवं आमदनी बढ़ाने कल्याण और सहायक सेवाओं तथा जागरूकता पैदा करने और महिलाओं में चेतना जगाने के क्षेत्र में होते है। इन सब कार्यक्रमों का अन्तिम उद्देश्य महिलाओं को आत्मनिर्भर और सक्षम बनाना है।

इन सब उपलब्धियों के बावजूद भी महिलायें शिक्षा, स्वास्थ्य, जागरूकता व समानता के दृष्टिकोण से पिछड़ी हुई है, तथा महिला सशक्तिकरण की मंजिल से कोसो दूर है। स्वतंत्रता के करीब छ: दशक बीत जाने के बावजूद भी ग्रामीण परिवेश में महिलाओं पर अत्याचार, अनाचार व शोषण की लकीरें साफ दिखाई देती है। देश में महिलाओं के प्रति बढ़ते शोषण, अत्याचार व शर्मनाक कृत्यों पर प्रकाश डालते हुए राष्ट्रीय रिकार्ड ब्यूरो ने बताया है कि देश में प्रतिवर्ष एक लाख से अधिक मुकदमें बलात्कार, दहेज प्रथा व महिलाओं के शोषण से संबंधित दर्ज होते है। यही नही, समाज

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

में लड़कियों का जन्म अशुभ माना जाता है तथा कुछ समुदायों में उन्हे पैदा होते ही मार दिया जाता हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में कन्या भ्रूण हत्या की बढ़ती प्रवृत्ति महिला सशक्तिकरण के नाम पर कलंक है। यही नही, एक गैर-सरकारी सर्वेक्षण से यह चिंताजनक व भयावह निष्कर्ष दिया है देश में प्रतिवर्ष 20 लाख कन्याओं का जन्म से पूर्व ही कत्ल कर दिया जाता है।

विभिन्न सर्वेक्षणों व अध्ययनों के दौरान यह तथ्य उभर कर सामने आया है कि प्रशासनिक ढिलाई, भ्रष्टाचार महिलाओं में जागरूकता व शिक्षा के अभाव के साथ ही ग्रामीण महिलाओं में अधिकारों के लिए संघर्ष करने का विश्वास व संकल्प नही होने के कारण महिला विकास कार्यक्रम व योजनाएं अपेक्षित सफलता हासिल नही कर पाए।

निसंदेह रूप से, महिला विकास व सशक्तिकरण जैसे जटिल किन्तु महत्वपूर्ण उद्देश्य प्राप्ति की राह में अनेक समस्याएँ, अवरोध व बाधाएं है। सरकार, समाज एवं स्वयंसेवी संगठनों को संयुक्त रूप से महिला विकास कार्यक्रमों के निर्माण, इनके सफल क्रियान्वयन व प्रगति को सुनिश्चित करते हुए महिलाओं को साक्षर, स्वावलम्बी व सशक्त बनाने के लिए हर सम्भव प्रयास करने होगे तथा समाज में सकारात्मक व समानतापूर्वक वातावरण तैयार करना होगा। इसके अतिरिक्त, समाज में प्रचलिंत रूढ़ियाँ, मान्यताएं, परम्परागत प्रथाएं व आडम्बर जैसी बेडियां ही महिला सशक्तिकरण के मार्ग में अवरोधक है, महिलाए स्वयं आगे आकर इन अवरोधको को दूर करके ही अपना निर्भिक, स्वतंत्र व सशक्त विकास कर सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. योजना मासिक पत्रिका,स्त्री सशक्तिकरण विशेषांक जून 2012, पृ.20
2. कुरूक्षेत्र मासिक पत्रिका, ग्रामीण महिला सशक्तिकरण विशेषांक अगस्त 2013, पृ.23
3. तिवारी, आर.सी. भारतीय नारी: वर्तमान समस्यायें और भावी समाधान, ए.पी.एच. पब्लिशिंग कॉरपोरेशन, नई दिल्ली, पृ.15
4. कुरूक्षेत्र प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली मार्च 2006, पृ.32
5. वार्षिक प्रतिवेदन, भारत का मानवाधिकार आयोग, भारत सरकार, नई दिल्ली 2000, पृ.85
6. सिंघवी, अभिषेक, द वूमन रिजर्वेशन बिल, सेमिनार, अंक 457, सितम्बर 1997

****

मध्यप्रदेश की राजनीति में जनजातीय वर्ग का प्रतिनिधित्व

डॉ. सीताराम गोले *

शोध सारांश – वर्तमान म.प्र. का जन्म भारत के स्वतंत्र होने के पश्चात् 1 नवम्बर 1956 को हुआ। ब्रिटिश शासनकाल में सेन्ट्रल प्राविन्स व बरार नामक प्रान्त था, उसका विस्तार ही वर्तमान म.प्र. है। सेन्ट्रल प्राविन्स में महाकौशल और बरार के जिले सम्मिलित किये गये तथा इनके बीच में बघेलखण्ड व छत्तीसगढ़ की अन्य छोटी-छोटी रियासतें थी जो संयुक्त रूप से सेन्ट्रल इण्डिया के नाम से जानी जाती थी।

प्रस्तावना – राज्य पुनर्गठन आयोग 1953 की अनुशंसा के आधार पर 1 नवम्बर 1956 को तत्कालीन म.प्र. के 17 हिन्दी भाषी जिलों- मंदसौर जिले के सुनेल टप्पा को छोड़कर सम्पूर्ण मध्य भारत, पूर्व विन्ध्यप्रदेश, महाकौशल के हिन्दी भाषी जिलों तथा राजस्थान के कोटा जिले की सिरौंज तहसील को मिलाकर नवीन म.प्र. का गठन किया गया। 1 नवम्बर 1956 को म.प्र. के गठन के समय म.प्र. का कुल क्षेत्रफल 44,324 हेक्टेयर था इसमें 42 जिले शामिल थे। 26 नवम्बर 1972 को भोपाल एवं राजनांदगांव दो नये जिले बनाये गये। 25 मई 1998 को वी.आर. दूबे आयोग की अनुशंसा पर 10 नये जिलों का गठन किया गया। [1]

2011 की जनगणना के आंकड़ों के अनुसार म.प्र. की कुल जनसंख्या 72597565 है जो देश की कुल जनसंख्या का 6 प्रतिशत है, जिसमें पुरुषों की संख्या 37611370 है एवं महिला जनसंख्या 34984645 है। जनसंख्या घनत्व 236 एवं लिंगानुपात 930 है। [2] म.प्र. में 15316784 अर्थात् 21 प्रतिशत के आसपास जनजातीय जनसंख्या है जो म.प्र. के दक्षिण-पश्चिम क्षेत्रों में बसी हुई है। [3]

मध्यप्रदेश राज्य की राजनीति एवं जनजातीय वर्ग की राजनीतिक स्थिति – राज्यों का पुनर्गठन एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। यह देश की सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था पर प्रभाव डालता है। वर्ष 1956 में राज्य पुनर्गठन के अधिनियम के आधार पर मध्य भारत भोपाल विन्ध्य प्रदेश को समाप्त कर म.प्र. राज्य का निर्माण किया गया। स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय राजनीतिक प्रशासन में आमूलचूल परिवर्तन होने लगा। मंत्री मण्डल के सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धांत के आधार पर उत्तरदायी सरकारी की स्थापना हुई। इस तरह भारत में लोकतंत्र, विकास, लोक कल्याण एवं समाजवाद के लिए नवीन राजनैतिक युग की शुरूआत हुई। [4] 31 अक्टूबर 1956 ई. में म.प्र. की राजधानी भोपाल के विधानसभा भवन में मिन्टोहॉल में मुख्य न्यायाधीश मोहम्मद हिदायततुल्ला ने पट्टाभी सीतारमैया को म.प्र. के प्रथम राज्यपाल की शपथ दिलाई। राज्यपाल ने पंडित रविशंकर शुक्ल को प्रथम मुख्यमंत्री की शपथ दिलवाई। [5]

छत्तीसगढ़ के निर्माण के पूर्व म.प्र. में कुल 320 विधानसभा सीटें थी जिसमें 201 सामान्य, 44 अनुसूचित जाति, **75 अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित की गई।** Type of constituencies on the basis of the delimination order 1976 के अनुसार संपूर्ण भारत में राज्यवार विधानसभाओं में सभी वर्गों के लोगों के लिए आरक्षण की व्यवस्था की गई जिसमें समस्त राज्यों की कुल 4120 विधानसभा सीटें थी जिसमें सामान्य वर्ग के लिए 3018 सीटें आरक्षित थी। अनुसूचित जाति के लिए 570 एवं **अनुसूचित जनजाति के लिए 532 सीट आरक्षित रखी गई।** वहीं म.प्र. में कुल 230 विधानसभा सीटें थी जिसमें 156 सामान्य वर्ग के लिए, 33 सीटें अनुसूचित जाति के लिए तथा **41 सीटें अनुसूचित जनजाति के लिए रखी गई।** पर Type of constituencies on the basis of the delimination order 2008 के अनुसार संपूर्ण भारत एवं म.प्र. की विधानसभा स्थितियों में परिवर्तन देखने को मिला। आंकड़ों के अनुसार यह आसानी से कहा जा सकता है कि अनुसूचित जनजाति के प्रतिनिधित्व व योगदान को बढ़ावा देने के लिए इनकी प्रतिनिधित्व संख्या में समय-समय पर बढ़ौत्री की जाती रही है।

2008 के परिसीमांकन के अनुसार भारत के संपूर्ण राज्यों में 2872 सीटें सामान्य वर्ग के लिए, 607 अनुसूचित जाति के लिए तथा **554 सीटें अनुसूचित जनजाति के लिए जो पूर्व में 532 थी।** इस प्रकार की स्थिति म.प्र. विधानसभा क्षेत्रों में भी देखी जा सकती हैं जहां 156 सीटें सामान्य वर्ग की थी वह अब 148 सीटें रह गई है। अनुसूचित जाति की 33 सीटों को बढ़ाकर 35 कर दिया गया हैं वहीं **41 अनुसूचित जनजाति की सीटों को बढ़ाकर 47 कर दिया गया है।** इस प्रकार सीटों की संख्या के आधार पर सबसे ज्यादा बढ़ौत्री अनुसूचित जनजाति में देखते को मिली।

लोकसभा की स्थिति भी इसी प्रकार देखी जा सकती है। लोकसभा में म.प्र. की ओर से 29 सांसदों का चुनाव होता हैं जिसमें अनुसूचित जनजाति के लिए केवल 5 सीटें आरक्षित थी जिसको 2008 में बढ़ाकर 6 सीटों में परिवर्तित कर दी। वहीं देशभर में अब 412 सामान्य वर्ग के लिए, 84 अनुसूचित जनजाति के लिए एवं 47 सीटें अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित कर दी गई।

समय-समय पर शासन द्वारा अनुसूचित जनजाति के प्रतिनिधित्व को लेकर उनकी संख्या में परिवर्तन होता रहा, जिससे इस वर्ग के नेता एवं मतदाता दोनों ही जागरूक हो सके। परिणाम आज ये अपने मत तथा नेतृत्व के द्वारा केन्द्रीय, क्षेत्रीय तथा स्थानीय राजनीति को व्यापक पैमाने पर प्रभावित कर रहे हैं। सामान्यत: ऐसा माना जाता है कि जनजाति को जो दल ज्यादा महत्व देता है वह दल आसानी से सत्ता पर काबिज हो जाता है अन्यथा उन दलों को विपक्ष में बैठने पर मजबूर होना पड़ता है। म.प्र. शासन की राजनीति में यह तथ्य महत्वपूर्ण रहा है। 2003 के बाद से वर्तमान तक

* प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, निवाली (म.प्र.) भारत

रूलिंग पार्टी ने अनुसूचित जनजाति के लिए कई नीतियों का निर्माण किया है तथा उनकी मदद कर उनका भरोसा भी जीता है। परिणामस्वरूप 2003 से लेकर वर्तमान तक म.प्र. में एक ही दल की सरकार का अस्तित्व नजर आता है।

मध्यप्रदेष की विधानसभा में अनुसूचित जनजाति की आरक्षित सीटें

क्र.	अनुसूचित जनजाति सीट	जिला
1	Chitrangi	Singraoli
2	Dhouhani	Sidhi
3	Beohari	Shahdol
4	Jaisingnagar	Shahdol
5	Jitpur	Shahdol
6	Anuppur	Anuppur
7	Pushprujgarj	Anuppur
8	Bandhavgarh	Umaria
9	Manpur	Umaria
10	Barwara	Katni
11	Sihora	
12	Shanpura	Dindori
13	Dindori	Dindori
14	Niwas	Mandla
15	Mandla	Mandla
16	Bichhiya	Mandla
17	Baihar	Balaghat
18	Barghat	Seoni
19	Lakhnadon	Seoni
20	Junnardo	Chaindwara
21	Amarwara	Chaindwara
22	Pandhurna	Chaindwara
23	Ghoradongri	Betul
24	Bhainsdehi	Betul
25	Timarni	Harda
26	Bagali	Dewas
27	Harsud	Khandwa
28	Pandhana	Khandwa
29	Nepanagar	Burhanpur
30	Bikhangaon	Khargoan
31	Bhagwanpura	Khargoan
32	Sendhawa	Badwani
33	Rajpur	Badwani
34	Pansemal	Badwani
35	Badwani	Badwani
36	Alirajpur	Alirajpur
37	Jobat	Alirajpur
38	Jhabua	Jhabua
39	Thandla	Jhabua
40	Petlawad	Jhabua
41	Sardarpur	Dhar
42	Gandhwani	Dhar
43	Kukshi	Dhar
44	Manawar	Dhar
45	Dharampur	Dhar
46	Ratlam Rural	Ratlam
47	Sailana	Ratlam

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि म.प्र. की राजनीति में आज अनुसूचित जनजाति का बढ़ता हुआ प्रतिनिधित्व सम्पूर्ण प्रदेश की राजनीति को सक्रिय रूप से प्रभावित कर रहा है। परिणाम प्रदेश स्तर के प्रमुख नेतृत्वकारियों के द्वारा इस वर्ग के नेताओं को एवं उनके मतदाताओं को समान महत्व प्रदान कर रहे हैं। जो जनजाति एक समय पिछड़ी हुई मानी जाती थी उसी के नेता आज मंत्रियों क पद पर आसीन होकर अपने सजातीय वर्ग का उत्थान एवं कल्याण कर रहे हैं जो मूल रूप से एक राजनीतिक प्रतिनिधि की जिम्मेदारी भी होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. म.प्र. सामान्य अध्ययन, जबरसिंह परमार, अरिहंत पब्लिकेशन इण्डिया लि., पृ.13
2. वही, पृ.18
3. इन्टरनेट से प्राप्त जानकारी के अनुसार
4. अवस्थी आनंद प्रकाश, म.प्र. प्रशासन, म.प्र. हिन्दी अकादमी ग्रंथ, भोपाल 2004, पृ. 11-12
5. बजाज व महेश्वरी मुकेश, संपूर्ण म.प्र. अध्ययन, म.प्र. एवरेस्ट व वेलकम पब्लिकेशन, इन्दौर 2005, पृ. 29

****

संविधान का मौलिक स्वरूप एवं समय की मांग है संविधान संशोधन

डॉ. अनिल दीक्षित *

प्रस्तावना – स्वाधीन राष्ट्र का अपना एक संविधान है जिसके अनुसार उस राष्ट्र की शासन व्यवस्था का संचालन होता है । वही संविधान राष्ट्रीय विकास में भरपूर योगदान दे सकता है, जिसे उस राष्ट्र की जनता ने स्वयं बनाया हो अपना जिसे उस देश की संविधान निर्मात्री सभा द्वारा बनाया गया हो। भारत में संविधान सभा की माँग एक प्रकार से राष्ट्रीय स्वतंत्रता की मांग थी, क्योंकि राष्ट्रीय स्वतंत्रता का यह स्वाभाविक अर्थ था कि भारत के लोग स्वयं अपने राजनीतिक भविष्य का निर्णय करें। भारतीय संविधान का निर्माण संविधान सभा से हुआ। सभा की पहली बैठक 9 दिसम्बर 1946 को हुई। 11 दिसंबर को डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सभा के स्थाई सभापति निर्वाचित हुए। डॉ. भीमराव अम्बेडकर प्रारूप समिति के अध्यक्ष बने। अन्य सदस्य थे कन्हैयालाल माणिक्य लाल मुंशी, मोह. सादुल्ला, बी.एल. मित्तर, कृष्णास्वामी अय्यर, एन. गोपालस्वामी आयंगर, डी.पी. खेतान । बाद में मित्तर और खेतान के स्थानों पर एन. माधवराव तथा टी.टी. कृष्णामाचारी को नियुक्त किया गया।

संविधान सभा के कुल 12 अधिवेशन हुए, जिनमें 165 दिन कार्यवाही चली। संविधान के निर्माण में कुल मिलाकर 2 वर्ष, 11 माह और 18 दिन लगे आखिरकार 26 जनवरी, 1950 को भारतीय संविधान बनकर लागू हो गया। किसी लोकतांत्रिक राष्ट्र का सपना बिना संविधान के साकार नहीं हो सकता है । एक मुल्क की पहिचान उसके संविधान में ही छिपी होती है । भारतीय संविधान की प्रस्तावना को हम यों बखान कर सकते हैं –

हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को : सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता तथा अखण्डता सुनिश्चित करने वाली बन्धुता बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवम्बर 1949 ई. (मिती मार्ग शीर्ष शुक्ल सप्तमी, संवत 2006 विक्रमी) को एतद द्वारा इस संविधान को अंगीकृत अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।

इर देश का एक अपना दर्शन रहा है । एक संस्कृति रही है, किन्तु संविधान जैसी कोई चीज नहीं रही है । बाहर की संस्कृति ने हमारे जीवन शैली में पदार्पण किया और हम उन्हीं के जैसे होने की होड़ में लग गए । आखिर अंग्रेज आए और राज करने के नाम पर एक संविधान बना गए। यही संविधान हमारे गले की हड्डी बना हुआ है। इसे विदेशी कहते हुए नहीं बनता, स्वदेशी कहते हुए नहीं बनता, संविधान में हमारे देश का नाम लिखा है – इण्डिया दैट इज भारत। हमारी संसद को सबसे बड़ा दुर्भाग्य और क्या होगा कि उससे 65 साल में देश को भारत कहते नहीं बना। आज तो विधायिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका में ज्यादातर इण्डियन ही बैठे है, भारतीय अल्पसंख्यक हैं।

वर्तमान में भी हमारे संविधान का स्वरूप भारतीय नहीं है । इस पर इण्डियन्स का कब्जा है । पिछले वर्षो में जितने संविधान संशोधन हमारी जीवनशैली पर थोपे गए, उससे नीति निर्माता तो गौरवान्वित हुए किन्तु भारतीय अपमानित हुए। न किसी ने जनता का दर्द जाना, न ही सार्वजनिक बहस की आवश्यकता किसी को महसूस हुई। चोरों की तरह शोर–शराबे में बिल पास होते चले गए । आज तो संविधान संशोधन या नए कानूनों का आधार भी नेताओं या तीनों पायों को सुरक्षित रखना हो गया। ताकि सरकार में बैठे अपराधी को सजा न मिल पाए। साथ ही समय पर पदोन्नति बनी रहे सी.बी.आई., आयकर, पुलिस या जाँच एजेन्सियां आम आदमी को परेशान करने का हथियार रह गई है। सरकार के सुरक्षित रहने से ही भ्रष्टाचार बढ़ा, आम व्यक्ति का अपमान बढ़ा, स्वार्थ और अहंकार सरकारों के पर्यायवाची हो गए। सरकार–प्रशासक जनता से कट गए।

संविधान निर्माताओं ने भारतीय संविधान में अनेक देशों की संवैधानिक व्यवस्था के लक्षणों को समाहित करने का प्रयास किया । संवैधानिक सलाहाकर श्री बी.एन.राव. ने अनेक देशो की यात्रा की और राजनीतिक संस्थाओं का निरीक्षण किया । कभी–कभी इसे उधार का थैला भी कहा जाता है ।

भारतीय संविधान में किस देश से क्या लिया –

ब्रिटेन – संसदीय प्रणाली, संसदीय विशेषाधिकार संसद व विधानमंडल प्रक्रिया ।

अमरीका – मौलिक अधिकार सर्वोच्च न्यायालय का संगठन और शक्तियाँ, उपराष्ट्रपति।

कनाड़ा – संघीय व्यवस्था

आयरलैंड – नीति–निर्देशक तत्व, राष्ट्रपति के निर्वाचक मंडल का गठन, राज्यसभा के 12 सदस्यों का मनोनयन।

जर्मनी – आपात उपबंध ।

पूर्व सोवियतसंघ – मूल कर्त्तव्य

फ्रांस – गणतंत्र

आस्ट्रेलिया – समवर्ती सूची ।

सभी संविधान अपने मुख्य प्रावधानों में प्राय: एक जैसे हैं। केवल एक ही चीज नई हो सकती है कि दोषों का निराकरण करते हुए नया संविधान अपने देश की परिस्थितियों के अनुरूप ढालने का प्रयास करे।

आज जो देश की संवैधानिक व्यवस्था है उसमें आमूलचूल परिवर्तनों की आवश्यकता है, तो लेकिन उसका मतलब यह नहीं है कि संविधान में ढेर सारे संविधान संशोधनों की आवश्यकता है अगर हमें बदलाव लाना है, तो

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीस कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

वह संविधान में बगैर संशोधन किए लाया जा सकता है। मौजूदा राजनीतिक हालात ऐसे हो गए हैं कि कई मुद्दों को लेकर संविधान में संशोधन की अनिवार्यता बढ़ गई है। गठबंधन की राजनीति अब भारतीय लोकतंत्र पर हावी होती जा रही है। संविधान में सबसे पहला संशोधन गठबंधन की राजनीति को लेकर हो, जिसमें महत्वपूर्ण बात यह हो कि सभी दलों के निजी हित से ऊपर देश हित को रखा जाए और कोई महत्वपूर्ण आर्थिक का सामाजिक सुधार केवल इस चक्कर में न रूके कि सरकार में शामिल एक दल उसका हिमायती है और दूसरा नहीं।

दूसरी महत्वपूर्ण बात राजनीतिक दलों के आपसी रिश्ते टूटने के बाद भी चुनाव पाँच साल से पहले न हों। यदि संविधान में संशोधन हो जाए तो राजनीतिक दल गठजोड़ करने से पहले सोच विचार कर कदम उठायेंगे। तीसरी महत्वपूर्ण बात पर गौर करने की जरूरत है कि गठबंधन की राजनीति में छोटे और क्षेत्रीय दलों का महत्व बढ़ता जा रहा है, लेकिन उनके महत्व के हिसाब से लोकसभा में उनकी सीटें नहीं आती। इसलिए 1977 में जब जनता पार्टी की सरकार बनी थी तो हमारी सरकार ने क्षेत्रीय दलों को बराबरी का प्रतिनिधित्व देने का प्रयास शुरू किया था जिसमें चार मंत्रियों का एक मंत्री समूह बनाया गया था।

अमेरिका की भांति राष्ट्रपति चार साल के लिए चुना जाता है और वही सरकार चलाता है। अब जरूरत है कि अमेरिका की इस संवैधानिक व्यवस्था को भारत में भी शुरू किया जाय। इसके लिए एक मात्र रास्ता संविधान संशोधन है। इससे सरकारे पाँच साल के लिए सुरक्षित रहेंगी और यह देश हित में होगा। दूसरी व्यवस्था होनी चाहिए कि संघीय व्यवस्था भी दुरस्त की जाए। जो विषय राज्यों के हैं, उनमें उन्हें स्वतंत्रता दी जाए। केन्द्र के पास केवल विदेश रक्षा, न्यायपालिका और दूरसंचार जैसे विभाग हों। इससे जम्मू कश्मीर की समस्या का हल निकल जायेगा। 2000 में संविधान में संशोधन के लिए एक आयोग का गठन किया गया था, लेकिन उस आयोग की सिफारिशो धूल फांक रही हैं। इस पर राजनीतिक दलों में सहमति बनाना कठिन है, क्योंकि सभी दलों का एक मात्र एजेण्डा सत्ता पर काबिज होना है।

देश आज जिन लोगों के हाथ में खेल रहा है, उनमें न संवेदना है, न ही उत्तरदायित्व का बोध और न ही माटी का कर्ज चुकाने का दर्द। संविधान को फुटबाल बनाकर पार्टियाँ मैच फिक्सिंग में व्यस्त हैं। तब हमारा भविष्य अपराधी और लुटेरे ही तय करते रहेंगे या कोई क्रांति का श्री गणेश होगा? हमें न केवल भारतीयता का जामा पहनाना है बल्कि इसके साथ होने वाले खिलवाड़ को भी रोकना होगा। युवा हाथों में संविधान के मौलिक स्वरूप को बचाने की हिम्मत होनी चाहिए। अपने हाथों से अपने सपनों का देश बनाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. पुखराज जैन, डॉ. बी.एल फड़िया- भारतीय शासन एवं राजनीति
2. नन्दलाल - भारतीय संविधान की प्रस्तावना, पेज 93-97
3. पत्रिका समाचार पत्र - 17 जून, 2013
4. गुलाब कोठारी - आर्टिकल इंडिया दैट इज भारत जून 2013
5. शांतिभूषण - पूर्व विधि एवं काननू मंत्री - वक्त की जरूरत है संविधान संशोधन जून 2013
6. डॉ. सुभाष कश्यप - लोकसभा के पूर्व महासचिव - 'संविधान के मूल ढांचे पर आघात' जून 2013

****

पर्यावरण कानून

डॉ. वन्दना मालवीया *

प्रस्तावना – जलवायु परिवर्तन 21वीं सदी की सबसे जटिल चुनौतियों में से एक है। इसके प्रभाव से कोई देश अछूता नहीं है। जलवायु परिर्वतन का विकास, आपदा और निर्धनता से निकट का संबंध है। धरती के बिगड रहे पर्यावरण को लेकर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सबसे पहले 1909 में अमेरिका तथा कनाडा के बीच जल सीमा संधि कर प्रदूषण रोकने पर सहमति हुई थी। इसके बाद 1922 में पक्षियों के संरक्षण के लिये एक अन्तर्राष्ट्रीय समिति बनाई गई जिसे बाद में एक परिषद के रूप में परिणीत कर दिया गया था। लेकिन इस दिशा में वास्तविक प्रयास 1945 में संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना के साथ शुरू हो सका। विश्व में निरन्तर बिगड़ रहे पर्यावरण को लेकर वैश्विक चेतना जागृत करने के उद्देश्य से संयुक्त राष्ट्र ने 1972 में जो 'मानव पर्यावरण सम्मेलन' आहूत किया था और उसकी अगली कडी के रूप में यरियो भू शिखर– 1992 (पृथ्वी सम्मेलन) थी। इस सम्मेलन में 178 देशों ने भाग लिया और 'केवल एक धरती' हमारा सामुहिक भविष्य का संकल्प लिया गया।

भारत में पर्यावरण कानून काफी समृद्ध और विकसित है। भारतीय संविधान में पर्यावरण संरक्षण के लिये 42वें संविधान संशोधन अधिनियम 1976 के जरिये संविधान में 48ए और 51ए (जी) के द्वारा पर्यावरण संरक्षण का दायित्व राज्य सरकार पर डाला गया है। देश पर्यावरण संरक्षण, वन तथा वन्यजीवों की रक्षा का प्रयास करेगा। इसी संशोधन अधिनियम, में भाग 4 'क' शामिल कर मूल कर्तव्य की एक सूची भी संविधान में डाली गई। अनुच्छेद में प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अन्तर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव आते है की रक्षा करेगा। ऐसे संविधान प्रावधानों से भारतीय संविधान के समाजवादी होने की जहां पुष्टि होती है। वही उन प्रावधानों को व्यवहारिक बनाकर ही लक्ष्यो को प्राप्त किया जा सकता है।

एम.सी. मेहता बनाम कमलनाथ तथा एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ मामलों में उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 21 में अंतनिर्हित 'जीवन' शब्द के अर्थ में स्वच्छ पर्यावरण को शामिल करते हुये जन न्यास एवं परिस्थिति की संरक्षण की व्याख्या की थी। इसके अनुसार – 'राज्य संसाधनों का उपयोग व्यक्तिगत लाभ के लिये नही बल्कि जनकल्याण के लिये किया जाना अपेक्षित है।' इन विधियों के अतिरिक्त भारतीय दण्ड संहिता में भी कई प्रावधान है। संहिता की धारा 277 में किसी सार्वजनिक जल संग्राहक को प्रदुषित करने पर दण्ड का प्रावधान है। इसी प्रकार धारा 278 में वायु प्रदूषण, भारतीय पुलिस कानून के अनुसार 1961 की धारा 30 में शोर प्रदूषण पर भी दण्ड देने की व्यवस्था की गई है।

भारत की आपराधिक दण्ड प्रक्रिया संहिता में यह उल्लेख है कि किसी जिलाधिकारी अथवा अनुमण्डलाधिकारी अथवा किसी प्राधिकृत दण्डाधिकारी को यह अधिकार है कि किसी नदी अथवा अन्य प्रवाहित जल संसाधनों को प्रदूषित करने की स्थिति में वे प्रत्यक्षकर्ता को दण्ड दे सकेंगे। इस क्रम में उच्चतम न्यायालय ने श्री राम फ्रूटस एंड फर्टिलाईजर मामले में पर्यावरण संबंधी विषय पर अपना पहला निर्णय दिया था।

पर्यावरण संबंधी प्रमुख कानून/प्रावधान –

- भारतीय विस्फोटक प्रदार्थ कानून – 1908
- विष कानून – 1919
- भारतीय कानून – 1927
- खान एवं खनिज (विनियम एवं विकास) कानून 1947
- कारखाना कानून – 1948
- उद्योग (विकास एवं विनियन) कानून 1951
- परमाणु उर्जा कानून – 1962
- कीटनाशक कानून – 1968
- वन्यजीव (सुरक्षा) कानून – 1972
- जल (प्रदूषण निरोध एवं नियंत्रण) कानून – 1974
- वायु (प्रदूषण निरोध एवं नियंत्रण) कानून – 1981
- पर्यावरण (सुरक्षा) कानून – 1986
- भारतीय मत्सयन कानून – 1997
- उर्जा संरक्षण अधिनियम – 2001
- जैव विविधता कानून – 2002
- राष्ट्रीय पर्यावरण नीति – 2006

भारत में पर्यावरण की समस्याओं के निराकरण के संदर्भ में 7 फरवरी 2003 में न्यायपूर्ति बी.एन. किरपाल की अध्यक्षता में भारत में पहला वन संरक्षण को लेकर राष्ट्रीय वन आयोग का गठन किया गया। सितम्बर 2003 में विधि आयोग की 186 वीं रिपोर्ट के अनुसार पर्यावरण (सुरक्षा) कानून, 1986 की धारा 3 के तहत् केन्द्र सरकार को किसी प्राधिकरण के गठन का अधिकार प्राप्त है। कानून की धारा 25 के अंतर्गत और कई नियमों का निर्धारण किया गया हैं अपीलीय प्राधिकारियों का भी प्रावधान धारा 25 के तहत है।

प्रस्तावित पर्यावरण न्यायालय द्वारा निम्नाकित कार्य करना अपेक्षित है–

- यह सिद्धान्त 1972 में आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन के पर्यावरण नीति परिषद की सिफारिशों पर अनुमोदित किया गया है। बैल्होर सिटिजंस वेलफेयर फोरम बनाम भारत संघ के मामले में न्यायालय द्वारा कहा गया कि – प्रदूषण के लिये जिम्मेदार व्यक्ति को न केवल पीड़ित व्यक्तियों को बल्कि पर्यावरण को पूर्व स्थिति में लाने के लिये होने वाले व्यय को भी मुआवजे के रूप में देना होगा।
- पर्यावरण न्यायालय की शक्तियॉ दीवानी न्यायालय की भांति होगी। जो राष्ट्रीय पर्यावरणीय न्यायाधिकरण अधिनियम 1995 के द्वारा तय की जावेगी।
- स्वच्छ पेयजल के अधिकार का संरक्षण।

* प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

- सतत् परिस्थितिकीय विकास तथा सामाजिक–आर्थिक विकास को न्यायोचित बनाने के उद्देश्य से प्राकृतिक संसाधनों का दोहन।
- प्राकृतिक पर्यावरण वन तथा वन्य जीवन, झीलों, नदियों, तथा प्राणियों एवं वनस्पतियों का संरक्षण।
- ऐतिहासिक स्थलों एवं स्मारकों का संरक्षण।

भारत में जनहित याचिकाओं एवं न्यायिक सक्रियता के चलते सरकारी एवं गैर सरकारी एंजेसियों एवं आम नागरिकों में पर्यावरण के प्रति सजगता बढ़ी है। पर्यावरण को नागरिकों के मूल अधिकार के साथ जोड़ने का अनूठा प्रयास न्यायपालिका द्वारा किया गया है। इस दृष्टिकोण ने भारतीय संविधान के अनुच्छेद 32 के महत्व का विस्तार किया है। पर्यावरण के संरक्षण के लिये न्यायपालिका द्वारा अनेक सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है। प्रदूषण के भुगतान करने का सिद्धान्त, सावधानी सिद्धांत, पूर्ण दायित्व का सिद्धान्त, संपोषवीय विकास की अवधारणा, समानता का सिद्धान्त द्वारा पर्यावरणीय संकटों में न्यायपालिका सक्रिय हस्तक्षेप होने से पर्यावरण सरंक्षण में अहम् भूमिका निभाई है।

ओएचसीआर की रिपोर्ट जनवरी 2009 (ए/एचआरसी 10/61) के अनुसार पर्यावरण में परिवर्तन का प्रभाव मानव अधिकार के समस्त क्षेत्रों पर पड़ता है। इससे जीवन का अधिकार, समुचित भोजन का अधिकार, स्वास्थ्य का अधिकार और आत्मनिर्णय का अधिकार विशेष रूप से प्रभावित होता है। मानव अधिकार और (जलवायु) पर्यावरण परिर्वतन भारत जैसे देश के लिये विशेष रूप से प्रांसगिक है।

जलवायु परिर्वतन एक गंभीर वैश्विक गंभीर समस्या है जिसके कारण प्राकृतिक आपदाओं जैसे – सूखा, बाढ, समुद्री तूफान में अत्यधिक बढ़ोतरी देखने को मिल रही है। पर्यावरण संरक्षण और परिस्थितियां संतुलन की समस्या 21 वीं शताब्दी की एक महत्वपूर्ण समस्या बन गई है। ऐसे में स्वच्छ, सुंदर, समृद्ध, एवं प्रदूषण मुक्त भारत के निर्माण में सभी देश वासियों के सक्रिय सहयोग की आवश्यकता है सभी समुदायों का सहयोग जुटाने के लिये राष्ट्रीय शिक्षा तथा राष्ट्रीय चरित्र की आवश्यकता है। ऐसे में हमें प्रदुषण मुक्त प्रौधोगिकी का विकास करना चाहिये जिससे 21वीं शताब्दी में भारत को प्रदूषण मुक्त विकास की ओर अग्रसर किया जा सके। जब तक हम कानूनी आधार की अपेक्षा नैतिक आधार को महत्व नहीं देंगे तब तक अपने या अपनों द्वारा तैयार की गई मृत्यु की ओर लगातार बढते रहेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Shri M.C. Mehta, Delhi Law House, Water & Air Pollution and Environment (Protection Law) Volume 1 & 2.
2. Magazine - Down to Earth - Nov. 2011, Oct. 2013, Nov. 2013, Jan. 2014
3. Shri D.D. Basu, Constitution of India.

****

महिलाओं में बच्चों के समाजीकरण के प्रति बढ़ती अभिवृतियाँ

डॉ. कविता जैन *

शोध सारांश – भारतीय समाज में महिलाओं का गौरवशाली स्थान रहा है। उन्हें शक्ति, ज्ञान और सम्पत्ति का प्रतीक माना है। भारतीय महिलाओं में त्याग, बलिदान, साहस और शौर्यादि अनेक गुणों का समावेश है। आज महिलाएँ जीवन के हर मोड़ पर समाज के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी अदम्य क्षमता एवं मानसिक परिपक्वता का परिचय दे रही है।

प्रस्तावना – कामकाजी महिलाओं में बच्चों के समाजीकरण के प्रति बढ़ती अभिवृतियों का अध्ययन करने से पूर्व सामाजिक जीवन में परिवार को समझ लेना आवश्यक है क्योंकि परिवार एक अद्भूत एवं अनुपम स्थान रखता है। समाज व्यक्तियों के सम्बंधों का ताना-बाना है और परिवार व्यक्तियों का जन्मदाता। यह सर्वविदित ही है कि मनुष्य की आवश्यकताएँ अनन्त है और परिवार की उत्पत्ति भी मनुष्य की आवश्यकताओं का अंग है। परिवार ही सामाजीकरण का सबसे सशक्त माध्यम है।

सामाजीकरण में माता का सबसे बड़ा हाथ होता है माता का प्रभाव बच्चें पर अत्यधिक पड़ता है। प्रारम्भ के ढाई वर्ष तक तो प्राय: माता और बच्चे का ही सम्बंध रहता है, बच्चा अपने और माता के बीच कोई अन्तर नहीं समझता। बच्चे को माता-पिता या परिवार के अन्य सदस्य ही सर्वप्रथम समाज के अनुरुप व्यवहार सिखाते है। यह अन्त: क्रिया सामाजिक सम्बंधो पर आधारित है जैसे-जैसे बच्चें का सम्बंध बढ़ता जाता है, वह नई-नई बातें सीखता जाता है इसके सीखते ही उसके व्यक्तित्व का उदय होता है। व्यक्ति और समाज के सम्बंधो को स्पष्ट करने की बीच की कड़ी सामाजीकरण की प्रक्रिया हैं। सामाजीकरण वह प्रक्रिया हैं जो प्राणिशास्त्रीय व्यक्ति को उसके मानव पर्यावरण के अनुकूल बनाती हैं। अभिवृति एक स्थायी वृति होती है माता-पिता सदैव अपनी संतान का कल्याण चाहते है, उनकी यह अभिवृति स्थायी होती है बालक के कल्याण के लिये माता-पिता सदैव तत्पर रहते है। माता अपनी संतान के लिये हर प्रकार का कष्ट उठाती है।

इजवैस्तिया ने लिखा है – 'मानव भाषा में माता शब्द से कोई भी शब्द अधिक शुद्ध एवं उच्च नहीं है और न ही कोई वस्तु अधिक पवित्र है '।

उपकल्पना – अत्यधिक व्यस्त होने के बावजूद कामकाजी महिलाओं का बच्चे के सामाजीकरण के प्रति अभिवृत्तियां व सोच बढ़ता जा रहा है।

बाल्य जीवन ही मानव जीवन की अपरिपक्व अवस्था होती है इस अवस्था में बालक की स्थिति कुम्हार के उस कच्चे घड़े के समान होती है जिसे वह अपने कुशल हाथो से सजा-संवारकर कलात्मक एवं आकर्षक रुप दे सकता है। शिशु की प्रारम्भिक क्रियाओं का औचित्य जीवन को सफल व सुन्दर बनाने हेतु अमूल्य होता है। अत: यह आवश्यक है कि उसमें अच्छी आदतें डाली जाय तथा बुरी आदतें हटायी जाए। यह कहा जाता है कि मॉ के साथ और पिता की संरक्षा में रहते हुए बच्चा जो कुछ भी सीखता है वह उसके जीवन की स्थायी पूंजी होती है। परिवार में ही बच्चा सामाजिक उत्तरदायित्व का अर्थ, क्षमा का महत्व और सहयोग की आवश्यकता सीखता है।

यों तो समाज में मनुष्य के सामाजीकरण की जिम्मेदार अनेक अन्य संस्थाएँ जैसे शिक्षा, पड़ोस, बच्चे का खेल का समूह, राजनैतिक धार्मिक व आर्थिक संस्थाएँ भी है लेकिन सर्वमान्य रुप से बच्चे का सामाजीकरण परिवार ही अच्छी तरह से करता है और परिवार मे माता ही बच्चें की प्रथम गुरु होती है।

निष्कर्ष – आज भागदौड़ की इस जिंदगी में माता की जिम्मेदारी काफी बढ़ गयी है अब वह घर के अन्दर तो काम करती ही है, साथ ही घर के बाहर कार्यालय या दफ्तर, स्कूल या अस्पताल आदि किसी संस्थाओं में भी काम करती है, बावजूद इसके उसकी यह अभिवृति होती है कि वह बच्चें का सामाजीकरण इस प्रकार करें कि वह आगे चलकर उसके परिवार का फिर समाज का व अपने राष्ट्र का नाम रोशन करें। बच्चों के पालन पोषण के संबंध में पिछले अनेक वर्षो में अनेक महत्वपूर्ण कार्य हुए है। इस दिशा में बाल मनोविज्ञान ने लोगों की इस धारणा को सिद्ध करके यह उद्घाटित किया है कि बालक का पालन पोषण बहुत सावधानी के साथ करना चाहिए बच्चों की प्रारम्भिक अवस्था की देखभाल पर भी उनका भविष्य निर्भर करता है। सर्वेक्षण के आधार पर प्राप्त तथ्य भी इस बात की पुष्टि करते है कि हमारी जो उपकल्पना है वह सकारात्मक दिशा की और संकेत करती है।

बच्चे के पालन-पोषण के संबंध में कामकाजी महिलाएँ काफी सजग हुई है। अत्यधिक व्यस्त होने के बावजूद कामकाजी महिलाओं का बच्चें के सामाजीकरण के प्रति अभिवृतियॉ व सोच बढ़ता जा रहा है। हर माता यह सोचती है कि उसका बच्चा पढ़-लिखकर बड़ा होकर एक अच्छी पैकेज वाली नौकरी पा सके ताकि आधुनिकता के सभी संसाधनों का वह उपयोग कर सुख उठा सके ताकि उनकी परवरिश पर कोई प्रश्नचिन्ह न लगा सकें प्रारंभिक दौर से ही माता बच्चों की परवरिश सामाजीकरण की यह सोच रखते हुए कर रही है। आवश्यकता है अंधानुकरण के इस दौर में नैतिक मूल्यों पर अधिक जोर देने कि ताकि बच्चा वास्तव में एक सामाजिक प्राणी के साथ-साथ मानवीय नैतिक प्राणी बन सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. समाज मनोविज्ञान, आर. मुखर्जी
2. परिवार और समाज, रामबिहारी सिंह तोमर
3. पारिवारिक समाजशास्त्र, डॉ. कैलाशनाथ शर्मा और शुभरत्न त्रिपाठी
4. गृहविज्ञान, श्रीमती एस.पी. सुखिया एवं डॉ. जे.पी. शेटी
5. सामाजीक नियंत्रण तथा परिवर्तन, डॉ. जी.के. अग्रवाल

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

महिला और मानवाधिकार

डॉ. गीता मेहरा *

शोध सारांश – स्वतंत्रता के बाद नारी की स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन आये है। तथा उसकी स्वतंत्रता और अधिकारों के लिये जहां संविधान में व्यवस्था की गई है वही समय-समय पर नियम और कानून भी बनाये गये है। लेकिन यह भी एक सच्चाई है कि ये नियम और कानून मुख्यत: महानगरों की तथा उच्च वर्ग की महिलओं तक ही सीमित है। ज्यादातर महिलाओं की संख्या आज भी द्वितीय श्रेणी की है। जो पढ़ी लिखी और नौकरी पेशा महिलाये है, उनका दूहरा शोषण होता है। उन पर घर की जिम्मेदारियों के साथ-साथ कार्यालय की भी जिम्मेदारी है। नारी अपने विशिष्ट गुणों के कारण आधुनिक युग में हर क्षेत्र में कठोरतम सामाजिक प्रतिबन्धों के चलने विपरित परिस्थितियाँ में भी अपना रास्ता खोज कर आगे बढ़ती जा रही है। राष्ट्रीय महिला आयोग, राज्य स्तरीय महिला आयोग मानव अधिकार एवं स्वयं सेवी संगठन आज हर ओर से नारी को सुदृढ़ करने की पुरजोर कोशिश कर रहे है।

प्रस्तावना – भारतीय नारी का विकास काफी धीमा है, आधुनिक भारत में नारियों की शिक्षा का पर्याप्त विकास हो गया है किन्तु इस पुरूषप्रधान समाज में आज भी नारी को बराबरी का दर्जा देने में सुगबुगाहट है। यहीं नहीं समाज की रूढ़िवादी, परम्परावादी एवं कम पढ़ी लिखी नारियों के विचारों में कुछ विशेष परिवर्तन आज भी नजर नहीं आता 05 जनवरी 1987 को सरकार के सर्वेक्षण से पता चला कि जितना विकास महिलाओं का हो रहा है, उतना संतोषप्रद नहीं है इसलिये कुछ निजी संस्थान सामने आये और उन्होंने नारी उत्थान के कई कार्यक्रम चलाए इसमें ग्रामीण महिलाओं के विकास का विशेष ध्यान रखा गया नारी कल्याण के लिये 33 संगठनों का गठन किया गया है। इन संगठनों ने सिफारिश की कि दहेज को एक संगीन अपराध घोषित किया जाए तथा प्रत्येक राज्य में अपने यहाँ नारी ग्रह की स्थापना की जाए। इस समिति ने यह भी महसूस किया कि नारी का शोषण हो रहा है। अत: इसके निवारण के लिये राष्ट्रीय आयोग नियुक्त किया, इसमें महिला कल्याण के साथ-साथ महिला विकास पर भी कार्य किया जाए, विशेष ग्रामीण क्षेत्रों में क्योंकि महिलाएँ वहाँ ज्यादा पिछड़ी हुई है।

सम्य समाज की किसी भी परिकल्पना में मानवीय गरिमा, सामाजिक न्याय एवं समता के आदर्श पंथिक आस्थाओं परम्पराजन्य विश्वासों तथा अहमवादी उद्घोषों से निश्चय ही वरीय है। महिला अधिकारों का प्रश्न उक्त आदर्शों का पारदर्शी मापदन्ड है भारत का संविधान न केवल महिलाओं को समानता का मूल अधिकार प्रदान करता है वरन् उनके लिये सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक और राजनैतिक क्षेत्रों में अलायकारी स्थितियों का उन्मूलन करने का उपाय करने के लिये राज्यों को निर्देशित भी करता है।

महिलाओं के प्रति विभेदका उन्मूलन करने हेतु नीति, वैधानिक और विशेष उपाय हेतु कार्यक्रम योजना बनाई गई, जिसमें समाज में महिलाओं को पुरूषों के समान अधिकार दिलाने हेतु अनेक विधियों को समेकित किया गया। इन विधियों में महिलाओं की अभाव ग्रस्तता संवेदन शीलता एवं पिछड़ेपन के कारणों का पता लगाने और इस संबंध में महिलाओं के प्रति पुरूषों की मानसिकता, कार्यपद्धति, परम्पराओं, कुरितियों उन्मूलन करने हेतु छोटे-मोटे संक्षिप्त अवधि वाले कार्यक्रम बनाये गये । इन कार्यक्रमों को राज्य द्वारा घोषित शिक्षा, उद्योग, स्वास्थ, न्याय प्रशासन, समाज-कल्याण, पंचायत से परामर्श करके रणनीति तैयार कराने जैसे कार्यक्रम गये। जिसमें देश में मध्यप्रदेश सबसे अग्रणीय है।

शासकीय नीतियों के निष्पादन हेतु एक तंत्र स्थापित करने जैसे सुझाव को भी शासन के समक्ष रखा गया। इस सुझाव के आधार पर अनुशंसा की गई कि इस तंत्र को कार्य करने के लिये स्वतंत्र अधिकारिता दी जावे और उसकी कार्य करने की पद्धति को पारदर्शी तरीके के कार्य करने का अवसर दिया जाए, ताकि यह तंत्र महिलाओं की अवस्था को बेहतर बनाने वाली विधियों को अनुच्छेद 44 की आत्मा के अनुसार अर्थात् राजनीतिक निदेशक तत्व को लागू करने के लिये सभी भारतीयों के लिये विवाह विच्छेद, तलाक, भरणपोषण, उतराधिकार तथा गोद संबंधी विधियों को एकत्र लागू करने की दीर्घकालिन नीति बनाई जा सकें।

महिलाओं के अधिकरों के संबंध में भारत के संविधान में नीति निदेशक तत्वों में विशेष उपबंध किये गये है। संविधान में अनुच्छेद 39 में समान काम के लिये समान वेतन देने की बात संकल्प के रूप में दोहराई गई है। जिसे प्राप्त करने के लिये तथा महिलाओं की स्थिति को बेहतर बनाने के लिये कानून में विशेष रूप से अधिक विधियों में अपराधिक विधियों में पारिवारिक विधियों में तथा संविधि विधियों में व्यवस्था में की गई है। जिनमें से कुछ इस प्रकार है।

श्रमिक विधियाँ – 1.मातृत्व काम अधिनियम 1961
2.न्यूनतम मजदूरी नियम 1948 3.मजदूरी भुगतान अधिनियम।

अपराधिक विधियाँ :- 1.भारतीय दण्ड संहिता में महिलाओं के संबंध में बहुत सारी धारायें है, जिनमें महिलाओं के प्रति किये गये अपराधों तथा हिंसा के संबंध में अपराध की दंडित करने की व्यवस्था है। जैसे – भारतीय दण्ड संहिता – 228 ए-शिकार ग्रस्त महिला जैसे बलात्कार महिला के परिचय के संबंध में प्रकटीकरण करने के लिये दण्ड 2.धारा 304 (बी) दहेज के लिये कारित की गई मूत्यू 3.धारा 391 वैधपूर्ण संरक्षक से बच्चों का अपहरण।

पारिवारिक विधियाँ – महिलाओं को विधिमें वैधानिक हैसियत दिलाने के लिये चाहे वह उत्तराधिकार के बारे में हो, गोद लेने, विवाह विच्छेद या इसी प्रकार के सिविल मामलों में हिन्दु विधियाँ अधिनियमित की गई है। और इस संबंध में महिलाओं की स्थिति बहुत बराबर कर दी गई है।

पुरूषों एवं स्त्रियों के समान अधिकार का सिद्धांत सार्थक मौलिक मानवधिकार घोषणा में सम्मिलित किया जा चुका है। इस घोषणा का अनुच्छेद। यह उल्लेख करता है कि सम्पूर्ण मानव जाति, गरिमा तथा अधिकारों में स्वतंत्र एवं समान है घोषणा का अनुच्छेद 2 पद उल्लेख करता है कि प्रत्येक व्यक्ति लिंग को सम्तिलित किसी भी प्रकार के भेदभाव के बिना ही इस घोषणा में उल्लेखित

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र)शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.) भारत

स्वतंत्रता तथा सभी अधिकारों के हकदार होते है। यह स्पष्ट रूपेण उल्लेख करता है कि सार्वमौलिक मानवाधिकार घोषणा में सम्मिलित किये गये सभी अधिकार एवं स्वतंत्रा को किसी भेदभाव के बिना पुरूषों तथा स्त्रियों दोनों के लिये समान रूप से उपलब्ध है। अत: महिलाओं को पुरूषों के समान सुरक्षा करने का आधारमत सिद्धांत है।

सन् 1945 में केवल 25 राष्ट्रो द्वारा महिलाओं को राजनीतिक अधिकार दिये गये थे। एक वर्ष पश्चात् संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के उद्देश्यों को पूर्ण करने वाला एक प्रस्ताव पारित किया जिसके अंतर्गत सदस्य राष्ट्रों केा महिलाओं को पुरूषों के समान राजनीतिक अधिकार देने की सिफारिश की गई इसका उद्देश्य सार्वजनिक में सहभागिता प्राप्त करने हेतु महिला एवं पुरूष की समानता को सुनिश्चित करना है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर की प्रस्तावना में कहा गया है कि हम संयुक्त राष्ट्रों के लोग मूलभूत मानवाधिकारों में मानव की गरिमा और महत्व व मूल्य में तथा स्त्री पुरूष के समान अधिकारों में व्यस्त करते है। साथ ही चार्टर महिलाओं की समानता के अधिकार की घोषणा की गई। मानवाधिकारों का सार्वमौलिक घोषणा पत्र 1948 को सभी सदस्य राष्ट्रों द्वारा इसका सम्मान करने के लिये बाहय किया गया है। घोषणा पत्र के अनुच्छेद के अंतर्गत प्रत्येक इस घोषणा पत्र में तय किये गये अधिकारों और स्वतंत्रता हेतु अधिकृत है। बिना प्रजाति, रंग, भाषा, धर्म, सामाजिक उद्धव, सम्पत्ति के आधार पर विभेद नहीं किया जायेगा। इस प्रकार घोषणा पत्र में महिलाओं को बिना भेदभाव के अधिकारों की प्राप्ती का अधिकारी माना गया।

अनुच्छेद 16 (1) – के अनुसार वयस्क पुरूष व स्त्रियों को मूलवंश राष्ट्रीयता या धर्म के कारण किसी भी सीमा के बिना विवाद करने और कुटुम्ब स्थापित करने का अधिकार है।

अनुच्छेद 23 (2) – के अंतर्गत बिना भेदभाव के समान कार्य के लिये समान वेतन का अधिकार है। अर्थात समान कार्य के लिये स्त्रियाँ एवं पुरूष दोनों को समान वेतन दिया जाना अनिवार्य कर दिया गया है।

अनुच्छेद 26 (1) – के अनुसार सभी व्यक्तियों को शिक्षा पाने का अधिकार है। महिला शिक्षा के प्रतिशत जो कि विश्व के सभी देशों में पुरूषों की अपेक्षा बहुत कम रही है। इस कमी को दूर करने के लिये ही मानव अधिकार की सार्वभौमिक घोषणा में यह प्रावधान किया गया है कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है। चाहे वह स्त्री हो या पुरूष।

महिला अधिकारों को विशेष प्रावधान – महिलाओं के प्रश्न को सुलझाने हेतु संयुक्त राष्ट्र संघ ने महिला हैसियत आयोग की स्थापना की। महिला हैसियत आयोग 1946 महिलाओं के प्रश्न पर लोगों को जाग्रत करने के लिये और राजनीतिक विचार विमर्श की ओर अग्रसर करने के लिये महिला हितों की रक्षा की स्थापना की।

अनुच्छेद पर राज्यों को इस अनुच्छेद में गर्भावस्था के दौरान काम करने के लिये छूट तथा अवकाश देने का अधिकार दर्शाया गया है।

भारतीय संविधान के अतिरिक्त महिलाओं को संरक्षण देने वाले महत्व पूर्ण कानूनोंअधिनियमों की स्थापना की गई। जैसे – दहेज निषेध अधिनियम 1961, वेश्यावृति निवारण अधिनियम 1956 (संसोधन 1986), हिन्दु विवाद अधिनियम 1955, विशेष विवाद अधिनियम 1954, मुस्लिम विवाद भंग अधिनियम 1959, चिकित्सा गर्भ समाप्ति अधिनियम 1956, हिन्दू उत्तराधिकार 1956, दिल्ली पुलिस अधिनियम 1978 (महिलाओं के साथ छेड़खानी)।

73 वे संविधान में प्रावधान था कि पंचायतों के तीन स्तरों पर अर्थात् ग्राम पंचायत, पंचायत समिति और जिला पंचायत पर महिलाओं की एक–तिहाई भागीदारी, सदस्य और अध्यक्ष दोनों तरह के पदों पर होगी। इस प्रकार इस प्रावधान से पंचायतों के लगभग 34 लाख पदों में से 11 लाख पद महिलाओं के लिये सुनिश्चित हुये है। नई व्यवस्था के अंदर पंचायती राज संस्थाओं में दो–तिहाई सीटे महिलाओं के लिये उनकी जनसंख्या के आधार पर आरक्षित की गई है। आरक्षण के इस प्रावधान में सामान्य वर्ग की महिलाओं के साथ ही अनुसूचितजाति, जनजाति, तथा पिछडे वर्ग की महिलाओं के लिये भी उनकी जनसंख्या के अनुपात में एक तिहाई स्थान आरक्षित किये गये।

महिला अधिकारों का हनन रोकने, उन्हें सामाजिक न्याय दिलाने तथा स्वाभाविक हक दिलाने के लिये अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, राज्य मानव अधिकार आयोग तथा राष्ट्रीय महिला आयोग जैसी संस्थाओं का गठन किया गया है। जो महिलाओं को शोषण से मुक्त कराकर अधिकारों के प्रति जागरूक कर रही है। केन्द्र द्वारा महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक राष्ट्रीय नीति लागू की जा रही है।

पूर्व प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने राष्ट्र मंडल के महिला मापदण्डों के मंत्रियों की छठी बैठक का उद्घाटन करते हुये कहा था कि 'महिलाओं के मानवाधिकार सुनिश्चित करना सभी नागरिकों के बुनियादी अधिकारों की रक्षा लोकतांत्रिक भारत की महत्वपूर्ण प्रतिबद्धता है। इस प्रतिबद्धता के अनुगमन के रूप में राष्ट्रीय महिला आयोग ने महिला पारिवारिक अदालत के नाम से महिला लोक अदालतों को प्रायोजित करने का निर्णय लिया।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. महिला सशक्तिकरण – रमा शर्मा एम.के. मिश्रा।
2. भूमंडलीकरण के दौर में सा–सुरक्षा एवं महिला कल्याण – डॉ.मुकेश कुमार वर्मा
3. महिला विकास – रमा शर्मा, एम.के.मिश्रा।
4. महिलाओं के मौलिक अधिकार – रमा शर्मा, एम.के. मिश्रा।

****

Role Of Emotional Intelligence In Teaching Effectiveness

Tarannum S. Dani * Dr. J.C. Ajawani **

Abstract - The study examined the role of emotional intelligence in teaching effectiveness. The sample was comprised of 160 male teachers (80 emotionally high intelligent and 80 emotionally low intelligent) randomly selected from a larger population of teachers from various schools of Raipur city. Respondents were administered Emotional Intelligence Scale (EIS) and Self-Perceived Teaching Effectiveness Scale (SPTES). Apart from it, teaching effectiveness scores were also obtained through students' (SET) and principal's (PET) evaluation. The analysis revealed significant difference in favour of emotionally high intelligent teachers, as it was hypothesized.
Keywords- Emotional Intelligence, Teaching Effectiveness

Introduction - In the modern achievement-oriented society it is of utmost importance that a child must enjoy an effective learning environment from very beginning of his academic life. He does not need only to succeed on academic and career front but also at his social and personal levels. And to achieve this broader target, he needs effective teachers and effective teaching. Effective teacher is one who is high on cognitive and emotional intelligence along with high level of adjustment capacity apart from other technical knowledge and teaching skills (Shulman, 1987). Some of the earliest researches on teaching effectiveness focused on the personal qualities of teachers themselves (Medley, 1979).

Bradbery & Greaves (2005) assert that emotional intelligence is the "something" in each of us that is a bit intangible. It means how a person manages behaviour, navigate social complexities, and make personal decisions that achieve positive result. Bar-On (1997) proposed that emotional intelligence was made up of a series of overlapping but distinctly different skills and attributes that could be grouped under five general theme areas or "realms".

These realms can further be subdivided into fifteen components or scales as below:

1. Intrapersonal Realm- This realm of EI is concerned with "inner self". This realm comprises:

i. **Emotional Self-Awareness-** This is the ability to recognize one's own emotions.
ii. **Assertiveness-** This is the ability to express feelings, beliefs, and thoughts and to defend one's rights in a nondestructive manner.
iii. **Self-Regard-** This is the ability to respect and accept oneself as basically good.
iv. **Self-Actualization-** This is the ability to realize one's potential capacities.
v. **Independence -** This is the ability to be self-directed in one's thinking and action to be free of emotional dependency.

2. Interpersonal Realm- This realm is essentially concerned with one's ability to be aware of others' feelings, concerns, and needs. This realm comprises:

i. **Empathy -** This is the ability to be aware of, to understand and to appreciate the feelings and thoughts of others.
ii. **Interpersonal Relationship -** This social skill is based on sensitivity toward others.
iii. **Social Responsibility -** This is the ability to demonstrate oneself as cooperative, contributing, and constructive member of social group.

3. Adaptability Realm-This realm of emotional intelligence is concerned with a person's ability to size up and respond to a wide range of difficult situations. This realm comprises:

i. **Problem-Solving -** This is the ability to effectively solve the problems of personal and interpersonal nature. This is also associated with a desire to do one's best and to confront problems, rather than avoiding them.
ii. **Reality Testing -** This essentially involves tuning into the immediate situation, attempting to keep things in correct perspective as they really are without excessive fantasizing about them.
iii. **Flexibility-** This is the ability to adapt one's feelings, thinking and behaviour to new situations.

4. Stress Management Realm-This realm is concerned with one's ability to understand stress without falling apart or losing control in any situation. This realm comprises:

i. **Stress Tolerance-** This is the ability to withstand and deal with adverse events and stressful situations without getting overwhelmed by actively and positively coping with stress.
ii. **Impulse Control -** This is the ability to resist or delay an impulsive drive or temptation to act.

5. Mood Management Realm - This realm determines one's ability to enjoy oneself, others and life in general, as well as influences one's general outlook on life with an overall feeling of contentment. This realm comprises:

i. **Happiness -** This component of EI involves the ability to enjoy various aspects of a person's life and life in general.
ii. **Optimism:** This is the ability to maintain a positive and hopeful attitude towards life even in the face of adversity.

* Research Scholar (Psychology) Govt. Arts & Commerce Girls' College, Devendra Nagar, Raipur (C.G.) INDIA
** H.O.D (Psychology) Govt. Arts & Commerce Girls' College, Devendra Nagar, Raipur (C.G.) INDIA

Teachers must have high emotional intelligence too which will equip them to carry out their functions as educators with the highest regard. They must undertake the job of educators as noble as possible. This is because teachers are regarded as someone very high in all societies. Effective teachers help in producing a generation with good virtues.

In a study carried out by Brackett et al. (2010) with secondary-school teachers in England, it was observed that the teachers' emotional intelligence predicted level of burnout, confirming a recent study where teachers' ability to regulate emotions was related to their perceived level of depersonalization, self-regulation, and emotional wear (Mendes, 2003). Brackett et al. (2010) also suggested that teachers with high emotional intelligence used more positive, well adopted coping strategies when dealing with different sources of stress at school and they felt greater satisfaction with their work. The influences of emotional intelligence on stress level and work satisfaction thought to be mediated by a greater amount of positive affect which the teachers experience and by the support of school authorities.

Problem & hypothesis - In the present research authors intended to study role of emotional intelligence in teaching effectiveness of teachers.

It was hypothesized that teachers who were high on emotional intelligence would show better teaching effectiveness than those who were emotionally low intelligent.

Methodology - Sample - The present study was carried out with 160 male school teachers (80 emotionally high intelligent and 80 emotionally low intelligent) randomly selected from an incidental larger population of middle/high school teachers of Raipur city.

Tools - Following psychological tests were used for assessing two different dimensions under consideration in the proposed research.

1) Measurement of Emotional Intelligence – Emotional Intelligence Scale (Ajawani et al., 2002) was used to assess emotional intelligence level of teachers.

2) Measurement of Teacher's Efficacy – Teacher's Efficacy Test (Ajawani & Dulhani, 2011) was used to determine teachers' effectiveness, which involved self-perceived appraisal (SPTES), principal's evaluation (PET), and students' evaluation (SET).

Procedure - Initially an emotional intelligence scale was administered on 800 incidentally selected teachers of middle/ high schools of Raipur city. On the basis of Q_1 and Q_3 statistics on emotional intelligence scores, these teachers were classified as of high or of low emotional intelligence. Eighty emotionally high and 80 emotionally low intelligent teachers were selected randomly and their teaching effectiveness was ascertained through self-perceived appraisal, students' evaluation and principal's evaluation. Composite scores were obtained and considered for further computations.

Results and discussion - It is clear from Table 1 that average teaching effectiveness score of teachers in high emotional intelligence group (M = 315.7063) was higher than that of low emotional intelligent group (M = 302.6325). The obtained t ratio for this difference (t = 4.09) was significant at .01 level of significance for 158 degrees of freedom and provided empirical ground to conclude that teachers with high emotional intelligence showed better teaching effectiveness than those with low emotional intelligence.

Table-1 (See in below)

The overall result permitted to conclude that excellence of emotionally high intelligent teachers over emotionally low intelligent teachers in regard to their teaching effectiveness was true. In other words, it can be said that emotionally high intelligent teachers truly showed better teaching effectiveness than emotionally low intelligent teachers.

It can be concluded that emotional intelligence was positively associated with teaching effectiveness of teachers, that is, emotionally high intelligent teachers defiantly enjoyed a better state of teaching effectiveness than those teachers who were low in emotional intelligence. This is probably due to possession of various positive skills i.e., self-regard, self-actualization, empathy, flexibility, impulse control, and happiness, pertaining to emotional intelligence.

References -

1. Ajawani, J.C., & Dulhani, S. (2011). Teacher's Effectiveness Scale. F.S. Management India, Pvt. Ltd., F.S. House, Maruti Vihar, Raipur (C.G.), India.
2. Ajawani, J.C., Bhatpahari, G., & Hussain, M. (2002). Emotional Intelligence Scale. F.S. Management India, Pvt. Ltd., F.S. House, Maruti Vihar, Raipur (C.G.), India.
3. Bar-On, R. (1997). The Emotional Intelligence Inventory (EQ-I). Toronto, Canada: Multi-Health Systems: Technical Manual.
4. Brackett, M., Polamera, R., Mojsa-Kaja, J., Reyes, M.R., & Salovey, P. (2010). Emotion-regulation ability, burnout, and job satisfaction among British secondary-school teachers. Psychology in the Schools, 47(4), 406-417.
5. Bradbery, T., & Greaves, J. (2005). The Emotional Intelligence Quick Book. New York: Simon and Schuster.
6. Medley, D.M. (1979). Teachers' Effectiveness. In H.E. Mitzel (Ed.), Encyclopedia of Education Research (5th Ed.). The Free Press, New York, N.Y. (1982).
7. Mendes, E.J. (2003). The relationship between emotional intelligence and occupational burnout in secondary school teachers. Dissertation Abstract: 2003-95-008-284.
8. Shulman, S. (1987). Those who understand: Knowledge growth in teaching. Educational Researcher, 15, 4-14.

Table-1- Statistical Details For Teaching Effectiveness Scores

Comparison Group	n	M	x^2	t value	Probability
Emotionally HighIntelligent	80	315.7063	48541.77	4.09	P<.01
Emotionally Low Intelligent	80	302.6325	16048.12		

Study Of Cognitive Abilities And Emotional Stability In Relation To Age

Sunita Dhenwal * **Preeti Mathur** **

Abstract - The purpose of this study research was to determine the cognitive abilities and emotional stability in relation to age. The sample consisted of 100 students into two groups- Group I and Group II. In this study stratified random sample taken to chose subjects. The General Mental Ability Test by Joshi(1956) and Maudsley Personality Inventory by Jalota & Kapoor (1972). The data analyzed on the basis of Inferential statistics such as t-test was computed to determine whether significant difference exist among chosen groups on selected variables- Intelligence and Emotional Stability and also correlation was used between Intelligence and Neuroticism.

Key words - Cognitive ability , emotional Stability.

Introduction - Emotions are defined as affective process or state which originates in the psychological situation which is revealed by marked bodily changes in smooth muscles,glands and gross behaviours. Emotions differ from intraorganic feeling is that they arise from a psychological situation that always includes an environmental factor . Emotional stability is not only one of the effective determinants of the personality patterns but it also helps to control the growth of adolescent development.Gessel(19610 proposed a theory that nearly all development is controlled by motivation and dependent on practice or experience. He told that stability relative freedom from the well known constellation of inferiority,egotism and competitiveness. The concept of emotional stability behaviours at any stage of development refelects the fruits.

Cognitive abilities are affected not only by certain innate characterstics but also by certain factor that work out side the child. Cognitive abilities are atmoshphere are full of love,apperception and warmth that is really congenial for the development of the child. Intellgence is most important cognitive ability . Intelligence includes a wide range of very sophisticated cognitive activities which develop via the interaction of phylogentic predispositions and outgentic experiences.

Upmanyu and Vasudava (2008) didn't find find any significant effect of neuroticism on intelligence but individual with high scores on psychoticism scale showed less effective performance on intelligence test. It is also seen that extraversion will be positively correlated with intelligence.

Looking at present scenario a study was undertaken to evaluate with the emotional stability of students with cognitive abilities withfollowing objectives-

1. To study relationship between emotional stability and cognitive abilities.
2. To find out the difference between the neuroticism and intelligence of different age.

Methodology- The sample of the present study consisted of 100 students of different groups- I Group(12-15 years of both gender) ; II Group (16-19 years of both gender)

Research Tools –

1. General Mental Ability Test- It's developed by M.C.Joshi (1956) which consists 100 items of graded difficulties mental abilities . Every field have 10 questions other three (Numerical,Classification,Analogy) have 20 questions . The correlation coefficient is between .53 to .91.

2. Maudsley Personality Inventory- This inventory was developed by H.J.Eysenck in Maudsley Hospital (Britain) and it's hindi revised test was constructed by S.S.Jalota and S.D.Kapoor(1972). In this inventory two scales are used . All the items answerable in category "Yes",are assigned with a 2 score (excepting 8 items nos-14,16,18,22,24,30,36, &40 are answering 2 scores only when answered in category "NO") and all "?" answers are assigned with 1 score. It's correlation coefficient is 0.85.

Result –Obtained results shown through tables-

Table 1,2,3 (See in next page)

Disscussion- The present study was an attempt to find out the relationship between cognitive abilities and emotional stability in relation to age. The two age groups was taken. The Table 1 shows intelligence is related with emotional stability. It means high intelligent,more emotional stable.The table 2 shows that group A is more emotional unstable than group B , significant difference between both groups at both variables was not found. Table 3 shows that both traits i.e. Neuroticism and Intelligence are negatively correlated.

A.P.Singh(2008) found that neuroticism was related with the accidents. Non-accident group of workers tend to less neurotic and neuroticism level is higher in accident groups. According to Scheir(2001) the term neurosis refers to class of behaviours. The difference in emotional stability of males and females may due to fact that females are anxious very soon. Females are less emotionally stable as compared to

* Research Scholar ** Professor (Psychology) Jai Narain Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA

male students. They get frustrated easily as compared to males.

In this research purporting to show generally determined group differences in intelligence.

References-

1. Eysenck,H.J.et.al(1972)- Manual of maudsley personality inventory,London,U.K.
2. Gessel(1976)-Cognitive development ; Annual review of psy. Vol-27,Cornell University,New York.
3. Joshi,M.C(1956)- Manual of General mental ability test , Jodhpur University,Jodhpur.
4. Scheir(2001)-A comparative study of certain: cognitive abilities of students of education,Calicut.
5. Singh,A.P(2008)- Neuroticism,extraversion and accidents, Indian Psychological Survey,Vol-16.
6. Upmanyu & Vasudava(2008)- Personality and social development continuity; stability and change in daily emotional experience across child development,vol-73.

Table 1 showing Spearsman's rho between Neuroticism and Intelligence score by both group A and group B

Age Group	Variables	rho	Interpretation
Group A(12-15years)	Neuroticism	-0.22	Low Negative Correlation
Group B(16-19years)	Intelligence	-0.35	Low Negative Correlation

Table 2 showing Mean,Standard Deviation and 't' value of Neuroticism and Intelligence-

Variables	Groups	Mean	S.D.	t	Significant level
Neuroticism	Group A(12-15years)	23.7	42.12	0.90	Not Significant
	Group B(16-19years)	15.4	27.37		
Intelligence	Group A(12-15years)	59.97	106.57	0.62	Not Significant
	Group B(16-19years)	80.03	142.22		

Not Significant at both level

Table 3 showing Pearson's Product Moment Correlation between Neuroticism and Intelligence-

Variables	Correlation	Interpretation
Neuroticism- Intelligence	-0.16	Very Low Negative Correlation

****

जे. कृष्णमूर्ति के क्रांति - दर्शन में गुरू का स्थान

डॉ. आशा चौधरी *

प्रस्तावना – जे. कृष्णमूर्ति के दर्शन को जो आज क्रांति-दर्शन का नाम सहज रुप से दिया जाता है तो वह सर्वथा उपयुक्त ही है क्योंकि उन्होंने अपने दर्शन का जो लक्ष्य निर्धारित किया था वह था जन मानस को परंपरागत धार्मिक विश्वासों को अमान्य करने में सक्षम बनाना। बात जब धर्म की हो तो चाहे पूरब हो या पश्चिम, धर्मान्धता की कोई कमी नहीं मिलती। इसलिये, जब जब भी किसी विचारक ने धर्म में आमूल परिवर्तन का प्रयास किया है मानो उसने बर्र के छत्ते में ही हाथ डाला है। यह जे कृष्णमूर्ति की अनुपम विशेषता ही कहीं जा सकती है कि भारत जैसे गुरूओं के देश में रह कर भी वे गुरू की सत्ता को चुनौती देने का अति संवेदनशील तथा असंभव सा ही कार्य करने का दुस्साहस कर रहे थे। इसके पीछे उनका अपना क्या लक्ष्य हो सकता था ? वास्तव में वे चाहते थे कि मानव यथार्थ से परे भाग कर, पलायनवादिता का मार्ग छोड़ कर स्वयं में ही यकीन करना सीखे।

उनकी अपनी स्पष्ट धारणा थी कि स्वयं मानव द्वारा रचित मोक्ष आदि की विधियों की शरण में जाने के स्थान पर मानव में अपने मोक्ष की आप ही चेतना जागृत होनी चाहिये। अपने मोक्ष के लिये गुरू अथवा अन्य किसी मसीहा का मुंह तकने के स्थान पर मानव को वे इस मार्ग का आत्मविश्वासी पथिक बनाने की प्रबल इच्छा रखते थे। अत: उनका मत था कि मानव में स्वमोक्ष हेतु आत्मविश्वास की परम धारणा विकसित होनी आवश्यक है। प्रथम दृष्टया इस बात में कोई नवीन बात नहीं दिखती तथा, यह भी लगता है कि प्राय: हमारे देश में स्वमोक्ष के लिये इस प्रकार की अनेक धारणाऐं प्रचलित रही हैं। हमारे देश में युगों युगों तक ऋषियों ने साधारण मानव को मोक्ष का मार्ग दिखाने का अनुपम कार्य किया है। प्राय: ऐसा कोई युग न बीता होगा कि किसी न किसी गुरू अथवा महामानव ने सामान्य जन को राह न दिखलाई हो। हमारे देश का दर्शन व धर्म का पूरा का पूरा इतिहास कहें कि इसी प्रकार के मसीहाओं, धर्मात्माओं, धर्मगुरूओं, स्वामियों तथा अवतारों का ही इतिहास कहा जा सकता है। जब जब हम इसे खंगालने का प्रयास करते हैं इतिहास की खुलती जाती खिड़कियों से हमें ऐसे अनेकानेक महामानवों के दर्शन होते हैं जिन्होंने अपने जीवन का उत्सर्ग इसी हेतु कर दिया कि मानव का परम कल्याण हो, उसे उसके सर्वोच्च लक्ष्य की प्राप्ति हो।

मानव का सर्वोच्च लक्ष्य क्या ?

भारतीय दर्शन के अध्येता को यह बताने की आवश्यकता नहीं कि यह सर्वोच्च लक्ष्य है मोक्ष। इस मोक्ष की प्राप्ति के लिये ऋषियों के बताए मार्ग पर चलना परम अनिवार्य माना गया। अनेक संतों ने मोक्ष के लिये मानव को राह दिखाई जिनमें हम महावीर व बुद्ध जैसे नाम भी पाते हैं। ठीक है कि उनके अपने जीवन में मानवमात्र के दुख त्राण का ही लक्ष्य रहा था। उन्हें अपने व्यक्तिगत कुछ स्वार्थ न रहे थे किंतु ध्यान देने की बात तो यह है कि उनके बताए मार्ग पर चल कर कितनों को मोक्ष मिला ? इस बात का कोई निश्चित् उत्तर नहीं हो सकता। हर धर्म के, हर मसीहा के अपने अपने रास्ते होते हैं जिन्हें अपना कर मोक्ष पाया जा सकता है। स्वयं कृष्णमूर्ति का जीवन जिस प्रकार के सांचे में ढालने के प्रयास किये जा रहे थे उसके आधार पर यही कहा जा सकता है कि वस्तुत: वे एक मसीहा के रूप में परिवर्तित किये जा रहे थे। किंतु क्या मसीहा इस प्रकार बनते हैं ?

अर्सा पूर्व ब्रह्म विद्या प्रचार संघ ने भारत में जगत गुरु के आगमन की भविष्यवाणी करते हुए कृष्णमूर्ति को ही वह मसीहा जगत् गुरु बताते हुए, उन्हें 'पूर्व के तारे (The Star of the East) के रुप में प्रचारित किया था। स्वयं कृष्णमूर्ति ने भी मद्रास में अपने एक उद्‌बोधन में माना था कि सबको उस जगत गुरु का इंतजार है, जो मानव मात्र के सामने स्वयं को एक अप्रतिम आदर्श के रुप में प्रस्तुत करने आ रहा है। जगत् में 'उसका पर्दापण होता ही इसलिये है कि वह मानव को उसकी पूर्णता की प्राप्ति करा सके। वह अज्ञानी पीड़ित व दीन-हीन जन को प्रसन्नता की राह पर ले जाने के लिये ही संसार में आता है।'[1]

पुन: वे कहते बताए जाते है कि 'मैं उन मानवों के लिये आया हूँ जिन्हें सहानुभूति चाहिये तथा जो प्रसन्नता की तलाश में है। मैं इस विश्व में सुधार करने को आया हूँ। नव निर्माण करने के लिये आया हूँ विनाश करने के लिये नहीं।'[2] अर्थात वे स्वयं को मसीहा अथवा गुरू के रूप में मान रहे थे। लेकिन हैरानी की बात है कि वे अचानक ही ब्रह्म-विद्या प्रचार संघ के विरोध में खड़े हो गए। सन् 1925 में जहाँ संघ के स्वर से स्वर मिला कर उन्होंने जगत गुरु की धारणा को स्वीकार किया था किंतु अगले ही वर्ष 1926 में उन्होंने मसीहा या जगत् गुरु बनने का इरादा बिल्कुल त्याग दिया। यहाँ तक कि पूर्व के तारे की उपाधि को भी त्याग दिया। क्यों ?

ऐसे अनेक सवाल क्यों उठते हैं जिनके जवाब में कहा जा सकता है कि उन्हें सत्य का साक्षात्कार हो गया था। वे जान गए थे कि सत्य कोई प्रचार की चीज नहीं है। उन्हें अहसास हो गया था कि धर्म व ईश्वर के नाम पर निर्मित अनेक संघ व संगठन धर्म-संप्रदाय अलग-अलग विश्वासों पर आधारित हो कर मानव में पृथकता के ही बीज बोते हैं। मानव को मानव से अजनबी बनाते हैं पृथकता के इन्हीं भावों के चलते मानव ने ऐसे संप्रदायों से केवल भय व मानसिक क्लेश ही पाए हैं। इनसे किसी ने मोक्ष नहीं पाया। इनसे किसी ने ईश्वर को नहीं पाया। स्वयं ये संस्थाएं संघ संघटन या संप्रदाय भी ऐसा कुछ नहीं पा सके हैं। वे विचारों को सीमाबद्ध करने का पक्ष नहीं लेते। कौन है जो समुद्र के जल को बाँध सकता है ? सीमा में बंधना तो अपूर्णता को ही दर्शाता है हवा को भाप बाँध सकते हैं, उसे प्रदूषित कर सकते हैं किंतु जो हवा सबके लिये है उसे आपका नियंत्रण मंजूर नहीं, आप उसे नियंत्रित नहीं कर सकते। अत: कृष्णमूर्ति मत-मंतातरों से भरे किसी धर्म या मतवाद में आस्था नहीं

* विभागाध्यक्ष (दर्शनशास्त्र) शासकीय जे. योगानन्दम छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत

रखते न ही वे ऐसे 'शिष्य ही बनाते थे न ही उन्हें जगत् गुरु, मसीहा या आचार्य की पदवी ही स्वीकार थी।'[3]

यहाँ उनकी तुलना महात्मा बुद्ध तथा महर्षि वशिष्ट से की जा सकती है जिनकी शिक्षा थी कि मेरे कथन को सुनो, कर सको तो उस पर यकीन करो, कर सको तो उस पर विचार करो, तथा फिर तुम्हें जो सत्य प्रतीत हो उसे ही स्वीकार करो भ्रम मत रखो। अंतिम सत् अनुभवगम्य है वह विवाद से परे है। ब्रह्मज्ञान का प्रलाप करे वह बुद्धिमान नहीं, वह गुरू तो बिल्कुल भी नहीं। उनका आशय है कि यदि हम आत्म-बोध की किसी मानव रचित विधि की कल्याण करें या ऐसे गुरुओं द्वारा निर्देशित किये जा रहे रास्तों को अपनाएं तो होना यही है कि हम आत्म बोध के पथ से और परे होते जाएंगे। आत्मबोध के लिये किसी सिद्धांत-विशेष की तलाश हमें उस सिद्धांत विशेष के अनुरुप आचरण व निर्णय लेने को मजबूर करती है। इससे आत्मबोध कभी उपलब्ध नहीं हो सकता। वे मानते हैं कि सीमाविहीन आत्मबोध तो एक ऐसी अनवरत् बहती जाने वाली धारा के समान है जिसमें मनुष्य जितना गहरे पैठने की कोशिश करता है,'उतने ही नवीन आयामों के क्षेत्र और खुलते जाते हैं। तथा हम किसी भी निर्णायक बिंदु पर नहीं पहुँच पाते'[4] लेकिन मानव को अपने भीतर किसी अद्भुत शांति का अनुभव होता है, ठीक वैसी ही शांति जो सृजन के क्षणों में प्राय: मानव को हुआ करती है।

इस संदर्भ में उनके मत को ध्यान से देखें तो यही ज्ञात होता है कि मानव व विश्व के इस मूलभूत परिवर्तन के लिये वे किसी को नेतृत्वकर्त्ता, नेता या मसीहा के रुप में स्वीकारने के जरा भी पक्ष में नहीं है। ये मसीहा ये नेता मनुष्य के किसी काम के नहीं। ये आत्मलीन, स्वोपकार से प्रभावित जन मानव को अपना अनुयायी बना कर रख देने भर के ही पक्ष में दीखते हैं। कहीं तो कोई तो बताए कि किन्हीं सद्गुरु आदि से दीक्षित होकर कोई मोक्ष का अधिकारी हुआ ? आत्मलाभ तक पहुँचा। ये स्वयं अभी आत्मलाभ से कोसों दूर गुरु या धार्मिक नेता स्व-उपकार के पश्चात ही परोपकार की ओर अभिमुख होते दीखते हैं। आत्मलाभ तो वह स्थिति है जो शब्दों से, कथा-कीर्तन, पाँडित्य भरे संभाषण आदि से नहीं बल्कि शांत, परिपूर्ण सौम्य मौन से ही मुखर होती है। इसके लिये तो मानव मानस की गहन गुह्य कंदराओं में उतरना होगा और यह कार्य स्वयं मनुष्य को ही करना होगा आप ही आप करना होगा। मैं मेरे मन के गहरे में उतर सकता हूँ गुरु गुरु के जन के गहरे में उतर सकता है। फिर कौन मसीहा ? किसका मसीहा ? हाँ

गुरु या मसीहा की आवश्यकता इतनी अवश्य है कि वह उस मार्ग की ओर हमें ले चले। मंजिल तक अंतत: हमें खुद ही जाना होगा। वहाँ तक हमें अकेले ही जाना होगा गुरु को उसकी मंजिल मिल गई, अब वह हमारे साथ हमारी मंजिल तक नहीं जा सकता। उसे इसकी आवश्यकता भी नहीं क्योंकि इस मंजिल का रास्ता बड़ा संकरा है इसमें दो नहीं समाएंगे, न ही वहाँ गुरु के लिये कोई रिक्त स्थान है। बल्कि वहाँ पहुँच जाने पर तो सारा विश्व अपना हो जाता है। समाने को सारा विश्व उसमें समा सकता है, समा जाता ही है किंतु अहं भाव से युक्त किसी मसीहा या उच्चतर के लिये वहाँ कोई जगह नहीं क्योंकि तब सब कुछ एक समान, एक स्तर का ही हो सकता है। अवश्य ही आरंभ का मार्ग तय करने में गुरु सहायक होता है किंतु भ्रम के निवारण के लिये सद्गुरु की प्राप्ति इतनी आसान तो नहीं। एक तरफ जीवन की अद्भुद अनसुलझी समस्याएं दूसरी ओर चित्त को भ्रमों का शिकार बनाती अर्धविकसित बुद्धि ऐसे में गुरु अपेक्षित हो आता है किंतु कृष्णमूर्ति मानते हैं कि सद्गुरु की खोज अपने आप में एक दुर्लभ कार्य है। वह तो न मिलेगा हाँ खोजते-खोजते यदि मानव अपने पूर्वाग्रहों आदि से मुक्त होकर आत्मविश्वस्त होकर आत्मलाभ का लक्ष्य ले कर चल ही पड़े तो धीरे-धीरे उसके भीतर एक आमूलचूल रुपांतरण होने लगेगा। ऐसा प्रतीत होता है कि उन्हें आत्मलाभ मिल गया था इसीलिये उन्होंने स्वयं का गुरू कहलाने का कथन सर्वथा त्याग दिया था। इसी रुपातंरण को क्राँति का नाम दिया जा सकता है। इस 'रुपातंरण या क्राँति5 से न केवल मनुष्य विशेष वरन् सारा का सारा समाज नवीन जीवन-शक्ति से अनुप्राणित हो जाएगा। समाज की जीवन शैली को मोड़ देने में समर्थ ऐसी क्राँति के लिये वे पुरुष को महापुरुष में अवतरित होता देखना चाहते हैं। समय के साथ-साथ, सत्य पर समय की धूल जम कर मिथ्यापन व मिथ्याचार के जो आवरण पड़ जाते हैं उन्हें हटाने के लिये ही ऐसे महापुरुषों का अवतरण होता है जो मानव को परिपूर्णता की ओर ले जाने के वाहन बनते हैं सत्य पर पड़ गए आवरणों को हटा कर सत्य का पुर्नप्रकाशन करते हैं किंतु कदम ताल तो महापुरुष के साथ मानव को ही करनी होगी तभी वह अपनी परिपूर्णता के लक्ष्य को पा सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Motwani Kewel, ` J. Krishnanmurthi, An Introduction Ganesh & Co. Pvt. Ltd., Madras, 1957, P-12
2. Motwani Kewel, ` J. Krishnanmurthi, An Introduction Ganesh & Co. Pvt. Ltd., Madras, 1957, P-12
3. Ibid-P 77
4. K.J. Who Brings the truth star publishing trust madras, 1928, PP, 14-15
5. Talks on "At the feat of the Master" Theosophical society, varanasi, 1950, P.S.

****

बड़वानी जिले के सन्दर्भ में प्राकृतिक पर्यावरण संसाधनों का संरक्षण एवं प्रबंधन

सुरेश अवासे *

शोध सारांश – प्राकृतिक संसाधनों का सजीवों एवं मानव जीवन में इतना अधिक महत्व वर्तमान समय में हो गया है, मनुष्य की आज आवश्यकताएँ इतनी अधिक हो गई है। कि इन आवश्यकताओं की पूर्ति प्राकृतिक संसाधनों के बिना सम्भव नहीं है। आज यह मनुष्य पर निर्भर करता है कि किस प्रकार इन महत्वपूर्ण संसाधनों का उपयोग करे जिससे कि भावी प्रगति में बाधा उत्पन्न नहीं हो, मानव की प्रगति विकास एवं उन्नति प्राकृतिक संसाधनों पर ही आधारित है।

प्राकृतिक संसाधन मनुष्य जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करते है जैसे की भोजन, जल, वायु, ईधन, ताप, प्रकाश, ऊर्जा आदि। प्राकृतिक संसाधनों से प्राप्त उत्पादों से आवासों की साज–सज्जा के लिए लकड़ी, फर्नीचर, कलात्मक वस्तुओं का निर्माण तथा दैनिक जीवन में काम आने वाले सुख–सुविधाओं के साधन, कारें, मोटरयान, रिफरेजिरेटर्स, खजिन एवं अयस्क तथा अन्य उपयोगी पदार्थ प्राप्त होते है।

आज वर्तमान में बड़वानी जिले में प्राकृतिक संसाधनों की यह स्थिति है कि पीने योग्य पानी नहीं मिल रहा ग्रामीण इलाकों में और दिनो–दिन वृक्षों की कटाई की जा रही है। खनन माफिया बहोती गाँव से अपनी मन मर्जी से बालु रेत का खनन कर के व्यापार कर रहे है। और आज बड़वानी जिले में वन्य प्राणी एक भी आपकों जंगलों में देखने को भी नहीं मिलेगा, नर्मदा नदी किनारे एवं गोई नदी के किनारे मिट्टी का कटाव दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। बड़वानी जिले के प्राकृतिक संसाधनों की देख रेख एवं संरक्षण नहीं किया गया तो भविष्य में आने वाली पीढ़ी प्रभावित होगी। जैसे की प्राकृति के अविवेकपूर्ण दोहन के कारण प्रतिवर्ष जलस्तर की कमी मिटटी का कटाव, बाढ़ का प्रकोप, भूमिगत जल स्तर में कमी एवं वायु मण्डल में शुष्कता के प्रभाव में वृद्धि होगी वृक्षों की आन्धाधुंध कटाई एवं विनाश के कारण। भू–क्षरण एक भयानक स्थिति हो गई है, वृक्षों की कमी कारण वर्षा की कमी भूमिगत जलस्तर की कमी भूमि उत्पादक क्षमता में कमी, शोर प्रदुषण को रोकने में विसंगति या कमी आ जाती है।

प्रस्तावना – बडवानी जिले की स्थापना 25 मई 1998 को हुई। पूर्व में यह जिला खरगोन (पश्चिम निमाड) जिले का एक भाग था। बड़वानी जिला मध्यप्रदेश के दक्षिण पश्चिम दिशा में स्थित हैं। नर्मदा नदी इसकी उत्तर सीमा बनाती है। जिले के दक्षिण में सतपुडा एवं उत्तर में विध्याचल पर्वत श्रेणियां है। निमाड जिले की तहसील बड़वानी चूकी अपने–आप में एक जिले की तरह थी। यहॉ के निवासियों के लम्बे समय से संघर्ष और प्रशासकीय सुविधाओं को देखते हुए अन्तत: मध्यप्रदेश शासन ने बड़वानी को जिला बनाकर यहॉ के निवासियों को जो सौगात दी है। वह एक ऐतिहासिक सुखद पृष्ट बन गई है। प्रशासकीय एवं सामान्य ज्ञान की दृष्टि से इस जिले की ऐतिहासिक भूमि तथा इसके स्वरूप व सीमाओं की प्रस्तुती आवश्यक है। पूर्व में यह जिला खरगोन (पश्चिम निमाड) जिले का एक भाग था। बडवानी जिला मध्यप्रदेश के दक्षिण पश्चिम दिशा में स्थित है।

बड़वानी जिले कि ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि–मध्यप्रदेश में 04 चार ऐसे जिले है जिसमें भारतीय संविधान के प्रावधाननुसार राष्ट्रपति द्वारा अनुसूचित क्षेत्र घोषित किया गया :– बड़वानी, झाबुआ, मण्डला और डिण्डोरी। पिछडेपन की दृष्टि से बड़वानी जिले का अन्य जिलो की तुलना में दूसरा स्थान है। जिले में 67 प्रतिशत जनसंख्या अनुसूचित जनजाति के अर्न्तगत आती है और साक्षरता दर 50.2 प्रतिशत है। जिले के 07 सात विकासखण्ड़ में से पाटी, निवाली एवं सेन्धवा का कुछ क्षेत्र है जिनमें दूसरे विकास खण्ड़ो की अपेक्षा अनुसूचित जनजाति का प्रतिशत अधिक एवं साक्षरता प्रतिशत कम है। वर्ष 2011 की जनगणनानुसार। जिले का क्षेत्रफल 5422 वर्ग किलोमीटर और कुल जनसंख्या 1385659 है। जिसमें अनुसूचित जनजाति एवं अनुसूचित जाति (आर्थिक सामाजिक दृष्टि से कमजोर वर्ग) का प्रतिशत जिले में क्रमश: 67.0 और 6.3 है। जनसंख्या का घनत्व 256 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है। एवं बड़वानी का एक ऐतिहासिक प्रतिक है, जो तीर गोला के नाम से जाना जाता है। यह खण्ड़वा–बड़ौदा मार्ग पर सागर विलास पैलेस के सामने स्थित है, और राजा–रणजीत सिहं के दिवंगत बेटे की याद में बनाया गया था। आजादी से पहले बड़वानी शहर के पेरिस के रूप में जाना जाता था।

स्थिति एवं विस्तार–प्रस्तुत शोध का क्षेत्र बड़वानी जिला है, बड़वानी जिला मध्य प्रदेश के दक्षिणी छोर पर नर्मदा नदी के किनारे बसा हुआ है। जिला दक्षिण में सतपुड़ा एवं उत्तर में विंध्याचल के वनों से घिरा हुआ है। इसका दक्षिण में महाराष्ट्र पश्चिम में गुजरात पूर्व में खरगोन जिला एवं उत्तर में धार जिला बड़वानी की सीमाऐं बनाते हुए उसे तिकोना आकार देते है। बड़वानी जिला 210 370 से 220 220 उत्तरी आकांष से 740 270 से 750 300 पूर्वी देशान्तर के बीच विस्तारित है। जिले का क्षेत्रफल 3665 वर्ग किलोमिटर है। इसकी पूर्वी सीमा 363 किलोमिटर एवं दक्षिण सीमा 273 किलोमिटर लंबी है। ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र को मिलाकर जिले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 5422 वर्ग किलोमिटर है। बड़वानी जिला औसत समुद्र सतह से लगभग 500 से 1365 मीटर ऊँचाई पर स्थित है।

शोध के उद्देश्य –

1. बड़वानी जिले के सन्दर्भ में प्राकृतिक संसाधनो का संरक्षण एवं संवर्धन।
2. प्राकृतिक संसाधनो के स्तर के आधार पर संरक्षण संवर्धन की समस्या का तुलानात्मक अध्ययन करना।
3. खनन के व्यवसाय के आधार पर बड़वानी जिले के सन्दर्भ में प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण एवं संवर्धन का अध्ययन करना।
4. प्राकृतिक संसाधनों की सूची तैयार करना (वन, जल, कृषि, पशु एवं

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

वन्य जीव) ताकी आर्थिक विकास के लिए समुचित प्रबंधन किया जा सके।

5. बड़वानी जिले के विकास के लिए नितियाँ एवं योजनाओं का निर्धारण करना ताकी समय बद्ध कार्य योजना तैयार की जा सके।

बड़वानी जिले में पाए जाने वाले प्राकृतिक संसाधन – मध्यप्रदेश का दक्षिणी–पश्चिम भाग प्राकृतिक संसाधन की दृष्टि से बहुत धनी है लेकिन बड़वानी जिला इस भाग में होने के बावजूद प्राकृतिक संसाधन की दृष्टि से बहुत गरीब है, बड़वानी जिले के प्राकृतिक खनिज संसाधन पदार्थो में चूना पत्थर का महत्वपूर्ण स्थान है।

प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण एवं संवर्धन – बड़वानी जिले के प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करना अति आवश्यक है। मनुष्य कल्याण के लिए परिस्थितिकी नियोमें के आधार पर सभी प्रकार के संसाधनों की निरन्तरता को बनाए रखने के लिए इनका विवेकपूर्ण उपयोग करते हुए संरक्षण प्रदान करना होगा। और विकास कार्यो में इन नियमों को प्राथमिकता देनी होगी। अत: बुद्धिमानीपूर्ण एवं संरक्षणपूर्ण संसाधनों के उचित उपयोग हो जिससे कि मानव जाती एवं प्राकृतिक संसाधनों का अस्तित्व स्थिर रहे।

प्राकृतिक तन्त्रों का विकास संतुलन बनाए रखना, चारागाह क्षेत्रों में अनियन्त्रित पशुचारण नहीं कराया जावे, वनों को नष्ट होने से बचाकर वनों का विकास किया जावे, बड़वानी जिले के सभी विकासखण्डों में अधिक से अधिक उचित स्थानों पर वृक्षारोपण करना चाहिए प्रमुख रूप से पर्वतीय एवं ढलानदार क्षेत्रों में स्थाई एवं अधिक ऊचे पेड़ों का रोपण करना चाहिए। इन वृक्षों की रोपण के पश्चात् अधिक देखभाल करना चाहिए। जल के महत्व एवं संग्रहण और संरक्षण की आवश्यकता को जन–चेतना के रूप में प्रत्येक स्तर पर प्रसारित करना चाहिए।

सुझाव – प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण हेतु बनाए गए अनेक अधिनियमों के उपरान्त भी पर्यावरण की दशा का निरन्तर अवनयन इस स्थिति तक हो रहा है कि अधिकांश प्राकृतिक संसाधनों, जल, मृदा, वन, पादप एवं प्राणी समूह एवं खनिज आदि के अस्तित्व को अधिक संकट उत्पन्न हो गया है। पर्यावरण अवनयन की समस्या बड़वानी जिले में ही नहीं है, बल्कि सम्पूर्ण संसार विकसित एवं विकासशील देशों में भी हो रहा है। प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के संरक्षण के लिये वर्तमान में सारे अधिनियमों के क्रियान्वयन में अनेक प्रकार की समस्याऐं आने के बाद भी लागु किया जाना चाहिए। अन्यथा भविष्य में आने वाली पीढ़ी को प्राकृतिक संसाधनों के दर्शन होना भी दुर्लभ हो जायेगा। बड़वानी जिले के सम्पूर्ण जीवन चक्र में कभी भी कोई अनहोनी घटना उत्पन्न हो जाती है तब सभी सजीवों मनुष्य एवं प्राकृतिक संसाधनों के मध्य जो एक सामन्जस्य/ समन्वय बना है वह समाप्त हो जायेगा और यह स्थिति विनाश का कारण होगी। भविष्य में आने वाली पीढ़ी को प्राकृतिक संसाधनों से वंचित होना पडेगा प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण व संवर्धन करना अनिवार्य होगा।

सन्दर्भ ग्रथं सूची :–

1. दैनिक नई दुनिया बड़वानी नगर संस्करण दिनाँक 25 मई2005
2. प्रमिला कुमार म.प्र. एक भौगोलिक अध्ययन म.प्र. हिन्दी ग्रंथअकादमी भोपाल (1983)
3. जिला साँख्यिकीय पुस्तिका वर्ष 2003 जिला योजना एवं सांख्यिकीय कार्यालय बड़वानी म.प्र. पृ.4–29
4. डॉ. अलका गौतम संसाधन एवं पर्यावरण शारदा पुस्तक भवन इलाहबाद पृ.42–56
5. जिला आपदा प्रंबधन कार्य योजना जिला बड़वानी जिले की वेबसाईट से प्राप्त

****

गरीबी का आंकलन, मापदण्ड तथा उत्तरदायी कारक का विश्लेषण

डॉ. अम्बालाल कटारा *

प्रस्तावना – गरीबी से आशय किसी भी दिए हुए समय पर आय, सम्पत्ति, उपभोग या पोषण के संदर्भ में लोगों की अवस्था से है। सामान्यत: इसका अवबोध एवं सम्प्रेषण गरीबी रेखा के सन्दर्भ में किया जाता है, जो एक ऐसी क्रांतिक सीमा की अवस्था है या आय, उपभोग, उत्पादक संसाधनों व सेवाओं के क्षेत्र में अभिगम्यता का ऐसा स्तर है जिससे नीचे के लोगों को गरीब वर्ग में रखा जाता है।

गरीबी के पहलू का असमानता से निकट का सम्बन्ध है जो कि इसका उत्पत्ति कारक भी है। इस प्रकार गरीबी न केवल एक निरपेक्ष बल्कि सापेक्षिक अवस्था भी है। एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में इसमें भिन्नताएँ पाई जाती है। फिर भी इसके निरपेक्ष पक्ष है तथा प्रादेशिक भिन्नताओं एवं सामाजिक विविधताओं के बावजूद ऐसे लोग है जिन्हें पर्याप्त स्तर के भोजन, वस्त्र तथा आवास की आवश्यकता है, गरीबी दीर्घकालिक अथवा अस्थायी लक्षण हो सकता है। दीर्घकालीक गरीबी को समझाना अधिक कठिन है।

गरीबी का एक महत्वपूर्ण पहलू यह भी है कि आर्थिक विकास की तीव्र दर के बावजूद गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों की अधिकाधिक पहचान हुई है, यह ग्रामीण व शहरी दोनों क्षेत्रों में समान रूप से अनियंत्रित अवस्था में पाई जाती है। अत: गरीबी के मापदण्ड तथा विकास के उपायों के विभिन्न पहलुओं का समाधान किया जा सकता है।

उद्देश्य (Objective) - गरीबी के मापदण्ड, निर्धारक कारक एवं विकास की योजनाओं का अध्ययन किया है।

1. गरीबी रेखा के मापन के लिए समुचित मानदण्डों की पहचान करना।
2. आय, सम्पत्ति, व्यय, पोषण, संसाधनों तथा सेवाओं में अभिगम्यता के आधार पर लोगों के कल्याण के स्तर पर मूल्यांकन।
3. सतत् जीवन की सामग्री यथा–खाद्यान्न कपड़े/मकान, स्वास्थ्य एवं सुरक्षा की उपलब्धता बढ़ाना एवं वितरण को बेहतर करना।
4. व्यक्तियों के लिए आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्र के विकास का अध्ययन।
5. गरीबी व मापदण्ड की पहचान करना।
6. गरीबी के मापदण्ड व विकास की योजनाओं का मूल्यांकन करना।

विधि तंत्र (Methodology) - अध्ययन के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रारम्भिक अध्ययन के लिए आंकड़े द्वितीयक स्रोतों से सूचनाएँ एकत्रित की गई है, मुख्यत: सरकारी प्रकाशनों, राष्ट्रीय बीपीएल सर्वेक्षण 2002, राजस्थान बीपीएल सेन्सस 2011, जनगणना सेन्सस, 2001, 2011 योजना आयोग वार्षिक प्रतिवेदन, ग्रामीण विकास संस्थान, हैदराबाद, मानव विकास सूंचकांक, इन्टरनेट एवं पूर्व में किए गए शोध कार्यों के मूल्यांकन को आधार मानकर आँकड़ों का विश्लेषण आदि।

भारत में योजना आयोग ने गरीबी की निरपेक्ष अवधारणा पर बल दिया है। योजना आयोग ने गरीबी रेखा का आधार कैलोरी ऊर्जा को माना है।

गरीबी मापदण्ड –

गरीबी के आंकलन का आधार – संयुक्त राष्ट्र संघ के खाद्य एवं कृषि संगठन (FAO) के प्रथम निदेशक लार्ड बॉयड ओर (Lord Boyd Orr) ने सर्वप्रथम 1945 में गरीबी रेखा की अवधारणा प्रस्तुत की थी। डॉ. ओर ने 2300 कैलोरी प्रति व्यक्ति प्रतिदिन से कम उपभोग करने वाले व्यक्ति को गरीब माना।

1. मानक जो पर्याप्त पोषक आहार की अवधारणा पर आधारित है।
2. मानक जो न्यूनतम जीवन स्तर की अवधारणा पर आधारित है।

योजना आयोग गरीबी रेखाएँ और कैलोरीज सिफारिशें – गरीबी रेखा के निर्धारक पोषक या कैलोरी मानदण्डों पर विचार–विमर्श की श्रृंखला जिसमें रेखा की जड़े निहित है, बहुत लम्बी और जटिल है।[1] निर्धारित करने के लिए कि जनसंख्या का कितना हिस्सा गरीबी रेखा से नीचे है। 'कट ऑफ' के रूप में आधारित उपभोक्ता व्यय लगातार बता रहे हैं –

सारणी 1 : भारत में शहरी व ग्रामीण गरीबी का प्रतिशत

वर्ष	प्रति व्यक्ति, प्रति भास रन		भारतीय गरीबों का प्रतिशत	
	ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी
1973–74	49.63	56.73	81.33	18.67
1977–78	56.84	70.33	80.36	19.64
1983	89.05	115.65	78.04	21.96
1987–88	115.02	162.16	75.51	24.49
1993–94	205.84	281.35	76.18	23.82
1999–00	327.56	454.11	74.03	25.07
2004–05	356.30	538.60	73.20	26.08

स्रोत : योजना आयोग (1977) : प्रेस सूचना कार्यालय गरीबी रिपोर्ट 2001–2007।

राष्ट्रीय गरीबी रेखा और राज्य गरीबी रेखा को अलग–अलग किया जाए और शहरी क्षेत्र में कर्मचारी के लिए उपभोक्ता मूल्य सूचकांक इस्तेमाल कर और ग्रामीण क्षेत्र में कृषि मजदूरों के लिए उपभोक्ता मूल्य सूचकांक का इस्तेमाल किया जाए।

1962 में योजना आयोग ने 1961 के मूल्यों को आधार बनाकर खर्च के न्यूनतम स्तर पर निर्धारित गरीबी रेखा की सिफारिश की। इसमें ग्रामीण स्तर पर प्रतिदिन 20 रूपए और शहरी क्षेत्रों के लिए प्रतिदिन 25 रूपये का व्यय किया गया।

दाण्डेकर और रथ ने ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन की 2,250 किलो कैलोरी जुटाने का सन्तुलित व्यय सीमा रेखा स्तर 1960–61 के लिए एन.एस. एस. आंकड़ों पर आधारित गरीबी सघनता का पहला मूल्यांकन प्रदान किया।

* शोधार्थी (भूगोल विभाग) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (म.प्र.) भारत

सुखात (1965) ने यह कहकर चर्चा की एक नया आयाम दिया कि प्रत्येक व्यक्ति की कैलोरी की अलग-अलग आवश्यकता होती है। उन्होंने प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 2250-2300 कैलोरी के उपभोग का सुझाव दिया।

योजना आयोग द्वारा 1979 में 1973-74 की कीमतों पर 1973-74 के लिए अखिलभारतीय उपयोग समूह के आधार पर गरीबी की रेखा निर्धारण ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों के लिए क्रमश: रू. 49.63 एवं 56.73 प्रति व्यक्ति प्रतिमाह अनुमानित किया जिसमें गरीबी रेखा के निर्धारण के लिए प्रति व्यक्ति प्रतिदिन ग्रामीण क्षेत्रों में 2400 किलो कैलोरी तथा शहरी क्षेत्रों के लिए 2100 किलो कैलोरी निर्धारित किया।

सेन का गरीबी सूचंकाक – गरीबी की गहनता ज्ञात करने के लिए 1998 में प्रो. अमर्त्य सेन ने एक विधि का प्रतिपादन इसके अनुसार निर्धनता रेखा 200 रू. प्रति माह प्रति व्यक्ति है मानने पर अर्थात 200 रूपये प्रतिमाह से नीचे गरीब माना।

$$P = \frac{2}{(q+1)m}\sum\left(1-\frac{y_i}{z}\right)(q+i+1)$$

जहाँ q गरीबी की संख्या एवं q + i + 1 प्रदत्त भार है, वे गरीब व्यक्ति को गरीबी रेखा से प्रदान किया गया है।

सारणी 2 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

एन.एस.एस. सर्वेक्षण के 61वें चरण के सर्वेक्षण में 2004-05 में समरूप स्मरण काल उपभोग वितरण के आधार पर ग्रामीण क्षेत्रों में 28.3 प्रतिशत, शहरी क्षेत्रों में 25.7 प्रतिशत व सामान्य रूप से 27.5 प्रतिशत है।भारत में सबसे गरीब राज्य उड़ीसा में है, सबसे कम जम्मू कश्मीर में है।

योजना आयोग की गरीबी पर नवीन रिपोर्ट – योजना आयोग द्वारा 21 सितम्बर 2011 को शहरी क्षेत्रों में 965 रू. मासिक व ग्रामीण क्षेत्रों में 32 रू. मासिक खर्च वाला गरीब है रेखा से ऊपर है। रिपोर्ट में 2004-05 से 2009-10 के दौरान जनसंख्या में बीपीएल का अनुपात 37.2 प्रतिशत से 7.3 प्रतिशत घटकर 29.8 प्रतिशत तक जाने का अनुमान लगाया गया है।

गरीबी के उत्तरदायी कारक –

सामाजिक स्थिति – क्या गरीबी और चिर-स्थायी गरीबी निरन्तर सामाजिक सच्चाई बनती जा रही है, क्योंकि जो आज गरीब है वे गरीबी में अटके रहेंगे चाहे उन्हें वृद्धि के माध्यम से अवसर उपलब्ध होते हैं। इन अवसरों का फायदा उच्च वर्ग के लोगों द्वारा लाभ उठा लिया जाता है। गरीबी अनुपात शर्तों में जनजाति समुदाय 2004-05 में ग्रामीण क्षेत्रों में ग्रामीण जनसंख्या 18.7 प्रतिशत व शहरी 32.9 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करता है। सन् 2004-05 में सम्पूर्ण राजस्थान में 22.1 प्रतिशत था। क्योंकि उनके पास ऐसी आधार भूत जरूरतों से दूर रहते हैं व सम्पत्ति नहीं होती है। राजस्थान में सर्वाधिक अजजा में द. राजस्थान के डूंगरपुर, बांसवाड़ा, उदयपुर जिलों में केन्द्रित है क्योंकि वहां पर इन जातियों का बाहुल्य है, बल्कि आधार भूत सुविधा का अभाव, सिंचाई सुविधा का कम होना, उपजाऊ भूमि न होना, असमतल भौगोलिक कारक आदि।

कृषि और गरीबी – जब किसी विकास की नीति में विभिन्न विकास योजनाओं के माध्यम से कृषि उत्पादन बढ़ाने पर जोर दिया जाता है तो इसका सीधा अर्थ खाद्यान्न की पैदावार अधिक करना ही नहीं होता, बल्कि इसका निहित उद्देश्य कम होता है कि कृषि पैदावार बढ़ाने का अर्थ गरीबी में कमी लाना है। जहाँ भी सिंचाई और प्रौद्योगिकी के माध्यम से कृषि उत्पादकता को बढ़ाया गया है, वहाँ गरीबी की सघनता में कमी आई है। ऐसा देश के उत्तर पश्चिम हिस्से में है। 11वीं पंचवर्षीय योजना में 4 प्रतिशत की वृद्धि हासिल की है। ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत संरचना जैसे सड़के, बाजार, ऊर्जा, साक्षरता और कौशल का निम्न स्तर की उपलब्धता अपर्याप्त है, क्योंकि कृषि उत्पादन बहुत धीमी है।

सारणी 3 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

भूमि और गरीबी – सीमान्त और छोटे किसान ग्रामीण जनसंख्या का एक बहुत बड़ा हिस्सा है और कुल कृषि उत्पाद के लगभग आधे हिस्से का योगदान है। राष्ट्रीय उपक्रम आयोग (2008) ने यह कहा कि लगभग 80 प्रतिशत किसान सीमान्त और छोटे किसानों की श्रेणी में आते हैं। उनके पास दो हेक्टयर से कम भूमि है। 1953-54 में जहाँ ये 38 प्रतिशत थे वहीं 2002-03 में इनका प्रतिशत 70 हो गया।

गरीब का एक जाति/वर्ग – भूमि का असमान वितरण आश्चर्यजनक है यदि इसे आकार और सामाजिक समूह के हिसाब से 2003 में 83.3 प्रतिशत से अधिक ग्रामीण परिवारों के पास हो हेक्टयर से कम भूमि थी और 67 प्रतिशत परिवार या तीन ग्रामीण परिवारों में से दो के पास एक हैक्टयर से कम भूमि थी।

सारणी 5 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

विश्लेषण/सुझाव – भारत के लिए गरीबी सबसे बड़ी और अति गंभीर विकास चुनौती है। हांलाकि देश में 1980 के दशक की आर्थिक वृद्धि दर लगातार बनी हुई है। लेकिन गरीबी की सघनता में कमी की दर अत्यन्त ही धीमी है।

उपभोग व्यय सर्वेक्षण का इस्तेमाल व्यय के उस स्तर पर विलगन की पहचान करने के लिए किया जा रहा है जिसमें निचली स्तर पर किसी परिवार को गरीब के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। गरीबी रेखा मूल्यांकन के लिए अपनाए जाने वाली पद्धति में कई प्रकार के सुधार और परिवर्तन किए गए हैं।

इस तथ्य को स्वीकार किया ही जाना चाहिए कि तुलनात्मक ढंग से और समय बीतने के साथ-साथ श्रेणी के मध्य गरीबी की सघनता की मापना आसान नहीं है और गरीबी के आंकलन में मापने की कुछ भिन्नताएँ और कमियां रह जाती है। निरपेक्ष गरीबी मापने का ढंग भी जी कैलोरी उपभोग के मापदण्ड पर आधारित है। विवाद से रहित नहीं है।

भारत में गरीबी को मापने के लिए नवीनतम विशेषज्ञ समूह ने मुद्दे पर पुन: विचार किया गया है। यह सिफारिश की है कि ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में गरीबी माप के लिए अलग-अलग उपयोग व्यय पर सूचना पर आधारित गरीबी मापने के अतिरिक्त भारत की गरीबी मापने के अन्य वैकल्पिक उपायों को लागू करने का प्रयास किया जाए।

ग्रामीण निर्धनों का एक राजनीतिक संगठन बनाया जाना चाहिए जो उनके अधिकारों के लिए संघर्ष कर सके। ग्रामीण उद्योगों में उत्पादकता व गुणवत्ता बढ़ाने का प्रयास किया जाना चाहिए। भूमि सुधारों के कार्यक्रमों को समयबद्ध तरीके से लागू करने का प्रयास करना चाहिए।

कृषिगत उत्पादन बढ़ाने के लिए सूखी खेती की विधि को लागू करना चाहिए ताकि जल ग्रहण विकास परियोजनाओं के माध्यम से फसलों की पैदावार के साथ-साथ चारे, जलाने की लकड़ी आदि का उत्पादन भी बढ़ाया जा सके। व्यर्थ भूमि के विकास के कार्यक्रम हाथ में लिए जाने चाहिए ताकि भूमि का सदुपयोग हो सके और लोगों को रोजगार मिल सके। ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों में प्रति परिवार दो बच्चों के नॉर्म को लागू करना चाहिए। इसके लिए परिवार कल्याण व परिवार नियोजन पर अधिक जोर दिया जाना चाहिए।

सरकार को सामाजिक सेवाओं जैसे शिक्षा, चिकित्सा, पेयजल, बिजली आदि का विस्तार करना चाहिए ताकि कम आमदनी वाले लोगों को भी जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओं से वंचित न होना पड़े।

एक व्यापक व अधिक सुनियोजित मजदूरी पर रोजगार कार्यक्रम सभी जिलों के विकास खण्डों में चलाया जाना चाहिए जिनमें उत्पादक-रोजगार के कार्यक्रम लिए जाएं जो स्थानीय आवश्यकताओं व स्थानीय साधनों के अनुकूल हों। आगे चलकर एकीकृत ग्रामीण विकास आदि को भी इसमें मिलाया जा सकता है ताकि सीमित वित्तीय साधनों का रोजगार उत्पन्न करने में सर्वाधिक उपयोग हो सके और साधनों की अनावश्यक बर्बादी व फिजूलखर्ची रोकी जा सके।

जैसी की उम्मीद थी कि पहला सब राउण्ड और आमतौर पर दूसरा उप चरण गरीबी के उच्चतम स्तर को दिखाता है। इसी तरह चौथा उप चरण आमतौर पर गरीबी के न्यूनतम अनुपात का होता है।

सारणी 3 में 18 राज्यों में अगर हम सबसे गरीब लोगों की जांच करें तो ये छत्तीसगढ़, झारखण्ड, बिहार और ओडिशा में होंगे। हालांकि अन्तर रैंकिंग उप चरण पर निर्भर करेगी। इस तरह पहले और तीसरे उप चरण में सबसे गरीबों के मामले में ओडिशा, छत्तीसगढ़ चौथे उप चरण में सबसे गरीब निकला।

इसी तरह राजस्थान में गरीबी का अनुपात भी अलग-अलगरूप में तेजी से बदला। जैसे सारणी 3 में बांसवाड़ा के मामले में गरीबी का अनुमान ग्रामीण क्षेत्रों में 12.98 फीसदी अंकों का रहा तो पूरे राज्य में 22.1 अंकों का। वास्तव में बांसवाड़ा, डूंगरपुर और उदयपुर में भी बड़े पैमाने पर गरीबी अनुपात में भिन्नता देखी गई। गरीबी की दर उत्तर पूर्वी, झुझनू, सीकर, जयपुर, जिलों की तुलना में सबसे कम दिखी। अधिक विकसित कहे जाने वाले राज्यों पंजाब और केरल में उप चरण में ये भिन्नता दिखी। सामान्य तौर पर बड़े और गरीब राज्यों में बेहतर राज्यों की तुलना में सीजनल भिन्नता ज्यादा दिखी। उसी तरह राजस्थान में चम्बल नदी व गंगा यमुना मैदान व पंजाब, उत्तरप्रदेश, हरियाणा से लगे जिलों में कृषि पैदावार, सिंचाई सुविधा की वजह से कम प्रतिशत पाया गया है।

निष्कर्ष – विभिन्न प्रकार के मूल्यांकन यह बताते है कि भारत की अपने देश के भीतर गरीबी की सघनता में कमी लाने की चुनौतियों का सामना लगातार करना पड़ेगा। हालांकि इस जटिल अवधारणा को मापना आसान नहीं है और इसके लिए निरन्तर सुधारों की जरूरत पड़ेगी। राजस्थान राज्य में दक्षिणी आदिवासी अचल में पहाड़, पठार, असमतल भूमि व सिंचाई सुविधाओं की कमी का निराकरण वाले उपायों की जरूरत है ताकि इस बढ़ी दर में कमी लाई जाए।

- आय स्रोती तक पहुँच, शहरी क्षेत्रों के साथ सम्बन्ध बनाना।
- ग्रामीण अवसंरचना में सुधार
- मानवीय भौतिक और वित्तीय सम्पत्तियों का संचयन, सिंचाई जल की पहुंच तथा मजदूरी में वृद्धि शामिल की।
- गरीबी मापने के लिए मूलभूत दृष्टिकोण क्या होना चाहिए और इसे किन क्षेत्रों में इस्तेमाल किया जाना चाहिए। हमारी चर्चा में ये भी बताया गया कि माप के डिजाइन का उपयोग किस तरह किया जाना चाहिए। खासतौर पर गरीबी के उपायों पर लक्ष्यपूर्ण उद्देश्य लागू करके और इसे भी समावेश और निवारण त्रुटियों को लेकर संवेदनशील होना चाहिए।
- हमें परिवर्तनशीलता के चलते स्रोतों और संरचनाओं का पता लगाना चाहिए ताकि गरीबी अनुमान सहीं तरीके से और सही डिजाइन के जरिये लक्ष्यीकृत करके निकाले जा सके। आंशिक तौर पर विचरण की प्रकृति ने तमाम गलतफहमियों को जन्म दिया है बल्कि जटिलता भी बढ़ा दी है हो सकता है कि सर्वेक्षण के दौरान कहीं प्रतिदर्श डिजाइन की भी गलतियां हो लेकिन सही बात ये है कि ये प्रक्रिया ही अपने आप में पूर्ण नहीं लगती। मौजूदा अध्ययनों से यह भी पता चलता है कि विचरण और सहप्रयरण को गहरे विश्लेषण के तौर पर विकसित करने की आवश्यकता स्पष्ट रूप से नहीं की गई। हम अभी भी आर्थिक गतिविधि की सीजनल बदलावों यानि मौसमी बदलावों के साथ मापते है, जो उचित नहीं है और न ही इससे स्पष्ट तस्वीर सामने आती है, जरूरी है कि गरीबी को स्वास्थ्य व्यय, आर्थिक और जनसांख्यिकीय चक्र, प्राकृतिक आपदाओं के साथ देखें ताकि गरीबी की गतिशीलता को समझने के लिए बेहतर अध्ययन विकसित किया जा सके।
- वर्तमान सर्वेक्षण भेद आधारित और उपभोक्ता व्यय की बारीकियों पर बड़े पैमाने पर केन्द्रित है। गरीबी मुख्यत: खपत वितरण की एक वितरणात्मक विशेषता है। हमें सिद्धान्त तौर पर खपत के कुछ मोटे उपायों को लना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. यू.एन.डी.पी. (2008), मानव विकास प्रतिवेदन 2007-08।
2. डाडेकर, वी.एम. (1996), पोपूलेशन पावर्टी एण्ड एप्लायमेन्ट, द इण्डियन इकोनोमी, 1947-97, न्यू दिल्ली।
3. डाडेकर एण्ड रथ एन (1971), यपावर्टी इन इण्डिया, इकोनोमी एण्ड पॉलिटिकल विकली 6, 2-8, जनवरी।
4. गवर्नमेन्ट ऑफ राजस्थान (2009), आर्थिक सर्वेक्षण 2009-10, जयपुर, राजस्थान सरकार।
5. गवर्नमेन्ट ऑफ राजस्थान (2002), आर्थिक सर्वेक्षण 2011-12, जयपुर, राजस्थान सरकार।
6. प्लानिंग कमीशन (1979) यरिपोर्ट ऑफ द टास्क फोर्स ऑन प्रोजेक्शनस ऑफ मिनियम नीडस एण्ड इफेक्टिव फसप्शन डिमाड नई दिल्ली।
7. योजना आयोग (2008) डवलपमेन्ट चैलेजिंस इन एक्ट्रीमिस्ट, अफेक्टेड एरियाज नई दिल्ली।
8. सेन, पी. (2005) यऑफ कैलोरिज एण्ड थिंग्स, इकोनोमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली, अक्टूबर।
9. सेन, ए एण्ड हिमाशु, आर (2004 ए) यपावर्टी एण्ड इक्वालिटी इन इण्ड्याि वन EAPV
10. शाह ए. एण्ड गुरू बी (2004), यपावर्टी इन रिमोट रूरल एरियाज इन इण्डिया IIPA, नई दिल्ली
11. बीपीएल सर्वे (2002), राजस्थान सरकार।
12. बीपीएल सर्वे (2012), राजस्थान सरकार।
13. राजस्थान सरकार 2006, जिला सांख्यिकीय, जिला सांख्यिकीय कार्यालय डूंगरपुर, राज, 2010।
14. राजस्थान सरकार 2006, सांख्यिकीय प्रतिवेदन, राजस्थान सरकार, उदयपुर, 2010।

सारणी 2. गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली जनसंख्या 2004-05

राज्य	एससीआर प्रतिशत	राज्य	एससीआर प्रतिशत	राज्य	एससीआर प्रतिशत
उडीसा	46.4	तमिलनाडु	22.5	आन्ध्रप्रदेश	15.8
बिहार	41.4	पाण्डीचेरी	22.4	केरल	15.0
छत्तीसगढ़	40.9	राजस्थान	22.1	दिल्ली	14.7
झारखण्ड	40.3	सिक्किम	20.1	हरियाणा	14.0
उत्तराखण्ड	39.6	असम	19.7	गोवा	13.8
मध्य प्रदेश	38.3	नागालैण्डा	19.0	मिजोरम	12.6
दादरा नगर हवेली	33.2	त्रिपुरा	18.9	दमन एवं द्वीप	10.5
उत्तर प्रदेश	32.8	मेघालय	18.5	हिमाचल प्रदेश	10.0
महाराष्ट्र	30.7	अरुणाचल प्रदेश	17.6	पजाब	8.4
कर्नाटक	25.0	मणिपुर	17.3	चंड़ीगढ़	7.1
पश्चिम बंगाल	24.7	गुजरात	16.8	जम्मू एवं कश्मीर	5.4
अण्डमान निकोबार	22.6	लक्षद्वीप	15.8	अखिल भारतीय	27.5

स्रोत : योजना आयोग (2009)

सारणी 3. राजस्थान में जिलेवार निर्धनता की स्थिति 2002 के अनुसार

क्र.सं.	जिले का नाम	बीपीएल प्रतिशत	राज्य में स्थान	क्र.सं.	जिले का नाम	बीपीएल प्रतिशत	राज्य में स्थान
1.	अजमेर	26.50	20	17	जयपुर	15.53	29
2.	अलवर	22.00	24	18	जैसलमेर	26.11	21
3.	बांसवाड़ा	72.98	01	19	जालौर	37.50	06
4.	बारां	32.59	15	20	झालावाड़	33.21	06
5.	बाड़मेर	28.71	18	21	झुंझनुं	10.57	12
6.	भरतपुर	18.40	27	22	जोधपुर	13.60	32
7.	भीलवाड़ा	34.72	12	23	करौली	40.81	05
8.	बीकानेर	36.84	08	24	कोटा	32.11	16
9.	बूंदी	36.02	09	25	नागौर	16.33	28
10.	चितौड़गढ़	49.14	04	26	पाली	24.01	22
11.	चुरू	28.62	19	27	राजसमन्द	35.76	10
12.	दौसा	23.38	23	28	सवाई माधोपुर	37.47	07
13.	धौलपुर	34.86	11	29	सीकर	11.43	31
14.	डूंगरपुर	71.33	02	30	सिरोही	31.01	17
15.	गंगानगर	21.26	26	31	टोंक	32.93	14
16.	हनुमानगढ़	21.88	25	32	उदयपुर	58.02	03

स्रोत : राजस्थान बीपीएल सर्वे, 2002

सारणी 5. प्रत्येक कृषि की श्रेणी का प्रतिशत (हैक्टयर)

क्र.सं.	सामाजिक	< 0.4	0.4 – 1	1 – 2	2 – 4	>4	कुल	2 हैक्टयर तक
1	अजा	56.4	26.5	9.9	4.8	2.4	100	92.8
2	अजजा	24.80	37.40	19.7	12.1	6.0	100	91.9
3	अन्य पिछडा	35.2	32.3	16.9	9.5	6.0	100	84.5
4	अन्य	29.3	29.2	19.6	12.9	9.1	100	78.9
5	कुल	35.9	31.3	16.8	10.0	6.2	100	83.8

स्रोत : राष्ट्रीय आयोग 2009

छत्तीसगढ़ी लोक नाट्य: प्राचीन एवं समृद्ध परम्परा

डॉ. मोना जैन *

प्रस्तावना – किसी भी राष्ट्र या देश का सही अध्ययन तभी हो सकता है जब उसके लोक और लोक जीवन का अध्ययन पूर्ण होता है। लोक को आदिम सभ्यता से जोड़ कर देखा जाता है, लोक जिसे ग्रामीण देहाती और अंचल व जनपदवासी के रूप में लिया जाता है। लोक जीवन से ही लोक का यथार्थ रूप सामने आ सकता है। लोक शब्द अत्यंत प्राचीन है। लोक में लोक शब्द का अर्थ होता है देखना और जनसमुदाय। आरंभ में जब लोक का अर्थ असाक्षर और असंस्कृत जैसे लोगों से किया गया तो उसका मूल आधार सामाजिक था। फिर जब उसे आदिम समाजों के साथ जोड़ा गया तो उसका मूलाधार जातीय था। फिर तब उसे कृषक समाजों या ग्राम समाजों के साथ संयुक्त किया गया तो उसका मूलाधार भौगालिक था। प्राचीन सभ्यता और पिछड़ी जातियों के अंधविश्वास उनके रीति-रिवाज तथा उनकी प्रथायें आदि के विशिष्ट अंश ही आगे चलकर सभ्य कहलाने वाली जातियों में प्राप्त होते हैं।

वैसे तो भारतीय नाट्य विद्या का इतिहास अत्यंत प्राचीन है। नाट्य शास्त्र पर भारतीय परिवेश में ई.पू. छठीं शताब्दी में भरतमुनि द्वारा रचित 'नाट्य शास्त्र' प्रथम पुस्तक है। नाट्य शास्त्र के अनुसार देवताओं की प्रार्थना पर सृजन के देवता ब्रह्मा जी ने सभी वर्णों के लिये नाट्य विधा की प्राचीनता के प्रमाण स्वरूप सरगुजा की पहाड़ियों में अवस्थित 'सीतावेंगा' और जोगीमारा की गुफाओं में बने पुराने प्रदर्शन गृहों को लिया जा सकता है ये नाट्य-गुफायें ई.पू. तीसरी शताब्दी की सिद्ध हो चुकी है और विश्व की सबसे प्राचीन नाट्य-शालाओं में आती है।

लोक-नाट्य गीत नृत्य एवं संवाद तीनों लोक विधाओं का समन्वय रूप है। ये एक दूसरे के अनुपूरक भी है और स्वतंत्रजीवी भी है। छत्तीसगढ़ी लोक नाट्य की परंपरा अत्यंत प्राचीन है। यह एक ऐसी संशिष्ट विधा है जिसमें ललित कलाओं की समग्र लोक विधाओं गीत, संगीत और अभिनय का समावेश होता है। वास्तव में छत्तीसगढ़ी लोक-नाट्य छत्तीसगढ़ी लोक-मानस के वे रंगमंचीय साधन हैं जो चमक-दमक एवं साधन-सुविधा से दूर होते हुये भी जनमानस के मनोरंजन का एकमात्र साधन और जीवन-दर्शन का सुंदर गुंफन है। लोक-मंच लोक की आत्मा को तृप्त करने का पारंपरिक रूप लोक-नाट्य प्रस्तुति है। लोक-गीत और लोक गाथा से गुम्फित प्रहसन और नृत्य का सम्मिश्रित, समन्वित प्रकटीकरण है। लोक के माध्यम से अनुभवी मंचीय लोक कलाकार अपने ज्ञान, अनुभव को कथा, गीत प्रहसन आदि में गूँथकर मनोरंजन और लोक जीवन दर्शन को, उसके सांस्कृतिक प्रवाह को अक्षुण्ण रखता है।

लोक नाट्कों के लिये कोई विशेष व्यक्तिगत रंगमंच और साज सज्जा की आवश्यकता नहीं होती, इसके लिये एक सपाट खुला स्थान या फिर ग्राम के चौपाल को लिया जाता है। परदा लगाने हेतु दो चार बांस, बल्ली गाड़ दिये जाते हैं, एक बड़ी दरी बिछा दी जाती है। दर्शकों से किसी तरह की कोई दूरी नहीं रखी जाती है। लोक मंच रंग मंच विहीन होता है। हारमोनियम, तबला और मंजीरा ही मुख्य रूप से प्रयुक्त किये जाते हैं। पुरूष ही प्राय: नारी पात्र का अभिनय करते हैं।

छत्तीसगढ़ अंचल की लोक नाट्य परम्परा में रहस, नाचा, गम्मत डुडुवानाच और पंडवानी आदि प्रमुख है। 'रहस' रास का अपभ्रंश है जो छत्तीसगढ़ी लोक नाट्य का वैशिष्टय है। यह एक अद्‌भुत नाट्य शैली है। जिसमें भगवान कृष्ण की लीलाओं का वर्णन है। छत्तीसगढ़ में यह लोक कला अत्यंत प्राचीन काल से प्रचलित है। रहस लोक-मंगल से जुड़ी कामनाओं एवं लोक परम्परा के लिए खुला मंच है। बाल, वृद्ध, नर-नारी सभी इस लीला में तन्मय हो जाते हैं। इस लोक नाट्य की समृद्ध परम्परा है। इस लोक नाट्य की समृद्ध परम्परा है यह वंशी युग से उत्कर्ष को स्पर्श करती है। इसमें संवादों के माध्यम से अभिव्यक्त किया जाता है।

नाचा छत्तीसगढ़ी की लोकप्रिय विधा है। यह नृत्य प्रधान होता है। इसमें गीत, प्रहसन, संवाद और व्यंग का समावेश ही दर्शकों को रात भर बिठाये रखता है। स्तुति गायन के साथ नाच आरंभ होता है। स्तुति गायन के पश्चात् नाच आरंभ होता है जो लोक मानस को मनोरंजन तथा शिक्षा प्रदान करता है। इसमें विषय समसायिक होते हैं। इसमें परी का नृत्य अत्यंत मोहक होता है। इसमें कल्पना को पर लगाने वाली स्त्री सुंदर युवक ही नारी का वेश धारण कर एवं सिर पर लोटे का कलश धारण कर नानाविध मुद्राओं में नाचती है।

गम्मत शब्द का मराठी में अर्थ 'हास्य विनोद' होता है। मराठों की सेना में गम्मतिये सेना के अधिकारियों एवं सैनिकों का मनोरंजन एवं नृत्य गायन प्रहसनों द्वारा किया करते थें। गम्मत का मंच वर्गाकार होता है। मंच के किनारे वादकगण साज के साथ बैठते हैं। गायन के मध्य में छत्तीसगढ़ी आशा में प्रहसन भी होता है। नाचा के अन्तर्गत गम्मत स्वत: समाहित होता है। दोनों में बहुत सूक्ष्म सा अंतर होता है। नाचा एवं गम्मत के माध्यम से कुरीतियों, विपरीत कथाओं, समाज की विद्रूपताओं पर तीखा प्रहार एवं लोकपयोगी तथा धार्मिक कार्यों के प्रति आस्था प्रदर्शित की जाती है। नाचा गम्मत में लोक चेतना की तेजस्विता अनेक रूपों में दिखलाई पड़ती है। इसी तेजस्विता के बल पर कलाकारों की संघर्ष शक्ति की प्रखरता सामाजिक एवं राजनैतिक विसंगतियों पर चोट करती है। भारतीय जनजीवन को छूआछूत और जातिभेद ने राहू-केतु की तरह ग्रसा है। इसी कारण आपसी सौमनस्य और भाईचारे का अपहरण हुआ है। हमारा समाज विघटित हुआ है। नाचा गम्मत शुरू से ही मनोरंजन के साथ-साथ लोक चेतना के भी सर्जक है।

लोकमंच पर हमारी आसुरी वृत्ति का प्रतीक, जीवन को बाधित करने का चरित्र पहले रावण की तरह अट्टाहास करता दृष्टिगत होता है फिर सात्विक

* सहायक प्राध्यापक, प्रा.भा.इ.सं. एवं पुरातत्व शासकीय जे. योगानंदम छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत

प्रवृत्ति वाले नायक से टकरा कर क्रमश: चूर-चूर हो जाता है लोक इससे स्व: स्फूर्त होता है, उसका अंतरमूर्त होता है। यह नायक को आरोपित करता है क्योंकि लोक नाट्य का नायक उपदेश या सिद्धांत निर्दिष्ट करने वाला जड़ या पुतला मात्र नहीं होता, वरन उनके ही समान सामान्य गुणों का ही होता है जो सही कार्य करने की ओर उन्मुख करता है। अन्य छोटे-छोटे पात्र भी जन-जन के विविध सामान्य चरित्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं जो प्रत्यक्ष सात्विक वृत्ति के सहभागी होते हैं।

'डुडवा नाच' भी स्त्रियों में प्रचलित लोक नाट्य की लोकविधा है जिसका आयोजन भी ग्रामीण क्षेत्रों में देखा जा सकता है। डिडवा नाच में महिलाऐं ही पुरूष स्त्री दोनों बनकर अजब गजब तमाशे प्रस्तुत करती हैं। यहां पुरूष वर्जित है। वर पक्ष वालों को यहां बरात गमन की रात्रि ब्याह वाले घर में केवल महिलाएं ही होती हैं अत: इन्हें मन की कुंठा निकालने एवं अपनी कला दिखाने का अवसर मिलता है। वे गीत, नृत्य, प्रहसन के द्वारा रात भर जागरण भी कर लेती है और पुरूषों के अभाव में चोरों से रक्षा के लिए रतजगा भी हो जाता है। इस लोकनाट्य को 'एक रात का स्त्री राज' नाम से रामचंद्र देशमुख ने भव्य प्रयोग किया था परन्तु इस लोकविधा को अपेक्षित प्रोत्साहन नहीं मिल सका।

पंडवानी छत्तीसगढ़ का एकल नृत्य है। जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट है कि इसमें पाण्डवों विशेष तौर पर भीम का गाथा गाई जाती है। पंडवानी का अर्थ होता है पाण्डववाणी। पंडवानी का इतिहास तो यह बताता है कि यह मूलत: गोंड और परधान जनजाति का नृत्य है किन्तु अब तो अन्य लोग भी इस कला में पारंगत हो रहे हैं। यही वह गीत-नृत्य है जो तीजन बाई के माध्यम से देश की सीमा के पार भी गाया जा चुका है।

आज छत्तीसगढ़ की ये प्राचीन लोक-नाट्य कलायें आधुनिकता के प्रभाव से स्वयं को मुक्त नहीं रख पाई हैं। छत्तीसगढ़ी लोकनाट्य आज संक्रमण काल से गुजर रहा है। रामलीला, लोक मंडलियाँ आज भी गांवो में है परंतु संरक्षण के प्रयास के अभाव और जीवन की जटिलता के कारण यह लोकविधा लुप्तप्राय है। आज इस सबके संरक्षण की महती आवश्यकता है। इस सांस्कृतिक धरोहर को सुरक्षित एवं सहेज कर रखना हम सभी का पुनीत कर्त्तव्य है। साथ ही साथ हमें लुप्त होती जा रही लोकविधा, लोक नाट्य परम्परा की मौलिकता को बनाये रखने के हर संभव प्रयास भी करने होंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. डॉ. महेंद्र भानावत: लोककला प्रयोग और प्रस्तुति
2. शैलजा चंद्राकर: भारतीय लोकमंच अनेकता में एकता: मड़ई 2001
3. राहुल कुमार सिंह: तीन रंगमंच: बिहनिया, 2011
4. नाचा: बिहनिया, पृ.64, 65, 2011
5. डॉ. नारायण लाल परमार: छत्तीसगढ़ी नाचा और समाज: मड़ई 2011
6. बद्री नारायण: लोक संस्कृति और इतिहास
7. पीयूष दइया: लोक
8. जवाहर लाल हंडू: लोक साहित्य स्वरूप और सर्वेक्षण
9. डॉ. शकुन्तला वर्मा: छत्तीसगढ़ी लोक जीवन एवं लोक साहित्य का अध्ययन
10. श्याम परमार : भारतीय लोक साहित्य ही आगे चलकर सभ्य कहलाने वाली जातियों में प्राप्त होते हैं।

****

देवर बीजा : कलात्मक मूर्तिशिल्प

डॉ. मोना जैन *

प्रस्तावना – सघन वन वल्लरियों से आच्छांदित मेकल, रामगढ़ तथा सिहावा की पर्वत श्रेणियों से सुरक्षित एवं महानदी, शिवनाथ, खारून, जोंक, हसदो आदि कई छोटी बड़ी नदियों से सिंचित छत्तीसगढ़ प्राचीनकाल में दक्षिण कोसल के नाम से जाना जाता था। इन नदियों के तट और घाटियों में न जाने कितनी सभ्यताओं का उदय, विकास और अस्त कालगति के अनुसार होता रहा, जिनके अवशेष अभी भी अनेक स्थानों पर बिखरे हुए है और उनके प्राचीन महत्व और गौरव की महिमा का गुणगान करते नहीं अघाते हैं। ऐसा ही एक प्राचीन स्थल दुर्ग के पास है देवर-बीजा। प्राचीनकाल में देव मंदिरो के लिए प्रसाद शब्द का प्रयोग किया जाता था। प्रसाद का अर्थ होता है वह स्थल जहां मन प्रसन्न हो। जिनकी रमणीयता से देवताओं और मनुष्यों के मन प्रसन्न होते हैं- वे प्रसाद है। इसीलिए प्रसाद या देवमंदिरो के निर्माण के लिए सुरम्य स्थलों का चुनाव किया जाता था। वराहमिहिर लिखते हैं कि वन, नदी, तालाब, पर्वत, झरनों के निकट की भूमि और उद्यान मुक्त नगरों में देवता सदा निवास करते हैं, इसलिए प्राचीनकाल में देव मंदिरो का निर्माण रम्य स्थानों पर कराया जाता था। छत्तीसगढ़ के प्राचीन मंदिर भी प्राय: ऐसे ही विशिष्ट स्थानों में स्थित हैं।

देवरबीजा (दुर्ग) कलचुरि काल का एक विकसित मंदिर है। जिसका शिखर नागर शैली में निर्मित है। यह मंदिर भगवान शिव को समर्पित है। भूविन्यास की दृष्टि से सप्तरथीय और ऊर्ध्व-विन्यास में यह भूमिज शैली में निर्मित दिखायी देता है।

देवरबीजा बेमेतरा तहसील के अन्तर्गत आता है। बीजा का अर्थ होता है द्वितीय। जब हम दुर्ग होते हुये बेमेतरा पहुंचे तब दुर्ग बेमेतरा राजमार्ग पर देवर-बीजा नामक ग्राम पड़ा। बेमेतरा से इस ग्राम तक पहुंचने में हमें लगभग एक घंटा लगा। दुर्ग से इस ग्राम की दूरी लगभग 58 कि.मी. है और बेमेतरा से लगभग 20 कि.मी की दूरी यहां तक पहुंचने के लिये तय करनी पड़ती है।

देवरबीजा ग्राम में सीता देवी मंदिर है जो ग्राम के उत्तर पश्चिमी दिशा में स्थित है पास ही एक विशाल सुरम्य सरोवर के दर्शन होते हैं। यह मंदिर पत्थरों का बना है, पूर्वाभिमुखी मंदिर है। यह मंदिर भगवान शिव को समर्पित है। इस मंदिर का शिखर नागर शैली में निर्मित है। गर्भगृह वर्गाकार दिखाई देता है वर्तमान में इसका कुछ ही भाग सुरक्षित बचा है।

मंदिर के प्रवेश द्वार के बायीं तरफ यमुना देवी का अंकन है तथा दायीं तरफ देवी गंगा का मनोरम अंकन है। मंदिर के प्रवेश द्वार के ऊपर गणेश जी विराजमान दिखाई देते हैं। मंदिर का प्रवेश द्वार तीन शाखाओं में बंटा हुआ है। प्रवेश द्वार की तीसरी शाखा के ऊपरी भाग में बहुत से अंकन किये गये है, जिसमें ज्यादातर मानव आकृतियों का अंकन है। नवग्रहों का अंकन भी दर्शनीय है। देवरबीजा के इस मंदिर में कल्चुरि काल का स्थापत्य दिखाई देता है। इस मंदिर का निर्माण काल बारहवीं शताब्दी ई. है। यह कल्चुरि काल का एक विकसित मंदिर है। यह मंदिर का ऊँची जगती पर निर्मित है। इसके बाद अधिष्ठान है। अधिष्ठान में कई मोल्डिंग है। इनमें शिल्पांकन है। शिखर त्रिरथ योजना पर निर्मित है। रथ में छोटे-छोटे अलंकरण है। गर्भगृह का प्रवेश द्वार अलंकरणों से युक्त है। इस मंदिर में अंतराल एवं मंडप नहीं है। गर्भगृह का प्रवेश-द्वार मनोहर लता-वल्लरियों एवं अलंकरणो से युक्त दिखायी देता है। यह मंदिर गंडई (राजनांदगांव) के शिव मंदिर के समान ही भूमिज शैली में निर्मित किया गया। इस सप्तरथीय मंदिर के अधिष्ठान का ऊपरी मोल्डिंग अलंकृत है जिसमें हाथियों के अंकन की प्रमुखता दिखायी देती है। कहीं पर उन्हें वृक्ष खींचते हुये दिखाया गया है तो कहीं पर क्रीड़ा करते हुये अंकित किया गया है तो कहीं पर उन्हें युद्ध करते हुये अंकित किया गया है।

मंदिर के अधिष्ठान के ऊपरी भाग में चारों तरफ अनेक प्रकार के दृश्य अंकित किये गये हैं जो चित्ताकर्षक है। सबसे सुंदर अंकन मंदिर के दक्षिणी भाग के मुख्य रथ में उत्कीर्ण किया गया है, इस दृश्य में स्त्री-पुरूषो की आकृतियों का अंकन है। स्त्री-पुरूष पीछे से एक दूसरे का हाथ पकड़े हैं और नृत्य करने की मुद्रा में है। ध्यान से देखने पर पता चलता है कि शिल्पकार ने दो पुरूषों के मध्य एक स्त्री का अंकन किया है। यह मुद्रा छत्तीसगढ़ राज्य के किसी लोक नृत्य की याद दिलाती है। कुछ मिथुन दृश्य भी अंकित है। किसी दृष्य में पुरूष को शेर से युद्ध करते हुये दिखाया गया है। कहीं मालाधारी विद्याधर अंकित है। किसी किसी दृश्य में नृत्य और संगीत को प्रमुखता दी गयी है। कुछ देवताओं का अंकन मिलता है। गणेश की प्रतिमा अष्टभुजी है। मंदिर की बाह्य भित्ति के ऊपर की तरफ दो पंक्तियों में प्रतिमायें है। एक नीचे की तरफ के आले में गणेश की अष्टभुजी प्रतिमा है जो नृत्य करते हुये अंकित की गयी है। गणेश जी के हाथो में परशु, सर्प, पद्म और मोदक पात्र दिखायी देता है। ऊपर के तरफ के आले में भैरव को मुण्ड माला पहिने दिखाया गया है। भैरव की चार भुजायें है, हांथो में डमरू और कपाल का स्पष्ट अंकन है। एक दृष्य में शिव चतुर्भुजी है अंधकासुर का वध करते हुये दिखाये गये है। ऊपर के आले में नटराज का अंकन है। नटराज चतुर्भुजी है। दो हाथों में खटवांग एवं त्रिशूल है तथा शेष दो भुजायें नृत्य मुद्रा में है। प्रतिमा के नीचे दायी तरफ नदी अंकित मिलता है।

मंदिर के दक्षिण पश्चिम की तरफ वाले आले में चतुर्भुजी ब्रह्मा उत्कीर्ण है। जिनका एक हाथ वरद मुद्रा में है एक हाथ में स्त्रुक, एक में पुस्तक और एक में कमण्डल पकड़े है। नीचे के आले में सूर्य की प्रतिमा है। दोनों हाथों में कमलपुष्प धारण किये हैं ऊपर की तरफ के आले में छ: भुजी हरिहरहिरण्यगर्भ की प्रतिमा स्थापित है जिनके दायें हाथों मं पद्म, शंख, त्रिशूल तथा बायें हाथों में खटवांग, चक्र और पद्म है। वे किरीट मुकुट, कुंडल, हार और यज्ञोपवीत धारण

* सहायक प्राध्यापक, प्रा.भा.इ.सं. एवं पुरातत्व शासकीय जे. योगानंदम छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत

किये हैं। एक आले में शिव की प्रतिमा है जो चतुर्भुजी है। हाथों में त्रिशूल, डमरू, सर्प और खटवांग है।

बाह्य भित्ति में नीचे वाले आले में महिषासुर मर्दिनी का अंकन है। महिषासुनर मर्दिनी चतुर्भुजी है। महषि का वध करते हुये अंकित किया गया है। अन्य भुजाओं मं त्रिशुल, खडग और खेटक लिये हैं। ऊपर की तरफ वाले में वैष्णवी पदमासन मुद्रा में है, चार भुजाओं में शंख चक्र, पद्म एवं गदा लिये हैं कानों में कुंडल गले में हार पहने हैं, केयूर एवं मेखला भी अलंकरण में दिखायी देते हैं। चतुर्भुजी कौमारी का भी अंकन है जो दीवार के अंतराल भाग में निचले आले में ललितासन में बैठी है। एक हाथ घुटने पर रखा है, एक हाथ में कुक्कुट है, देश दो हाथ भग्न है। प्रतिमा के निचले भाग में वैष्णवी तथा ब्राह्माणी की संयुक्त प्रतिमा है, जो गदा, चक्र, श्रुवा एवं कलश लिये हैं।

मंदिर की बाहरी दीवार में आलों में बहुत सी देव प्रतिमायें स्थापित हैं। इनमें सरस्वती, नवग्रह, नृत्य मुद्रा में गणेश, गजलक्ष्मी, ब्रह्मा एवं शिव प्रमुख है। बाह्य भित्ति में अनेक मनोरम दृश्यों का अंकन है। अप्सरा को नृत्य करते हुये दिखाया गया है। नृत्य करते हुये पुरूष अंकित है। मृदंग वादक है। विद्याधर का अंकन है। उपासकों का अंकन है गंधर्व मन को मोह लेते हैं। मिथुन युगल भी अंकित किये गये हैं। एक पुरूष प्रतिमा को दोनों हाथों में गदा लिये कई स्थानों पर उकेरा गया है। ढोल वादक को गौर के सींग धारण किये हुये दिखाया गया है जो बस्तर की आदिम संस्कृति की याद दिलाते हैं।

सीता देवी मंदिर के पास ही उत्तर मध्यकालीन सती-स्तम्भ निर्मित है जिसे लोहे की जाली से घेर दिया गया है। इस सती-स्तम्भ पर भी विभिन्न प्रकार के अलंकरण दिखायी देते हैं।

अंत में यह निष्कर्ष निकालना अन्यथा न होगा कि देवर-बीजा का यह मंदिर प्राचीन काल में दक्षिण कोसल की सांस्कृतिक कला का केंद्र रहा होगा। मंदिर की दीवारों पर अंकित दृश्य अत्यंत कलात्मक है जो कलाकारों की उत्कृष्ट कला को प्रदर्शित करते हैं। दीवारों पर अंकित कुछ दृश्य आज भी अंचल की आदिम संस्कृति का प्रतिनिधित्व करते हैं। इस मंदिर को हम छत्तीसगढ़ के अतीत के गौरव का परिचायक कह सकते हैं। भावों पीढ़ियों के लाभ के लिए इस दुर्लभ पुरासंपदा को हमें संजोकर रखना होगा। यदि इस धरोहर को समुचित संरक्षण नहीं प्राप्त हुआ तो इसके नष्ट हो जाने का भय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्यारे लाल गुप्त - प्राचीन छत्तीसगढ़
2. हेमु यदु - दक्षिण कोसल की कला
3. बलदेव प्रसार मिश्र - छत्तीसगढ़ का परिचय
4. डॉ. रमेंद नाथ मिश्र - छत्तीसगढ़ का इतिहास
5. डॉ. भगवान सिंह वर्मा - छत्तीसगढ़ का इतिहास
6. वी.डी.झा - छत्तीसगढ़ तथा बुंदेलखण्ड की मूर्तिकला, ईसुरी अंक 5
7. डॉ. वासुदेव साहसी - छत्तीसगढ़ का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास
8. डॉ. कामता प्रसाद वर्मा - छत्तीसगढ़ की स्थापत्य कला

शिवरीनारायण : छत्तीसगढ़ का काशी

डॉ. मोना जैन *

प्रस्तावना – सुरम्य सा स्थल है यह, बिलासपुर जिले में महानदी के किनारे भव्य मंदिर-संकुल यह स्थल मानो पवित्रता का प्रवाह बहाता उर्ध्वबाहु होकर दूर के पथिकों को आव्हान करता है और मानो कहता है 'आओ कुछ देर रूक कर विश्राम कर लो और इच्छा हो तो नारायण के दर्शन भी कर लो'।

शिवरीनारायण बिलासपुर से दक्षिण पूर्व दिशा में लगभग 64 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। रायपुर से लगभग 165 कि.मी. की दूरी पर यह प्राचीन धार्मिक स्थल स्थित है। रायपुर से शिवरीनारायण के लिये 6:30 पर बस मिलती है जो हमें 10:30 गिधौरी पहुंचा देती है। गिधौरी से शिवरीनारायण की दूरी लगभग 2 कि.मी. है। यात्रियों के लिये चारों तरफ से बिलासपुर, रायपुर, जांजगीर, रायगढ़, कोरबा, भाटापारा, महासमुंद्र, पिथौरा, अकरतरा, सरायपाली, बलौदा बाजार और सारंगगढ़ के लिये सड़क-मार्ग द्वारा आने जाने की सुविधा है।

शिवरीनारायण के समीप बायीं तरफ जोंक नदी तथा महानदी का संगम स्थल है और शिवरीनारायण से लगभग डेढ़ किलोमीटर आने जाने पर शिवनाथ नदी महानदी में मिल जाती है। शिवरीनारायण जोंक नदी, महानदी तथा शिवनाथ नदी के संगम स्थल के साथ मैकल पर्वत श्रृंखला की तलहटी पर स्थित होने के कारण प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर है। पुरातात्विक धरोहर होने के साथ-साथ साधुसंतो के सत्संग हेतु मठों के कारण भी यह स्थल प्रसिद्ध है।

शिवरीनारायण का इतिहास बहुत पुराना है। किवदन्ती है कि रामचन्द्र जी की शबरी यहीं रहती थी और यही भगवान ने उसे दर्शन दिये। एक अन्य किवदन्ती यह है कि यहां कोई शबर रहता था जो शबरी की तरह भगवान का भक्त था। शबर सॅवरा लोग इस भारत के मूल निवासियों में माने जाते हैं। रामचरित्र मानस में उनके मंत्रजाल की महिमा दिखती है उन्होनें महादेव और दुर्गा, काली का महत्व स्वीकार किया है और उन्हें विष्णु के दोनों अवतार राम और कृष्ण दोनों माना। शिवरीनारायण का शबर भी ऐसा ही एक शबर था। पुरी के सुप्रसिद्ध जगन्नाथ मंदिर जाने का मार्ग इसी ओर से था। उत्तर तथा पश्चिम भारत के अनेक लोग इस मार्ग से जगन्नाथ पुरी जाया करते थे। जगन्नाथ जी की एक मूर्ति किसी प्रकार वह शबर पा गया। उसकी श्रद्धा उस मूर्ति पर बहुत अधिक बढ़ गई। वह एक पल के लिये भी मूर्ति को छोड़ता नहीं था। शबर के लिय यह पाषाण-खंण्ड साक्षात जगन्नाथ स्वामी था। एक बार एक कर्मकांडी ब्राम्हाण उस ओर से पुरी यात्रा की ओर चले। उन्होंने सबर की जगन्नाथ पूरा देखी न उस शबर के नहाने धोने का कोई ठिकाना न उस शबर के पास किसी तरह के चौके-चूल्हे की छूआछूत का कोई विवेक। जब उसका मन होता तब वह दिन-रात के किसी भी समय उस मूर्ति के आगे उछलने कूदने लगता और जब मन होता तब उस मूर्ति को बच्चे की तरह पीठ पर बांध कर हल चलाने लगता। ब्राम्हण ने सोचा कि शब्द व्यर्थ ही ठाकुर जी (जगन्नाथ) मूर्ति को सता रहा है। ब्राम्हण ने शबर को डॉटा और उसके पास से वह मूर्ति हटा देनी चाही पर शबर किसी प्रकार राजी नहीं हुआ और मूर्ति के पीछे प्राण तक देने के लिये तैयार हो गया। कर्मकाण्डी ब्राम्हण किसी तरह भी यह मानने को तैयार नहीं था कि शबर भी जगन्नाथ भक्ति का अधिकारी हो सकता है। उन्होंने जगन्नाथ को केवल द्विजों की सम्पत्ति समझ रखा था। जो जगत के साथ है वह केवल हिन्दुओं तक ही सीमित नहीं रह सकता। फिर अकेले द्विजों की कौन कहे ? पर ब्राम्हण अपनी जिद पर अड़ा रहा और उसने निश्चय कर लिया कि जैसे भी हो वह इस मूर्ति को शबर के पास हटा कर पुरी पहुंचा देगा। शबर जब गाढ़ी निन्द्रा में था उस समय पर ब्राम्हण ने चुपचाप वह मूर्ति उड़ा ली और अकेले ही पुरी की ओर चल पड़ा। पर वास्तविक जगन्नाथ धर्म के नाम पर इसे कैसे सह सकते थे ? ब्राम्हण से वह मूर्ति मार्ग में ही कहीं छूट गई अब ब्राम्हण के मन में पश्चाताप भर गया और वह सोचने पर मजबूर हो गया कि कहीं सचमुच भगवान उस शबर के पास ही तो नहीं रहना चाहते थे। ब्राम्हण सोच में पड़ गया कि अब क्या किया जाये ? इतने में आकाशवाणी हुई 'मूर्ख' धर्म का मार्ग शबर की श्रद्धा में है न कि तेरे दंभ में। यदि तू वास्तव में प्रायश्चित् करना चाहता है तो प्रयत्न कर जिससे शबर का नाम मेरे नाम के साथ अभिन्न रूप से जुड़ जाये। ब्राम्हण को अपने कर्तव्य का बोध हुआ और उसने उस स्थल का नामकरण 'शिबरी-नारायण' करवाया। उधर शबर तो मूर्ति के वियोग में विक्षिप्त सा हो गया था परन्तु ब्राम्हण ने 'शबरी-नारायण' का नाम अमर करने शबर के साथ उसकी आराध्य मूर्ति को अविच्छिन्न कर दिया। कालान्तर में शबरीनारायण को रत्नपुर नरेशो की सक्रिय सहयोग प्राप्त हुआ और उन्हीं के सहयोग से नारायण के विशाल मंदिर का निर्माण हुआ।

शिवरीनारायण का बड़ा मंदिर प्राचीन मंदिर है। मंदिर में लक्ष्मीनारायण विराजमान है। इस मंदिर के प्रवेश द्वार की ऊंचाई लगभग 15 फीट है। द्वार के दोनों तरफ प्रतिमा है। प्रवेशद्वार के ऊपरीभाग में दो विशालकाय बाघ की मूर्ति है। दोनों बाघ मूर्ति के बीच गुम्बदनुमा आकृति है। परिक्रमा करने के लिये पथ है। बड़े मंदिर के सभा मंडप से तीन द्वार है। मंदिर पूर्वाभिमुख है। जनश्रुति के अनुसार मंदिर की जगह कभी बड़ा जलस्त्रोत था जिसे बांधने के लिये 100-100 मीटर का एक चबूतरा है। यह मंदिर चार पत्थरों का बना है। सभा मण्डप की भीतरी भिति में बायें तरफ चित्रकारी दिखायी देती है। दाँये तरफ देव प्रतिमा अंकित है। सभा मण्डप की ऊपरी दीवार को सहारा देने के लिये चार पाषाण स्तंभ नीचे से चौकोर और ऊपर से गोलाकार है। गर्भगृह के मुख्य द्वार के चारों ओर पाषाण निर्मित कलाकृति तथा द्वार के दोनों तरफ काले रंग की चूना पुती हुई 5 फीट ऊंची नारी प्रतिमा है। गर्भगृह के मुख्य द्वार के ऊपर तथा नीचे पाषाण प्रतिमायें स्थित हैं। मंदिर के शीर्ष पर दस फीट ऊंचा स्वर्णिम कलश है।

* सहायक प्राध्यापक, प्रा.भा.इ.सं. एवं पुरातत्व शासकीय जे. योगानंदम छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत

बड़े मंदिर की पूर्व दिशा में केशव नारायण का मंदिर है। इस मंदिर में स्थित परिश्चमाभिमुख केशवनारायण की मूर्ति को देखने से ही प्राचीनता का आभास होता है। वज्रपात के कारण यह मंदिर खण्डित हो गया है। जगह-जगह वृक्ष भी उग गये हैं। सभा-मंडप में दो पाषाण प्रतिमा है। सभा मंडप में मुख्य द्वार नहीं है। मंदिर के गर्भगृह के प्रवेश द्वार के चारों ओर पाषाण पर बेजोड़ कलाकृति है तथा द्वार के दोनों ओर कई प्रतिमायें हैं उनमें से कुछ खंडित हैं। गर्भगृह में विष्णु की चतुर्भुजी प्रतिमा है। यह मंदिर कल्चुरिकालीन वास्तुकला का उत्कृष्ट उदाहरण है।

चन्दचूड़ महाराज का मंदिर केशव नारायण मंदिर के वायव्य दिशा में स्थित है तथा बडे मंदिर के उत्तर पूर्व दिशा में है। शंकर की मूर्ति उत्तर दिशा की ओर है। मंदिर की बाह्य भित्ति में स्थित शिलालेख में इस मंदिर का निर्माण कुमार पाल नामक कवि ने करवाया था। यह भी बड़े मंदिर की सीमा के अन्तर्गत है। इस मंदिर के मंडप में विशाल नंदी की मूर्ति है तथा उत्तर में दो तीन शंकर की मूर्तियां है। गर्भगृह में लिंग के चारों ओर शेषनाग तथा जलहरि है। मंदिर के दक्षिणी बाह्य भित्ति पर एक खंडित शिलालेख है जो पाली भाषा में हैं। इस शिलालेख की लंबाई डेढ़ फीट और चौड़ाई 4 फीट है। उमा महेश्वर की प्रतिमा दर्शनीय है।

शिवरीनारायण के अन्य प्रमुख मंदिरों में रामलक्ष्मण मंदिर है जो चंद्रचूड़ मंदिर की उत्तर दिशा में बड़े मंदिर की सीमा में ही पश्चिमीभिमुख है। इस मंदिर के द्वार के पहले शिवलिंग है। इस मंदिर को 1927 में अकलतरा निवासी श्री सिरदार सिंह ने पुत्र की कामना पूर्ण होने पर बनवाया था।

बड़े मंदिर के वायव्य दिशा में बहुत बड़ा प्राचीन दूधाधारी मठ है। मठ के ठीक सामने मंहतो की पुरानी गद्दी तथा बायें तरफ चरण-पादुका है। चरण-पादुका के उत्तर दिशा में 25 कदम की दूरी पर जगन्नाथ की मूर्ति एवं पूजा स्थल है। इसकी नींव 1926 में डाली गई। जगन्नाथ मंदिर के ठीक सामने सूर्य नारायण का मंदिर है। महानदी के उत्तरी तट पर माखन साव तथा इनके परिवार के द्वारा बहुत बड़ा पत्थर का घाट बना हुआ है। इस घाट के ऊपर दो मंदिर है पहला देवीदाई का मंदिर, दूसरा शंकर जी का मंदिर। शिवरीनारायण में बड़े मैदानी भाग में प्रतिवर्ष महाशिवरात्रि के दिन मेला भरता है। यहां लक्ष्मी नारायण का एक भव्य मंदिर है। श्रीराम चौबीस अवतार मंदिर निशाद समाज द्वारा चंदा एकत्र करके बनवाया गया है। इस मंदिर में चौबीस अवतार के साथ राम लक्ष्मण जानकी मूर्ति है। संतोषी माता का मंदिर राधा कृष्ण मंदिर दर्शनीय है। शिवरीनारायण में पश्चिम दिशा में एक मील की दूरी पर झाड़ियों से घिरा सिंदूरगिरी रमणीक स्थल है। पहले यहां सन्यासी योग साधना किया करते थे, वर्तमान में इस स्थल को जोगी-दिया कहते है। यहां पर महंत लालदास ने तीन नये भवनों का निर्माण करवाया भवन के सामने के भाग में एक शिलालेख है। रथयात्रा के समय यहां दशमी तक जगन्नाथ, बालभद्र और सुभद्रा की मूर्तियां रखते है, अत: इसका नाम जनकपुर भी प्रसिद्ध है।

अंत में यह कहा जा सकता है कि, शिवरीनारायण महानदी के तट पर बसा यह स्थल प्राचीन काल से ही धार्मिक महत्व का रहा है। याज्ञवल्क्यसंहिता तथा रामायण में भी इस स्थल का नाम मिलता है। इस स्थल में शेव और वैश्णव धर्मो का सम्मिलित प्रभाव दिखाई देता है। शिवरीनारायण मे स्थित मंदिर के कारण यहां की तुलना शिवकाशी और विष्णुकाशी से की जाती है। यही कारण है कि यह स्थल छत्तीसगढ़ का काशी के नाम से प्रसिद्ध है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :- व्यक्तिगत सर्वे ।

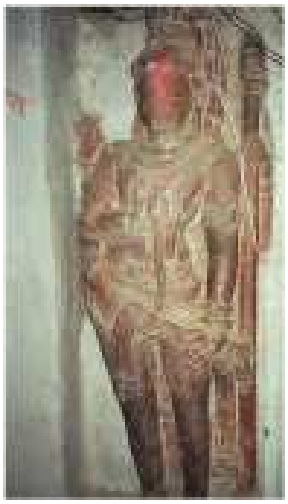

मध्यकालीन भारतीय इतिहास लेखन का स्वरुप

डॉ. कृष्णा मोरे *

प्रस्तावना – इतिहास साक्षी है कि पुरातनकाल से ही मानवीय स्वभाव के चिन्तनशील होने से उसके हृदय में उत्कण्ठा सदैव से ही विद्यमान रही हैं। अत: इस उत्कण्ठा एवं जागृति ने उसे अतीत के अध्ययन के लिए प्रेरित किया है। सामान्यत: इतिहासकार समसामयिक रुचि तथा आवश्यकतानुसार अतीत की घटनाओं का लेखा–जोखा प्रस्तुत करता हैं, अन्य विषयों की भाँति इतिहास के सम्बन्ध में भी अनेकानेक धारणाएँ उपलब्ध होती हैं। वस्तुत: ये समस्त धारणाएँ इतिहास के वास्तविक रुप को प्रस्तुत करने में असफल हैं और केवल उसके भ्रान्तिमूलक स्वरुप को ही उपस्थित करती हैं। हमारे यहाँ इतिहास लेखन में सामाजिक इतिहास के लेखन का अभाव हैं।[1] कुछ विद्धानों की धारणा हैं कि वह इतिहास को सत्य घटनाओं का वर्णन नहीं मानते है। उनके अनुसार इतिहास लेखन काल्पनिक कहानियों और असत्य घटनाओं का चित्रण हैं। लगभग एक शताब्दी पहले कुछ लोगों की यह धारणा थी कि इतिहास केवल एक उपन्यास मात्र हैं, अत: इतिहास के अध्ययन को कोई विशेष महत्व प्रदान नहीं करते थे।[2]

कतिपय विद्धानों ने इतिहास के बारे में अपनी–अपनी अवधारणाएँ प्रस्तुत की हैं। किसी ने इतिहास को कला माना हैं तो किसी ने विज्ञान, कोई इतिहास को अतीत का अध्ययन तो कोई वैज्ञानिक अध्ययन की संज्ञा दी है। इस दृष्टि से विद्धानों में मतेक्य नहीं पाया जाता हैं। दूसरी ओर पाश्चात्य विद्धानों ने आरोप लगाया हैं कि भारतीय इतिहासकारों को इतिहास लेखन की समझ नहीं हैं।

भारतीय सन्दर्भ में मध्यकालीन भारतीय इतिहास का लेखन आसान नहीं हैं। मध्यकालीन भारतीय इतिहास लेखन हेतु स्त्रोत के अध्ययन पर हम पाते हैं कि समकालीन इतिहास लेखक तत्कालीन सम्राटों के दरबारी थे अथवा उनके कृपा पात्र। अत: उनके द्धारा लिखा गया इतिहास एक पक्षीय तस्वीर प्रस्तुत करता हैं। प्राचीन भारतीय इतिहास लेखन की तुलना में मध्यकालीन भारतीय इतिहास लेखन के लिए सर्वप्रथम सहायक तत्व यह था कि मध्यकालीन इतिहास में साहित्य का प्रचुर मात्रा में सृजन हुआ।[3] जैसे–जैसे इस्लाम के आकार एवं विस्तार में वृद्धि हुई, वैसे–वैसे अरब यात्री, धर्मप्रचारक तथा व्यापारिक उत्साह से प्रेरित होकर भारत के विभिन्न हिस्सों के संपर्क में आते गए।[4] आठवीं शताब्दीं में सिन्ध पर अरबों की विजय और कालान्तर में भारत पर तुर्क आक्रमण के फलस्वरुप अरबी एवं फारसी इतिहासकारों ने मध्यकालीन भारतीय इतिहास लेखन को भी समृद्ध किया। जिसमें मुख्य कारण वंशावलियों के अन्वेषण ऐतिहासिक तथ्यों के संकलन, कागज का निर्माण, बौद्धिक परम्पराओं का विकास तथा खलीफाओं की सम्पन्नता थी। यद्यपि इन विवरणों का स्वरुप भौगोलिक अधिक हैं तथापि ऐतिहासिक दृष्टि से वह आज भी हमारे लिए बड़े महत्व का हैं।

भारत पर तुर्को की विजय के साथ ही जब मुसलमान भारत आये तो अरबी एवं फारसी इतिहास लेखन की परम्पराएँ भी साथ लाये। यही कारण हैं कि मध्यकालीन भारत में मुस्लिम इतिहासकारों द्धारा लिखित साहित्य प्रचुर मात्रा में प्राप्त होता हैं। इसमें सन्देह नहीं कि सल्तनकाल में भारत के मुस्लिम इतिहास लेखन में काफी कुछ तरक्की हुई, पर इस लेखन को विशेष बढ़ावा मुगल काल में मिला। प्राय: दसवीं शताब्दी ई. तक यहाँ के इतिहास लेखन में अरबी परम्परा हावी रही। इस्लामी इतिहास लेखन के मुख्य आधार कुरान व हदीस थे साथ ही मुख्य रुप से घटनाओं का विस्तारपूर्वक उल्लेख करना।

देखा जाए तो ईरानी परम्परा यहाँ के इतिहास लेखन में क्रमश: बढ़ती चली गई। गजनी व दिल्ली के सुल्तान प्राय: ईरानी शासकों का अनुसरण करने को इच्छुक थे अत: वे अपने इतिहासकारों से ईरानी परम्पराओं एवं अवधारणाओं पर इतिहास लेखन की आशा करते थे। मध्यकालीन भारत के आरम्भ में ही भारतीय विद्धानों ने भी संस्कृत में राजतरंगिणी का सृजन कर इतिहास के क्षेत्र में महत्वपूर्ण उपलब्धि हासिल की थी। इसमें मध्यकालीन कश्मीर का ऐतिहासिक विवरण मिलता हैं।[5]

मध्यकालीन भारतीय इतिहास लेखन के प्रमुख स्त्रोतों के आधार पर कहा जा सकता हैं कि भारतीय सन्दर्भ में मध्यकालीन इतिहास लेखन इतना सरल नहीं हैं। मध्यकालीन भारतीय इतिहास लेखन में अधिकांश इतिहासकार किसी न किसी दरबार से सम्बद्ध थे और विभिन्न सुल्तानों के आश्रय या संरक्षण में उन्होंने जो इतिहास सृजन किया, वह ऐतिहासिक दृष्टि से पूर्ण नहीं हैं जिसमें उन्होंने राजा एवं राजदरबार का महिमा–मण्ड़न किया हैं।

सल्तनतकाल से मुगलकाल तक के इतिहास में इसी प्रकार का इतिहास लिखा देखा जा सकता हैं। जियाउद्दीन बरनी की तारीख–ए–फिरोजशाही से लगाकर अबुल फजल की अकबरनामा तक में भी इसी शैली के इतिहास की झलक देखने को मिलती हैं। इतिहास मात्र राजा, रानियों एवं दरबारियों तक सीमित न होकर उसमें तत्कालीन सामाजिक विकास एवं सामाजिक परिवर्तन में आने वाले नवीन परिवर्तनों का भी वर्णन किया जाना चाहिए।[6]

मध्यकालीन भारतीय इतिहास के लगभग सभी इतिहासकार किसी न किसी शासक के राज्याश्रय से जुड़ें होने से ये इतिहासकार तत्कालीन समय में घटित वस्तु:स्थिति को न लिखते हुए उनके संरक्षक के अनुरुप ही लिखा। सल्तनतनकाल में कुतुबुद्दीन ऐबक से लगाकर मुगलकाल के बादशाह बहादुरशाह जफर तक के इतिहास में हमें ऐसे ढेरों उदाहरण देखने को मिलते हैं कि इस दौरान इतिहासकार किसी की कृपामात्र पर इतिहास लेखन कर रहे थे। दूसरी ओर ऐसे समय में वास्तविक सत्य एवं अपने अनुभव न लिखते हुए डरकर इतिहास लेखन किया गया।

अकबर ने साहित्य विभाग की स्थापना कर अपनी नीतियों तथा कार्यों का बखान अपने राज्याश्रितों के माध्यम से करवाया। मध्यकालीन इतिहास लेखन में कुछ शासकों की आत्मकथा जिसमें फिरोज तुगलक की फतूहात–

* 3, न्यू निम्बार्क कॉलोनी , सेंधवा, जिला–बड़वानी (म.प्र.) भारत

ए-फिरोजशाही, बाबर की तुजूक-ए-बाबरी एवं जहाँगीर की तुजूक-ए-जहाँगीरी आदि लेकिन इनमें भी मध्यकालीन इतिहास लेखन में इतनी सहायता नहीं मिल पाती हैं।

मध्यकालीन इतिहास में तत्कालीन दरबारी इतिहासकार वहीं लिखते थे जो उनके शासक को पसन्द था इसके अलावा कुछ प्रशंसापरक ऐतिहासिक काव्यों का भी सृजन हुआ जिसमें हिन्दू भी शामिल थे। रीतिकाल के आचार्य कवि केशवदास ने रत्नबावनी, वीरसिंह देवरचित एवं जहाँगीर जसचन्द्रिका, ऐतिहासिक काव्य के रुप में मिलते हैं।[7] कवि जयमल ने गोरा बादल, रामकवि ने जयसिंह चरित, निवाज तिवारी ने छत्रसाल विरुदावली एवं लालकवि ने छत्रप्रकाश जैसे प्रशस्तिपरक काव्य लिखे। इन काव्यों में जहाँ आश्रयदाता राजा को ईश्वर का अवतार, धर्मरक्षक, दीन-प्रतिपाल, महानायक के रुप में वर्णित किया गया हैं वहीं इन रचनाओं में तत्कालीन रीति-रिवाज, अस्त्र-शस्त्र, वेशभूषा, खान-पान, धर्म-पूजा, प्रीति-कलह, युद्ध-संधि, रानी-रतिवास, अफसर-सिफाही, राजदरबार तथा फरमान आदि सभी के सशक्त ऐतिहासिक विवरण भी मिलता हैं। अत: मध्यकालीन इतिहास लेखन में इतिहासकारों एवं कवियों द्वारा आश्रयदाता शासकों की प्रशंसा भले ही की गयी हो परन्तु इतिहास की जानकारी के ये प्रमुख स्त्रोत भी हैं।

मध्यकालीन भारतीय इतिहास लेखन में राजनीतिक एवं कुलीनवर्गीय इतिहास लेखन को महत्व देकर साधारण जन-जीवन एवं उसकी दशा की समस्या उजागर होती हैं। अधिकांश इतिहासकारों के अपने कुछ विशिष्ट पूर्वाग्रह थे और उनसे ग्रसित होकर ही उन्होंने इतिहास का सृजन किया।

निष्कर्षत: मध्यकालीन भारतीय इतिहास लोकमानस के मन-मस्तिष्क पर राजा-रानी, घोड़ों की कहानी से कमतर नहीं हैं। अत: हमें साम्प्रदायिक समस्या का पक्षपातपूर्ण ऐतिहासिक विवरण घटनाओं का क्रमिक कालक्रमण तात्कालीन सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक विवरण, लोक जीवन, परम्परा तथा क्षेत्रीय इतिहास को समान महत्व देना होगा। राष्ट्रीय स्तर पर विद्धानों, इतिहासकारों तथा पुरातत्वेताओं के संयुक्त प्रयास से ही मध्यकालीन ऐतिहासिक लेखन की विसगतियाँ दूर की जा सकती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सरकार, सुमित (अनुवादक) एन. ए. खां शाहिद : सामाजिक इतिहास लेखन की चुनौती,, ग्रंथ शिल्पी (इण्डिया) प्रा. लिमिटेड़, दिल्ली, 2001, पृष्ठ 13.
2. खुराना, डॉ. के. एल., बंसल, डॉ. आर. के. : इतिहास लेखन, धारणाएँ तथा पद्धतियाँ, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, 2009-2010, पृष्ठ 2.
3. वरे, डॉ. एस. एल. : इतिहास लेखन की अवधारणा, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल, 2008, पृष्ठ 110.
4. वर्मा, हरीशचंद्र : मध्यकालीन भारत (भाग1) हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली, 2010,पृष्ठ 496.
5. वरे, डॉ. एस. एल. : इतिहास लेखन की अवधारणा, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल, 2008, पृष्ठ 111.
6. वर्मा, डॉ. एस. आर. : मध्यकालीन भारत का इतिहास, एस.बी.पी.डी. पब्लिशिंग हॉउस, आगरा, 2011-12, पृष्ठ 1.
7. वर्मा, हरीशचंद्र : मध्यकालीन भारत (भाग2) हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली, 2010,पृष्ठ 601.

****

मुखौटो का जादुई संसार

सोनम सिकरवार * डॉ. रेखा श्रीवास्तव * *

प्रस्तावना – प्रागैतिहासिक काल से ही आदिमानव कला के माध्यम से अपनी भावाभिव्यक्ति करते आये हैं। पाषाण पर निर्मित भित्ति अलंकरण इसके प्रबल साक्ष्य हैं। इसी तरह आदिमानव जब विकास के पथ पर था तभी से उसने मुखौटें का रहस्य समझ लिया था इसलिए उसने अपने अनुष्ठान और कला में मुखौटें को स्थान दिया लगभग सभी संस्कृतियों में संचार के प्रयोजनों में किसी न किसी रूप में मुखौटे रचनात्मक अभिव्यक्ति प्रकट करते रहे हैं।

मुखौटों का प्रचलन लोक एवं आदिवासी समुदायों में भी विभिन्न धार्मिक अनुष्ठानों, नृत्यों, महामारियों बीमारियों, दुष्टात्माओं, विपदाओं से मुक्ति मनोरंजन इत्यादि के लिये आदिकाल से ही रहा है। यह कहा जा सकता है कि मुखौटों के माध्यम से आदिमानव ने 'सौन्दर्यबोध और रचनात्मकता को कला प्रतिभाओं के माध्यम से अभिव्यक्तियाँ दी है, मुखौटों का उपयोग उत्सवों में नृत्यों के दौरान करने से लेकर नाटकीय प्रस्तुतियों में चरित्रों के निर्वहन में बखूबी होता है।'[1] संभवत मुखौटे आदिम युग से मनुष्य की कल्पनाशीलता एवं रचनात्मक का दोहन किया हैं मनुष्यता के संबंध में भी शिकारियों के मुखौटों को शैलचित्र कला में देखकर आज भी अभिव्यक्ति से संबंधित सटीक अनुमान लगाये जा सकते है।

मुखौटों का प्रचलन न केवल भारत में बल्कि सम्पूर्ण विश्व में प्रचलित होने के प्रमाण उपलब्ध होते हैं। जो अत्यधिक कल्पनाशील बहुआयामी, जादुई धार्मिक और वैविध्यपूर्ण होते हैं।

मुखौटों के प्रयोजन, निर्माण एवं उपयोग से संबंधित तथ्यों को समझने से पूर्व मुखौटों के अर्थ को समझना समीचीन होगा। मुखौटे का अर्थ 'मुख की ओट से कहा जाए वह मुखौटा कहलाता है।' मुखौटा मुख का प्रतिरूप भी होता है। प्रतिरूप बदला भी जा सकता है मुखौटा मनुष्य के आंतरिक और बाह्य भाव विचार का दर्पण होता है। मुखौटा मुख का प्रतिबिम्ब भी होता है। चेहरे पर भाव और विचार के हजारो रंग और रूप देखे जा सकते है। फलस्वरूप मुखौटे भी हजारों तरह के हो सकते है। मुखौटे का प्रथम प्रयोग यातु मूलक है जिसमें तंत्र मंत्र और जादुई प्रभाव की केन्द्रियता रही है।

मुखौटा यानी मुख की ओट करे अर्थात चेहरे पर चढ़ाया गया नकली चेहरा आँख कान ओंठ नाक और शरीर के सभी अंगो के माध्यम से बनायी जाने वाली विविध भंगिमाओं के द्वारा एक अकल्पित व्यक्तित्व को धारण करना।[2] आदिवासियों में मुखौटे के लिये मुखटा शब्द प्रचलित है जो मूर्ति और मुखाकृति की अभिव्यंजना से साम्यता रखता है।

देवीलाल पाटीदार का मानना है कि किसी का भी चेहरा दो तरह का होता है एक–जो हम सबके सामने रखते हैं। दूसरा–वो जो हमारे भीतर होता है और विभिन्न भाव लिए रहता है। उन्होंने चित्रों में मानवों के मुख पर आने वाले हर भाव को प्रस्तुत करने का प्रयास किया हैं। जिसमें स्नेह, क्रोध, दुख, खुशी आदि शामिल हैं।[3] अधिकतर मुखौटे उपयोगकर्ताओं द्वारा स्वयं तैयार किये जाते है किन्तु भवाड़ा से सम्बधित मुखौटे सभी उपयोगकर्ताओं द्वारा नहीं बल्कि उनमें से ही कुछ विशेषज्ञों द्वारा बनाये जाते हैं और उनके लकड़ी के आकार बहुत बड़े होने के कारण इसमे लगने वाली लकड़ी सामुदायिक प्रयास से एकत्रित कर पहुँचायी जाती है। कलाकार का घर नाटकघर के वर्कशाप जैसा दृश्य उपस्थित करता है। जिसमें अनेक मुखौटे एक साथ बनने होते है जिन्हें दूर–दूर के गाँव के लोग आकर ले जाते है।

'सामान्यत: व्यक्ति के अंदर भी एक अदृश्य मुखौटा होता है एक तो वह जो वह दिखता है और एक वह जो वास्तव में होता है सामान्यत: व्यक्ति अपनी मुखाभिव्यक्ति को छुपाने के लिये मुखौटे का प्रयोग करते है जबकि कलाकार अपनी अनुभूतियों की बाह्य अभिव्यक्ति हेतु विभिन्न रूपाकारों में मुखौटे का निर्माण करता है। विभिन्न माध्यमों में निर्मित मुखौटों से व्यक्ति उसके वातावरण और यथार्थ की प्रस्तुति सशक्त तरीको से कर सकता है।'[4]

प्रागैतिहासिक काल के गुहा चित्रों में मुखौटे का अंकन इस बात के प्रमाण हे कि आदिम मानव मुखौटे का प्रयोग करना जानता था। मुखौटे के लिए पहला साधन पत्ता रहा होगा फिर मिट्टी के मुखौटे बने होंगे। विकास के साथ–साथ कपड़े लुगदी आदि के मुखौटों का निर्माण होता चला गया और वर्तमान में भी आदिवासी समुदाय मुखौटों का प्रयोग विभिन्न संस्कारों में करता आ रहा है।

वैश्विक परिदृश्य पर भी नजर डाले तो प्रत्येक देश के अपने अलग–अलग रंग एवं रूपाकारों के मुखौटों की परम्परा मिलती है मुखौटों की दुनिया ही अलग है जो मनुष्य को एक चमत्कारी रहस्यमयी माहौल में ले जाते है विश्व में कई देशों में मुखौटों की परम्परा विभिन्न संस्कारों में प्रचलित है जिसमें अलग–अलग माध्यमों में एवं रूपाकारों में निर्मित मनोहारी आकर्षक मनमोहक एवं यातुक मुखौटों के उदाहरण उपलब्ध है। जिसमें अफ्रीका के आदिम मुखौटे विशाल आकार के होते हैं। पितरों के प्रतीक रूप में इनकी पूजा होती है। मिश्र के ममी मुखौटे विश्व भर में प्रसिद्ध है यहाँ के भित्ति चित्रों में भी देवताओं के मुखौटों का अंकन मिलता है। यूरोप के अनेक स्थानों पर शव को मुखौटा

* शोधार्थी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
* सहायक प्राध्यापक, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

लगाकर दफनाने की परम्परा रही है। कम्बोदिया में शव को व्यक्ति अपनी क्षमता के अनुरूप सोने, चाँदी, पीतल या मिट्टी के मुखौटे पहनाकर दफन करने की प्रथा प्रचलित थी।

चीन में चानवंश के पीतल के मुखौटे मिलते है, जापान में नोह नाटक के तथा मलेशिया सिक्किम भूटान के लकड़ी के मुखौटे, कांगो में लकड़ी पर खरादे गये मुखौटे प्रसिद्ध है। श्रीलंका में भी भारत के अनेक प्रांतों के सदृश्य भूत-प्रेत भगाने के लिए, पशुओं को निरोगी रखने, रक्षा, आवासीय स्थल को दुष्टात्माओं से बचाने के लिए मुखौटे लगाये जाते है। तिब्वत मुखौटो के अद्धितीय संसार के लिये जाना जाता है।

एशिया के देशो में धार्मिक कर्मकाण्डों के अलावा नाटकों और नृत्यो में मुखाटों का उपयोग होता है भारत में कथकली, यक्षगान, छाऊ नृत्य और विभिन्न रामलीला शैलियों में मुखौटों का प्रयोग होता है। महाराष्ट्र, गुजरात और दादर नगर हवेली में रहने वाली कुछ जनजातियों के भवाड़ा नृत्य मुखौटे पहनकर करते हैं। मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़ की जनजाजियाँ मुखौटों को विवाह और अन्य पर्वो पर उपयोग करती है।

कुछ गैर आदिवासी समाजों में मुखौटे का उपयोग धार्मिक न होकर नाटकों में चरित्र के प्रकार के अनुसार उसके चेहरे को एक भिन्न शक्ल देने के लिये ही किया जाता है। म.प्र. के आदिवासियों में नृत्य, नाट्य, उत्सव आदि अवसरों पर मुखौटे धारण करने की परम्परा रही है। माण्डला जिले के गोण्ड और सरगुजा के पण्डो, कॅवर और उराँव आदिवासी मुखौटों को विभिन्न रूप से प्रयोग में लेते है। बस्तर की भतरा जनजाति में भरता नाट में विभिन्न मुखौटों का चलन है जैसे गणेश, जामवन्त, हनुमान आदि। मुखौटों का बाह्य स्वरूप न केवल आदिवासियों को वरन दर्शकों को भी प्रभावित एवं आकर्षित करता है। (5)

मुखौटों ने म.प्र. के समकालीन कलाकारों को भी विषय बनाकर कृति निर्माण की ओर प्रेरित किया। ऐसे ही कलाकारो में देवीलाल पाटीदार का नाम भी जाना जाता है। जिन्होंने मुखोटे विषय पर अनेक कृतियों का निर्माण किया है। इस कार्य की प्रेरणा उन्हें बचपन से गाँव में आयोजित विभिन्न कार्यक्रमों से मिली जिसमें वे स्वयं गाँव में नृत्य, तीज, त्यौहारों आदि अवसरों पर होने वाले कार्यक्रमों में मुखौटे तैयार करते थे। वहीं से उन्हें इन विषयों को लेकर चित्र बनाने की असीम लालसा उठी थी जिसे उन्होंने कालान्तर में कार्य रूप में परिणित किया और इन्हीं विषयों पर अनेक चित्रों की श्रृंखला तैयार की। आज देवीलाल पाटीदार ने कला में अपना एक विशेष स्थान प्राप्त कर लिया है उनकी कला ने उन्हें भारत में ही नही विदेशों में भी सम्मान दिलाया है आज पाटीदार अपने गुणों के कारण काम में बहुत सिद्धहस्त हो चुके है।

किसी भी व्यक्ति को समझने में उन्हें वक्त नहीं लगता और जब वह अपना काम करते हैं तो जीवन के कई पहलुओं को अपने काम में शामिल करते हैं। पाटीदार उन सफल कलाकारों की श्रेणी में आते हैं जो अपनी मिट्टी से गहराई से जुड़े है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तिवारी कपिल संपादक, प्रतिरूप (म.प्र. के जनजातिय मुखौटे) प. पक्रिया
2. तिवारी कपिल संपादक, प्रतिरूप '(म.प्र. के जनजातिय) मुखौटे
3. साक्षात्कार, पाटीदार देवीलाल भारत भवन 4 जुलाई 2014
4. ब्रोशर अन्तर्राष्ट्रीय मास्क प्रदर्शनी दिल्ली नव सिद्धार्थ आर्ट ग्रुप दिनांक 2012
5. मुखौटा गैलरी, इंद्रगाँधी मानव संग्राहलय भोपाल में प्रदर्शित

****

देवलाल पाटीदार की कलाकृति में लालटेन

सोनम सिकरवाल * डॉ. रेखा श्रीवास्तव * *

प्रस्तावना – कलाकृतियां जीवन के यथार्थ द्वंद को जितनी यथा तथ्यता और गहन संवेदना के साथ 'प्रतिबिम्बित करती है इसका सृजनात्मक प्रभाव भी उतना ही अधिक होता है। यह सच है कि प्रकृति और जीवन को जब बाह्य माध्यमों पर उकेरा जाता है। तब उसकी कोई निश्चित व्याख्या नहीं की जा सकती। जिस प्रकार काल प्रदेश व संस्कृति के अनुसार शब्द के अर्थ बदलते रहते हैं ठीक वैसे ही किसी चित्र में उकेरी गयी अमूर्त संरचनाओं की कोई यथा तथ्य व्याख्या नहीं की जा सकती। इसके बाद भी निश्चित तौर पर कहा जा सकता है कि मस्तिष्क में उठने वाले विचार अनन्त ज्ञानेन्द्रियज अनुभाविक स्मृति बिम्ब होते हैं। यह बिम्ब बाह्य माध्यमों पर जब आकार लेते हैं तब उनमें श्रव्य, स्पर्शीय आदि सभी अनुभव एक साथ सम्मिलित होते हैं।[1]

'एक महान सर्जक का कार्य यही होता है कि या तो वह परम्परा को नये संदर्भो में परिभाषित करे या परम्परा के बराबर समकालीनता को एक सार्थक विकल्प के तौर पर उभारे '[2] मानव की सहज प्रवृत्ति है कि वह नित नूतनता और परिवर्तन के प्रति प्रारंभ से ही संवेदनशील रहा है यही कारण है कि प्रागैतिहासिक काल से मानव प्रत्येक क्षेत्र में विकास की दिशा में निरंतर अग्रसर रहा और वर्तमान स्वरूप तक अपनी तकनीकी ज्ञान का परिचय देकर उत्तरोत्तर अपनी उपस्थिति दर्ज कर रहा है इसी तरह आज तेजी से बदलते सामाजिक परिदृश्य में न केवल लोक एवं आदिवासी चित्रकला बल्कि समसामायिक कला में भी बदलाव आ गया है। जिन्हें अच्छा या बुरा कहने के बदले, ध्यान से देखने व समझने की जरूरत है क्योंकि कलाकार के द्वारा निर्मित सभी वस्तुओं का कलात्मक महत्व नहीं होता है इसी प्रकार किसी भी वस्तु को पूर्णत: कलाहीन भी नहीं कहा जा सकता है।

आदि काल से ही कलाकार अपनी जिज्ञासाओं को अपनी कलाकृतियों के माध्यम से अभिव्यक्त करने की कोशिश करते आ रहे हैं। यह अभिव्यक्ति की ऐसी अविरल प्रयास की धारा है जो न तो आज तक रूकी है और न रूकेगी। ऐसे ही जिज्ञासु कलाकारों में देवीलाल पाटीदार हैं जिनका जन्म 16 जुलाई 1960 में ग्राम सुन्द्रेल जिला धार में हुआ था।

अपनी जिज्ञासाओ और कल्पनाओं को पाटीदार ने बचपन में ही देशज सहज उपलब्ध माध्यमों में अभिव्यक्त करने के किसी भी अवसर को नहीं छोड़ा जिसमें मिट्टी को प्रमुख माध्यम के रूप में प्रयुक्त किया स्थानीय अवसर पर अपने दोस्तों के साथ विभिन्न उत्सव त्योहारों पर अपनी अद्भुत क्षमता को पूर्व दक्षता से अभिव्यक्त करते रहे हैं और अपनी कला यात्रा के उच्चतम पढ़ावों की ओर अग्रसर हुए।

स्कूली शिक्षा समाप्त कर लेने के उपरान्त कला के क्षेत्र में आगे बढ़ने की जिज्ञासा ने उन्हें महाविद्यालय इंदौर आने के लिए प्रेरित किया जहाँ उन्होंने राष्ट्रीय स्तर के कला शिक्षकों से कला में शिक्षा हासिल की। सन् 1982 में म.प्र. शासन की योजनान्तर्गत एक उत्कृष्ट ऐसे कला संस्थान का निर्माण प्रस्तावित हो रहा था जिसमें कला संबंधी समसामयिक लोक एंव आदिवासी कला एवं संस्कृति से सम्बन्धित विशाल संग्रहालय का निर्माण किया जाना था। जिनमें पाटीदार को अकादमिक शिक्षा प्राप्त करने के साथ–साथ कला संबंधी जानकारी एकत्र करने का महत्वपूर्ण कार्य सौंपा गया जिसे उन्होंने पूर्ण निष्ठा से योजनान्तर्गत सम्पादित करने में अपनी कुशल दक्षता का परिचय दिया।'जीवन की सत्यता का अन्वेषण ही वस्तुत: उनकी सर्जना का ध्येय है।[3] पाटीदार निरंतर अपनी दबी हुई अभिव्यक्ति को पूर्ण करने की ओर प्रेरित हुए जो वर्तमान तक जारी है।

अपनी इस कलायात्रा में पाटीदार ने न केवल अलग–अलग विषयों पर बल्कि अलग–अलग माध्यमों में भी अपनी सशक्त अभिव्यक्ति दी है जिसमें रेखांकन चित्रांकन, शिल्पाकंन, ग्राफिक्स इत्यादि को शामिल किया है। उन्होंने अपनी अनुभूतियों की बाह्य अभिव्यक्ति के लिए जितना चित्रांकन को स्थान दिया है, उतना ही शिल्पों के माध्यम से भी प्रकट किया है। पाटीदार द्वारा निर्मित कलाकृतियों में उनकी भिन्न प्रयोगधर्मिता का उनका अपना एक अलग ही अंदाज रहा है।

पाटीदार को अपने भावों की अभिव्यक्ति के लिए अधिक रूपाकारों की आवश्यकता नहीं होती हैं। ज्यामितीय आकारों एवं प्रतीकों के माध्यम से सीमित रंगों में असीमित अभिव्यक्ति इनकी मुख्य विशेषता हैं। इन्होंने एक विषय को लेकर चित्रों की श्रृंखलाओं का निर्माण किया जिनमें मुखौटे लालटेन, टूल्स खिड़कियाँ इंसेट आदि, हर एक विषय से कुछ न कुछ खास बातें जुड़ी रहती है जैसे टूल्स औजार अथवा यन्त्र में भी कुछ न कुछ कलात्मक तत्व निहित रहते हैं। जिसे पाटीदार ने महसूस किया और इसे भी अपना माध्यम बनाया व उसमें दिये रूपो को गहराई से समझा।

इनके चित्रों में भीड़भाड़ नहीं होती है पर प्रत्येक चित्र में अपना एक संवेदनशील भाव अवश्य होता है उन का मानना है कि किसी भी कलाकृति में भावों के अंकन से कृति में जीवंतता आ जाती है। जब भी किसी बाह्य माध्यम में अभिव्यक्ति करते हैं तो प्रत्येक भाव को जो वह अनुभव करते हैं उसमें स्थापित करने की कोशिश करते हैं ताकि वह जीवंत लगे जैसे इनके मुखौटे की निर्मित कृतियों की श्रृंखला में दिखाई देते हैं जिसमें अनेक प्रकार के रोचक एवं आर्कषण मुखौटों का चित्रण एवं इसी से संबधित शिल्पों का निर्माण भी किया है।

शिल्प सृजन के संदर्भ में देवीलाल जी का मानना है कि किसी भी कृति की रचना में कलाकार अच्छे से अच्छे शिल्प विधान का प्रयोग करना चाहता है यद्यपि यह कलाकार की विषम मानसिक स्थिति होती है, जिसमें वह कृति के निर्माण में स्वयं को अभिव्यक्त करने की क्षमता का, कौशल का प्रयोग किस सीमा तक कर पाता है तथा कलाकृति की कलात्मकता का निर्णय उस कृति के बन जाने के उपरान्त ही व्यक्तिगत रूप में करता है।

* शोधार्थी , शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
* * सहायक प्राध्यापक, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

देवीलाल पाटीदार का मानना है कि जब कलाकार किसी विषय पर कलाकृति का निर्माण करता है तो वह उस वस्तु की अनुकृति मात्र न करके उसमें अपने ढंग से प्रस्तुत करता है इस प्रकार वह उसमें अपनी व्याख्या जोड़ देता है कलाकृति में कलाकार अपने भाव विचार तथा अनुभवों को सम्मिलित करता है अत: कलाकार द्वारा निर्मित रूपाकारों में कलाकार के अनुभव और बुद्धि दोनों का समन्वय रहता है इस प्रकार निर्माण की गई कृति सिर्फ विषय न रह कर शिल्प बन जाती है, जिसमें सम्मिलित कलाकार की अनुभतियां शिल्प को नवीन सोच के साथ दर्शक के सामने प्रस्तुत करती है जैसी पाटीदार के शिल्पों में नजर आता है।

देवीलाल पाटीदार के लालटेन शीर्षक के शिल्पों और चित्रों में उनके इन्हीं अनुभूतियों की प्रतीति होती है। उन्होंनें लालटेन शिल्पों में मानवों की विपरित लिंग के प्रति प्राकृतिक सहज अनुभूतियो एवं आकर्षण से संदर्भित आलिंगन को प्रस्तुत किया है, लालटेन के विषय पर राजेश जोशी ने लिखा है 'देवीलाल के लालटेन शिल्प के आकार सेक्स के प्रतीक के रूप में दिखाया है। स्त्री पुरूष के आलिंगन को प्रकाश के द्वारा एक अलग ही तरह से परिभाषित किया है। जब दो विपरीत वस्तुएं मिलती है तो एक नये जीवन को जन्म देतीं हैं।[4]

लालटेन का अविष्कार ब्रिटेन में हुआ था। ब्रिटेन में इसका नाम लेनटेन है, किन्तु भारत में इसे लालटेन बोला जाता है। लालटेन के विषय में जब पाटीदार ने शिल्पों का निर्माण किया तो उसमे आलिंगन विषय को प्रस्तुत किया है उन्होंने स्त्री पुरूष को प्रतिकात्मक रूप मे दर्शाया है। इसे उन्होंनें प्रकाश की तरह माना है प्रकृति के निरंतर विकास के लिए यह आवश्यक है। अंधकार को दूर करने के लिए ज्ञान रूपी प्रकाश की आवश्यकता होती है लालटेन को बनाने का उनका यही उद्देश्य रहा है।

'पाटीदार की लालटेन ऐसी दिखाई देती है जैसे यह लालटेन की अपनी भाव दशा है जो कलाकार की भाव दशा के अग्नि हो उठी है। लालटेन अपने अवयवों को मानवीय रूपाकार में ढलता अनुभव कर रही है।5

लालटेन श्रंखला की सभी कृतियां कलारसिकों को प्रभावित करती हैं और जीवन के किसी न किसी क्षण को स्पंदित करती महसूस करते हैं। उन्हेांने इस श्रृंखला की कृतियों से सहज, सरल आकारों से, सहज उपलब्ध माध्यमों में विषय की गंभीरता को समेटने का प्रयास किया है। लालटेन आकृति में पाटीदार को औसाका ट्रिनाले पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है। इस प्रकार देवीलाल सरल सहज विषयो में कम से कम रंगो आकारो के साथ निरंतर सृजनरत हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यास राजेश कुमार कलावार्ता पृ: 53 उस्ताद अलाउददीन खां संगीत एवं कला अकादमी जून 2010
2. प्रसाद प्रो.कमला कलावार्ता अंक 104 पृष्ठ 67 म.प्र. कला परिषद का प्रकाशन फरवरी 2003
3. प्रसाद प्रो. कमला कलावार्ता अंक 104 पृष्ठ 66 म.प्र. कला परिषद का प्रकाशन फरवरी 2003
4. अग्रवाल डॉ गिरीश किशोर कला निबन्ध पृष्ठ ललित कला प्रकाशन- 27ए साकेत कालोनी अलीगढ
5. स्व. नवीन सागर सम्पादक रमेश दवे समावर्तन पृष्ठ 57 मासिक पत्रिका अंक 5 वर्ष 2, पूर्णाक 17 अगस्त 2009

****

मालवी कहावतों में स्वास्थ्य

डॉ. वन्दना जैन *

प्रस्तावना –

'शरीर माध्यम खलु धर्म साधनं।'

अर्थात् शरीर ही धर्म पालन करने का सबसे बड़ा साधन माना गया है। भारतीय संस्कृति में स्वास्थ्य की शुद्धता पर विशेष ध्यान दिया गया है। यहाँ ऋतु अनुसार आहार–विहार, स्वास्थ्यवर्धक नियम इत्यादि की परम्परा जन–जीवन में आज भी इसी रूप में संचित है और इनका अनुकरण करके वह निरोगी बने रहते है, कहा भी गया है –

'पहला सुख निरोगी काया।'

इस संसार में रोग से मुक्त रहना ही सबसे बड़ा सुख माना गया है। स्वास्थ्य से सम्बन्धित कई अनुभव जो हमारे बुजुर्गो को हुए है, उन्हें कहावतों के रूप में सुरक्षित रख कर आने वाली भावी पीढ़ी को अनमोल रत्न प्रदान किये है।

यह सर्वविदित है कि पौराणिक काल से ही ऋषि–मुनियों ने स्वास्थ्य को जीवन की बहुमूल्य धरोहर के रूप में माना है। इसके बिना सुखी और सुन्दर संसार की कल्पना नहीं की जा सकती है, उन्होंने स्वास्थ्य के प्रति सजग रहने की सलाह इस लोक प्रचलित उक्ति के माध्यम से की है –

'कम खाणो ने गम खाणो।'

अर्थात् कम खाने और कम खाने से व्यक्ति सुखी रहता है। भोजन थोड़ी मात्रा में ग्रहण करना शरीर के लिए लाभदायक होता है। भोजन का सम्बन्ध शरीर से कम और मस्तिष्क से ज्यादा होता है, क्योंकि भूख का अहसास मस्तिष्क को ही होता है पर अधिकांश लोग जरूरत से ज्यादा या जरूरत से कम खाते है, जबकि शरीर को स्वस्थ और संतुलित विकास के लिए उचित मात्रा में भोजन करना चाहिए। मालवा में एक लोकोक्ति प्रचलित है –

'जैसो खावे अन्न वैसो होवे मन।'

अर्थात् जिस प्रकार का अन्न मनुष्य ग्रहण करता है। वैसा ही लोगों के प्रति उसका व्यवहार होता है। अब भोजन में भी किस प्रकार का भोजन स्वास्थ्यवर्धक माना गया है। इसका उल्लेख भी जन कहावतों के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है सामान्यत: ऐसा माना जाता है –

'ठण्डो न्हाव तातो खाय
ओका घर वेद कदी नी जाय।'

इस लोकोक्ति में यह समझाने को प्रयास किया गया है कि जो मनुष्य नित्य ताजे भोजन के साथ ही ठण्डे जल से स्नान करता है वह निरोगी रहता है लेकिन शर्त यह है कि व्यक्ति प्रात:काल नित्य कर्म से निवृत हो कर स्नान करे। इस सम्बन्ध में जनश्रुति देखिये –

'प्रात: काल करै जो स्नान
रोग–दोष एको नी आवे।'

भोजन मनुष्य की मूल आवश्यकता है वह वह कब, कैसे कितना किया जाए, यह एक अहम प्रश्न है। भोजन का अर्थ केवल पेट भरना ही नहीं, अपितु मन को तृप्ति और शरीर को पोषण देना भी है। अत: किन खाद्य पदार्थो का उपयोग महीनों के हिसाब से करना हितकारी और किसका उपयोग करना हानिकारक होता है, इसका विवेचन भी लोक साहित्य के विद्धानों ने कहावतों के द्वारा किया है –

'सावन हरडै भादू चीत्ता।
आसोजां गुड़ खावो मीत।।
काती मूला मंगसर तेल।
पोंह में करो दूध सूं मेल।।
माघ मास घिव खिचड़ी खाय।
फागण दिनूगे उठ न्हाय।।'

अर्थात् सावन में हरड, भादों में चिरायता, क्वार में गुड़, कार्तिक में मूली, अगहन में तेल, माघ में घी और खिचड़ी तथा फाल्गुन में प्रात:काल स्नान करना हितकर माना गया है।

इसी प्रकार निरोगी एवं स्वस्थ रहने के लिए ऋतु के अनुसार कई भोज्य पदार्थो से परहेज रखने का सदुपदेश भी लोकोक्ति में मिलता है यथा –

'चैत गुड़ वैशखे तेल, जेठे पंथ अषाढे बेल,
सावण साग भादवो दही, क्वार करेला कातिकमही।
अगहन जीरा पूसे धाणा, माहे मिसरी फागण चिणा।।'

अर्थात् चैत्र में गुड़ और वैशाख में तेल का उपयोग वर्जित है। ज्येष्ठ मास में गरमी की अधिकता के कारण यात्रा से बचना चाहिए। आषाढ़ में बेल–फल, श्रावण में हरे शाक, भादो में दही, क्वार में करेला, कार्तिक में छाछ, अगहन में जीरा, पोष में चने का सेवन करना वर्जित है। उपर्युक्त चीजें इन महीनों में अधिक मात्रा में होने के कारण लोग ज्यादा खा लेते है। इसलिए उनसे बचने की राय दी गई है, क्योंकि ऋतुओं के सर्द या गर्म होने के कारण ये वस्तुएँ स्वास्थ्य के प्रतिकूल है। हमें नित्य प्रति किस खाद्य–सामग्री का उपयोग खानपान के लिए लाभदायक है। इनका भी उल्लेख विद्धतजनों ने लोकोक्ति के माध्यम से किया है –

'हर्र, बहेडा, आँवला, घी, शक्कर में खाय।
हाथी दाबें कोख में साठ कोस ले जाए।।'

अर्थात् हरड़, बहेड़ा, आँवला तीनों को घी में भूनकर शक्कर मिलाकर सेवन करना हितकारी माना जाता है। इसी तरह की एक और उक्ति द्रष्टव्य है–

'मांस खाय मांस वधे, घी खायां खोपडी।
दूध खाय जार वधे, नर हरावे गोरड़ी।।'

अर्थात् मांस के सेवन से मांस, घी के सेवन से बुद्धि, दूध से बल बढ़ता है और वह इतना शक्तिशाली हो जाता है कि बैलों के साथ युद्ध होन पर भी उसे हराने में समर्थ होता है। यह सर्वमान्य है कि घी खाने से मस्तिष्क का विकास होता है लेकिन उसे उतना ही खाना चाहिए जितना वह पचा सके। इस विषय में कहा भी गया है –

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (हिन्दी) शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

'अन्न मुतका न घी जुगता।'

अर्थात् अन्न पेट भर कर खाना उचित है लेकिन घी जितना पचे उतना ही खाओ। जरूरी नहीं है कि पौष्टिक भोजन मंहगा ही हो। इसमें हरी सब्जियाँ, दालें, अंकुरित अनाज और मौसमी फलों को शामिल करना उचित होता है। इस आधार पर फल की समीक्षा करते हुए विवेचन किया गया है जो निम्नलिखित उक्ति के माध्यम से दृष्टव्य है–

'अमरूद कहे म्हार में बीज नी वेता तो मूं जेर थो।
नींबू कहे म्हार में बीज नी वेता तो मूं अमृत थो।।'

अत: जामफल (अमरूद) में बीज नहीं हो तो वह विष के समान और नींबू में नहीं हो तो वह अमृत तूल्य माना जाता है।

इन लोक परम्पराओं में स्थापित स्वास्थ्य सम्बन्धी कहावतों में खान–पान के साथ ही व्यक्ति के आचार–विचार, रहन–सहन को भी ध्यान में रखा गया है। इसी कारण लोक संस्कृति में सात्विक भोजन के साथ ही ध्यान, प्राणायाम् एवं व्यायाम को सर्वाधिक महत्व दिया जाता है। प्राचीन समय में ध्यान केवल ऋषि–मुनियों के सामर्थ्य की बात समझी जाती थी, परन्तु वर्तमान समय में जन साधारण की पहुँच भी इस ओर अग्रसर होने लगी हैं। कहते है – 'एक स्वस्थ्य शरीर के लिए बीमारियों से दूर रहने के साथ ही नियमित तौर पर व्यायाम भी बहुत जरूरी है लेकिन उचित मार्गदर्शन के अनुसार किया गया व्यायाम की शरीर के लिए लाभदायक होता है।'

शरीर में हुए विभिन्न रोगों के समाधान के लिए हम लोग आजकल पश्चिमी चिकित्सा पद्धति का प्रयोग करते है और इसकी अच्छाईयों को नकारा नहीं जा सकता है, लेकिन इसकी काफी कमियाँ हैं, जैसे कि अनजाने में दुष्प्रभाव डालते हैं। इस सम्बन्ध में भारतीय आयुर्वेदिक चिकित्सा काफी बेहतर है और इनमें से कुछ का प्रयोग प्रत्येक घर में वर्षो से हो रहा हैं, जो आज भी उतने ही लाभदायक सिद्ध हुए है।

आयुर्वेद में नीम की बड़ी महिमा गायी गई है। नीम का उपयोग कई बीमारियों के उपचार के लिए किया जाता रहा है। आज भी बहुत सी ऐसी दवाईयाँ है, जिनमें नीम के पत्तों का रस, नीम के पेड़ के विभिन्न भाग का इस्तेमाल होता है। मालवा में एक कहावत प्रचलित है कि जिस धरती पर नीम के पेड़ होते है वहाँ बीमारी कैसे हो सकती है यथा –

'सर्व रोग हारो निम्ब:।'

अर्थात् नीम सभी रोगों को दूर करने वाली है। साथ ही इसकी डाल का प्रयोग दातून के रूप में भी लाभदायक माना गया हैं। इसी प्रकार की एक कहावत बचपन से ही कंठस्थ करा दी जाती है–

'आंख में अंजन, दांत में मंजन, नितकर, नितकर, नितकर।
कान में लकड़ी, नाक में अंगुली, मतकर, मतकर, मतकर।।'

अर्थात् आंख में अंजन और दांत में दातुन प्रतिदिन करो लेकिन कान में लकड़ी और नाक में अंगुली कभी मत करो।

व्यक्ति के शरीर के प्रत्येक अंग विभिन्न प्रकार के विचारों व भावनाओं को प्रदर्शित करता है। जिससे उसके व्यक्तित्व को आसानी से पहचाना जा सकता है। शरीर के आवश्यक अवयवों में एक है – आंख। इसे हमारी आत्मा की खिड़की कहा भी गया है– **जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि।** आंख की प्रमुखता का अंदाजा तो इस बात से लगाया जा सकता है कि बिना आंखों के सब बेकार है अत: इस अवयव को सुरक्षित रखना एवं रोगों से बचाना अत्यन्त आव'यक है। भारतीय चिकित्सा पद्धति में नेत्र रोग को दूर करने हेतु कालीमिर्च जैसी अनुपम औषधि का प्रयोग किया जाता है। आयुर्वेद में काली मिर्च को सभी प्रकार के जीवाणु, वायरस आदि को समाप्त करने वाली औषधि माना गया है। इसका उपयोग घरेलू इलाज में किया जाता है। इसकी गुणवत्ता को सिद्ध करने वाली एक सर्वमान्य उक्ति जो जन–जन के कण्ठ का हार बनी हुई है। दृष्टव्य है –

'कारी मिर्च पिसी ने, घी बूरा हाथे खावो।
आंख्या रोग मिटी जावे, गिद्ध ज्यों दृष्टि पावें।।'

अर्थात् आधा चम्मच पिसी कालीमिर्च में थोड़े से घी बूरे के साथ मिलाकर रोज सुबह–शाम नियमित खाने से नेत्र ज्योति बढ़ती है। इसी प्रकार विटामिन अ की कमी से होने वाली रतौंधी रोग से मुक्ति पाने का सरल एवं लाभकारी उपाय विद्वानों ने लोक कहावतों के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

'केशर शहद मिलाय के आंख्या माहि लगाय।
लाली ने गरमी मिटै, रोग रतौंधि भांगी जाय।।'

अर्थात् केशर एवं शहद दोनों को ही सभी धर्मशास्त्रों चिकित्साशास्त्रों में महत्व को बताया है। आयुर्वेद के महर्षियों ने भी माना है कि तुलसी मधु एवं केसर के उपयोग से अनेक रोगों पर विजय प्राप्त की जा सकती है। अत: नेत्र रोग होने पर इन्हें समान मात्रा में मिलाकर आंखों में लगाने से रतौंधी नामक रोग दूर हो जाता है।

इस प्रकार निष्कर्ष रूप से कह सकते है कि भोजन और स्वास्थ्य का गहरा रिश्ता है जो कुछ भी हम खाते व पीते है अगर वह शरीर और मन के अनुकूल होता है। भोजन पौष्टिक एवं सात्विक है तो हमें आरोग्य प्राप्त होगा। हम निरोग और स्वस्थ रहेगें। अत: इस पारम्परिक ज्ञान से लोग अपने जीवन को सुखी और सम्पन्न बना सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कहावते डॉ. कृष्णानंद गुप्त – लोकवार्ता
2. तुलनात्मक लोकोक्ति साहित्य भाग – 1, डॉ. मिथिलाप्रसाद त्रिपाठी
3. तुलनात्मक लोकोक्ति साहित्य भाग – 2, डॉ. मिथिलाप्रसाद त्रिपाठी
4. प्रबंध प्रसून – डॉ. बाबूराव जोशी

****

युगीन संदर्भों में कामायनी का मूल्यांकन

डॉ. कुवर सिंह बघेल *

प्रस्तावना – काल की सीमाओं का अतिक्रमण कर जो कृति युग-युगों तक पाठकों के मानस पर छाई रहती है, सच्चे अर्थो में वही कृति या रचना युगीन होती है उसका प्रभाव व्यापक होकर देशकाल की सीमाओं से परे, एकदेशीय न होकर सार्वदेशीय और सार्वजनीन होता है। जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित 'कामायनी' एक ऐसी ही युगीन कृति है जो अतीत, वर्तमान और भविष्य त्रिकाल में मानव विकास की गाथा कहती रहेगी। आधुनिक युग में रचे गए महाकाव्य 'प्रियप्रवास' (हरिऔध), कृष्णायन (द्धारका प्रसाद मिश्र) एवं साकेत (मेथलीशरण गुप्त) अत्यन्त प्रसिद्ध होते हुए भी कामायनी जैसी गहन अनुभूति, भावों की उत्कृष्ट अभिव्यक्ति, छन्द प्रवाह, काव्यगत उत्कृष्टता, भावों का सुन्दर और सजीव वर्णन युग की अभिव्यक्ति, अन्त:प्रकृति और बाह्य प्रकृति का सफल सामंजस्य, लाक्षणिकता, प्रतीकात्मकता महत् उद्देश्य जैसे गुणों से रहित प्रतीत होते हैं। आचार्य नंददुलारे वाजपेई के शब्दों में 'ये सभी काव्य अपनी-अपनी विशेषताएँ रखते हैं, पर इनमें से किसी में भी 'कामायनी' का सर्वांगपूर्ण जीवन-दर्शन, नारी और पुरूष का सम्पूर्ण ज्ञान का इतना विस्तृत उपयोग भी कदाचित किसी नवीन काव्य में नहीं किया गया है।'

युगीन के रूप में 'कामायनी' पर विचार करना नितांत समीचीन है। आई.ए. रिचर्ड की मान्यता है कि 'जिस साहित्य में विशेष के रूप में शाश्वत सत्यों की अभिव्यक्ति होती है अथवा जिसमें मनोभावों की एकरूपता का दिग्दर्शन कराया जाता है, वह साहित्य अमर होत है।'

उसी संदर्भ में आचार्य शुल्क के विचार भी द्दष्टव्य है 'वही साहित्य शाश्वत है जिसमें भीषणता और सरसता, कोमलता और कठोरता, कटुता और मधुरता, प्रचण्डता और मृदता के सामंजस्य के साथ-साथ लोक सामान्य भावों का उद्धाटन होता है।' कहने का आशय यह कि युगीन रचना वही हो सकती जिसमें मानव जीवन के शाश्वत सत्यों तथा लोक सामान्य भावों का निरूपण करते हुए मानव जीवन का सम्पूर्ण चित्रण किया गया हो। इस संदर्भ में बूचर का भी उल्लेखनीय है- 'वही साहित्य महान एवं विश्वविश्रुत कहला सकता है, जिसमें नारी जीवन महत्व का प्रतिपादन होता है।'

इस तथ्य पर 'कामायनी' भी खरी उतरती है। उसमें श्रद्धा के भव्य एवं उदान्त चरित्र के दर्शन होते हैं। यह विशेषता 'कामायनी' को युगीन साहित्य श्रेणी में स्थापित करती है।

युगीन साहित्य वह होता है जिसमें वर्णित घटनाएँ या कथाएँ यद्यपि भूतकाल और वर्तमान से संबंधित होने से प्रासंगिक होती है और भविष्य की ओर संकेत करती है तथा त्रिकाल सत्य की अभिव्यक्ति भी सफलता पूर्वक करती है महादेवी वर्मा स्पष्ट रूप से कहती है कि जिस काव्य में अन्त: प्रकृति और बाह्य प्रकृति का सफल सामंजस्य दिखाया जाता है, वह महान होता है।'

संक्षेप में कहा जा सकता है कि जो रचना जीवन के शाश्वत सत्य का उद्धाटन, सत्-असत् प्रवृतियों का चित्रण, आदर्श और यथार्थ का समन्वय, नारी जीवन की महत्ता, भूत, वर्तमान तथा भविष्य का समन्वय, अन्त:प्रकृति बाह्य प्रकृति का समंजस्य, विश्व या लोक कल्याण की भावना, उदात्त कल्पना, अनुभूति की गहनता, महान उद्देश्य आदि को समाहित किए रहती है वही युगीन साहित्य हो सकती है।

कामायनी में मानव मनोभावों चिन्ता, आशा, वासना, लज्जा, ईर्ष्या, क्रोध, निर्वेद, आनन्द का निरूपण हुआ है जो विश्वव्यापी होकर सार्वजनिक है। कामायनी में श्रृद्धा हृदय की अनुकृति होकर सत्प्रवृत्ति का नेतृत्व करती है और असुर पुरोहित आकुलि और किलात असत्प्रवृत्तियों के प्रतिनिधि हैं। श्रृद्धा जहां मनु को सन्मार्ग पर अग्रसर होने की प्रेरणा देती है वही असुर पुरोहित मनु को हिंसा, सुरापान आदि की प्रेरणा देते हैं। इन सत् और असत् प्रवृत्तियों का संघर्ष कामायनी को शाश्वत या युगीन साहित्य की योग्यता प्रदान करती है।

कामायनी में मनु के पहले मानवीय दुर्गलताओं एवं अतृप्त वासनाओं को दिखाया गया है जो जीवन का यथार्थ है और अन्त में ऐसे पथभ्रष्ट एवं पतित व्यक्ति को मुमुर्श अवस्था से सचेत कराकर सात्विक, उदार, लोकसेवी, विश्वबंधुत्व का अनुयायी बनाकर आदर्शवान के दर्शन कराए हैं। कामायनी में प्रमुख नारी पात्र श्रद्धा और इड़ा क्रमश: हृदय और बुद्धि की प्रतीक है। श्रद्धा जहाँ आदर्श नारी है वही इड़ा वर्तमान युग की तर्कशीला नारी। दोनों ही अपनी प्रकृति के अनुरूप मनु को प्रेरणाएं देती हैं किन्तु श्रद्धा अपने सद्गुणों के कारण मनु को अखण्ड आनंद की प्राप्ति कराती है। वह इड़ा को भी सहृदयतापूर्वक सत्य का मार्ग बताती है। नारी जीवन के विभिन्न पक्षों का उद्धाटन 'कामायनी' में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

'कामायनी' की कथा का संबंध भी अतीत से है किन्तु इस कथा में अतीत और वर्तमान का सुन्दर सामंजस्य दृष्टिगोचर होता है। भविष्य के प्रति भी कवि ने संकेत किए है कि मानव व्यवस्थित जीवन जीते हुए अखण्ड आनंद की प्राप्ति कर सकता है। इसी प्रकार कामायनी में मान जीवन की जटिलताओं के साथ-साथ बाह्य प्रकृति की विविधताओं का भी सफल अंकन किया गया है। प्रसादजी ने अत्यन्त कुशलतापूर्वक प्रकृति में चेतना का आरोप कर मानव मनोभावों या व्यापारों के अनुरूप बनाने का सफल प्रयास किया है। प्रस्तुत कृति में कवि ने वासना के दुष्परिणाम और सच्चरित्रता, सात्विकता, समरसता आदि को लोकहित में दर्शाया है।

युगीन कृति 'कामायनी' की सबसे बडी विशेषता है समता, सहानुभूति, विश्वबंधुत्व की भावना का प्रसार। विश्व को मनोहर कृतियों का नीड़ बनाने की भावना निश्चय ही उसे काजलयी बनाती है। कल्पना और अनुभूति का समन्वय, प्रोढ़ अनुभव महत् उद्देश्य आदि के आधार पर 'कामायनी' को युगीन कृति कहा जा सकता है।

निष्कर्ष – कामायनी उदात्त कथानक, उनात्त पात्र योजना, उदात्त भाषा शैली तथा उदात्त उद्देश्य के कारण वर्तमान युग को युगीन महाकाव्य के रूप में स्थापित है। यह कहना उचित होगा कि आधुनिक युग में रचे गए अन्यान्य महाकाव्यों या काव्य ग्रंथों में कामायनी ही ऐसी कृति है जो युगीन साहित्य की कोटि में आती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जयशंकर प्रसाद और उनकी कामायनी – प्रो. राजकुमार शर्मा
2. ध्रुवस्वामिनी – जयशंकर प्रसाद
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. चातक/डॉ. शर्मा

* प्राध्यापक (हिन्दी) शहीद भीमा नायक, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय बड़वानी (म.प्र.) भारत

मानवीय स्वभाव को अभिव्यक्त करती कहावतें

डॉ. वन्दना जैन * रचना जैन * *

प्रस्तावना – मानव मन परिवर्तनशील होता है। जैसा निमित्त मिलता है, वह वैसा ही कार्य करता है। मन की तुलना तुरंग से की गई है। मन अत्यधिक चंचल और वायु की गति से भी अधिक तीव्र वेगगामी बताया गया है जो चारों दिशाओं में मनोनुकूल गति-विधियों में भ्रमण करता रहता है। धर्मराज युधिष्ठिर ने भी यक्ष के प्रश्न पूछने पर कि वायु से तीव्र वेगगामी कौन है? तब उत्तर में युधिष्ठिर ने कहा था कि मानव मन। वास्तव में मन रूपी तुरंग को अपने वश में करने के लिए ऋषि-मुनियों, साधु संतों को भी तपस्या करनी पड़ती है।

मानव स्वभाव मन द्वारा ही अनेक प्रकार के भाव-चिंतन, प्रेम-घृणा, अच्छा-बुरा, बदले की भावना, अपने परिजनों के प्रति लगाव आदि संचालित होते है। तभी तो कहा गया है –

'**मन के हार है, मन के जीते जीत।**'

अत: मानव जीवन की दशा का निर्धारण भी स्वभाव ही करता है। प्रसन्न, शान्त, दुखी और उदासीन स्वभाव की कुछ दशाएँ होती है, इसलिए कहते है कि **'बाल्यावस्था में स्वभाव को जिस रूप में ढाला जाये वह वैसा ही बनता है।'**

जीवन में स्वभाव के बदलाव की अनेक अवस्थाएँ आती है। सबसे पहले **बालपन** की अवस्था आती है, इसके बाद किशोरावस्था फिर यौवनावस्था जिसमें मानव के भविष्य का निर्धारण होता है और मनुष्य परिपक्व अवस्था को प्राप्त कर लेता है।

हमारे समाज में प्रमुख रूप से सज्जन, दुर्जन और मध्यम तीन प्रकार के व्यक्ति रहते है। सज्जन व्यक्ति वे जिनमें सत्वगुण अर्थात् दया, प्रेम, करूणा, सज्जनता आदि गुण उपस्थित होते है। ऐसे व्यक्ति अनुकूल परिस्थितियों में सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करने के साथ ही प्रतिकूल परिस्थितियों में धैर्य बनाए रखते है। इस भाव को व्यक्त करती एक लोक प्रचलित जनश्रुति देखिये-

'**सबूरी को फल मीठो ज वे।**'

अत: विपरीत समय में समभाव रखना और स्वयं के लिए किसी विशिष्ट व्यवहार की आकांक्षा नहीं करना सज्जन व्यक्ति के आचरण में दिखाई देता है। ऐसे मनुष्य की सर्वत्र प्रशंसा और प्रतिष्ठा होती है, तभी कहा गया है-

'**सत पुरूषां को जीवणों थोड़ो ई भलो।**'

अर्थात् सत्पुरूषों का थोड़ा ही जीना, अमर हो जाता है क्योंकि सज्जन पुरूष में विनयशीलता का भूषण विद्यमान होता है। नम्र बनकर रहने में ही सच्चा सुख है। प्रसिद्ध है-

'**नम्रता ही वीरों का भूषण वे।**'

मानव का व्यक्तित्व ही उसकी पहचान कराता है, लेकिन कभी-कभी उसमें शारीरिक दोषों के अलावा चारित्रिक कमियाँ भी दिखाई देने लगती है और वह आलस्य, परदोष दर्शन, अल्प सन्तोषी, स्वार्थवृति आदि मनोवृत्तियाँ युक्त हो जाती है। इसके लिए हमारे लोकसमाज में अनेक लोकोक्तियाँ प्रचलित है, जो हमें मानवीय स्वभाव का ज्ञान कराती है।

ऐसी लोक मान्यता है कि दुर्जन व्यक्ति छल कपट वाले होते है जो ऊपर से अच्छा व्यवहार करते है जबकि अन्दर से पाखण्डी प्रवृति के होते है। यह दूसरों को उपदेश देने में बहुत उत्साही रहते है, लेकिन स्वयं अच्छे आचरण को नहीं अपनाते है। इनका व्यवहार ठीक इसी प्रकार का होता है जैसे नीम के वृक्ष को चाहे जड़ से लेकर सिर तक घी और दूध से क्यों न सींचा जाए लेकिन वह अपना स्वभाव परिवर्तित नहीं करता है। इस भाव को व्यक्त करती हुई कहावत द्रष्टव्य है-

'**नीम न मीठा होय, सीचों गुण घीव सो।**
जिका जस्या पड़या स्वभाव, जसी जीव सों॥'

इस प्रकार असज्जनों के हृदय में प्रविष्ट दुर्जनता का सज्जनता में बदलना अत्यंत दुष्कर कार्य है। मानव में दुर्जनता का यह अंकुर बिना बीज ही पैदा होता है और निरन्तर बढ़ता चला जाता है। इसका अनुच्छेद बहुत जटील होता है। इस विषय पर सन्तों ने कहा है-

'**दुर्जन कबहूं न सुधरै सौ साधन के संग।**
मूंज भिजोवे गंग में, ज्युं भीजै ज्युं तंग।'

जिस प्रकार मूंज को गंगा के पानी में भिगोने पर भी वह सिंकुड़ता ही जाता है, वैसे ही दुर्जन व्यक्ति सत्संगति के सैकड़ों अवसर पाने पर भी कभी नहीं सुधरता। उसमें दुर्जनता विद्यमान रहती है। ऐसे व्यक्ति स्वयं की प्रशंसा भी स्वमुख से करते हुए सदैव दूसरों को नीचा दिखाने के लिए तत्पर रहते है। तब उपदेश देते हुए सहज ही उक्ति मुख से व्यक्त हो जाती है-

'**बड़ा बड़ाई नी करे, बड़ा न बोले बोल।**
हीरो मुख सूँ नी के लाखां म्हारो मोल॥'

बड़ा वही होता है जो आत्म प्रशंसा नहीं करता। मनुष्य के कार्यो का प्रदर्शन आचरण से ही होता है। यह कभी भी स्वार्थ के वशीभूत होकर सत्य-असत्य को भूल जाता है और स्वार्थ पूर्ण करने में तल्लीन बना रहता है। मालवी में एक प्रसिद्ध जनश्रुति है-

'**गरज निकली ने लोग परायो।**'

अर्थात् गरज निकलने बाद लोग पहचानना भी पसन्द नहीं करते। ऐसे लोगों को उपदेश देते हुए बड़ी सुन्दर उक्ति के माध्यम से सुधिजनों ने अपने भाव प्रस्तुत किए है-

'**उपदेशो हि मूर्खाणां प्रकोपाय न शान्तये।**
पय: पानं भुजंगानां केवल विषवर्धनम्॥'

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (हिन्दी) शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
** शोधार्थी (हिन्दी) अध्ययनशाला विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन(म.प्र.) भारत

अत: मूर्ख मनुष्य को उपदेश देने पर शान्त होने की अपेक्षा वह और अधिक क्रोधित होते है, जैसे भुजंग को दूध पिलाने से केवल विष की वृद्धि होती है। इस प्रकार मालवी कहावतें बड़ी अमूल्य है। जनजीवन के व्यवहार कुशलता की कुंजियाँ है। एक कसौटी है जो सच्चे हीरे को पहचानती है। मानव मात्र का स्वभाव ही कुछ ऐसा होता है कि वह स्वयं को श्रेष्ठ समझता है। ऐसे व्यक्ति को समझाते हुए मालवा के निवासी सहज ही कह देते है–

'**लूण कैवे मनै ई सीरे में डालो ।**'

अर्थात् नमक का कहना है कि मुझे भी हलवे में डालो। अनुचित बात को स्पष्ट करते हुए कहा जाता है कि –

'**राबड़ी कैवे मनै ई दाता सूं खावो ।**'

अर्थात् राबड़ी का कहना है कि मुझे भी दाँतों से खाओ। इस तरह बड़ी–बड़ी बातें करने वाले व्यक्ति को उसकी कमजोरी दिखाकर निरूत्तर कर दिया जाता है। कुछ व्यक्तियों में यह प्रवृति सहज ही दिखाई देती है कि उन्हें दूसरों की अपेक्षा अपनी वस्तु अत्यधिक प्रिय लगती है। इस अपनत्व की भावना को मालवी लोक समाज में इस प्रकार व्यक्त किया गया है–

'**अपणी छाछ ने खाटी कुण बतावे ।**'

या

'**अपनी माँ ने डाकण कुण केवे ।**'

अत: अपनी चीज सबको प्यारी लगती है। ग्रामीण लोग तो बात–बात में इन कहावतों का उपयोग करते हैं। स्वार्थी स्नेह, के लिए कितनी सुन्दर उक्ति को प्रयोग किया गया है–

'**खर्ची खूटी ने यारी टूटी ।**'

धन समाप्त हो जाने पर मित्रता भी खत्म हो जाती है। इसी प्रकार मध्यम स्वभाव वाले व्यक्तियों में रजोगुण विद्यमान होता है। रजोगुण की अधिकता वाले व्यक्ति क्षण में रूठते है तो क्षण में प्रसन्न हो जाते है अर्थात् उनके लिए '**यथा नाम यथा गुण**' वाली उक्ति चरितार्थ होती है। ऐसे व्यक्तियों पर जब थोड़ा भी दु:ख आता है तो वे व्याकुल हो जाते है, लेकिन उनमें अपार सन्तोष भाव होता है। सन्तोष को सर्वश्रेष्ठ सुख बताते हुए इसकी सुन्दर व्याख्या मालवी लोक समाज में की गई है –

'**जब आवै सन्तोष धन,**
सब धन धूरि समान ।'

ऐसे व्यक्तियों की विचारधारा रहती है कि जो दूसरों का बुरा चाहता है उसको स्वयं ही हानि उठानी पड़ती है। सर्वविदित है कि श्री कृष्ण को मारने के लिए आई हुई पूतना को स्वयं ही मरना पड़ा। अत: प्रचलित है–

'**कीचड़ में भाटों फेकी ने छाटा उड़ावना ।**'

अर्थात् कीचड़ में पत्थर फेंकोगे तो छींटे स्वयं पर ही पड़ते है। इसी भाव को व्यक्त करती हुई एक लोकोक्ति दृष्टव्य है–

'**कर बुरा तो होवे बुरा ।**'

सन्त पुरूष मानव मात्र को उपदेश देते हुए कहते है कि नित्य भलाई और परोपकार का कार्य करें। इसका कितना सुन्दर विवेचन लोक कहावत द्धारा प्रस्तुत किया गया है।

'**कर भला तो हो भला ।**'

उपर्युक्त लोकोक्तियों में पुरूष वर्ग के स्वभाव की चर्चा की गई है अत: यहाँ पर स्त्रियों स्वभाव का विवेचन भी अनिवार्य है। हमारे देश में प्राचीन काल से नारी का आदर किया जाता हैं। नारी संस्कारों की मूर्ति, परोपकारों की पहचान है, जगत की चेतना और राष्ट्र का सम्मान है। वह सरस्वती है, लक्ष्मी है, गौरी है, शतरूपा है, अर्द्धनारीश्वर है, अत: नारी में वह शक्ति है जो नर की रचना कर सकती है। शील, विनय, सरलता, सहजता, समर्पण आदि गुण विद्यमान है। इसकी महिमा वर्णित करते हुए राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने कहा है–

'**एक नहीं दो दो मात्राएं, नर से भारी है नारी ।**'

इस भाव को मालवी जन जीवन में निम्नलिखित प्रकार से व्यक्त किया गया है–

'**नारी नर की खान ।**'

अत: समाज में नारी का स्थान महत्वपूर्ण है। ऐसा माना जाता है कि स्त्री के बिना पुरूष को पूर्णत्व प्राप्त नहीं होता है। भारतीय संस्कृति में नारी को इतना वन्दनीय माना है कि नारी के बिना आनन्दमय घर की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। इसका उल्लेख मालवी लोक साहित्य में बहुत ही रोचक ढ़ंग से भी किया गया है। जनश्रुति दृष्टव्य है–

'**धरनी बिन घर भूत का ढेरा ।**'

अर्थात् स्त्री के बिना घर भूत के ढेरे स्वरूप प्रतीत होता है। एक ओर जहां नारी में सभी गुण विद्यमान होते है वहीं अवगुण भी उपस्थित रहते है। स्त्रियों का चरित्र बड़ा विचित्र होता है। कहा भी गया है–

'**नारी–नारी की दुश्मन होवे**'

अर्थात् स्त्री ही स्त्री की सबसे बड़ी शत्रु मानी जाती है। इसके व्यवहार से अच्छाई–बुराई दोनों का ज्ञान होता है। नारियों पर विश्वास करने सम्बन्धी एक प्रसिद्ध उक्ति देखिए–

'**लुगाई के पेट में बच्चों खपाई जाय, पण बात नी खपावे ।**'

अर्थात् औरत के पेट में बच्चा समा जाता है पर बात नहीं। इस प्रकार मनोगत भावों को प्रकट करने वाली इन लोकोक्तियों के माध्यम से एक–दूसरें के मन की बात समझ सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कहावते डॉ. कृष्णानंद गुप्त – लोकवार्ता
2. तुलनात्मक लोकोक्ति साहित्य भाग – 1, डॉ. मिथिलाप्रसाद त्रिपाठी
3. तुलनात्मक लोकोक्ति साहित्य भाग – 2, डॉ. मिथिलाप्रसाद त्रिपाठी
4. प्रबंध प्रसून – डॉ. बाबूराव जोशी

****

मानवीय संवेदना के कवि पं. अटल बिहारी वाजपेयी

डॉ. गायत्री वाजपेयी *

मानवता, सहृदयता और उदारता की उच्च भावभूमि पर सर्जना के रससिक्त सुमधुर स्वरों को प्रस्रवित करने वाले भारतीय राजनैतिक क्षितिज के शिखर पुरुष वरदायिनी माँ सरस्वती के वरद्पुत्र तथा भारतभूमि के पूर्व प्रधानमंत्री पं. अटल बिहारी वाजपेयी के व्यक्तित्व में कवि और राजनेता के गुणों का अद्भुत समन्वय है। उनमें काव्य संस्कार समुन्नत रूप में विद्यमान हैं। उनका हृदय करुणा से आप्लावित है, उसमें जन-जन के प्रति अतुलित प्रेम का सागर हिलौरें ले रहा है। यही कारण है कि परपीड़ा से उनका हृदय द्रवीभूत हो उठता है। वह जाति, धर्म, सम्प्रदाय की संकीर्ण सीमाओं में बंधे हुए नहीं हैं वरन् 'वसुधैव कुटुम्बकम' के प्रति उनमें पूर्ण आस्था है। इसीलिए उनका चिन्तन मानवतावादी है। मनुष्य को मनुष्य के रूप में देखते हुए वे सदैव मानवता की सेवा में तत्पर रहते हैं। तथा ईश्वर से प्रार्थना भी यही करते हैं कि-

मेरे प्रभु।
मुझे इतनी ऊँचाई कभी मत देना
गैरों को गले न लगा सकूँ
इतनी रूखाई कभी मत देना।[1]

उनके आदर्श भी वही महापुरुष हैं जिन्होंने मानवता के रक्षार्थ विषपान किया तथा हँसते हुए अस्थियों का दान किया। वे स्वयं के लिए नहीं दूसरों के लिए जिए। स्वार्थ नहीं परमार्थ ही उनके जीवन का अभीष्ट रहा है । यथा -

जग को अमृत का घट देकर, हमने विष का पान किया था।
मानवता के लिए हर्ष से, अस्थि-ब्रज का दान दिया था।।[2]

भारतीय संस्कृति के मूल मंत्र 'जियो और जीने दो' में उनकी आस्था है। वे मानते हैं कि सच्चा मनुष्य वह है जो मनुष्य के लिए मरे अपने हृदय में संकीर्णता को नहीं वरन् उदारता को विकसित करे। जाति, धर्म, वर्गभेद से ऊपर उठकर मानव को नहीं मानव के हृदय को जीतने का प्रयास करे। किशोरवय में उनके अन्त:करण से प्रस्फुटित ये उद्गार रोमांचित करने वाले हैं-

होकर स्वतंत्र मैंने कब चाहा है कर लूँ जग को गुलाम।
मैंने तो सदा सिखाया है करना अपने मन को गुलाम।
गोपाल-राम के नामों पर कब मैंने अत्याचार किए?
कब दुनिया को हिंदू करने घर घर में नरसंहार किए?
कोई बतलाए काबुल में जाकर कितनी तोड़ी मजिस्द?
भू भाग नहीं, शत्-शत् मानव के हृदय जीतने का निश्चय।
हिंदू तन, मन हिंदू जीवन रग-रग हिंदू मेरा परिचय । [3]

कवि का हृदय अत्यन्त विशाल है तथा उसमें सभी के लिए अपार अनुराग है इसीलिए उनका हृदय गेह सभी के लिए सदैव खुला रहता है। उनका धनागार सब कुछ लुटा कर भी भरा हुआ है। वे कहते हैं-

मैंने छाती का लहू पिला, पाले विदेश के क्षुधित लाल।
मुझको मानव में भेद नहीं, मेरा अन्तस्थल वर विशाल।
जग के ठुकराए लोगों को, लो मेरे घर का खुला द्वार।
अपना सबकुछ हूँ लुटा चुका, फिर भी अक्षय धनागार।[4]

कवि का संवेदनशील हृदय इस बात से अत्यन्त व्यथित है कि आज मनुष्य का आचरण बदल रहा है। कथनी करनी में एकता नहीं है। स्वार्थपरता इस कदर बढ़ गई है कि मनुष्य को मनुष्य की भूख का अहसास नहीं होता। गरीबी में जीवन बिताते लोग, भूख से बिलखते बच्चों के आँसू दिखलाई नहीं पड़ते। आज के मानव की संवेदनाएँ जैसे सूख-सी गई हैं, तभी तो वह स्वार्थान्ध हो लूट घसोट कर अपना ही कोश भरने में लगा हुआ है। 'सांई इतना दीजिए जा में कुटुम्ब समाय' की भावना न जाने कहाँ विलुप्त हो गई है। आज दिनों दिन बढ़ रही इस अमानवीयता से आहत कवि का मन विकल हो कह उठता है-

अरे! हमारी ही हड्डी पर,
इन दुष्टों ने महल रचाए।
हमें निरंतर चूस-चूस कर,
झूम झूम कर कोश बढ़ाए।
रोटी-रोटी के टुकडे क़ो,
बिलख-बिलख कर लाल मरे हैं।
इन मतवाले उन्मत्तों ने,
लूट-लूट कर गेह भरे हैं।[5]

कवि को आश्चर्य इस बात से है कि यह वह भारत भूमि हैं जहाँ सभी एक स्वर में यह प्रार्थना करते रहे हैं-

सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते ।।[6]

अर्थात हे जगदीश्वर! आप हमें ऐसी बुद्धि दें कि हम सब परस्पर हिलमिल कर एक साथ चलें, एक-समान मीठी वाणी बोलें और एक समान हृदय वाले होकर स्वराष्ट्र में उत्पन्न धनधान्य और सम्पति को परस्पर समान रूप में बाँटकर भोगें। हमारी हर प्रवृत्ति राग द्वेषरहित परस्पर प्रीति बढ़ाने वाली हो।

इसी पुण्य भू में आज मनुष्य और मनुष्य के बीच फासला बढ़ता जा रहा है। समाज वर्गो में विभक्त हो गया है। एक स्वामी बन अत्याचार करता है दूसरा गुलाम बन अत्याचार सहने के लिए विवश है। यह कैसा नियम है? जहाँ मनुष्य ही मनुष्य का शोषण कर रहा है। जबकि वास्तविकता यह है कि गरीबी, बेकारी, भुखमरी ईश्वर का विधान नहीं, मानवीय व्यवस्था की विफलता का परिणाम है।[7] कवि वाजपेयी जी मानवीय व्यवस्था की इस विफलता पर आहत हो कह उठते हैं-

मानव स्वामी बने और-
मानव ही करे गुलामी उसकी।
किसने है यह नियम बनाया,

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाराजा स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

ऐसी है आज्ञा किसकी।
सब स्वच्छंद यहाँ पर जन्मे,
और मृत्यु सब पाएँगे।
फिर यह कैसा बंधन जिसमें,
मानव पशु-से बँध जाएँगे।[8]

कवि का मानवतावादी दृष्टिकोण भेदभाव पूर्ण इस व्यवस्था को ध्वस्त कर देने हेतु आकुल हो उठता है। वह चाहता है कि वेद वाक्य 'माता भूमि:पुत्रो अहं पृथिव्या:[9] मात्र जपने के लिए न हो वरन् पृथ्वी के ये समस्त पुत्र भ्रातृत्व भाव से रहे, उनमें प्रेम और सौहार्द हो, जीवन का उल्लास हो भेदभाव की गगनचुम्बी इमारतें धराशायी हों, हृदय की हूकें हर्ष में परिणत हों तथा अंग-अंग में ऐसा जोश उमड़ आये कि सभी गा उठें-

कवि आज सुना वह गान रे,
जिससे खुल जाएँ अलस पलक।
नस-नस में जीवन झंकृत हो,
हो अंग-अंग में जोश झलक।
ये बंधन चिर बंधन,
टूटे-फूटें प्रासाद गगन चुम्बी।
हम मिलकर कर हर्ष मना डालें,
हूकें उर की मिट जाएँ सभी।
हम ऊब चुके इस जीवन से,
अब तो विस्फोट मचा देगें।
हम धू-धू जलते अंगारे हैं,
अब तो कुछ कर दिखला देंगे।[10]

कवि श्री वाजपेयी जी का मानना है कि 'पारस्परिक सहकारिता और त्याग की प्रवृत्ति को बल देकर ही मानव-समाज प्रगति और समृद्धि का पूरा-पूरा लाभ उठा सकता है।'[11] तथा उसे इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि 'समता के साथ ममता', अधिकार के साथ आत्मीयता, वैभव के साथ सादगी नवनिर्माण के आधार स्तम्भ हैं। इन्हीं स्तम्भों पर हमें भावी भारत का भवन खड़ा करना है।'[12] ऐसे खुशहाल राष्ट्र निर्माण के लिए आवश्यक है कि समग्र मानव समाज में ऐसा सद्भाव विकसित हो जहाँ सहचरों के प्रति करुणा और सहिष्णुता हो। वे केवल अपने लिए नहीं दूसरों के लिए भी जिएँ। और वे केवल नाम से इंसान न हों, वरन् मन, बुद्धि और संस्कार से इंसान हों। यथा कवि की अभिलाषा है-

धरती को बौनों की नहीं,
ऊँचे कद के इंसानों, की जरूरत है।
इतने ऊँचे की आसमान को छू लें,
नए नक्षत्रों में प्रतिभा के बीज बोलें,
किन्तु इतने ऊँचे भी नहीं।
कि पाँव तले दूब ही न जमें
कोई काँटा न चुभे,
कोई कली न खिले।[13]

मनुष्य मात्र की एकता में विश्वास रखने वाले कवि वाजपेयी जी की अवधारणा है कि मनुष्य, मनुष्य है और उसे सदैव इस बात का ध्यान रखना चाहिए वह धन या पद से बड़ा या छोटा नहीं बनता वरन् अपने कार्यो से छोटा और बड़ा होता है। अत: उसे चाहिए कि वह सदा मानव मात्र के प्रति समानता भाव रखे किसी को धन या पद के आधार पर मान या अपमान न दे, बल्कि सभी के प्रति सद्भाव रखते हुए जीवन को सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् से सुसज्जित करे। कवि के भावानुसार -

आदमी न ऊँचा होता है न नीचा होता है,
न बड़ा होता है न छोटा ह ोता है।
आदमी सिर्फ आदमी होता है,
आदमी को चाहिए कि वह जूझे,
परिस्थिति से लड़े,
एक स्वप्न टूटे तो दूसरा गढ़े।
आदमी की पहचान,
उसके धन या आसन से नहीं होती,
उसके मन से होती है।
मन की फकीरी पर,
कुबेर की सम्पदा भी रोती है।[14]

कवि वाजपेयी जी का हृदय दया, करुणा, प्रेम एवं दु:ख से भरा हुआ है। वे एक ओजस्वी वक्ता, संवेदनाओं से भरे कवि, चिंतनशील लेखक एवं कुशल राजनेता हैं। उनका कवि हृदय उनके राजनैतिक व्यक्तित्व को सजाता संवारता रहता है। करुणा की अजस्त्रधारा प्रवाहित करने वाला उनका हृदय दूसरे की पीड़ा व दु:ख को देखकर द्रवीभूत हो उठता है। अन्याय और अत्याचार का वे प्रबल विरोध करते हैं। न दैन्यं न पलानयनम उनका जीवनादर्श है। किसी पर न अन्याय करते हैं और न किसी को अपने साथ अन्याय करने देते हैं। डॉ. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा की ये पंक्तियाँ उनके व्यक्तित्व की सम्यक व्याख्या करती हैं - 'एक अपराजेय वक्ता, एक संवेदनशील कवि और एक विचारवान लेखक के साथ-साथ अटल जी एक सच्चे इंसान हैं। इंसानियत के थर्मामीटर की सर्वोच्च डिग्री तक उनके हृदय का पारा पहुँचता हैं। वे जन-जन से प्रेम करने वाले जननायक हैं। जाति, धर्म, संप्रदाय देश-विदेश के संकुचित भावों से ऊपर उठे अटल जी भारत के महान् नेता हैं, जिनके हृदय में सबके प्रति समान प्रेम है। करुणा की अजस्त्रधारा का प्रवाह करने वाला उनका हृदय उत्पीड़न और अन्याय का दृढ़ता के साथ विरोध करता हैं, किंतु विरोधी पर भी वे करुणा ही करते हैं, क्रोध नहीं। ऐसा उनके कवि हृदय के कारण है। मेरी दृष्टि में वे मूलत: कवि ही हैं राजनेता बाद में।.....क्योंकि उनकी रहनि, बोली-बानी, व्यवहार सब कुछ एक कवि जैसा ही हैं, राजनेता जैसा नहीं। राजनीति के भद्दे खेल वे नहीं खेल सकते, क्योंकि उनका कवि वर्जना के लिए बैठा रहता है। उनमें कवि और राजनेता का समन्वित व्यक्तित्व है।'[15] वाजपेयी जी ने स्वयं इस तथ्य को स्वीकार किया है कि साहित्यकार जब राजनीति के क्षेत्र में प्रवेश करता है, तो राजनीति का परिष्कार हो जाता है क्योंकि साहित्यिक हृदय के संस्कार उसके राजनैतिक व्यक्तित्व पर भारी पड़ते हैं, और वे पग-पग पर उसे उसके मानवीय धर्म का अहसास कराते हैं। कवि के ही शब्दों में - 'जब कोई साहित्यकार राजनीति करेगा तो वह अधिक परिष्कृत होगी। यदि राजनेता की पृष्ठभूमि साहित्यिक है तो वह मानवीय संवदेनाओं को नकार नहीं सकता। कहीं कोई कवि यदि डिक्टेटर बन जाए तो वह निर्दोषों के खून से अपने हाथ नहीं रँगेगा। वस्तुत: एक कवि डिक्टेटर बनेगा ही नहीं।'[16] कवि और राजनेता के पारस्परिक व्यक्तित्व का ही प्रतिफलन है कि वे सोचते हैं- 'मेरा विश्वास है कि हमारी राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में निरन्तर सर्वोच्च स्थान मनुष्य, उसके सुख एवं कल्याण तथा उसकी आधारभूत एकता को मिलना चाहिए। मेरा अभिप्राय किसी आकृति विहीन मानव से नहीं हैं, जो अतीत काल में निरंकुशता को थोपने का बहाना रहा है, मेरा मतलब

जीते जागते मानव से है। उसकी संवेदनाएँ और अपेक्षाएँ उसका सुख और दु:ख हमारे प्रयत्नों का केन्द्र बिन्दु होना चाहिए।'[17] उनकी यही सोच उन्हें अहिंसावादी बनाती है तथा विश्व के समस्त संघर्षो का समाधान भी अहिंसा में खोजने को प्रेरित करती है। वे मानते हैं कि –अहिंसा की भावना उसी में होती है। जिसकी आत्मा में सत्य बैठा होता है, जो समभाव से सभी को देखता है।..... अहिंसा की भावना इतनी शक्तिवान होती है कि उससे शान्ति स्वत: उत्पन्न हो जाती है।'[18] और ऐसी शान्ति का अनुभव करने वाला व्यक्ति ही अवसान बेला में यह सोच पाता है–

अंतिम यात्रा के अवसर पर,
विदा की बेला में,
जब सबका साथ छूटने लगता है,
शरीर भी साथ नहीं देता,
तब आत्मग्लानि से मुक्त,
यदि कोई हाथ उठाकर यह कह सकता है
कि उसने जीवन में जो कुछ किया,
सही समझ कर किया,
किसी को जानबुझकर चोट पहुँचाने के लिए नहीं,
सहज कर्म समझ कर किया,
तो उसका अस्तित्व सार्थक है,
उसका जीवन सफल है।[19]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्री अटलबिहारी वाजपेयी : मेरी इक्यावन कविताएँ, पृष्ठ 26
2. वही, पृष्ठ 58
3. डॉ. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा (संपादक) – न दैन्यं न पलायनम्, पृष्ठ 85–86
4. श्री अटल बिहारी वाजपेयी : मेरी इक्यावन कविताएँ, पृष्ठ 56
5. डॉ. चन्द्रिकाप्रसाद शर्मा : (संपादक) न दैन्य पलायनम्, पृष्ठ 19
6. ऋग्वेद 10/191/2
7. श्री अटलबिहारी वाजपेयी : कुछ लेख कुछ भाषण, पृष्ठ 35
8. डॉ. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा : (संपादक) न दैन्यं न पलायनम्, पृष्ठ, 19
9. अथर्ववेद 12/1/12
10. डॉ. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा : (संपादक) न दैन्यं न पलायनम्, पृष्ठ, 18
11. श्री अटल बिहारी वाजपेयी : कुछ लेख कुछ भाषण, पृष्ठ, 177
12. वही, पृष्ठ, 36
13. श्री अटलबिहारी वाजपेयी : मेरी इक्यावन कविताएँ, पृष्ठ 25–26
14. वही पृष्ठ, 18–20
15. डॉ. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा : (संपादक) न दैन्यं पलायनम्, पृष्ठ 80
16. श्री अटल बिहारी वाजपेयी : राजनीति की रपटीली राहें, पृष्ठ 17
17. श्री अटल बिहारी वाजपेयी : कुछ लेख कुछ भाषण, पृष्ठ 177
18. डॉ. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा : बिंदु बिंदु विचार, पृष्ठ, 155–156
19. श्री अटल बिहारी वाजपेयी : मेरी इक्यावन कविताएँ, पृष्ठ, 30

****

लोकगीत एक विश्लेषण

डॉ. प्रेमलता तिवारी *

शोध सारांश – लोक के लिये लोक के द्वारा रचित ऐसे गीत जो 500 वर्ष पुरानी सभ्यता को अपने आगोश में ले पीढ़ी दर पीढ़ी सतत हस्तांतरित हो अजर–अमर हो गये हैं। ऐसे गीतों पर किसी एक व्यक्ति का अधिकार नहीं होता बल्कि पूरा समाज इसे अपना मानता है। वीकिपीडियॉ में लिखा हैं कि सामान्यत: लोक में प्रचलित लोक द्वारा रचित एवं लोक के लिए लिखे गए गीत को लोकगीत कहते है। भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर के रूप में सुरक्षित इन गीतों में सागर सी गहराई हैं, आकाश सी ऊँचाई हैं, धरती सा फैलाव हैं और जिसका इतिहास इतिहास के भी पहले का है। पहला लोकगीत संभवत: वही रहा होगा, जब मॉ के होंठो की गुनगुनाहट (लोरी) सुन शिशु रोया होगा।

प्रस्तावना – लोक संस्कृति के चित्रपट के रूप में ख्यात गीत विविधता को अपने दोनों हाथों में समेटे पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तातंरित होते रहते है। इस पर किसी विशिष्ट गीतकार की छाप नहीं होती क्योंकि लोकगीतों को रचने वाला रचनाकार अपने व्यक्तित्व को पहले ही लोक समर्पित कर देता हैं इसमें न व्याकरण की धार होती हैं और न ही शब्दों की मार होती है। इसमें न ही नियमों के बंधन होते हैं, न ही तुकबंदी की सीमा होती है। न इसके आदि का पता होता है, और न हीं इसके अंत का पता होता हैं,आत्मीयता हैं, राग हैं, जीवन को सामूहिकता और अंतरंगता से जीने की कला है, आशाओं का संचार है, एक दूसरे के साथ दृष्टिकोण बॉटने की मंशा है, आनंद हैं। छत्तीसगढ़ी लोकगीत की बानगी देखिये–

'धन गोदानी भुईयॉ पावा,
पावा हमर आशीष।
नाति–पूत ले घर भर जावें,
जीवा लाख बरीस।।

भावनाओं का ज्वार उठता हैं तो थमने का नाम ही नहीं लेता, सोहर खेलोनो कोह बर, समुझ बनी जैसे संस्कार गीतों में एक दूसरे के साथ रहने का जो आग्रह हैं वह आज की आवश्यकता है। होली, दीपावली, छट तीज जिऊतिया बहुरा पीडिया, गो–धन, राम नवमी, जन्माष्टमी जैसे शुभ अवसरों पर गाये जाने वाले गीत, शब्द, लय और ताल व भावार्थ में अनमोल एवं अदभूत है। जिसमें सामाजिकता और भाईचारों को नवजीवन प्रदान करने का आग्रह है।

'कजरी' हो या 'इसुरी' बिरहा हो या 'अचरी' सारे लोकगीतों में संस्कृति का अहसास हैं। लोकगीतों की 75 प्रतिशत रचनायें गुणी और रचनात्मक शुद्रो और स्त्रियों द्वारा की गई है। यर्थाथ अभिव्यक्ति वालें आत्मा को गुदगुदाने वाले गीतों में जीवन और लोक संस्कृति छाई हुई हैं। विविधता में एकता को समेटे भिन्न–भिन्न बालियों में गुंजायमान गीतों की विषय वस्तु तथा लय प्रवाह एक जैसा है।

मन, जिंदगी और सपनों में बंधे लोकगीतो की ऊँचाईयों को जानने और समझने का सर्वप्रथम प्रयास पंडित रामनरेश त्रिपाठीजी ने किया हैं। उन्होंने लोकगीतों की अनुपम अभिव्यक्ति को 'कविता कौमुदी' के चौथे भाग में संग्रहित कर भावी शोधकों का कार्य आसान कर दिया है। प्राचीन भारत के मध्य देश में याने वर्तमान हिन्दी भाषी क्षेत्र में राजस्थानी, ब्रज, अवधी, बांगरू, छत्तीसगढ़ी, बघेली, मालवी, निमाड़ी जैसी बोलियों में लोकगीत बसते है। रचते है और पनाह पाते है। इनमें धार्मिक, सामाजिक जीवन के अनुभवों का निचोड़ है। चाहे जिस बोली का गीत हो भाव की एकता एक जैसी हैं। ऋतु, संस्कार, विरह, ब्याह, फाग के गीतों से दुनिया परिचित हैं। होली, चैताल, डेढ़ताल, तीन ताल, उलास, चहका, लेज, झूमर जैसे विविध लोकगीतों में देश की आत्मा बसती है। सोहर, नामकरण, मुण्डन, जनेऊ, विवाह के लोकगीत आज भी छोटे–छोटे गॉवों में जीवन्त हैं। ऋतु गीत चाहे कजरी हो या चतुर्मासा, बारहमासा हो चइला या हिण्डोला मनुष्य को प्रकृति से सीधा जोड़ देता हैं। अवधी का सावन गीत – ' हिण्डोला कुंजक डालो, झुलन आई राधिका प्यारी या कुमाऊनी का – 'बेड पाको बारामासा ओ मरवी का फल पाको चैत मेरी छैला' या राजस्थान का – 'बन्ना रे बागा मे झुला परिया'

ऋतु में प्रेम का महत्व का पता चलता है। उल्लास और उमंग के प्रति भारत की पूर्व संस्कृति की विशिष्ट योग्यताओं को पहचानने और पता लगाने के लिए लोक गीतों से बेहतर दूसरा विकल्प नहीं है। आज भी लोकगीतो की लहरियों पर भारतीय त्यौहारों की गरिमा की गूंज कानों के द्वारा भीतर रीस कर पूरे मन को प्रेम परम्पराओं विश्वास और श्रद्धा की ऊर्जा को महसूस कराती है। जन मानस अपने अतीत को अपने ही भीतर जान पाता है, सतत् प्रवाह में लोकगीतों के अस्तित्व के हम गवाह है। हमें विचार करना चाहिए कि आधुनिक पाश्चात्य संगीत ने इन गीतों के साथ न केवल छेड़छाड़ की हैं, बल्कि उसे समाप्त करने के लिए भी तत्पर है। बदलते लोकगीतों की पृष्ठभूमि में कुछ न कुछ तो विशिष्टता तो रहती ही है। जो जीवन के अर्थो को परिवर्तित कर सरस और रोचक बनाती है। आधुनिकता की अंधी दौड़ में साहित्य, इतिहास और लोक जीवन की सहायता से इन गीतों को बचाना होगा क्योंकि इनकी रचनात्मकता हमारी संस्कृति हैं, मन के संस्कार हैं, भौतिकता से परे, पवित्र, निष्कलुश स्मृतियों का प्रत्यावर्तन है। सभ्यताएँ समय के साथ–साथ इसमें रंग घोलती है। आल्हा, ढोला, भर्तरी, नरसिंह गीत, जैसे जातिय गीत हो, ये भारत की वीरता के गवाह हैं। इन गीतों में रस का भण्डार हैं, झूमने का सरूर है, गुदगुदाने का दम हैं, ' कारी कार बदरा उमड़ी गगन माझे लहरी बहे पुरवईयॉ' हो या सुरंगी ऋत हो आई मारे देश' या फागुन जाड़ गुलाबी मनोरा

* प्राध्यापक (हिन्दी) जवाहर नेहरु शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

झुमक हो' या 'उमकर बर बाउरि छबि घटा हो,' सभी मौसम की विविधता का अहसास कराते है। रंग, उमंग और संगीत के सौदागर हैं ये गीत जो संस्कृति का प्रतिरूप है। भावनाओं की प्रतिक्रिया हैं। आत्मीयता और स्नेह की परिचायक हैं, जो अनुभूति के अतल में जाकर बरसने को तत्पर हैं। समाज को संदेश देने वाले, सुरक्षा प्रदान करने वाले सकारात्मक भावनाओं से परिपूर्ण लोकगीत आज की आवश्यकता है। आधुनिकता की चकाचौंध में मानव आज भी मानवीय भावों के निश्चल सर्मपण को नहीं भूल पाया है। लोकगीतों के माध्यम से भावों पर पड़ी धूल को हटाना ही होगा, क्योंकि आकर्षक और सुरीलें, रहस्यमयी और गूढ़ इन गीतों की लौकिकता में अलौकिकता छिपी हुई है।

वैश्वीकरण के उपभोक्ता वादी दृष्टि कोण में बाजारी सांस्कृति को इतना बढ़ावा दे दिया हैं कि लोकगीत धूमिल हो रहे है। नगरीय सांस्कृतिक व्यावसायिक दृष्टि लोकगीत की आत्मा पर लगातार आघात कर रही हैं। ईण्टरनेट, मोबाईल और फिल्मों द्वारा प्रदर्शित सांस्कृतिक फूहड़ता ने लोकगीतों की पहचान को तार-तार कर दिया हैं। इन गीतों को पुन: समाज से जोड़कर अपसंस्कृति की धारा से मुकाबला किया जा सकता है। बुद्धिजीवियों को लोकगीतो, लोकरंग, लोक संस्कृति और लोक साहित्य पर खुलकर बहस करनी चाहिए। संचार साधनों से इसे जोड़ा जाना चाहिए। इसकी निरंतरता को बनाये रखने के लिए सांस्कृतिक आंदोलन को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। लोकरंग में डूबे महोत्सवों को आयोजन किया जाना चाहिए। तभी सांस्कृतिक चेतना की लहर युवा मन को छू पाएगी।

यह सत्य हैं कि आज गॉव की पृष्ठभूमि में तीव्र परिवर्तन हुआ है। लेकिन लोकगीतों की संस्कृति के लिए जिन संवेदनाओं की जरूरत हैं वह गॉव में आज भी जीवित हैं। वैश्वीकरण के भाषायी नक्सलवादी से बचाना ही होगा, जो लोकगीतों की उपेक्षा कर उसे मृत पाय: करने को तुला हैं। बाजारवाद, पूँजीवाद, सांस्कृतिक दरिद्रता की ओर मुड़कर देखने वाली युवा पीढ़ी को लोक संवेदनाओं की विरासत को संभालकर रखने के लिए इन गीतों को गुनगुनाना ही होगा। बदलते परिवेश में लोकगीतों की मुक्कमल पहचान स्थापित करने के लिए सांस्कृतिक संघर्ष की आवश्यकता है। आज की बदलती जीवन शैली के तनाव वैकल्पिक लोकगीतों की शरण में जाने से ही कम किये जा सकते है। इसलिए शिक्षित वर्ग हेतु सांस्कृतिक पुनर्जागरण की आवश्यकता हैं। लोकगीत परम्परा के अंतर्गत- 'लालेहाल' (पुत्र जन्म पर दरवाजे जाकर गाये जाने वाले कंगरियॉ जाति के गीत) रावतों द्वारा गाये जाने वाले गहिरा गीत, गोंडी जाति के कर्मा गीत, जैसे न जाने कितने ऐसे लोकगीत हैं जो बेनाम हो गये हैं। बेशक खोई हुई विरासत को वापस नहीं लाया जा सकता, लेकिन जो शेष है उन्हें बचाया तो जा सकता हैं, क्योंकि सभ्यता को जीवंत रखने वाले लोकगीतों का सिलसिला चलता रहेगा... आज से कल तक फिर, कल से फिर आज तक जिसे संभाल कर संजो कर रखने की नैतिक जिम्मेदारी हम सब की है। आने वाले कल के लिए, हमारे अपनों के लिए लोकगीत धरोहर हैं, क्योंकि हमारी भावनाओं और दिल की गहराईयों में दबी उस मासुम थरथर्राहट के लिए लोकगीत ही वह अनमोल विरासत हैं, जो आज भी गुनगाने को बेताब है।

आई सावन की बहार मोरे बारे बलमू
छाई घटा घनघोर बन में, बोलन लागे मोर।
रिमझिम पनियां बरसै जोर मोरे प्यारे बलमू।।
धानी चद्दर सिंआव, सारी सबज रंगाव।
वामें गोटवा टकाव, मोरे बारे बलमू।।
मैं तो जइहों कुंजधाम, सुनो कजरी ललाम।
जहाँ झूले राधे-श्याम, मोरे बारे बलमू।।
बलदेव क्यों उदास पुनि अइहौ तोरे पास।
मानो मोरा विसवास, मोरे बारे बलमू।।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वीकिपीडियॉ
2. इनसायक्लोपीडियॉ।
3. आह-जिन्दगी नवंबर-2011।
4. पंजाब केशरी, ई-पेपर।
5. शोध डॉट नेट।
6. लोकगीतों के संदर्भ और आयाम - डॉ. शांति जैन, विश्वविद्यालय प्रकाशन,दिल्ली।
7. वेब-दुनिया डॉट कॉम।
8. अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय,वर्धा की वेब साईड-डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू डॉट हिन्दीविश्वा डॉट ओआरजी से।
9. कजली कौमुदी-(श्री कमलनाथ अग्रवाल) कविता कोश में 'संगीत' नामक पत्रिका के जुलाई 1945 के अंक से - संपादक काका हाथरसी।

****

प्रगतिवादी कविता के मानवीय स्वर

डॉ. सरोजनी अग्रवाल *

प्रस्तावना – वैयक्तिगत पीड़ा जब समष्टिगत वेदना की भावभूमि पर पहुँच जाती है, तब वह 'मानवतावाद' का रूप धारण कर लेती है। वैयक्तिक पीड़ा में समष्टिगत वेदना का निमज्जन वस्तुत: आत्मनिष्ठा का उन्नयन एवं उदारीकरण है। साहित्य में व्यक्त वे समस्त भावनाए जो मानव जीवन के विकास क्रम में योग देने वाली है अथवा वे क्रियायें जो मानव की मूल प्रवृत्तियों का सम्यक पोषण एवं सम्वर्धन करती है। मानवता के अंतर्गत ली जाएगी। कबीरदास कृत सर्वधर्म समन्वय तथा तुलसीदास के रामराज्य की कल्पना सबल मानववाद का साहित्य में श्रेष्ठ उदाहरण है।

मानव व मानवता की कल्याण भावना ही मानवतावाद है। मानवतावाद ही जगत और जीवन का संवेदनशील पक्ष है। प्रेम, दया, करूणा, मनुष्यता, बंधुत्व, जनहित भावना, सहिष्णुता, परोपकार की भावना, सदासयता, समरसता, भाईचारा, एकता–अखण्डता आदि सभी उदात्ततायें, मानवता व मानवतावाद के अवयव है। मनुष्य के भीतर के शुद्ध व पवित्र विचार व मनुष्यता ही मानवता है और मानवता का समर्थन ही मानवतावाद है।

प्रगतिवादी काव्य का प्रधान स्वर मानवतावाद ही है। मानवतावादी शक्तियॉ ही प्रगतिवादी कवियों के अन्त:करण में विराजमान होकर उन्हें मानवता व मानवतावाद पर लिखने के लिए विवश किया है–

मानवता के धनी कवि पंत जी मानवता की पीड़ा से द्रवित होकर लिखते हैं –

मैं मुट्ठीभर बाँट सकूँ,
जीवन के स्वर्णिम पावक कण।
वह जीवन जिसमें ज्वाला हो,
मांसल आकांक्षा हो मादन।
वह जीवन जिसमें शोभा हो,
शोभा सजीव, चंचल दीपित,
वह जीवन जिसको मर्म प्रीति,
सुख–दुख से रखती हो मुखरित।

दो लड़के शीर्षक कविता में पंत जी लिखते हैं कि –

क्यों न एक हों मानव, मानव सभी परस्पर,
मानवता निमाण करें, जग में लोकोत्तर।
जीवन का प्रसाद उठे भू पर गौरवमय,
मानव का साम्राज्य बने, मानव हित निश्चय ।।

जब तक समाज में पूर्णतया सामाजिक न्याय, समता–समानता, स्थापित व प्रतिष्ठित नहीं होगा तब तक मानवता की पीड़ा, कराह, आह व घाव बने ही रहेंगे। जब तक समाज में मनुज–मनुज का सुख भार बराबर नहीं होगा तब तक कलह कोलाहल सीमित होना मुश्किल पड़ेगा कवि नरेन्द्र शर्मा जी के शब्दों में –

जाने कब तक घाव भरेंगे,
इस घायल मानवता के ?
जाने कब तक सच्चे होंगे,
सपने सबकी समता के ?

महाप्राण निराला का समग्र साहित्य ही उनके भीतर की मनुष्यता की उपज है "तोड़ती पत्थर", विधवा, भिक्षुक, दान, दीन आदि निराला की कवितायें मानवीय संवेदना, मानवता, मनुष्यता की अभिव्यक्ति की पराकाष्ठा हैं। मानवीय संवेदना की अन्त:करणीय चेतना का सबल रूप निराला की रचनाधर्मिता के तहत है–

जीवन विष विषम पिया,
जनता के हृदय जिया।

पीड़ित दुखित उपेक्षित दलित मानवता का पहचानने में केदारनाथ जी कोई कमी नहीं करते। गरीब, मुसीबत में फंसे भाई को वे करीब से जानते पहचानते हैं और उस पर मानवीय संवेदना व्यक्त करते हैं कि –

प्यारे भाई मैने तुमको पहचाना है,
समझा बूझा और जाना, गहरे जाना है।

शोषित पीड़ित मानवता के लिये जन कवि नागार्जुन प्राणदान के लिये तैयार दिखाई पड़ते हैं–

मैदानो के कांटे चुनचुन कर
पत्थर के रोड़ों का हटा–हटाकर
तेरे उन अगणित स्वप्नों को
हम रूप और आकृति देंगे
मानवता की सेवा में लगेंगे

हिन्दी कविता की मूल प्राण चेतना ही मानवतावाद पर केन्द्रित है मानसकार तुलसीदास जी के शब्दों में –

परहित सरिस धरम नहिं भाई
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई
परहित लागि तजहि जे देही
संतत संत प्रशंसहि तेही
परहित बस जिनके मन माहीं
तिनकहुँ जग दुर्लभ कछु नाहीं

वास्तव में परोपकारी मानवतावाद का प्राण तत्व है। श्री रामचरितमानस का सारांश ही मानवतावाद है। तुलसी का रामचरितमानस केवल रघुनाथ गाथा ही नहीं अपितु संसार की मानवता का महाकाव्य है। उसके अन्तर्गत जीवन के विभिन्न महत्वपूर्ण अंगों का संकलन हैं। जीवन कर्तव्य, लोकनीति, समाजनीति, धर्मनीति, अर्थनीति एवं मानव आचरण के प्रति निर्देश एवं प्रत्यक्ष उदाहरण का प्रस्तुतीकरण पाठक को उसकी आत्मा के विकास के

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) छत्रसाल शासकीय स्नात्कोतर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.) भारत

हेतु ज्ञान – रश्मियों से आलोकित पथ का निर्माण करता है। दूसरे शब्दों में तुलसी का मानस केवल एक श्रेष्ठ महाकाव्य ही नहीं अपितु पूरे युग की अभिलाषाओं का इतिहास है। राम के पावन चरित्र के निर्मित अमृत – सर से सिंचित यह ग्रन्थ मानवता की नींव पर खड़ा होने के कारण क्या साक्षर क्या निरक्षर हिन्दू जाति के ह्रदय कण में ऐसा जीवन रस और नैतिक जागृति बन कर छा गया कि उसके साथ उसका अमर भक्त तुलसी भी अमर हो गया।

हिन्दी के मानवतावादी कवि एक उज्जवल भविष्य की कामना और कल्पना करते रहे हैं जो यही देखते हैं कि इस शोषित, तापित, शासित, पृथ्वी पर नये सूरज की किरणें बिखर गई है और चारो ओर उल्लास का वातावरण व्याप्त हो गया हैं। आदिकाल से लेकर आज तक यह परिकल्पना एक क्षण के लिए भी कुंठित नहीं हुई है। मानवतावादी कवि एक तिनके को भी स्वतन्त्र देखना चाहता है।

मानवतावाद वस्तुत: मानव की महत्वता और उसकी प्रेरणा की चिंतन पद्धति है। इसके प्रत्येक संभव उपाय द्वारा उलझे हुए मानव को सुलझाकर उठ खड़े होने के लिए संबल प्रदान किया है। वे विश्व के कण–कण में आत्मदर्शन का आकांक्षी थी, यह मात्र मानव की पीड़ा को आत्मसात करने का अभिलाषी है इसका मार्ग अपेक्षाकृत सरल भी है और अधिक व्यवहारिक भी है।

मानवतावादी कवियों ने मध्यवर्ग में व्याप्त निराशा, महत्वहीनता तथा नगण्यता के अतिरिक्त उसकी आशा, आकांक्षा के भी मनोरम चित्र प्रस्तुत किए है यथा –

गिरे विभव का दर्प चूर्ण हो,
लगे आग इस आडम्बर में।
वैभव के उच्चाभिमान में ,
अहंकार के उच्च शिखर में।
स्वाभिमान अंधड़ आग बुला दें ,
जले पाप जग का क्षण भर में ॥
(दिनकर ताण्डव)

हमारे मानवतावादी कवि भविष्य के प्रति पूर्णत: आस्थावान हैं। मैथिलीशरण गुप्त ने नील नभस्सर में जिस सूर्य हंस के अवतरित होने की कल्पना की थी वही सूर्यहंस अब घटाओं के घेरे को पार करके नीचे उतरने लगा है–

छितिज को और विस्तृत कर,
अरूणमुख और विवृत कर।
नये युग के झिझकते सूर्य को,
अम्बर वृहत्तर दे ॥

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. उत्तरा जीवनदान, पृष्ठ संख्या 68 – कवि पंत।
2. युगवाणी दो लड़के पृष्ठ संख्या 66
3. युगधारा पृष्ठ संख्या 46 कवि नागार्जुन

****

युग पुरूष (महाकाव्य) में "आज" : एक अनुशीलन

डॉ. वीरेन्द्र कुमार दीक्षित *

प्रस्तावना – 'युग–पुरूष ' महाकाव्य डॉ. कृष्ण गोपाल मिश्र की समर्थ एवं अद्‌भुत कृति है, जिसके मूल में कहीं न कहीं भागवत का आधार रहा है एवं उसी की अनुकृति में इस महाकाव्य में अध्याय के स्थान पर पर्व को जगह मिली है, जिनकी संख्या उन्नीस है। महाकाव्य के संसार में यह कृति कृष्ण काव्य की परम्परा का ही एक सबसे तरोताजा पुष्प कहलायेगी। कृति के 'आशीर्वचन' में डॉ. शिवशंकर शर्मा राकेश ने लिखा है – 'डॉ. कृष्ण गोपाल मिश्र का प्रस्तुत महाकाव्य 'युग पुरूष' भले ही रचना–विधान की पुरातन परम्परा का प्रसाद न हो, फिर भी अपनी पहचान बनाता है । सर्गबद्धता के प्रमुख लक्षण से युक्त यह कृति पौरस्त्य–पाश्चात्य अवधारणाओं की समन्विति प्रतीत होती है। विश्व–विश्रुत व्यास मुनि के 'जय–महाकाव्य' भारत–महाभारत की इसे अनूठी अनुकृति अथवा आरसी कहना उचित होगा।[1] ' कृति के संदर्भ में स्वयं कवि का अभिकथन है – 'राम और कृष्ण पूर्ण परात्पर परम ब्रह्म के अवतार थे या नहीं, इसमें विवाद की गुंजाईश हो सकती है, किन्तु उन्होंने धरती पर जीवित जाग्रत मनुष्यों की तरह रहकर लोक का सही नेतृत्व किया इस पर किसी को कोई सन्देह नहीं होना चाहिए ।' [2]

डॉ. विवेकानन्द शर्मा के मत में – 'प्रत्येक सफल रचनाकार अपने समय का प्रबुद्ध साक्षी होता है इसलिए उसकी रचना की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि वह अपनी रचना में अपने युग का कितना सही चित्र अंकित कर रहा है। इस चित्रांकन के लिए तल स्पर्शी सूक्ष्म– दृष्टि की अपेक्षा रहती है। रचनाकार की सूक्ष्म–दृष्टि की तीव्रता और निष्पक्षता पर उसकी साक्षी की सत्यता आश्रित है। इसी सत्यता पर रचना की विश्वसनीयता निर्भर होती है। अत: सफल रचना में रचनाकार के युग का प्रतिबिम्ब स्पष्ट होना चाहिए।'[3]

कृति युग–पुरूष के केन्द्र में महाकाव्य के नायक श्रीकृष्ण तो हैं ही, जैसा कि अन्य मनीषियों के अभिकथन से सिद्ध होता है। कृति का ताना–बाना महाभारत कालीन समाज से ही चुना गया है, कुल मिलाकर व्यक्ति और समाज कल के ही हैं, किन्तु कवि और कृति में 'आज' अपनी सम्पूर्णता एवं समग्रता के साथ विद्यमान है, यही इस कृति की उपलब्धि है, प्राण है। महान व्यक्ति, महान घटनाऐं कालजयी होती हैं इन्हें स्पर्श करने वाले कवि मन में यह समझ जितनी ही गहरी होती जायेगी 'आज' की दस्तक उस कृति में उतनी ही ईमानदारी से उपस्थिति देगी।

आज के संदर्भ में चाहे वह शिक्षा–व्यवस्था हो, पर्यावरण चिन्ता हो, प्रेम विवाह और उनके प्रति सामाजिक प्रगतिशीलता की दृष्टि हो, राज्य–विभाजन, कर्तव्य–पालन, हिंसा–अहिंसा के प्रश्न, युद्ध–शांति, नारी विमर्श के अनेक आयाम – नारी शोषण, नारी–भ्रूण हत्या, बलात्कार, देह व्यापर, दहेज की विभीषिका हो, परित्यक्ता का शोक–गीत हो, उसकी अस्मिता, स्वायत्तता, स्वाधीनता का सवाल हो चाहे बात दलितोत्थान की की जाये, अलबत्ता यह तथ्य अलग है कि दलित कौन ? क्या फिर आर्थिक आयाम या जाति आयाम ही इसके इति श्री में रहें या कुछ और भी सारे ही तथ्य – युग–पुरूष में चमकीले अंदाज, अनछुए अंदाज में 'आज' के होकर प्रकट–अप्रकट में मौजूद हैं। कृष्ण की शिक्षा के माध्यम से शिक्षा व्यवस्था, शिक्षा चिन्तन में आज के मूल्य कवि की पंक्तियों में दृष्टव्य हैं– 'शिक्षा पर अधिकार सभी का/ अत: उचित है सबको शिक्षा /एक तरह की/जो शिशुओं की रूचि/क्षमता पर आधारित हो/अनुचित है सर्वथा/अर्थ बल का सम्बल लेकर/करें व्यवस्था धनिक अलग/अपने शिशुओं का हित/बढ़ पाए वे ही विकास की/अश्व दौड़ में/और बढ़े अन्तर समाज में/अमृतदायी शिक्षा के भी/दुरूपयोग से/' कृति में पर्यावरण चिन्ता जो आज की प्रधान समस्या है उसकी भी दस्तक है – 'एक दिवस आश्रम अरण्य में/ कुछ पुरवासी लगे काटने/हरे–भरे वृक्षों को जड़ से/ईंधन के हित में/क्षुब्ध हुए गुरूवर/यह लखकर/पास बुलाकर उन सबको फिर/लगे बताने/महापाप है वृक्षों/को यों मूल काटना/वृक्ष वसन हैं वसुन्धरा के।' प्रेम के लिये यदि कृष्ण रूक्मणी का हरण करते हैं तो अपनी बहन सुभद्रा को अर्जुन के साथ भाई बलराम की इच्छा के विरूद्ध भगा देने में भी वे गुरेज नहीं करते। यह प्रगतिशील दृष्टि आज की ही है। बन्धुत्व और समाज की चर्चा भी कृति में है – 'विकसित था बन्धुत्व भाव/हर आश्रम जन में/समता की शहनाई बजती थी/आश्रम के जन–जन के मन में। 'कृति आज के मूल्य जियो और जीने दो का समर्थन भी करती है–'और नहीं कुछ/ महासमर यह तो लेखमात्र है/.....भावी युग के/भावुक नर को/संयम से रह स्वयं जिए/जीने दे सबको। 'कृष्ण के चरित्र के ब्याज से कर्तव्य बोध की साधना में भी कृति रत है, युद्ध शांति के रंग भी है– 'मै न चाहता था उँगली पर/चक्र उठाना/मुझे परमप्रिय था/बंशी का मोहक स्वर ही/किन्तु समय ने दिया निमन्त्रण/विवश हुआ तब चला गया मैं/मथुरा में कर्तव्य निभाने' गुरूदक्षिणा में देश रक्षा और कालयवन के रूप पाकिस्तान की झलक कितनी चतुराई से आयोजित की गई है देखते ही बनती है – 'जाओ ! जाकर देश बचाओ ! .....भरत देश की सीमाओं के/पार बसा वह कालयवन भी/देख रहा है सपने निशदिन/देव–भूमि को पदाक्रान्त कर/भारत पर शासन करने के/जरासन्ध शिशुपाल बने हैं/आज सहायक/क्रूर कुटिल खल 'वनराज के ।' सम्पूर्ण कृति में ही आज की दृष्टि, मूल्य बिखरे पड़े हैं। कुछ बानगी देखने लायक है – (1) आज हुआ है दुखद अन्त/उस खण्ड प्रलय का/घुमड़ रहे थे/किसके घन/युग–युग से मन में/शोषित जन के/(2) आज फटी है वह छाती/जिसने नारी की/मर्यादा की तार–तार/(3) देख जरा यह अपने/उपदेशों का प्रतिफल/सौ–सौ सुकुमारिणि विधवाऐं –/सूख चुके अब जिनके सुख के/सारे सोते/(4) लक्ष्य नहीं है केवल पाना/मुक्ति स्वयं ही/ अभिशापों से/लक्ष्य हमारा सब समाज को/मोक्ष दिलाना/घृणा–द्वेष, हिंसा–

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय पन्ना (म.प्र.) भारत

पीड़ा के/नागपाश से –/ लक्ष्य हमारा हर उर में/मुस्कान बिछाना/श्रम–निष्ठा–श्रद्धा–आदर के तन्तु संजोकर/(5) रखे दॉव पर/नारी की अस्मिता/ और सबकी स्वतंत्रता/(6) दोषी है वह कुन्ती जिसने/छोड़ दिया जनकर बेटे को/शत्रु बना अभिजात्य–वर्ग का/दोषी है द्रोपदी जिन्होंने/पांचाल की भरी सभा में/वर्ग भेद की ध्वजा उठाकर/समता स्वर का गला दबाकर/ प्रतिभा का अपमान कर दिया/सूत–पुत्र कहकर ठुकराया/द्वापर का अप्रतिम धनुर्धर/ कृति ऐसे अधुनातन मूल्यों से पटी पड़ी है। वह कहीं भी शिथिल नहीं है।

विचार छॅटनी का अवकाश नहीं देते, ऐसा प्रतीत होता है कि एक प्राध्यापक पूरा डूबकर, तल्लीनता के साथ कक्षा में अभी–अभी व्याख्यान दे रहा है या किसी सेमिनार में शोध पत्र पढ़ रहा है– अभी और आज। चिर नवीन, चिर वर्तमान की कृति का नाम है युग–पुरूष। कृति की कथा पुरानी है, दृश्य भी पुराने हैं, किन्तु दर्शन नया है, बिल्कुल आज का। डोर भले ही किसी युग (द्वापर) की हो, खींची भी वहीं से जा रही हो पर उसमें नर्तन करने वाले पात्र–घटनाएँ सिर्फ और सिर्फ आज की हैं। यदि गणित की भाषा में बात की जाए तो कृति के 90% में आज का आधिपत्य है।

निराला की 'राम की शक्ति पूजा' के बाद शायद ऐसा कम ही हुआ है, जब कोई भगवान मानवी धरातल पर उतरा हो, गीता के गायक के ह्रदय में भी सुधियों का हा–हाकार उसे कल का नहीं 'आज' का स्वाभाविक मानव घोषित करता है, जो कृति के केन्द्र में है। यथा– ' एक ओर तो/बाट हेरतीं रहीं यशोदा/सॉझ–सकारे ऑगन में बैठी/लालन के शुभागमन की/रही भटकती राधा प्यारी/कुँज–कुँज में मुझे खोजती/पनघट–पनघट टेर लगाती/ .....और दूसरी ओर/कनक निर्मित महलों में/रहा तड़पता मै/ गोकुल की सुधि में खोया/होता रहा व्यथित पल–पल/पर लौट न पाया/ वहॉ–जहॉ की मृदु स्मृतियाँ/ बसी हुई थीं बरबस मन के/हर कोने में।'

और क्या यह संयोग ही है कि महाकाव्य का आरम्भ आज शब्द से ही होता है और कृति के नायक कृष्ण जो युग–पुरूष हैं कृति का कर्ता डॉ. कृष्णगोपाल मिश्र एक ही नामाराशी हैं। द्वापर के कृष्ण में 'आज' के कृष्ण के दिल–दिमाग की भीनी–भीनी छुअन है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आशीर्वचन : डॉ. शिवशंकर शर्मा यराकेश
2. अभिकथन : डॉ. कृष्णगोपाल मिश्र
3. डॉ. विवेकानंद शर्मा : अध्यक्ष : हिन्दी विभाग भाषा एवं साहित्य साउथ पैसेफिक विश्वविद्यालय सूवा, फिजी
4. राम की शक्ति पूजा : सूर्यकान्त त्रिपाठी यनिराला
5. युग–पुरूष : डॉ. कृष्णगोपाल मिश्र

****

समाज का विद्रूप चेहरा "अभिनंदन" - आशापूर्णा देवी

डॉ. संध्या खरे *

शोध सारांश – आशापूर्णा देवी अपनी दलीलों को किसी समाजशास्त्रीय या दार्शनिक चिन्ताधारा से सिद्ध करने का प्रयास नहीं करतीं। वे अपने जीवन के विराट अनुभव से इस प्रकार मौलिक दृष्टिकोण रखती हैं कि वह चमत्कृत व अभिभूत कर देता है। उनके पात्र हमेशा ही सफल योद्धा नहीं होते हैं। बल्कि पराजित होने वाले कमजोर, भीरू, पंगु पात्र भी समाज की किसी न किसी पंगुता की ओर ध्यान आकर्षित कर जाते हैं। जैसे उनके उपन्यास अभिनंदन की अपंग नायिका चिरंतनी है, जो नारी शोषण के साथ-साथ, साहित्यकारो की मानसिक हीनता को भी सामने लाने में सफल रहती है।

प्रस्तावना – आशापूर्णा देवी रचित'अभिनंदन' उपन्यास में एक साथ कई सामाजिक विसंगतियों को रेखांकित किया गया है। उपन्यास में स्त्री शोषण, साहित्यकारों की मानसिक हीनता, साहित्यकारों के कमजोर आर्थिक पथ के साथ -साथ जीवन के प्रत्येक अवसर पर मीडिया की दखलंदाजी पर व्यंग्य किया गया है।

'अभिनंदन' की नायिका चिरंतनी अद्भुत बुद्धि सम्पन्न युवती है। जन्म के पश्चात आजीवन अनेक विपत्तियां सहती चिरंतनी की समाज के सत, महत्, उज्जवल पक्ष के प्रति आस्था आशापूर्णा देवी के आस्थावान दृष्टिकोण का प्रतीक है। चिरंतनी बचपन में छत से गिरकर लगड़ी हो जाती है, और जल्दी ही मातृविहीन भी हो जाती है। यहां आशापूर्णा देवी कच्ची उम्र में होने वाले पारिवारिक शोषण की स्थिति को चिरंतनी के चचेरे मामा तपन के माध्यम से स्पष्ट करती हैं। किशोरवय चिरंतनी तपन मामा के विश्वासघात का शिकार होकर प्रकाश पुंज की भांति कमनीय, उज्जवल सुंदर संध यौवन प्रस्फुटित नारी देह को, स्वयं को शेर के पंजे से जो उसका खादक होता है, नहीं बचा पाती।'[1]

चिरंतनी के पति एवं सास के रूप में स्त्री के विवाह के पश्चात होने वाले शोषण को स्पष्ट किया गया है।चिरंतनी का पति दूरंदेशी है क्योंकि 'कलकत्ते में अगर माँ के साथ रहने की जगह मिल जाये तो बदले में शादी करने को भी वह तैयार है।'[2] और सिर्फ वास स्थान ही नहीं बल्कि बारह हजार रूपया, लड़की के जेवर, दामाद का साज-संभार, घड़ी, अंगूठी सब। परंतु वस्तु विनिमय दृष्टि से हुआ यह विवाह सफल नहीं होता और दिन-दिन पति की अभद्रता, अमार्जित स्वभाव तथा सास का समधी के नाम विषवर्षण बढ़ते - बढ़ते एक दिन ऐसी बहू को मिट्टी का तेल डालकर माचिस सुलगाकर जलाने की इच्छा में परिवर्तित हो जाता है।'[3]

चिरंतनी के पिता के रूप में आशापूर्णा देवी ने उदार चरित्र पुरूष का चित्रण किया है। जो शेर का शिकार बनी चिरंतनी को निष्कलुश मानकर उसका विवाह करता है। और नारायण की साक्षी में हुये विवाह को तोड़ने की हिम्मत रखता है। इसलिये एक और बहू जलने से बच जाती है और चिरंतनी को आत्मनिर्भर जीवन प्राप्त होता है।

साहित्यकार धीलन हाजरा के रूप में आशापूर्णा देवी ने लेखन के क्षेत्र में होने वाली ठगी, चोरी की प्रवृत्ती को तथा एक अपंग स्त्री के भावनात्मक शोषण को दर्शाया है।चिरंतनी की पुत्री सीमन्तनी के साथ अतिथि बनकर आया कवि धीलन हाजरा चिरंतनी के 'पच्चीस बरसों के प्रेम व स्वादहीन जीवन में स्थायी अतिथि हो जाता है।'[4] चिरन्तनी रोज सोचती कि कल जब वह विवाह प्रस्ताव रखेगा तब वह स्वीकृति दे देगी। 'परंतु वह क्षण'। वह महान मुहूर्त।'[5] उसके जीवन में कभी नहीं आता क्योंकि कवि हृदय धीलन के लिये वह टाइम पास है।

धीलन हाजरा चिरंतनी के जीवन की सबसे बड़ी संपत्ति, चिरंतनी की आत्मकथा 'एक नारी मन की सुख -दुख की गाथा' नामक पाण्डुलिपिय'को जल्दी -जल्दी में प्रेस में देने के लिये जाते समय कहीं खो डालता है। इस असावधानी की लज्जा ने उसे काफी समय तक चिरन्तनी से मिलने नहीं दिया।'[6] यद्यपि दो लाइनों में लिख कर कवि अपनी भूल स्वीकार कर आया है कि 'आपको मुँह दिखाने लायक नहीं रहा। जी जान लगाकर ढूढ़ने की कोशिश में हूँ।'[7] फिर भी 'इधर चिरन्तनी की तो शबरी -सी प्रतीक्षा चलने लगी। कब मिलेगा प्रियतम का दर्शन। कब उसे 'नये पन्नों में आबद्ध नारी मन के सुख-दुख का हिसाब, पुरस्कृत रूप में मिलेगा।'[8]

आशापूर्णा देवी ने यहां साहित्यकारों के द्वारा दूसरों की कृति चुराकर यश, पुरूस्कार, समृद्धि पाने के प्रवंचक रूप को दर्शाया है। चिरंतनी की आत्मकथा धीलन हाजरा के नाम से प्रसिद्ध बांग्ला पत्र प्रात्यहिक में प्रकाशित होकर बीस हजार रूपयों का पुरूस्कार पाती है। चिरंतनी स्तबध है। उसकी पुत्री सीमन्तनी बधाई लेकर जाती है किन्तु उसे लेखक से मिलने का सौभाग्य नहीं मिल पाता। वह सिर्फ एक चिट छोड़ आयी कि .....किसी की तरफ से अभिनंदन जताने आयी थी। हताश होकर लौटना पड़ा। प्रतीक्षा करने का वक्त नहीं है।'[9] अब धीलन स्तब्ध है क्योंकि उसी कागज के 'उलटी तरफ क्या लिखा है ? किसके हाथ की लिखावट है ? कभी धीलन हाजरा की ऐसी ही लिखाई थी न ?[10]पृष्ठ के उलटी तरफ तो साफ लिखा है ' शर्म से आपको चेहरा नहीं दिखा पा रहा हूँ क्योंकि आपकी लेखनी प्रेस में ले जाते समय किसी असावधानीवश रास्ते में ही गुम गयी।[11]

अभिनंदन में आशापूर्णा देवी नें साहित्यकारों की विपन्न स्थिति को स्पष्ट किया है क्योंकि साहित्यकारों के पास फूलों के गुच्छे, मानपत्र व शाल तो होते हैं परंतु नहीं होते रूपये। 'बीस हजार रूपय','जो कभी भी', धीलन हाजरा कभी भी नीता को एक साथ नहीं दिखा सका था।[12] वे बीस हजार रूपये आज दिख गये थे।

एक बांग्ला कहावत है अभाव से स्वभाव नष्ट होता है। धीलन हाजरा की पत्नी नीता के रूप में महत् या विशिष्ट व्यक्ति के साथ गिरस्ती चलाने की असुविधा का आशापूर्णा देवी ने सटीक वर्णन किया है क्योंकि 'विशिष्ट व्यक्ति की पत्नी बनने से, समझदार एवं सलीकेदार होने से तो काम नहीं चलता। वह व्यक्ति कवि, साहित्यिक, शिल्पी, दार्शनिक रूप से चाहे कितनी

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

भी विशिष्टता की श्रेणी प्राप्त कर ले–परिवाररूपी मंच पर तो वे हर वक्त शिशु भोलेनाथ रूप में रहना चाहते हैं। तब दोनों आसमान की ओर– देखकर काहे चलें ? एक को तो हिसाबी होना ही चाहिये। शायद सभी विशिष्ट व्यक्तियों, (विश्व के) की पत्नियों की यही अवस्था है। 'महान पति', 'प्रतिभावान पति' 'शिल्पी पति', की पत्नियों को हिसाबी, कंजूस व गरम मिजाज बन जाना पड़ जाता है।[13] सो नीता हिसाबी बनने में देर नहीं करती।

जनजीवन में मीडिया की बढ़ती दखलंदाजी, तिल का ताड़ बनाने की प्रवृत्ति पर आशापूर्णा देवी ने उपन्यास में व्यंग्य किया है। जीवन हो या मृत्यु प्रतिक्षण, यहां तक की भूकम्प के मलबे में दबे मरणासन्न व्यक्ति को कवर करने के लिये भी मीडिया प्रतिक्षण तत्पर है। प्रत्येक अवसर पर आत्मीय आयें या ना आयें पर वे जरूर आयेंगे ? आजकल तो किसी भी चीज के लिये वे तैयार रहते हैं। अगर किसी विशिष्ट की मृत्यु हो जाये तो साथ–साथ उपस्थित हो जाते हैं। शव को उठाने में देरी हो तो भी अभी–अभी विधवा हुई पत्नी, पितृहीन बच्चों के चेहरों पर रोशनी डालकर परलोकवासी के संबंध में दो–चार बातें कहवा लेते हैं।[14] स्पष्ट है कि आशापूर्णा देवी रचित अभिनंदन उपन्यास समाज के विद्रूप चेहरे को सामने लाने में सफल हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आशापूर्णा देवी,: अभिनंदन (उपन्यास), अनुवादक – इंदिरा चैटर्जी, प्रकाशक–राजभाषा प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली–110032, प्रकाशन वर्ष–2002, संस्करण – प्रथम, पृष्ठ क्रमांक –13
2. आशापूर्णा देवी,: अभिनंदन (उपन्यास), अनुवादक – इंदिरा चैटर्जी, प्रकाशक–राजभाषा प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली–110032, प्रकाशन वर्ष–2002, संस्करण – प्रथम, पृष्ठ क्रमांक –16
3. आशापूर्णा देवी,: अभिनंदन (उपन्यास), अनुवादक – इंदिरा चैटर्जी, प्रकाशक–राजभाषा प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली–110032, प्रकाशन वर्ष–2002, संस्करण – प्रथम, पृष्ठ क्रमांक –20
4. आशापूर्णा देवी,: अभिनंदन (उपन्यास), अनुवादक – इंदिरा चैटर्जी, प्रकाशक–राजभाषा प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली–110032, प्रकाशन वर्ष–2002, संस्करण – प्रथम, पृष्ठ क्रमांक –58
5. आशापूर्णा देवी,: अभिनंदन (उपन्यास), अनुवादक – इंदिरा चैटर्जी, प्रकाशक–राजभाषा प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली–110032, प्रकाशन वर्ष–2002, संस्करण – प्रथम, पृष्ठ क्रमांक –59
6,7,8. आशापूर्णा देवी,: अभिनंदन (उपन्यास), अनुवादक – इंदिरा चैटर्जी, प्रकाशक–राजभाषा प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली–110032, प्रकाशन वर्ष–2002, संस्करण – प्रथम, पृष्ठ क्रमांक –60
9,10 .आशापूर्णा देवी,: अभिनंदन (उपन्यास), अनुवादक – इंदिरा चैटर्जी, प्रकाशक–राजभाषा प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली–110032, प्रकाशन वर्ष–2002, संस्करण – प्रथम, पृष्ठ क्रमांक –33
11. आशापूर्णा देवी,: अभिनंदन (उपन्यास), अनुवादक – इंदिरा चैटर्जी, प्रकाशक–राजभाषा प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली–110032, प्रकाशन वर्ष–2002, संस्करण – प्रथम, पृष्ठ क्रमांक –34
12,13. आशापूर्णा देवी,: अभिनंदन (उपन्यास), अनुवादक – इंदिरा चैटर्जी, प्रकाशक–राजभाषा प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली–110032, प्रकाशन वर्ष–2002, संस्करण – प्रथम, पृष्ठ क्रमांक –27
14. आशापूर्णा देवी,: अभिनंदन (उपन्यास), अनुवादक – इंदिरा चैटर्जी, प्रकाशक–राजभाषा प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली–110032, प्रकाशन वर्ष–2002, संस्करण – प्रथम, पृष्ठ क्रमांक –62

****

ई-गवर्नमेंट और ई-गवर्नेंस परिभाषा चरण एवं भारत में ई-गवर्नेंस की समस्यायें

डॉ. सारिका मिश्रा *

शोध सारांश – ई-गवर्नेस एक ऐसी आधुनिक शासन व्यवस्था है जिसके द्वारा राष्ट्रीय एवं स्थानीय सरकारें राज्य सरकारें अपनी योजनाओं से सम्बन्धित जानकारी, अपनी कार्यवाहियों से सम्बन्धित जानकारी अपने नागरिकों, व्यापारियों तथा अन्य सरकारी ऐजेन्सियों को उपलब्ध कराती है। ई-गवर्नेस एक ऐसी सुविधा है जिसके द्वारा सरकार से सम्बन्धित जानकारियों को इलेक्ट्रॉनिक रुप में समय पर नागरिकों तक पहुॅचाया जाता है। ई-गवर्नेस के माध्यम से सरकारी जानकारियों को उपलब्ध कराकर नागरिकों को क्षमतावान बनाया जाता है। ई-गवर्नेस के माध्यम से उत्पादकता बढ़ाकर एवं लागत में कमी कर सरकार के पूर्तिकर्ताओं एंव उपभोक्ताओं को लाभान्वित किया जा सकता हैं तथा जनता के लिए बनाई जा रही नीतियों में उनकी सहभागिता द्वारा निर्णय लिया जाना संभव हो सका है। ई-गवर्नेस के माध्यम से प्रबन्धकों एवं सुपरवाईजरों का बेहतर प्रयोग संभव हो सका है। इसके माध्यम से नियोजन, संगठन, नियन्त्रण, नियुक्तिकरण, आदि कार्यों में सहायता प्राप्त हुई है।

कुँजी शब्द– ई-गवर्नमेंट, ई-गवर्नेस आन्तरिक संगठनात्मक प्रणाली, प्रबन्धकों के कार्य ।

प्रस्तावना – विश्व में मानव सभ्यता के विकास प्रक्रिया को गति प्रदान करने के लिए समय-समय पर कई प्रकार की क्रांति हुई है इनमें से एक है सतरंगी क्रांति जिसने सूचना-प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में विकास को गति प्रदान कर विकास प्रक्रिया में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। सूचना संचार तकनीकों ने आम-आदमी के जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में क्रांति मचा दी है। आम-आदमी के जीवन का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है सरकारें एवं उनका कामकाज तथा सरकारों द्वारा नागरिकों के लिए बनाई गई योजनायें, सरकारें भी सूचना-संचार तकनीकों से अछूती नहीं रही है। सूचना संचार तकनीक अनुप्रयोगों द्वारा शासन प्रणाली में परिवर्तन लाकर सामाजिक विकास व नागरिकों को बेहतर सुविधाएँ उपलब्ध कराने को ई-गवर्नेस की श्रेणी मे रखा गया है। शासन पद्धति पुरातन काल से ही किसी न किसी रुप में पूरी दुनिया में उपलब्ध रही है। समय-समय पर इनमें परिवर्तन किये जाते रहे हैं लेकिन इसमें परिवर्तन की प्रक्रिया अत्यंत धीमी है। यदि शासन क्षेत्र या पद्धति को उसकी प्रक्रिया में आये विकास के अनुसार वर्गीकृत किया जाये तो उसे हम तीन पीढ़ियों में वर्गीकृत कर सकते हैं।

1. **मौखिक शासन पद्धति–** यह शासन करने की प्राचीनतम प्रणाली थी इसके अन्तर्गत जनता को एक जगह एकत्रित कर उनकी समस्याओं और सुझावों को सुनकर निर्णय ले लिये जाते थे।
2. **लिखित शासन पद्धति–** मौखिक शासन पद्धति का सबसे बड़ा दोष यह था कि उसको अभिलेख के रुप में नहीं रखा जा सकता था अत: इस दोष के सुधार स्वरुप लिखित शासन प्रणाली का विकास हुआ, जिसके अन्तर्गत समस्त कार्य लिखित रुप में सम्पादित किये जाने लगे।
3. **इलेक्ट्रॉनिक शासन पद्धति–** सरकारों के क्रियाकलापों को गति प्रदान करने तथा जनता की समस्याओं का शीघ्र समाधान करने के लिए सूचना-संचार तकनीक का उपयोग शासन प्रक्रिया की नवीनतम प्रणाली है। यह प्रणाली अपनी विकास अवस्था में है।

इस प्रकार वर्तमान सरकारों के द्वारा अपनी योग्यताओं का लाभ जनता तक शीघ्रता पहुॅचाने के लिए सूचना संचार तकनीकों का प्रयोग करने पर अत्यधिक बल दिया जा रहा है।

ई-गवर्नमेंट की परिभाषा– ई-गवर्नमेंट एक ऐसी जेनेरिक शब्दावली है जो स्थानीय, राज्य एवं केन्द्रीय सरकारों की वेब आधारित सेवायें प्रदान करती है। ई-गवर्नमेंट के अन्तर्गत सूचना तकनीकों का प्रयोग कर तथा इंटरनेट के माध्यम से सरकारी कार्यक्रमों को नागरिकों तक पहुँचाया जाता है। इसके अलावा ई-गवर्नमेंट की अन्य कई परिभाषायें दी गई है जैसे-

1. **वर्ल्ड बैंक द्वारा–** ई-गवर्नमेंट का आशय है सरकारी संस्थाओं द्वारा सूचना तकनीकों का प्रयोग कर अपनी क्षमताओं को नागरिकों, व्यापारियों और सरकार की अन्य संस्थाओं को हस्तान्तरित करना। इन तकनीकों का प्रयोग कर सरकार की सेवाओं को नागरिकों तक बेहतर तरीके से हस्तान्तरित किया जाता है, व्यापारियों तथा उद्योगों के बेहतर तालमेल स्थापित कर सकते है। नागरिकों को सूचना प्रदान कर उनको क्षमतावान बनाना तथा कुशल सरकारी प्रबंध करना, कम लागत पर अधिक से अधिक लोगों को लाभान्वित करना, पारदर्शिता बढ़ाना आदि।
2. **United Nations द्वारा–** ई-गवर्नमेंट को इंटरनेट तथा World Wide Web का प्रयोग कर सरकारी जानकारी तथा सेवाओं को नागरिकों तक पहुॅचाने के रुप में परिभाषित किया जा सकता है।

इन परिभाषाओं से स्पष्ट होता है शासन स्तर पर जब सूचना तकनीक का उपयोग कार्य सम्पादित करने, कार्यक्रमों पर सतत निगरानी, आपस में संदेशों का आदान-प्रदान करने, या सूचना तकनीक से कार्यालय प्रबंध आदि किया जा सकता है। तब उसे इलेक्ट्रानिक गवर्नमेंट की श्रेणी में रखा जाता है। सूचना तकनीक, साइबर स्पेस, डोमेन नाम इत्यादि से संबंधित नियम कानून भी इसी श्रेणी में आते है।

2. **ई-गवर्नेस की परिभाषा–** ई-गवर्नेस का अर्थ है कि सूचना एवं तकनीकी माध्यमों का सरकारी एवं सार्वजनिक क्षेत्रों में विभिन्न स्तरों पर प्रयोग ताकि पूर्व निर्धारित सरकारी लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। परिभाषा से स्पष्ट होता है कि जब सूचना तकनीक का प्रयोग नागरिकों द्वारा शासन की बात जानने, शासन के विभागों में उपलब्ध कार्यक्रम, नियमों व नीतियों की ऑन लाईन जानकारी प्राप्त करने, अपनी शिकायतें आवेदन पत्र सुझाव भेजने या शासन से सम्पर्क के लिये ऑनलाईन के रुप में इंटरनेट द्वारा किया

* प्राध्यापक, अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

जाता है तब उसे ई-गवर्नेस कहा जाता है। ई-गवर्नेस के प्रयोग द्वारा सरकारी नियन्त्रण को कम किया जा सकता है तथा नागरिकों को बेहतर प्रशासनिक, नागरिक सुविधाओं के बारे में जानकारी समय पर तथा शीघ्र उपलब्ध कराई जा सकती है कई सरकारी विभागों द्वारा ई-गवर्नेस लागू किया जा सकता है। बिजली विभाग, पानी सप्लाई, टेलीफोन, राशन कार्ड, सामान्य प्रशासन, भू-अभिलेख, ग्रामीण रोजगार योजना, इंदिरा आवास योजना, पुलिस विभाग, सामाजिक सेवायें, रेलवे, पर्यटन, परीक्षा परिणाम, कर एवं रिटर्न, निविदा सूचना, जन्म एवं मृत्यु प्रमाणपत्र, मूल निवासी एवं जाति प्रमाण पत्र, वोटर कार्ड लिस्ट में नाम जुड़वाना उपरोक्त सूची अपने आप में पूर्ण नहीं है इसमें कई और विभाग शामिल किये जा सकते हैं।

3. ई-गवर्नमेंट एंव ई-गवर्नेस – ई गवर्नेस के बारे में अभी भी बहुत सारे भ्रम है। ई-गवर्नेस का अर्थ मात्र यह नहीं है कि इलेक्ट्रानिक माध्यम से सरकार के कामकाज को संचालित करना या नागरिकों द्वारा इंटरनेट के माध्यम से सरकार से संपर्क करना। इसमें प्रशासन की अनेक भूमिकायें सम्मिलित होती है। ई-गवर्नेस सरकारों को एक नई सोच एवं दिशा तथा गति प्रदान करता है। इस व्यवस्था में सरकारें दुकानदार एवं नागरिक ग्राहक है। सरकारें नागरिकों के लिये सेवायें प्रदान करती हैं तथा नागरिक उन सेवाओं का उपभोग करते है। ई-गवर्नेस की अवधारणा को समझने के लिए यह जरुरी है कि ई-गवर्नेस के उपयोगकर्ता के बारे में समझा जाये, ई-गवर्नेस तीन मुख्य उपयोगकर्ता होते है सरकार, नागरिक, व्यापारी वर्ग। इन वर्गो के तीन समूह बनाये जा सकते है।

1. सरकार से नागरिक G2C – इसके अन्तर्गत सरकार अपनी विभिन्न योजनाओं के बारे में ऑन-लाईन जानकारी नागरिकों को प्रदान करती है। नागरिकों द्वारा इन जानकारियों को प्राप्त कर सरकारी सेवाओं का लाभ प्राप्त किया जाता है, जैसे आय कर का ऑन लाईन भुगतान, ड्राइविंग लाइसेन्स का बनना, रोजगार के लिए आवेदन करना, स्वास्थ्य सेवाओं को प्राप्त करना आदि।

2. सरकार से व्यापारियों G2B – इसके अन्तर्गत सरकारें इंटरनेट के माध्यम से विभिन्न व्यापारियों एवं पूर्तिकर्ताओं से व्यापार करते हैं इसकी सहायता से सरकार व्यापारियों एवं व्यापारी सरकार से व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित कर सकते है। जैसे सरकार को बहुत बड़ी मात्रा में मशीनों की खरीद करनी है या मशीनों की मरम्मत करनी है, पुरानी मशीनों को नीलाम करना है तो ई-टेन्डर के माध्यम से व्यापारियों से सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं।

3. सरकार से सरकार G2G – इसके अन्तर्गत दो विभिन्न सरकारों या केन्द्र सरकार का राज्य सरकारों से अथवा विभिन्न सरकारी संस्थाओं का आपस में इंटरनेट के माध्यम से विभिन्न कार्यक्रमों का संचालन सम्मिलित है।

ई-गवर्नेस के चरण – भारत के सन्दर्भ में ई-गवर्नेस को केवल नागरिक सुविधाऐं उपलब्ध कराने की व्यवस्था से जोड़कर देखा जा सकता है। ई-गवर्नेस का उपयोग करते समय नागरिक सुविधाऐं उपलब्ध कराने के लिए गहन विश्लेषण व विस्तृत अध्ययन की आवश्यकता होती है। भारत के सन्दर्भ में नागरिकों को बेहतर नागरिक सुविधाऐं व प्रशासनिक व्यवस्था सुलभ कराने के उद्देश्य से निर्मित की जाने वाली ई-गवर्नेस परियोजना की पूरी विकास प्रक्रिया को निम्न चरणों में बॉटा जा सकता है।

1. वेबसाइट की उपलब्धता– ई-गवर्नेस के प्रथम चरण के अन्तर्गत विभिन्न सरकारी विभागों की वेबसाइट का निर्माण किया जाना चाहिए तथा उस वेबसाइट पर विभाग से सम्बन्धित वे जानकारी जो नागरिकों के लिए उपयोगी है अंकित की जानी चाहिए। वेबसाइट इंटरनेट पर उपलब्ध होना चाहिए तथा डॉयल अप कनेक्शन द्वारा किसी अन्य संचार व्यवस्था से जुड़ने की सुविधा होनी चाहिए।

2. वेबसाइट पर वांछित सामग्री उपलब्ध करना – साईट निर्माण के पश्चात् साईट पर क्या उपलब्ध करना है, क्या नहीं इसका निर्धारण कर नागरिकों के लिए उपयोगी सामग्री उपलब्ध करना चाहिए तथा जानकारियों को समय-समय पर अपडेट करते रहना चाहिए।

3. संवाद स्थापित करने में सुविधा – यदि वेबसाइट पर शासकीय योजनाओं के आवेदन लेने, शिकायत स्वीकारने अथवा प्रमाण पत्र जारी करने हेतु आवेदन करने की सुविधा उपलब्ध करायी जाती है तब नागरिकों तथा शासन के मध्य संवाद के लिए, निर्धारित प्रारुप में फार्म उपलब्ध कराये जाते है जिन्हें नागरिकों द्वारा वेबसाइट पर ही भरकर शिकायत अथवा आवेदन पत्र शासन तक भेज सकते है आवेदन वेबसाइट पर उपलब्ध करने के उपरांत वेबसाइट द्वारा पंजीयन संख्या एवं दिनांक उपभोक्ता को प्रदान की जाती है जिसे भविष्य में वेबसाइट पर प्रविष्ट कर आवेदन या शिकायत की स्थिति ज्ञात की जा सकती है।

4. वेबसाइट पर अंतरण सुविधा– शासन द्वारा इस प्रकार की सुविधा बिजली के बिल, पानी के बिल, सम्पत्ति कर आदि के ऑनलाईन भुगतान की सुविधा उपलब्ध करते हैं वर्तमान में बिलों को ऑन-लाईन भुगतान की सुविधा सामान्यत: बैंकिग या वित्तीय संस्थान उपलब्ध करा रहे है। बिलों की ऑन लाइन भुगतान सुविधा के द्वारा शासन प्रणाली काफी बड़ी मात्रा में धन, समय एवं श्रम की बचत कर सकते हैं।

5. वेबसाईट का एकीकरण– शासन के प्रत्येक विभाग की अपनी वेबसाईट होती है लेकिन इन सब को शासन के किसी एक पोर्टल से जोड़ने का कार्य नहीं किया जाता है। इसके परिणाम स्वरुप नागरिकों को बहुत सी वेबसाईट को याद रखना पड़ता है। वेबसाईट निर्माण की एक नीति बनाकर समस्त शासकीय वेबसाईट को एक पोर्टल से जोड़कर वेबसाईट एकीकरण संभव है।

भारत में ई-गवर्नेस परियोजनाओं की समस्यायें – भारत में अनेक ई-गवर्नेस परियोजनायें बनाई गई इनमें से कुछ सफल व कुछ असफल हुई है ई-गवर्नेस की असफल परियोजनाओं की सामान्य समस्यायें निम्न प्रकार हैं-

1. स्थायी व बेहतर टेलीफोन/ इंटरनेट की उपलब्धता का अभाव।
2. विज्ञापन ज्यादा एवं काम कम।
3. सही पर्याप्त मात्रा में सूचना की उपलब्धता का अभाव।
4. उपयोगकर्ता से सलाह का अभाव।
5. स्थानीय एवं हिन्दी भाषा में सामग्री का अभाव।
6. मौजूदा इंटरनेट कानून के दोष।
7. सुरक्षा संबंधी व्यवस्था का अभाव।
8. फान्ट मानकीकरण का न होना।
9. राजनैतिक इच्छा शक्ति का अभाव।
10. आर्थिक संसाधनों की कमी।
11. जागरुकता का अभाव।
12. अंतिम छोर तक उपलब्धता का अभाव।
13. तकनीकी ज्ञान का अभाव आदि।

सामान्यत: भारतीय ई-गवर्नेस परियोजनाओं से इन्हीं उपरोक्त समस्याओं से ग्रस्त है जिन्हें कुछ प्रयासों द्वारा दूर कर इन परियोजनाओं को अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है।

निष्कर्ष:- उपरोक्त शोधपत्र के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ई-गवर्नेस सरकार की विभिन्न योजनाओं एवं कार्य प्रणाली को नागरिकों तक शीघ्र पहुँचाने का एक अच्छा माध्यम है। तथा इसके माध्यम से सरकारी कामकाज को पारदर्शिता प्रदान की जा सकती है इसके माध्यम से नागरिकों को सरकार से प्रश्न करने तथा नागरिकों के लिए सरकार द्वारा बनाई जा रही योजनाओं में भागीदारी प्राप्त की जा सकती है किन्तु ई-गवर्नेस कर भारत में प्रयोग प्रारम्भिक अवस्था में हैं। अत: भारत में ई-गवर्नेस के अन्तर्गत चलाई जा रही परियोजनाओं में आने वाली समस्याओं पर अगर विजय प्राप्त कर ली जाये तो यह योजनाओं भारतीय नागरिकों के लिए वरदान सिद्ध हो सकती है। इस पर काम जारी है तथा हमें उम्मीद करनी चाहिए की समस्याओं का समाधान कर इसे और प्रभावी ढंग से लागू किया जायेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ई-कॉमर्स- शशि शुक्ला म. प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
2. शोध-पत्र- ए. Government and E-Governance Shailendra Jain Palvia.
3. ई-गवर्नेस- शशिशुक्ला म. प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
4. www.Worldbank.org
5. www.Unpan.org

****

कालिदास कृत मेघदूत में वर्णित भौगोलिक शब्दों का अध्ययन

डॉ. भावना श्रीवास्तव *

प्रस्तावना – कवि कुलगुरू भारत के ही नहीं विश्व के स्वनामधन्य श्रेष्ठ महाकवि और उत्तम नाटककारों में परिगणित है। खण्डकाव्य, महाकाव्य और नाटक सर्वत्र ही उनकी कृतित्व शक्तिपूर्ण रूप से परिपक्व दृष्टिगोचर हो रही है। प्रकृति को मनोरम मूर्ति को प्रतिफलित करने में और अपने प्रबन्धे के पात्रों के चरित्रों का असाधारण चित्रण करने में महाकवि अद्धितीय हैं। आर्य संस्कृति की उदात्तता के प्रदर्शन में महाकवि सर्वश्रेष्ठ स्थान हैं। उन्होंने सत्य, शिव और सौन्दर्य की जो पूर्णता दर्शाई है वह वर्णनातीत है। महाकवि कालिदास ध्वनि कवि है। व्यंजना के द्धारा खण्डकाव्य के द्धारा अपने आशय को सूक्ष्म रूप से अभिव्यक्त करते हैं। मेघदूत में इसी वृत्ति के द्धारा उन्होनें अपनी करूणा का अनरूप चमत्कार दिखलाया है। कालिदास ने चेतन किसी व्यक्ति का ग्रहण न कर यक्ष के द्धारा मेघ को संदेशवाहक दूत बनाकर अपनी अनोखी सूझ- बूझ को ध्वनित किया है। मेघदूत में दो प्रकरण है पूर्वमेघ और उत्तरमेघ। कोई यक्ष कार्य में प्रभाव करने के कारण अपने प्रभु कुबेर के शाप से कैलाश पूर्वत में अवस्थित अलकापुरी से एक साल के लिए निर्वासित हुआ। इस प्रकार अपने स्थान से निर्वासित होकर अपनी प्राणेश्वरी प्रियतमा से बिछुड़ने के शोक से कृश होकर वह कामुक यक्ष रामगिरी निर्जन श्रृंड आश्रमों में रहा था। वह आषाढ़ मास के प्रथम दिवसों में नवीन मेघ को देखने से अपनी प्रियतमा की स्मृति से शोकाकुल होकर बहुत ही अधीर हो गया। कामति होने से अचेतन और चेतन की सुध न रही। मेघ को पुष्पकरा बर्तनों के वंश में उत्पन्न कहकर यक्ष ने उसे अपनी प्रियतया के पास संदेश कहने के लिए प्रार्थना की, क्योंकि मेघ उसके इस कर्म को स्वीकार न भी करें तो भी उसमें याञ्जा मोघा वरमधिगुण्र नाऽधमे लब्धकामा (1-6) इसी उक्ति के अनुसार विशेष दु:ख नहीं होगा।

मेघ को किस-किस मार्ग का अवलम्बन करना होगा और क्या-क्या दृश्य देखना पड़ेगा उन सबको यक्ष ने एक-एक करके पूर्व मेघ में सविस्तर वर्णन करता है। रामगिरी से उत्तराभिमुख होकर आते जाते अमरकूट पर्वत, नर्मदा नदी, विदिशा नगरी, वेत्रवती नदी, मालवा की राजधानी उज्जयिनी और धर्मक्षेत्र कुरूक्षेत्र इन सबको अतिक्रमण कर मेघ को अपने वासस्थल अलका में पहुंचने के लिए यक्ष निर्देशन करता है।

उत्तरमेघ में यक्ष अलकापुरी और वहाँ पर विद्यमान अपने प्रासाद का अतिशय मनोहर वर्णन करता है। कालिदास ने मेघदूत में यक्ष के माध्यम से अनेक स्थलों का उल्लेख किया है जो उसकी भौगोलिक शब्दो के अध्ययन को दर्शाता है, जो इस प्रकार है –

1. **रामगिरी –** मल्लिनाथ ने इसे चित्रकूट लिखा है। चित्रकूट पर्वत बुन्देलखण्ड में हैं पर बहुत से विद्धानों के मत में यह मध्यप्रदेश स्थित रामगढ़ पर्वत माना गया है। कोई इसे रामटेक भी मानते है। इसका उल्लेख कालिदास ने मेघदूत में इस प्रकार किया है –

कश्चित्कान्ताविरहगुरूणा स्वाधिकाराप्रयत्त: .....
स्तिग्धच्छायातरूषु वसतिं **रामगिर्या** श्रयेषु॥ (मेघदूत ..1-1)

2. **अलका –** यह कैलास पर्वत में अवस्थित यक्षों की पुरी है। गन्तव्या ते वसतिरलका नाम यक्षेश्वराणां ॥ (1-7)

3. **कैलास –** हिमालय के उत्तर में अतिशय मनोहर कैलास नामक पर्वत है। इसे पुराण में देवभूमि कहा है। इसके दक्षिण में 'मानसरोवर' है।

आ कैलासाद् बिसकिसलयच्छेदपाथेयवन्त:(मेघदूत-पूर्वमेघ11)

4. **आम्रकूट-** विल्सन ने इसे 'अमरकण्टक' नामक पर्वत बताया है। यह नर्मदा नदी का उद्गम स्थल है।

वक्ष्यत्यध्वश्रमपरिगतं सानुमानम्रकूट:। (मेघदूत ..1-17)

5. **विन्ध्य-**आर्यावर्त्त और दाक्षिणात्य देश के बीच विन्ध्यपर्वत है।

रेवा द्रक्ष्यस्युपलविषये विन्धपादे विशीर्णा ॥ (1-19)

6. **रेवा –** यह विन्ध्य पर्वत के पूर्व दिशा में अवस्थित में कल पर्वत (अमरकण्टक) से निकली हुई नदी हैं। इसे नर्मदा भी कहते हैं। यह 800 कोस लम्बी है।

रेवा द्रक्ष्यस्युपलविषये विन्ध्यपादे (1-19)

7. **दशार्ण –** यह मालवा का पूर्वभाग है। इसकी राजधानी विदिशा (आधुनिक नाम भिलसा) है इस क्षेत्र में वेत्रवती (बेतवा) नदी बहती है। कुछ लोग वर्तमान छत्तीसगढ़ नाम के देश के एक अंश को 'दशार्ण' कहते है।

सम्पत्स्यन्ते कतिपयदिनस्यायिहंसा दर्शार्णा: ॥ (1-23)

8. **विदिशा –** यह 'दशार्ण' देश की राजधानी है। इसे आजकल भिलसा कहते है।

तेपां दिक्षु प्रथितविदिशालक्षणां राजधानीं। (1-14)

9. **वेत्रवती –** यह दशार्ण देश में बहने वाली नदी है। इसका आधुनिक नाम 'बेतवा' है। यदि विन्ध्यपर्वत के उत्तर से निकलकर मालवदेश और प्रयोग के नैत्रर्दव्य भाग को आप्लावित कर यमुना से मिलती है।

सभ्रभडंग मुखमिव पयो वेत्रवत्याश्रलोर्मि। (1-14)

10. **उज्जयिनी –** यह माधवदेश की राजधनी है। इसे अवन्ती अवन्तिका और 'विशाला' भी कहते है। इसका आधुनिक नाम उज्जैन है। यह अयोध्या आदि सात पुरियो में एक पुरी है।

'सौधोत्सङग प्रणयविमुखो मा स्म भूरूज्जयिन्या:'। (1-27)

11. **सिप्रा (क्षिप्रा) –** उज्जयिनी में बहने वाली एक नदी है।

शिप्रावात: प्रियतम दूत प्रार्थनाचाटुकारा:। (1-31)

* प्राध्यापक (संस्कृत) शासकीय महारानी लक्ष्मी बाई महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

12. **दशपुर –** यह चर्मण्वती नदी के कुल उत्तर भाग में अवस्थित, पुराण में वर्णित महाराज रन्तिदेव का नगर है इसका आधुनिक नाम 'मन्दसार' है कोई इसे धौलपुर भी कहते हैं।

पात्रीकर्वन्दशपुरवधुनेत्रकौतूहलानाम् । (1–47)

13. **कुरूक्षेत्र (कौरवक्षेत्र)** – यह स्थाण्वीश्वर (थानेसर) के कुछ आग्नेय कोण में अवस्थित मैदान है। यहीं पर महाभारत काजसिद्ध युद्धकाव्या

क्षेत्रं क्षत्रप्रधनपिशुनं कौरवं तद्भजेया: । (1–48)

14. **सरस्वती –** यह हिमालय से निकली हुई नदी है, जो कुरूक्षेत्र के वायव्य कोण से बहती थी। यह आजकल अदृश्य है।

कृत्वा तासामभिममपमां सौभ्य ! सारस्वतीना (1–49)

15. **जाह्वी (जह्वनुकत्या)** – यह हिमालय में गंगावतार। गंगोत्री से निकली हुई महानदी है। इसे 'गंगा और भागीरथी' भी कहते है।

जह्नो: कन्यां सगर (1–50)

16. **यमुना –** यह उत्तरभारत की एक प्रसिद्ध नदी है। इसे कालिन्दी भी कहते है।

स्यादस्थानोपयतयमुनासंगमेवाभिरामा । (1–51)

17. **हिमालय**– यह भारत के उत्तर में लगभग 1600 तोस तक फैला हुआ एक पर्वत है। इसका सर्वोच्च शिखर–नेपाली नाम 'सगरमाथा' (गौरीशंकर वा माउन्ट एयरेस्ट) 29000 फीट ऊँचा है।

तस्या एव प्रभवचलं प्राप्य गौरं तुषारै: (1–52)

18. **कौञ्चपर्वत** – यह पुराण में प्रसिद्ध एक पर्वत है, कार्तिकेय ने जिसका निदारण किया है।

हंसद्धारं भृगुपतियशोवर्त्म यत्कोञ्चरन्ध्रम् ।। (1–57)

19. **मानस**– यह कैलास पर्वत के निकट ब्रह्मा जी से निर्मित एक सरोवर है। इसे मानवसरोवर और हिन्दी में मानसरोवर कहते है।

हेमाम्योजप्रसवि सलिलं मानस्याद्दान: । (1–11–62)

20. **माल** (1.16) मल्लिनाथ ने इसे पर्वत के समानउन्नत स्थल लिखा है। कुछ लोग इसे मध्यप्रदेश में रत्नपुर के कुछ उत्तर भाग में अवस्थित 'माल्दा' नामक देश कहते हैं।

सद्य: सीरोत्कषण सुरभिक्षेत्रमारूह्य मालं
किञ्चित्पश्चाद् व्रज लघुगतिर्मूय एवोत्तरेण ।। 1/16

21. **नीलगिरि**–यह संभवत: विदिशा (मिलसा) का निकटवर्ती कोई पर्वत है –

नीचैराख्यं गिरिमधिवसेस्तत्र विश्रामहेता
स्वत्संपर्कात पुलकितमिव प्रौढ़पुष्पै: कदम्बै:।। 1.25मेघदूत

22. **निर्विन्ध्या**– यह विन्ध्य पर्वत से निकली हुई एक नदी है।

निर्विन्ध्याया: पथि भव रसाभ्यन्तर: सन्निपत्य
रूत्रीणामाद्यं प्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रियेषु ।। 1/28

23. **विशाला** उज्जयिनी का वर्णन है।

प्राप्यावन्तीनुदयनकथाकोविदग्रामवृद्धान्
पूर्वोद्दिष्टामनुसर पुरीं श्री विशालां विशालाम् 1/30

24. **गन्धवती –** यह मालव देश में बहने वाली एक नदी है।

धूतोद्यानं कुललयरजोगन्धिभिर्गन्धवत्या –
स्तोयक्रीडानिरतयुवतिस्नातितिक्तैर्मरूद्धि: ।। 1/33

25. **गंभीरा –** यह भी मालव देश में बहने वाली एक नदी है

गंभीराया: पयसि सरितश्चेतसीव प्रसन्ने
छायात्मपि प्रकृतिसुमगो लप्स्यते ते प्रवेशम् ।। 1/40

इस प्रकार मेघदूतम् में कवि कालिदास में यक्षको दूत बनाकर स्थान स्थान में भ्रमण कराते हुए वहाँ की भौगोलिक स्थिति का भी वर्णन किया है।

****

A Comparative Study Of Professional Ethics Of School Teachers Of Uttar Pradesh

Sagheer Ahmad *

Abstract - This study was designed to compare the professional ethics among school teachers of Rampur (UTTAR PRADESH). The sample consisted of 80 teachers. Professional Ethics Scale for Teachers (Dr. Aneet Kumar and Ms. Jasmeen Kaur, 2008) was employed for data collection.The statistical techniques used were Mean, Standard Deviation, t-test. The result shows that there is no impact of type of school (Govt. / Private) and Gender on Professional Ethics of School Teachers.

Introduction -

Teaching as a profession - Teaching is often said to be the noblest profession among all the professions; teachers should realize that the work they are doing is the noblest; they need not be apologetic or feel guilty and small; instead they should have pride and confidence in their worth and work. Teaching as a profession, is under an obligation to conduct oneself in accordance with the deals of the profession. A teacher is constantly under the scrutiny of his students and society at large. As a guide for the teaching profession the code of professional ethics is described as the teaching profession is to guide children, youth and adults in the pursuit of knowledge and skills to prepare them in ways of democracy and to help them to become happy, useful, self supporting citizens. A teacher's professional duties includes not only teaching but also maintaining discipline, health and safety and other activities such as promoting the general progress and well being of individual pupils and of any class or group of pupils assigned to him: providing guidance and advice to pupils on educational and social matters and on their further education and future careers. It is the teacher who only can and who only does the function in this manner and the work of educating the young to enable them to grow fully in their entire personality is thus the highest and noblest work.

The teaching profession is distinguished from many other occupations by their uniqueness and quality of the professional relationship among the teachers. Professional ethics in teaching profession is more important since the professionals involved in this are engaged in preparing future generation.

Professional ethics - The word Ethics derived from the Greek word "ethikos" which in itself derived from the Greek word "ethos" meaning custom or character. Ethics is commitment to high order moral values and ability to distinguish right from wrong.

Professional ethics are the codes of conduct established by professionals to govern ethics emphasize on ideals rather than rules that is on comprehensive harms that generate specific rules or alternatively concrete objectives or even modes of being for the professional as circumstances dictate. Professional ethics are a set of moral principles and standards of conduct supporting the moral prestige of professional group in society. The task of the professional ethics is to identify moral standard and assessments, judgments and concepts, characterizing people as representative of a particular profession. Professional ethics refers to the basic values and conceptions of good practice that constitute guidelines for professional conduct. Every profession has different work culture and work climate and accordingly the professional ethics are decided by the society; it is also the contribution of great exponents of the same profession. It is mainly to provide a guideline and also to judge any professional individual. The definition and parameter of profession ethics varies from society to society and from time to time; it is dynamic in nature; with change in social setup, pattern and dimension of the society, the ethics also change. In fact the professional ethics differs from place to place and hence there is not distinct line to distinguish ethics. What govern any ethic are social benefit, more correctness, truth, value and progress of mankind.

ACM Code of Ethics defines professional ethics as honesty in professional dealings; giving due credit for other people's ideas and not claiming credit for work that one have not done.

Like all important professions, teaching profession should have its own professional ethics, which is one of the basic requirements and characteristics. A code of professional ethics when properly enforced enhances the power, prestige and statues of the teacher in particular and of the teaching profession as a whole. A code of professional ethics is in fact a charter of rights and duties for the protection of professional autonomy and freedom. Teacher's organizations should formulate and enforce this in their own interest and for improving the quality of education. The constructive progress in this direction can develop a positive

* Research Schloar (Education) Monad University, Hapur (U.P.) INDIA

attitude of the teachers as well as of the society towards the teaching profession. This can ensure development of a high degree of recognition regard and social status of the teaching profession so that true professionalism can emerge in the long run.

Need and significance of the study - A teacher is always a student; a seeker of knowledge. A teacher is not merely a teacher but he is more effective demonstrator through his personal life of values, attitudes, outlook, behavior and performance. By following, professional ethics, teacher's conduct and behavior become respectable and socially acceptable. If a teacher behaves in a very positive and appropriate manner, the students follow him and want to become like him. If the professional ethics are forgotten, the individual as well as the society start moving in the wrong directing. By following professional ethics teacher takes the society in the right direction and makes it a better place to live in. Professional ethics are a means of developing attitude conducive to responsible citizenship and to more orderly personal living. Professional ethics lie not in laws and government but in the honesty and moral responsibility of the teacher.

The present study is an attempt to study the professional ethics in teachers for the development of society and to set up ideal for students. This study may help to understand about the sincerity of the teachers towards their profession and to what extent the teachers follow the professional ethics.

Objectives -

1. To Compare the mean scores of Professional Ethics of Teachers of Government and Private Schools.
2. To Compare the mean scores of Professional Ethics of Male and Female School Teachers.

Studies Related to Professional Ethics - Mouli and Reddy (1990) concluded in their study 'Attitude of Teachers towards Teaching Profession' that there is no difference among school teachers in their professional ethics.

Tichenor and Tichenor's (2005) study found that teachers do have high standards, ideals and expectations for themselves and their colleagues and believe that certain characteristics separate professionals from others.

Gnanndevan (2006) indicated in his study 'Attitude of Teachers towards Education Innovations' attitude of teachers towards professional ethics is highly favourable.

Kingra (2006) conducted a study on 'Professional Ethics and values in Teacher Education' and found that a great teacher can motivate his or her student to perform. The teacher should be one who has great knowledge of values and ethics, which he practice in life.

Deepika (2009) concluded in study on 'Professional Ethics among College Teachers' that 43.5% of college teachers have low professional ethics and there is a significant difference between professional ethics of male and female college teachers but no significant difference was found between professional ethics of permanent and adhoc college teachers.

Hypotheses -

1. There exists no significant difference in the mean scores of professional Ethics of Teachers of Government and Private Schools.
2. There exists no significant difference in the mean scores of professional Ethics male and female Teachers.

Design of the study - Descriptive survey method was used in this study. School teachers have been taken from the Government and Private schools of Rampur (UTTAR PRADESH) to compare the Professional Ethics among them.

Sample - The sample of the present study was comprised of 40 teachers of. Government and Private schools of Rampur (UTTAR PRADESH). Equal number of male and female School teachers has been taken.

Professional Ethics Scale for Teachers (Dr. Aneet Kumar and Ms. Jasmeen Kaur, 2008) was employed for data collection in the present study.

Statistical analysis -

Hypothesis 1 - There exist no significant difference in the mean scores of Professional Ethics of Teachers of Government and Private Schools.

Table 1 (See the next page)

Table 1 represents that the mean score of Professional Ethics of Government School teachers are 19.30, SD is 5.07 and Private School teachers are 20.90 and S.D is 4.69 with $S.E_D$ is 1.092 and t-value is 1.47 which is non significant at .01 level of significance. This means that there is no significant difference in Professional Ethics of Government and Private School teachers.

Hence, the hypothesis that there is no significant difference in Professional Ethics of Government and Private School teachers is accepted.

Hypothesis 2 - There exist no difference in the mean scores of Professional Ethics of Male and Female Teachers.

Table 2 (See the next page)

Table 2 shows that mean score of Professional Ethics of Male School teachers are 20.60, SD is 4.88 and Female School teachers are 19.60 and S.D is 4.97 with $S.E_D$ is 1.100 and t-value is 0.91 which is Non Significant at 0.05 and 0.01 level of significance. This means that there is significant difference in Professional Ethics of Male and Female School Teachers.

Hence, the hypothesis that there is no significant difference in Professional Ethics of Male and Female School Teachers is accepted. These results go incompatible with the result of the study done by Deepika (2009) who found that female teachers are more professionally ethical than male teacher.

Conclusion - There is no significant difference in the mean scores of professional ethics of teachers of Government and Private Schools.

1. There is no significant difference in the mean scores of professional ethics of Male and Female School Teachers.

Educational implications - The success of any system of education depends on the quality of its teachers. There is no profession, demanding and so rich in potentialities as the profession of teaching. A teacher who begins his professional life with a strong commitment and sense of responsibility ahs to face many challenges to handle these challenges tactfully. The teacher needs a desirable code of ethics.

Professional ethics are indispensable part of any profession. Professional ethics helps in increasing efficiency of the professional. This study will help to understand about the sincerity of the teachers towards their profession and to what extent the teachers follow the professional ethics. From the results we found that the female college teachers have more professional ethics than male college teachers. This study will help the male teachers to know the degree of their ethics and to develop ethics in themselves.

From the result we found that the professional college teachers have more ethics than the non professional college teachers. This study will help the policy makers to organize workshops and in service training opportunities on professional ethics to inculcate the code of ethics among teachers of non-professional colleges.

The administrators and educationist should pay attention to the ethics of teachers as the ethics can decrease or increase the efficiency of teachers which in turns affect the entire education system.

Suggestions for further study - The interested investigator may undertake any of the following suggestions for further study.

1. The study can be conducted in other states of the country.
2. Large sample can be taken to make results more reliable.
3. The sample study can be conducted on the college teachers and other professionals like principals, doctors, engineers, pre-service or in-service teachers and lawyers etc.
4. The study can be conducted in relation to various variables like personality, anxiety, attitude, school or college environment etc.

References -

1. Deepika (2009) A study of Professional Ethics Among College Teachers, Unpublished M.Ed. Dissertation, Panjab University Chandigarh.
2. Gnanadevan R. (2006) Attitude of Teachers towards Educational Innovation. EDUTRACK, Vol. 5 (5).
3. Pivar, H. W. (1995) business. (books.google.com)
4. Kingra, K. (2006) Professional Ethics and Values in Teacher Education. EDUTRACK, (2006) Vol.5, No.7.
5. Mangal, S.K.(2008) Advanced Educational Psychology, New Delhi PHI Learning Private Limited.
6. Mauli, R.C. and Attitude of Teachers Towards Teaching
7. Tichenor, J. (2004-05) Professionalism, Professional Educator, Vol. 27, No. 1&2: 89-95. http://en . wikipedia. org/wikiProfession.

Table 1
Showing the difference between mean scores of Professional Ethics of teachers of Government and Private Schools

Categories	N	Mean	S.D	SE_D	t-value	Level of Significance
Government Teachers	40	19.30	5.07	1.092	1.47	Non Significant at any Level
Private Teachers	40	20.90	4.69			

Table 2
Showing the difference between mean scores of Professional Ethics of Male and Female teachers

Categories	N	Mean	S.D	SE_D	t-value	Level of Significance
Male teachers	40	20.60	4.88	1.100	0.91	Not Significant at any Level
Female teachers	40	19.60	4.97			

****

Pedagogical Reforms In Teacher Education : Need Of The Hour

Dr. Rashmi Sharma *

Abstract - The present paper is tried to show the condition of teacher education. Today our stream is grow in large scale, but this growth is in number not in quality. There is no one to one correspondence between theory and practices. In teacher education, there is need to introduce new reforms in pedagogy. Teacher educators in our country are generally averse to innovation and experimentation in the use of methods of teaching.
Key Words - Teacher Education, Pedagogy

Introduction - The ultimate aim of any teacher education programme is to prepare teachers, who can initiate desired learning outcomes among school children by optimizing the resources. Any teacher education program is supposed to induct prospective teachers and attempts to transform them into competent and effective teachers. The role of pre-service teacher education is crucial and critical in addressing the emerging challenges.

Efficacy of pre-service teacher education, to fit pre-service teachers for emerging challenges is based on certain premises. Presage, process and product aspects of pre-service teacher education play an important role in determining the quality of its products, which in turn defines the quality of whole teacher education programme. It is rightly said that the beauty of a building is from the strength of its foundation. In order to bring quality in teacher education the colleges of education should fulfill the basic requirements.
The contention that teachers are born, not made, can be true only in a few, rare cases. It is also not contended that training, by itself, is sure to make a teacher. But it is generally observed that a teacher with training becomes more mature and confident to perform his task more efficiently. Proper training and education enables the teacher to have knowledge of how children grow, develop and learn how they can be taught best, and how their innate capacities can be brought out and developed.

The National Commission on School Teachers (1983-85) lamented: "what obtains now in the majority of our Teacher colleges and Training institutions are woefully inadequate and in the context of the changing needs of India today."
The UNESCO document "learning to be" (1972) made the following comments on teacher education 'Pedagogical training must be grieved to knowing and respecting the multiple aspects of human personality. It emphasizes on 'What was once an art – the art of teaching is now a science, built on firm foundations and linked to psychology, anthropology, cybernetics, linguistics and many other disciplines. UNESCO recommends that "condition in which teachers are trained should be profoundly changed, so that they essentially becomes teacher educators rather than specialists in transmitting pre-established curricula; the principle of a first accelerated training stage, followed by in-service training cycles should be adopted".

The gap between the methods discussed in the college during pre-service training and the methods practiced in real schools, need to be filled. Shri K.G. Saiyadin has remarked that practice and theory must both be visualized as growing entities; theory illuminating practice and practice constantly modifying theory. In teacher education institutions, emphasis is given on theory. The trainees get little time for practical work. The colleges of education may recast and reframe the programmes on the basis of the image of the teacher we want to produce for future. Shall we inspire the creative teacher by providing healthy practices in Teacher Education, we must notice whether teacher trainees are acquiring communication skills and innovative attitudes and they must refresh themselves with the day-to-day increase of knowledge of their subjects. The trainees are "trained to train" children and not "educated to educate" them so, tomorrows teacher has to translate the national goals in to educational actions.
Teacher Education - Teacher education is defined as "a set of phenomenon deliberately intended to help candidates to acquire knowledge, skills, dispositions and norms of the occupation of teaching." Though the definition emphasizes deliberately planned phenomenon many unplanned or incidental factors impinge upon them that may contribute to the nature and consequences of candidates.

Dictionary of Education (1973) defines teacher education as "All formal and informal activities and experiences that help to qualify a person to assume the responsibility as a member of the education profession and to discharge his responsibility most effectively"
Teacher Education: Status - The curriculum of teacher education are rigid, stereotyped and divorced from the realities of schools and national life. The courses adopted are more than a quarter century old. They embody a course

* Principal, Bhartiya College, Ujjain (M.P.) INDIA

content that is not helpful in preparing an effective teacher. The theory courses in particular have no articulation with the practical work and teaching skills requirements. The application of theory to practice leaves enough room for revision and reconstruction. The methods of courses are routine and wanting in practical bias. The practice teaching course as prescribed has assumed the form of a meaningful ritual and its carry over potential in the development of handling instructional problems in actual classroom is very poor. Vitality and realism are lacking in the curricula and programmes of work in the training institution.

Teacher educators in our country are generally averse to innovation and experimentation in the use of methods of teaching. They have shown a remarkable allegiance to the traditional method of instruction 'Lecturing and notes dictation'. Their acquaintance with modern classroom communication devices is inadequate. In many cases the lectures are dull monotonous and uninspiring. As a consequence of this the student teachers can only talk about the methods but are not competent to use them. The various logical and psychological operations involved in the act of teaching are indicated in an incoherent way. The methods media and materials that are used in teacher training institutions are not relevant, economical and practicable in day-to-day life.

The entire teacher education programme is so designed that little emphasis is laid on the development of professional attitude. The poor quality of teacher educators coupled with substandard provision of facilities is largely responsible for the lack of vigorous and dynamic programme on the campus. As a result professional ethics are not developed.

That teacher education both at primary and secondary level has become isolated from schools and current developments in school education. The methods of teaching followed in schools are totally different from those advocated and implemented in teacher education departments. Not much effort has been put in to fill the gap between what schools practice and what teacher education departments strive for. There is isolation among the teacher education institutions as well as these institutions and schools. Practice teaching is mechanical, ritualistic and superficial without necessary involvement and understanding of pupil teacher. Supervision of practice/ student teaching is perfunctory, biased and subjective.

Pedagogy - Pedagogy, the art or science of being a teacher , generally refers to strategies of instruction, or a style of instruction. The word comes from the Ancient Greek (paidagôgeô; from (child) and (lead)): literally, "to lead the child". The Latin-derived word for pedagogy, education, is nowadays used in the English-speaking world to refer to the whole context of instruction, learning, and the actual operations involved with that, although both words have roughly the same original meaning. In the English-speaking world the term pedagogy refers to the science or theory of educating.

Pedagogy is also sometimes referred to as the correct use of teaching strategies. In correlation with those teaching strategies the instructor's own philosophical beliefs of teaching are harbored and governed by the pupil's background knowledge and experiences, personal situations and environment as well as learning goals set by the student as well as the teacher.

Reform's Need ? - Regarding the need of the Pedagogical reform National Science Education Standards (NSES) (1996) states "Implicit in this reform is an equally substantive change in the professional development practices at all levels. Much current professional development involves traditional lectures to convey science content and emphasis on technical training about teaching." Teacher's value added is related to his/her academic aptitude. It is there for troubling that teacher's aptitude has declined significantly [Cocoran, Evans and Schwab (2003)].

During last few decades' teacher education has expanded a lot but in the process of expansion it has lost its quality. In this race of quantitative expansion most of the colleges of education became like shops to get degree. Colleges of education do not possess required facilities, which in turn affects the quality of its products. Prospective teachers lack in required professional skills and competencies to perform their emerging roles.

Hewson &Hewson (1988) emphasized that the separation occurred when prospective teachers learned pedagogy apart from subject matter. Balk & McDiamid (1990) more recently teacher preparation has shifted its forms primarily to pedagogy, often at the cost of content knowledge. Darling Hammand (1991) demonstrated that teachers admitted to the teaching profession through alternative programmers had difficulty with pedagogical content knowledge and curriculum development.

Cochran, king & Deruiter (1991) stated that the professional preparation of science teachers was often separated or disjointed. Some science education reform efforts have errantly began to bridge the gap between pedagogical and content aspects of science teacher preparation by advocating the development of a cohesive knowledge base (Doster jackson & smith 1994).

The observations done by the author will make the situation very clear with the help of figures.

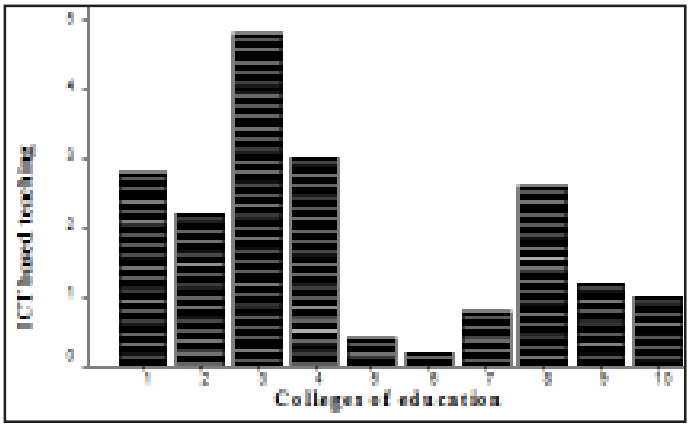

Fig. 1: Showing status of colleges under parameter student teachers developing for ICT based teaching learning.

Fig. 1 shows that the colleges of education are not paying much attention towards preparing student teachers for ICT based teaching learning as in most of the colleges observed the level of preparing student teachers for ICT based teaching is below satisfactory point,

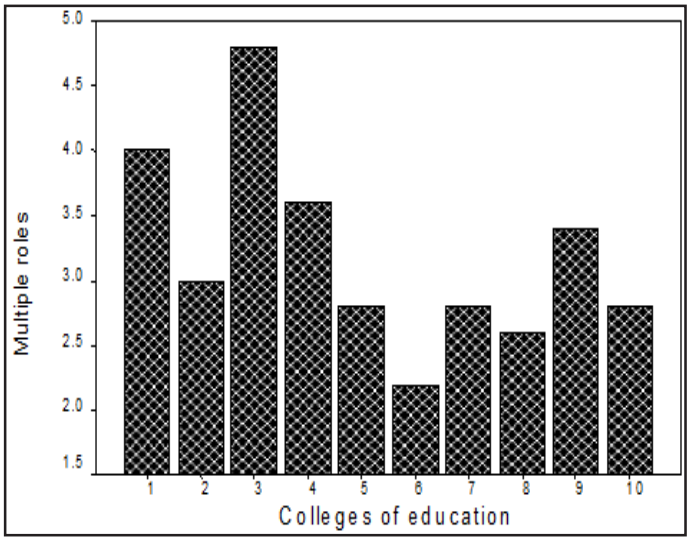

Fig. 2: Showing status of colleges under parameter student teachers developing for multiple roles.

Fig. 2 shows that curricular practices of teacher education are not helpful for student teachers to a great extent prepare them for multiple roles(research and innovations.

As a whole it can be said that integration of emerging parameters is a challenging task for the colleges of education. The situation is need to be improved otherwise present teacher preparation programmes will fail to produce fit teachers according to demands in this changing world. Hence there is need to revitalize teacher education with reference to modified standards for recognition of colleges of education in order to have a check on mushroom like growth of colleges of education and to introduce innovative approaches according to emerging trends.

"Teaching is about knowing..." (Harrington, 1994,), not just knowing about content and the teaching of content but also about self and how to know and how to use this knowledge. Teachers construct their knowledge built upon previous knowledge. Coupled with experience, their knowledge transforms and evolves. It has been acknowledged, "teachers have a knowledge of teaching far more complex than subject matter knowledge or knowledge of teaching techniques" (Beattie, 1995,). (Beijaard and Verloop, 1996; Elbaz, 1983) have termed this as the teacher's practical knowledge. Practical knowledge refers to "these kinds of knowledge, as integrated by the individual teacher in terms of personal values and beliefs and as oriented to the practical situation" (Elbaz, 1983,). In other words, practical knowledge determines or guides a teacher's actions in practice.

References -

1. Aderito, J. & Guterres C.(2007). "Approaches to teacher education at the English department of the faculty of teachers training and education at university of east Timor." University of East Timor, Indonesia.
2. Arora, G.L. (2002). "Teachers and their teaching: Need for new perspectives." Ravi Books, Delhi.
   Choong, Kam, Foong(2007). "Trainer Training for Change: A Reflective Approach to Teacher Education." Ministry of Education, Malaysia.
3. Dunkin, M.J. (1987). "The international encyclopedia of teaching and teacher education." Pergamon Press, Oxford.
4. Frank, B. Murray (1996). "The teacher education handbook: Building a knowledge base for the preparation of teachers." Jossey – Bass publishers, San Francisco.
5. Huang, Taiquan(2007). "An approach to teacher education: How do we train students to be qualified English teachers?" Sichuan Normal University, Chengdu, Sichuan, China.
6. Huitt, W.(2006). "Overview of classroom processes." Educational Psychology Interactive Valdosta, GA: Valdosta State University. http:/chiron.Valdosta.edu./whuitt./col/ process/class.
7. Lehri, G.K. & Nagpal, S.(2004). "Pedagogical reforms through transactional strategy: Step towards a paradigm shift." Journal of Indian Education, Vol. XXXIX, No. 4, Feb. 04. NCERT, New Delhi.
8. Misfud, Charles(2007). "Paradigms and dimensions of teacher: The role of practice teaching." University of Malta.
9. Pillai, S. A.(2004). "Impact of practicing schools on quality teaching practice of teacher trainees." Journal of Indian Education, Vol. XXXIX, No. 2, Aug. 04, NCERT, New Delhi.

****

The Impact Of Madhaysth Darshan Based Value Education In Human

Heena Chawda *

Abstract - focuses on what a human being is, what is purposeful and meaningful for him- what is the aim of human being and his life and how he can meet this aim, this purpose. The students need to have this confidence in order to be able to proactively set their own goals. If the goal is set proactively (and not by default 'peer' pressure) the motivation comes from within and the rest follows- in terms of his commitment, untiring effort leading to success in achieving his aim, and his purpose of life. All levels- individual, family, society, nature & existence of human living. That is, it must have a clear understanding of each of these and their interrelationship i.e. harmony underlying all of them. Our problems today are on account of man. The rest of existence is already in co-existence. i.e. the environmental problem, the problem of economics, of relationship, of sectarianism, social problems, problem of corruption, problems in relationships, problems in the self, conflicts, together called 'unhappiness' are *due to man*. The contradictions are not outside; they are within man, due to a lack of understanding, incorrect assumption of reality (delusion). Hence, we need to work on man. This is possible by means of education of consciousness-development, human values. Madhyasth Darshan: Co existentialism (Value Education) has proposals for the knowledge needed to demystify the human being and existence, thus opening up the possibility for a just and humane order, of a desirable human tradition that meets the human objective or goal.
Keyword - Madhaystha Darshan, Co existence, Value Education All levels- individual, family, society, nature & existence of human living, Universally, Understanding, The 'Human purpose' in existence has been understood**.**

Introduction - Madhyasth Darshan [existence based human focused contemplation], 'Co existentialism' or (Value Education) is a new development in human understanding. It has come about via original existential exploratory-research by A Nagraj of Amarkantak, India and has no connection with past ideologies and beliefs. It proposes on reality, existence and the nature of the human being, covering all aspects of human understanding and living. It is being presented here as an 'Alternative' to Materialism and Idealism*(Spiritualism, Pantheism, Super-Naturalism)* for evaluation and study by mankind. It has solutions to humankind's questions & problems.

An Alternative proposal for humankind on the basis of "Madhyasth Darshan | Sah-Astitv-vaad" or Value Education (*Propounded by A Nagraj, Amarkantak, Anuppur, Madhya Pradesh, India),* All humans to date have desired well being or goodness. Well being or 'goodness' however, has not yet been established. The reason for this is humans have lived in the purview of 'animal-consciousness'. In an effort to live better than animals, man has achieved progress in the areas of food-shelter-decoration & radio, transportation & television. In contrast to this progress, crimes have been assumed to be legitimate and all humans (scholars, scientists, and the rest) have become trapped in such misdeeds.The proof of this is the mentality of excess-consumption, excess-profit and excess-carnality in education and society. In order to fulfill these obsessions, the methods of 'accumulation of comforts' and 'conflict & wars' have been adopted due to which the earth itself has now become ill. Humans can be seen today to be partaking in all kinds of violations and as a result, the very continuation of humankind on this planet is now under question. Madhyasth Darshan Sah-Astitv-vaad ('*realistic-view of Mediation, Co-existentialism'*) or Value Education is being proposed here as an 'alternative', by which freedom from such criminal mentality, freedom from ignorance (delusion) and freedom from communal mentality between peoples is possible. This is to inform you that:

- **"Co-existence has" now become study-able**. Entire existence has been understood, experienced, realized as physiochemical (insentient) and conscious (sentient) nature (matter) saturated in a '*pervasive-entity'* which we currently identify as '*space' or 'void'* and is Omnipresent (all-pervasive). 'Space' itself is Omnipotence (energy in equilibrium) and is permeating & transparent. 'It' (space) is thus not 'nothing'; it is not '*activity'*, but *exists*, is a '*reality'* & hence an *entity*.
- **The human-being has been understood** as being the combined form of a conscious unit and a physiochemical body. The conscious unit has been understood as consisting of 10 activities (5 'potentials' and 5 'forces') and given the name 'jeevan'. The nature of 'consciousness' has been understood.
- **The 'Human purpose' in existence has been understood** and man's 'being' and 'living' has become clear. Universal human conduct, universal human values and universal human religion* and race have been understood. (**religion = dharma =adherence = inseparability*) **The Proposal** Besides the human, the rest of the three 'natural-orders' on this earth: 'material-order' (soil, stones), 'respiration-order' (plants, *praana*) and 'animal-order' are complementary amongst themselves and for man. They are in self-orderliness and participate in the overall orderliness. Man is the only one that is not in self-orderliness and creating havoc with the other three 'natural-orders'. The basic reason for this is ignorance or lack of knowledge (delusion) as a

* **Teaching Assistant – Value Education (Humanities and Social Science) National Institute of Technology, Raipur (C.G.) INDIA**

result of which man is living in the purview of 'animal-consciousness, in which the 'object' of our living is 'food, sleep, fear and coitus' via gratification of the 'five senses'. Our predominant individual and social efforts today are in this direction. It is an incorrect-assumption/wrong-understanding of existence, of reality that has lead us to believe that there is struggle and chaos in existence. The reason for is the contradictions within us, the seer, due to which it seems like there is struggle in existence, whereas there is none. The cause for this, and for all our problems is living in 'undeveloped-consciousness' or 'animal-consciousness' or 'delusion' in which we use only partial-faculties in the Self or conscious unit. Whereas, via the method of study and evidenced-realization in existence; every human can have 'understanding', by which he becomes 'resolved', lives in 'developed consciousness' and hence happy. By which the universal human goal of:

- Intellectual resolution in every individual (*leading to happiness*)
- Intellectual resolution & material prosperity in every family (*leading to happiness & peace*)
- Undivided-ness in Society – fearlessness and mutual trust (*leading to happiness, peace & satisfaction)*
- Universal Orderliness, balance in nature (*leading to happiness, peace, satisfaction & bliss*)

can be established (evidenced) on this earth, which is the identity of a crime-free, delusion-free human race. Efforts to bring this understanding into education have begun in India. Today's culture, civility, norms and systems are working to maintain the aforementioned criminal-mentality and misdeeds. This being true, all our efforts for peace & harmony thus end up being in the *same domain* in which the *problems themselves exist*. As an alternative to this; *humane* culture, *humane* civility, *humane* norms and *humane* systems are being proposed. An alternative to current education, alternative to the current constitution of national-states and alternative to human systems are being proposed; in which there is coherence between education, conduct, the constitution & systems.

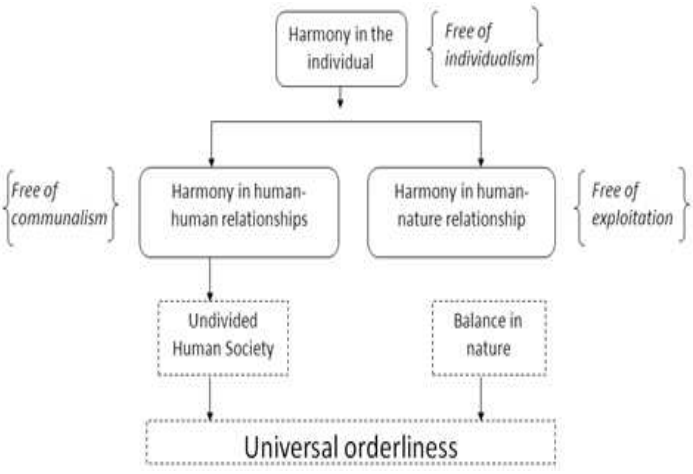

The present scenario of conflict amongst humans and between humans and nature is a result of delusory thinking and mentality arising out of living in the purview of animal-consciousness. It is possible to uproot this via 'consciousness development' for which the following is necessary:

- Understanding of existence as coexistence: by way of 'knowledge of *realistic-view* of existence' (**darshan* = *realistic-view*)
- Understanding the conscious aspect in the human: by way of 'knowledge of Jeevan' (**Jeevan = name for conscious unit," Self"* commonly referred to as 'I')
- Understanding human purpose and definite human conduct (human-human relationship & human-nature relationship): by way of "knowledge of humane conduct" or 'innate human nature'.

We Are Facing Many Kinds Of Problems - corruption, exploitation, and violence in society, strife in family, and lack of satisfaction in the self.

1. What are the current problems a reflection of? The source of current problems seems to be an emphasis on physical facilities, glamour, consumerist lifestyle, and a false sense of satisfaction in competition and one-upmanship ('neighbours envy - owner's pride'). The focus on the external things leads to ignorance about the concerns of the self. It leads to a blind race for wealth, position and jobs. Many times, in spite of achieving ones goals, the individual remains dissatisfied - jobs and positions that are intellectually and mentally unfulfilling, and wealth that breeds chaos in family, problems in society, and imbalance in nature.

Physical facilities are needed to lead a proper life; however, there is a need to examine how many physical facilities are needed and what is their role? It is also important to ask the question - besides physical facilities, what else is important in human life? The lack of attention to relationships leads to strife in the family, in spite of all the worldly successes. It is the human relationships and human values that are a source of our perennial happiness. We all possess the human values inherently, and what is needed is to bring them out in each one of us. The workshop addresses the self in the human being. It draws attention to human needs - need for human relationships, inherent desire to seek knowledge, and the joy that we naturally derive from these. In our current situation, we might be seeking different things. Thus, it brings about a dialogue between what we are and what we want to be. It does not posit happiness in an after-world, but here and now, based on "humanness" common to all human beings. The approach is rational, secular and universal.

1.1. Young students in engineering -The Value Education Class (Workshop) was included as a compulsory part of the academic curriculum at NIT Raipur, IIT Kanpur and IIIT Hyderabad last year. It has led to a major rethinking among the second year and first year students. They have been reflecting on what their goals are, the place of money in life, the joy one derives in relationship, and in seeking knowledge and not merely on jobs and the money they get out of it. They have become relaxed in their self, and become more sensitive to relationships with their friends and family, and regarding society and nature.

1.2. People from different walks of urban life-People from different walks of life are affected by the workshop. Many realize the lack of time they give to their family in their

relentless pursuit of wealth, and even more importantly, the way they behave with their children, spouse or old parents. Many such people are affected profoundly and come back to further workshops with their family members, again and again.

1.3. Criminals in jail -The workshop touches criminals in jail most directly. Those who are seething with revenge, slowly start realizing that in fact their "enemies" are not bad. They are to be pitied and not hated. In turn, they themselves get depressurized and relaxed. This eventually gets reflected in their day to day behaviour with other jail inmates and with jail authorities. Bilaspur and Raipur jail experience shows that some of the most violent criminals with also the worst behaviour inside the jail got totally transformed.

1.4. Social workers from NGOs- People working for uplift of downtrodden in rural and urban areas are greatly affected by the workshop. It dawns on them that along with work on employment generation, agriculture, irrigation, health, sanitation, scientific tempers, it is also important to work on "understanding" of the self and on relationship, without which their work and successes are short lived.

1.5. Farmers and rural folk -Rural folk today are in a state of demoralization. They are being told that they are backward, and need to be developed; that they are ignorant and do not know what is good for them; that they need to study English and IT without which there is no future. The present political structure and political parties has led to a breakdown of the community decision making. High powered marketing along with TV has led to a loss of community life and led them to yearn for Pepsi and the "luxury of city life". They do not realize what they possess - clean air, clean water, and a stronger possibility of a wholesome life with fulfilling relationship in family and community. Experience of rural people who attend the workshop has been that they feel a sense of empowerment regarding themselves and what they can do at their own place. Rather than treating farming as an unworthy activity, they see value in what they are doing. The importance and necessity of physical labour for all, comes out as a corollary. Established business men who have done the workshop have taken up sustainable or "zero-input" farming where all the required resources for farming is generated from farm land it. Several experiments in renewable energy are also in full swing. They are deriving happiness out of farming and physical labour.

1.6 People with spiritual background-People with spiritual background usually take time to come to terms that one can talk about "human values" without bringing in elements from mystery or unknown. Many are elated at this discovery. People from different faiths - Hinduism, Buddhism, Sikhism, Islam, Christianity - have started getting deep into a process of self-exploration after doing the workshop, and are able to see that the human values can be derived through this process of self exploration by each one of us and are the same as professed by their respective faiths.

The Human Purpose (The Human Goal) -

- We all want to attain all that is possible for a human being
- It is an inside-out process through which the human being understands and fulfills his relationship with all entities in Existence **Co-existence-** Ever-enriching, sustainability in Nature, **Trust -** Complementarily, Justice, fairness in Society, **Prosperity** and mutual fulfillment in the Family, **Self:** A state of being resolved.

Current living (see in next page)

Value Education-Proposal (see in next page)

Process Of Value Education - • The process has to be that of Self - Investigation & Self - Exploration, and not of giving sermons or telling dos & don'ts. Whatever is found as a truth or reality may be stated as a proposal and every student may be able to verify it on their own right.,

- This process of Self- Investigation & Self-Exploration has to be in the form of a dialogue - a dialogue between the teacher & students to begin with and within the student finally., The subject that decides on "what is valuable?", what is of value for human being is called Value Education.

Evaluating A Philosophy (Suggestions And Findings) - There are many philosophies and systems of living that are available to us. How do we evaluate these systems and determine which can guide us best in living our life? This note seeks to provide some benchmarks for evaluating a philosophy.

1. **Fundamentals:** A good philosophy addresses issues at the most fundamental levels of existence. It motivates us to ask the most basic questions about ourselves. Who are we? What is the purpose of life? How can we fulfill this purpose? A complete philosophy would be one that provides satisfactory and acceptable answers to questions like these. The idea behind this is that if the fundamental issues are sorted out, dealing with the grosser particularities of life is rendered easy. On the other hand, if the fundamentals remain nebulous then we are forced to deal uncomprehendingly with the grosser, more Conspicuously manifest problems of life that confront us every day.

2. **Understanding versus Faith/Belief:** A philosophy based on understanding is more likely to be acceptable than one based merely on faith/belief. Indeed, we take recourse to faith/belief only when we do not understand something, or when we believe something to be somehow beyond our conventional ways of understanding. A good philosophy would be one that makes no demand upon our faith/belief and is based on explanations that we can understand.

3. **Communicability:** The best philosophy in the world is likely to be of little use if it is not easily communicable to people. If accessing the philosophy requires difficult regimes of discipline or acrobatic feats of the body or mind, then the utility of the philosophy gets reduced. An ideal philosophy would be easily communicable to any ordinary person without requiring any special abilities.

4. **Universality:** The more culture-specific a philosophy is, the less likely it is to appeal to a wider cross-section of people. Thus a good philosophy would be one which would be universal in appeal and applicability, across cultures and civilizations.

5. **Solutions versus Relief:** An ideal philosophy must lead to a programme of solutions rather than a programme of relief or respite.

6. **Reliability** (Existential): A good philosophy must be realizable in the individual. That is, the possibility of the philosophy being manifest in the lives of each and every individual must appear clear and evident.

7. **Feasibility** (Social): A good philosophy must be socially and logistically feasible; and it must be demonstrably so, without any repressive or coercive methods being used.
8. **Open Source:** Like good software, a good philosophy must be open source, so that once the fundamentals are understood, anyone can participate in the process of developing, creating documentation for, and applying that philosophy.

References -

1. A. Nagraj, 1998, Jeevan Vidya Ek Parichaya, Jeevan Vidya Prakasana, Amarkantak.
2. A. Nagraj, 1998, Samadhanatmak Bhoutikvad, Jeevan Vidya Prakasana, Amarkantak.
3. A. Nagraj, 1999, Vyavaharvadi Samajshastra , Jeevan Vidya Prakasana, Amarkantak.
4. A. Nagraj, 2002, Avartanshil Arthshastra, Jeevan Vidya Prakasana, Amarkantak.
5. A. Nagraj, 2003, Manav Vyavhar Darshan, Jeevan Vidya Prakasana, Amarkantak.
6. A. Nagraj, 2004, Manav Karam Darshan, Jeevan Vidya Prakasana, Amarkantak.
7. A. Nagraj, 2007, Manviy Sanvidhan Sutra Vyakhaya, Jeevan Vidya Prakasana, Amarkantak.
8. Samadhan- Technical Education in the Light of Universal Values, 2006, NIT Raipur and Abhuday Sansthan Achhoti Durg.
9. Co-existence-National Convention on Value Education through Jeevan Vidya, 2007, IIT Kanpur, IIIT Hydrerabad, IIT Delhi.
10. RR Gaur, R Sangal, GP Bagaria,2010, A Foundation Course in Human Values and Professional Ethics, New Delhi 110028.
11. .www.madhaystha.darshana.com, www.jeevan.vidya.com, www.value.education.com

Current living

What we	Goals	Methods	Results
Not always very clear Or at best,I should feel good	•SensoryPleasures •Materialacquisition •Attentionfrom others •More andmore of theabove	•**More Money**,Power, Position,Looks than others • SensoryIndulgences • And, symptomsuppression as ameans to alleviateproblems	• **Individuals**–' Unhappy Haves'& 'Unhappy Have-nots', –Problems of purposelessness, loneliness, lack of clarity, ill-health, depression are universa • **Families**–Material fulfillment is the primary aim of the union, –Material symbols gain primacy, –Differences of opinion, lack of trust,polarities– Neglect of emotional requirements • **Society**–Socio-economic classes– Full of conflicts, –Fear, lack of trust, exploitation dominatesinteractions between man and man • **Nature**–Exploited! bused!Polluted! The earth's cosystem is on the brink of disaster.

Value Education-Proposal

What we	Goals	Method	Results
Lasting Happiness	Harmony at all evels of life: l•Individual •Family/Interper--sonal relationships •Society •Nature	•**Completing our Understanding** And living out or actualizing theCompleteUnderstanding	• **Individuals**– Resolved,– Social, –Self-reliant • **Families**– Prosperous, – Continuity of feelings of trust, respect, love. etc • **Society**– Just, equitable, –Mutually fulfilling roles, –Trust, security, fearlessness • **Nature**– Harmony, Co-existence– Balance in nature

The Study Of Mental Health Among Secondary School Students Belonging To Joint And Single Families

Deepak Pancholi *

Abstract - Present study was undertaken to examine the mental health among Children of Joint and single families. For that purpose 120 students of class X were selected from stratified random sampling. Dr. Kamlesh Sharma's mental health scale was used for measuring mental health. Results indicated that magnitude of mental health was significantly higher of the male students than female students where as students of joint family were significantly better in terms of their level of mental health. However, no significant difference on mental health between male and female students but significant difference shows on mental health between students belonging to joint and single families.

Introduction - A man who is mentally healthy accepts the reality of his environment and adopts himself accordingly with it. Psychologists look at mental health in the form of ability of good adjustment. Persons with good mental health are free from negative emotions such as fear, anxiety and anger. Family constitutes the first world of the child, not only does it make the first physical and mental contribution to his life but by continuous, intimate, numerous and varied associations it becomes major source of education. It satisfies most of the need of the child and provides emotional experiences, which stimulate or retard the mental health of children family is a prominent. It is one of the most significant group, which are the first influencing the individual and in shaping his attitudes and behaviour pattern. There is a positive relationship between student's mental health and family pattern. Several research studies attributed a strong association between family environment and mental health.

Objectives -

1. To study the mental health of male and female students of joint family.
2. To study the mental health of male and female students of Single family.
3. To make a comparative study of mental health among male and female students belonging to Joint and single family.

Hypothesis -

1. There is no significant difference between mental health of male and female students.
2. There is no significant difference between mental health of male and female students belonging
   To joint and single family.

Delimitation - The present study has been delimited to the following conditions -

1. Only 10th standard passed out students were included in the study.
2. The area of study have confined to the Udaipur district.
3. The age group of the sample was restricted to 15-18 years.

Method - Normative Survey method has been used in the present study.

Research tool - Dr. Kamlesh Sharma's mental health scale was used.

Sample - A Sample of 120 students who passed out 10th std. was selected by using stratified random sampling procedure from different secondary schools of Udaipur district.

Statistical techniques - The collected data was systematically classified and tabulated and tabulated was subjected to analysis. Statistical techniques used such as mean, S.D. and 't' test.

Analysis of the data -

S. No.	Variable	Group	N	Mean	S.D.	't' value	Signi-ficance
1.	Gender	Male Female	60	67 60	11.50 64	0.755* 09.88	No signi - ficant*
2.	Family	Joint Single	60 60	72.74 58	04.88 11.01	3.59**	Signi - ficant**

P Value=0.05=1.98>0.755*

0.01=2.62<3.59**

Analysis and interpretation: In above table the mean scores of male students shows greater mean difference (M=67) then the female students (M=64). The 't'value was found no significant C.R. = 0.755<.05 level. Thus the first hypothesis "There is no significant difference between mental health of male and female students" is accepted.

The mean scores of students of joint family shows greater mean difference (M=72.74) then the students of single family

* Research Scholar, P.G. Department of Education, Pacific Academy of Higher Education and research University, Udaipur (Raj.) INDIA

(M=58). The 't'value was found significant C.R. = 3.59>.01 level. Thus the first hypothesis "There is no significant difference between mental health of male and female students belonging to joint and single family" is rejected.

Findings -

1. There is no significant difference between mental health of male and female students
2. There is significant difference between mental health of male and female students belonging to Joint and single family
3. The mental health of male students is better than that of female students.
4. The mental health of students belonging to joint family is better than that of students belonging to Single family.

References-

1. Barry, M.M. and Jenkins, R. (2007). Implementing Mental Health Promotion. Elsevier.
2. Baumrind, d. (1991), parenting styles and adolescent development. in j.brooks gunn, r.lerner, &a.c.petersen, the encyclopaedia of adolescence (pp.746-758).
3. Best, J.W. : Research in Education, New York, Prantice Hall of India, 1959.
4. Crow, L.D. and Crow, A. (1995). Educational Psychology (3rd Indian Reprint), New Delhi; Eurasia Publishing House.
5. Dwairy, M. (2004). Parenting Styles and Mental Health of Arab Gifted Adolescents. Gifted Child Quarterly, vol.48 (4), 275-286.
6. Dwairy, M. et al. (2006). Parenting Styles, Individuation, and Mental Health of Arab Adolescents. Journal of Cross-Cultural Psychology, vol.37 (3), 262-272.
7. Educational Psychology and Elementary Statistics, Meerut: Lal Book Depot.
8. Good Brand Scates, "Methodology of Educational Research Application Century Inc."
9. Hulock, E. B. (1959). Child Development, New York McGraw-Hill - McGraw-Hill series in psychology.

****

A Comparative Study Of Mental Stress And Academic Achievement Of Children Of Divorced And Non-Divorced Parents

Deepak Pancholi *

Abstract - Present study was undertaken to examine the level of mental stress and Academic achievement among Children of Divorced and Non-Divorced parents and also to see relationship between the two variables (Mental stress and Academic achievement). For that purpose 200 students of class X were selected from stratified random sampling. Pro.K.S. Mishra and Dr. S.P. Pandey's stress scale for measuring mental stress was used to see the magnitude of stress and the marks secured by the students in their secondary examination had been taken as a measure of academic achievement. Results indicated that magnitude of mental stress was significantly higher among the students of Divorced parents where as students of Non-Divorced parents were significantly better in terms of their level of Academic achievement. However, significant relationships between mental stress and Academic Achievement were found for both the group of students and for each type of Parents.

Introduction - Separation and divorce are common phenomena in the community today, but still represent a major life stressor for the individuals involved, with potentially strong negative consequences for the mental and physical health of all members of the family. The impact of divorce on child wellbeing has been the subject of research attention for several decades, and has long been viewed as the cause of a range of serious and enduring behavioural and emotional problems in children and adolescents (Kelly & Emery, 2003). Compared with matched samples of children from non-divorced families, children of divorced parents have been found to be more disobedient, aggressive, non-compliant and lacking in self-regulation (Wadsworth et al, 1985). Observing overt conflict between parents is a direct stressor for children, and children experiencing this have been found to be at increased risk of antisocial behaviour, anxiety, depression and difficulty in concentrating – factors known to influence school performance (Davies & Cummings, 1994).

Objectives of research -

1. To Investigate the Level of Mental Stress of Boys and girls of both type parents.
2. To Investigate the Scores of Mental Stress of Boys and girls of both type parents.
3. To compare Mental Stress between boys of Divorced and Non-Divorced Parents.
4. To compare Mental Stress between girls of Divorced and Non-Divorced Parents.
5. To compare Mental Stress between boys and girls of Divorced and Non-Divorced Parents.
6. To Investigate the Correlation between Mental Stress and Academic Achievement of all student

Hypothesis -

1. There is no significant difference on level of mental stress of boys and girls.
2. There is no significant difference on mental stress of boys of Divorced and Non-Divorced Parents.
3. There is no significant difference on mental stress of girls of Divorced and Non-Divorced Parents.
4. There is no significant difference on mental stress between boys and girls of Divorced Parents.
5. There is no significant difference on mental stress between boys and girls of Non-Divorced Parents.
6. There is no significant Correlation between Mental health and Academic Achievement of students.

Delimitation - The present study has been delimited to the following conditions:

1. Only 10th standard passed out students were included in the study.
2. The area of study have confined to the four district's areas of Udaipur Division- 1.Udaipur, 2.Chittorgarh, 3.Pratapgarh, 4.Rajsamand.
3. The age group of the sample was restricted to 15-18 years.
4. For measuring achievement of a particular student, their previous class result was taken.

Method - Normative Survey method of research was used. The survey method is an organizational attempt to analyse, interpret and report the present status of an area.

Tools -

1. Distress Scale developed by- Prof. K.S. Mishra and Dr. S.P. Pandey.
2. The marks secured by the students in their secondary Examination conducted by Board Secondary Education, Rajasthan had been taken as a measure of Academic achievement.

Sampling - Sample was selected by using stratified random sampling procedure. The sample for the study has been drawn stratified randomly of the **200** Students of both sexes. Out of these **100** students (50male and 50female) are belonging

* **Research Scholar, P.G. Department of Education, Pacific Academy of Higher Education and research University, Udaipur (Raj.) INDIA**

to Divorced parent family and **100** students (50male and 50female) are belonging to Non-divorced parent family.

Statistical techniques - For analysis and interpretation of data, the investigator has used following techniques-

1. Mean **2.** Standard deviation
3. T-Value **4.**Product-moment correlation coefficient
5. Percentage

Analysis and interpritetion -

Table: 1 the various percentage of Level of Mental Stress of children

Level of Stress	Range	Score	Percentage (%)
High	65-90	142	71
Average	46-64	33	16.5
Lower	21-45	24	12.5

Analysis and interpritetion: From the table-1 it is seen that scores of high, average and lower level have significant difference so hypothesis no.1 is rejected and it is shows that the children have various level of stress.

Table: 2 Difference between Mental Stress of Boys of Divorced and Non-Divorced parents

Group	N	Mean	S.D.	C.R.	Significance
Divorced	50	32.12	13.70	2.90	Significant*
Non-divorced	50	29.45	10.98		
Total	100				

P Value=0.05=1.98<2.90*
0.01=2.62<2.90*

Analysis and interpritetion - Calculated t-value > tabulated t-value so Ho is no accepted. I.e. there is significant difference on Mental Stress between Divorced and Non-Divorced parent's Male students. From the result it is clearly seen that –the average mental stress of Male students of Divorced parents is as more as the male students of Non-divorced parents.

Table: 3 Difference between Mental Stress of Girls of Divorced and Non-Divorced parents

Group	N	Mean	S.D.	C.R.	Significance
Divorced parents	50	28.12	4.10	8.30	Significant*
Non-divorced parents	50	27.18	4.20		
Total	100				

P Value=0.05=1.98<8.30*
0.01=2.62<8.30*

Analysis and interpritetion - Calculated t-value > tabulated t-value so Ho is no accepted. I.e. there is significant difference on Mental Stress between Divorced and Non-Divorced parent's Female students. From the result it is clearly seen that - the average mental stress of Female students of Divorced parents is as more as the Female students of Non-divorced parents.

Table: 4 Difference between Mental Stress of Boys and Girls of Divorced parents

Group	N	Mean	S.D.	C.R.	Significance
Boys	50	27.60	3.90	8.85	Significant*
Girls	50	29.30	4.15		
Total	100				

P Value=0.01=2.62<8.85*

Analysis and interpritetion - Calculated t-value >tabulated t-value so Ho is no accepted. I.e. there is significant difference on Mental Stress between Divorced parent's Male and Female students. From the result it is clearly seen that – the average mental stress of Female students of Divorced parents is as more as the male students of divorced parents.

Table: 5 Difference between Mental Stress of Boys and Girls of Non-Divorced parents

Group	N	Mean	S.D.	C.R.	Significance
Boys	50	29.45	4.35	4.95	Significant*
Girls	50	29.50	4.70		
Total	100				

P Value=0.05=1.98< 4.95*
0.01=2.62<4.95*

Analysis and interpritetion- Calculated t-value > tabulated t-value so Ho is no accepted. I.e. there is significant difference on Mental Stress between Non-Divorced parent's Male and Female students. From the result it is clearly seen that – the average mental stress of Female students of Non-Divorced parents is as more as the male students of Non-divorced parents.

Table: 6 Correlations between Mental Stress and Academic Achievement of All Students

Variable	Correlation coefficient value	t-value	p-value	Signi-ficance
Mental stress	-0.7616	-26.2246	0.00<0.05	Signi-ficant
Academic A.				

Analysis and interpritetion - The Correlation between the total score of mental health and academic achievement was r= -0.7616. This value shows that there is negatively high correlation between mental stress and academic achievement.

Conclusion -

1. The children have various level of mental stress.
2. There is significant difference on Mental Stress between Divorced and Non-Divorced parent's Male students.
3. There is significant difference on Mental Stress between Divorced and Non-Divorced parent's Female students.
4. There is significant difference on Mental Stress between Divorced parent's Male and Female students.
5. There is significant difference on Mental Stress between Non-Divorced parent's Male and Female students.
6. There is negatively high correlation between mental stress and academic achievement.

References -

1. Best, John and Kahn James, V, (1995). Research in Education, New Delhi Practice – Hall of India.
2. Davies P.T. & Cummings E.M. (1994). Martial Conflict and Child adjustment: An emotional security hypothesis. Psychological Bulletin, 116, 387 – 411.
3. Distress Scale: Prof. K.S. Mishra & Dr. S.P. Pandey.
4. Laumann–Billings(2000).Distress among young adults in divorced families. Journal of Family Psychology,14,67- 687.
5. Wadsworth et J., (1985). The influence of family type on children's behaviour and development. Journal of child Psychology and Psychiatry, 26, 245 – 254.

प्राथमिक स्तर पर गणित शिक्षण में बाल-केन्द्रित एवं विषय-वस्तु केन्द्रित विधि का तुलनात्मक अध्ययन

सज्जन लोढ़ा *

प्रस्तावना – जब हम गणित शिक्षण को देखते हैं तो यह पाते हैं कि " एक तरफ गणित शिक्षण का उद्देश्य, ज्ञान, समझ, तार्किकता, क्रमबद्धता, निरन्तरता आदि विकसित करना है वहीं दूसरी तरफ वर्तमान विद्यालयों में अधिकतर गणित शिक्षण अधिगम मात्र एक रटन प्रक्रिया बन कर रह गया है।'' छात्र गणित के प्रश्नों को मशीन की तरह समझते हैं, छात्र गणित को बोझ समझने लगते हैं। दूसरी तरफ गणित शिक्षक भी अपना दायित्व विद्यार्थियों को परीक्षाओं में उत्तीर्ण करवाना मात्र समझते है, इस प्रतिफल के लिए विषय सामग्री को रटवाने तथा केवल पाठ्यक्रम समाप्ति को अपना ध्येय समझते हैं। अत: अध्यापकों से आशा की जाती है कि ये लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए नवीन परिस्थितियों को समझे तथा शिक्षण में यथासम्भव उपयोग करें।

नई शिक्षा नीति (1986) के अनुसार " अध्यापक के तरीकों को बदलने की दिशा में प्रयास किया जायेगा। परिवर्तन के स्वरूप और शिक्षा को समझने के लिए पद्धतियाँ तैयार की गयी और परिवर्तन के प्रबंध के लिए परिवर्तन के प्रबंध की महत्वपूर्ण दक्षता को विकसित किया गया।'' गणित शिक्षण हेतु ऐसी विधि की आवश्यकता है, जिसमें सहायक सामग्री हेतु खर्च भी नहीं करना पड़े और छात्रों का अधिकाधिक शिक्षण में सहयोग अथवा भागीदारी हो। इसी उद्देश्य को लेकर शोधकर्त्ताओं ने गणित को संश्लेषण तथा विश्लेषण दोनों विधियों से पढ़कर कौनसी विधि श्रेष्ठ है इसका पता लगाने का प्रयास किया है।

शोध उद्देश्य –

प्रस्तुत शोध के निम्न उद्देश्य निर्धारित किये गये :-

1. कक्षा 9 ज्यामिति की इकाईयों पर प्री-टेस्ट का निर्माण करना।
2. कक्षा 9 ज्यामिति की चयनित इकाईयों पर विश्लेषण तथा संश्लेषण विधि से पाठ पढ़ाने हेतु पाठ योजना का निर्माण करना।
3. ज्यामिति की चयनित इकाईयों के शिक्षण के बाद पूर्ण परीक्षण निर्मित करना।
4. कक्षा 9 के छात्रों पर एक समूह को संश्लेषण विधि तथा प्रायोगिक समूह को विश्लेषण विधि से शिक्षण प्रदान करने के उपरान्त छात्रों की निष्पत्ति में अन्तर देखना तथा उसके आधार पर यह पता लगाना कि कौन सी विधि श्रेष्ठ है।

शोध परिकल्पना – उक्त समस्या का हल खोजने के उद्देश्य से शोधकर्ता ने शून्य प्राकल्पना यदि नवी कक्षा के छात्रों के दो तुल्य समूहों को गणित शिक्षण विश्लेषण विधि से कराया जाये तो उनके निष्पत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं आयेगा, निर्धारित की।

न्यादर्श, विधि एवं उपकरण – (अ)

1. शोधकर्ता ने प्रस्तुत अध्ययन हेतु राजकीय विद्यालय, डबोक की नवीं कक्षा के दो वर्गों का चयन किया है।
2. प्रत्येक समूह में 30-30 विद्यार्थी लिये गये। इनमें गत वर्ष के अनुत्तीर्ण छात्रों को शामिल नहीं किया गया।
3. कक्षा 8 से उत्तीर्ण विद्यार्थियों की ज्यामिति की इकाईयों पर प्री-टेस्ट लिया गया तथा उनके प्राप्तांकों से दो समूह मध्यमान तथा मानक विचलन समान कर बनाये गये।
4. इस प्रकार निर्मित तुल्य समूह में सिक्का उछालकर एक समूह को प्रायोगिक तथा दूसरे समूह को नियन्त्रित समूह बनाया गया।

(ब)

1. प्रस्तुत अध्ययन में दो शिक्षण विधियों की तुलना कर उनकी प्रभावशीलता का पता लगाया गया है, अत: अनुसंधान प्रायोगिक विधि पर आधारित है। अभिकल्प का संक्षिप्त प्रारूप निम्न है –

प्रायोगिक समूह पूर्व परीक्षण	विश्लेषण विधि अन्तिम परीक्षण
नियंत्रित समूह पूर्व परीक्षण	संश्लेषण विधि अन्तिम परीक्षण

2. दोनों समूहों के विद्यार्थियों को शोधकर्त्ता ने ही 20-20 दिन पढ़ाया।
3. दोनों ही समूहों को एक ही विषय वस्तु पर 20 दिन तक शिक्षण कराया गया।

(स)

1. प्रस्तुत प्रायोगिक शोध में दो तुलनात्मक समूह बनाने हेतु कक्षा 9 के ज्यामिति की चयनित पर पूर्व परीक्षण बनाया गया। इस परीक्षण में निर्मित 50 प्रश्नों में 30 से 70 प्रतिशत के बीच कठिनाई स्तर तथा निवेदन क्षमता प्राप्त हुई उन्हें चयन किये गये। पूर्व परीक्षण की विश्वसनीयता .852556 तथा वैधता .8234 प्राप्त हुई।
2. अन्तिम परीक्षण कक्षा 9 की ज्यामिति के चयनित इकाईयों पर वस्तुनिष्ठ प्रश्नों पर निर्माण कर बनाया गया। सर्वप्रथम 75 प्रश्नों का निर्माण किया गया, प्रत्येक प्रश्न की कठिनाई स्तर तथा विभेदन क्षमता ज्ञात की गई। जिन प्रश्नों को चयन किया गया। इस प्रकार कुल 40 प्रश्न चयन हुए। उपकरण की विश्वसनीयता तथा वैधता क्रमश: .9028 तथा .92681 प्राप्त हुई।

समंकों का संकलन, व्याख्या एवं विश्लेषण –

शोधकर्त्ता ने अपने अध्ययन को तीन प्रमुख चरणों में विभक्त किया है :-

1. पूर्व तथा अन्तिम परीक्षण के प्राप्तांक।
2. प्राप्त दत्तों का विश्लेषण।
3. विश्लेषण के आधार पर दोनों शिक्षण विधियों की तुलना।

प्रायोगिक समूह के विश्लेषण विधि तथा नियंत्रित समूह को संश्लेषण विधि से ज्याामिति की चयनित चार इकाईयों 20 दिन पढ़ाने के बाद 40 वस्तुनिष्ठ प्रश्नों वाला अन्तिम परीक्षण दिया गया। दोनों ही समूहों के छात्रों

* व्याख्याता , ज्योति सी.से. स्कूल, फतहपुरा उदयपुर (राज.) भारत

की उत्तर पुस्तिकाओं में अंकन के पश्चात् प्राप्त प्राप्तांकों के बीच प्रसरण विश्लेषण सांख्यिकी का उपयोग किया।

सारणी 1 : प्रायोगिक तथा नियंत्रित समूहों के पूर्व परीक्षण तथा अन्तिम परीक्षण से प्राप्त प्राप्तांकों के मध्यमान

समूह	पूर्व परीक्षण का मध्यमान	अन्तिम परीक्षण का मध्यमान
नियंत्रित समूह	18.16	20.30
प्रायोगिक समूह	18.40	23.40

1. नियंत्रित समूह के पूर्व परीक्षण पर छात्रों का मध्यमान 18.16 तथा अन्तिम परीक्षण पर छात्रों का मध्यमान 20.30 है। नियंत्रित समूह पर भी शिक्षण का प्रभाव रहा।

2. प्रायोगिक समूह से पूर्व परीक्षण का मध्यमान 18.40 तथा अन्तिम परीक्षण का मध्यमान 23.40 रहा। यही छात्रों की उपलब्धि में बहुत अधिक अन्तर आया है।

निष्कर्ष – उपरोक्त गणना के आधार पर ठ का मान 41.32 प्राप्त हुआ। स्वतंत्रता के अंश 1,58 पर 0.1 स्तर के मान 7.08 से अधिक प्राप्त हुआ। अतः शून्य प्राकल्पना अमान्य घोषित किया गया। दोनों विधियाँ में सार्थक अन्तर पाया गया। विश्लेषण विधि, संश्लेषण विधि से अधिक उपयोगी तथा प्रभावी पायी गयी।

सुझाव – 1 ज्यामिति के शिक्षण हेतु विश्लेषण विधि का अधिकाधिक उपयोग शिक्षण कार्य में हो।

2. पाठ्य पुस्तक में ज्यामिति की इकाईयों को विश्लेषण विधि के आधार पर लिखा जाये।
3. पाठ्य पुस्तक में दिये गये उदाहरण विश्लेषण विधि अथवा 'अज्ञात से ज्ञात' पर आधारित होने चाहिए।

स्त्रोत	df	SSx	Ssy	Sp	df	Ss'y	Ms'y
मिश्रित मध्यमान	1	.82	144.15	10.85	1	125.41	125.41
मिश्रित समूह	58	1181.37	1107.50	1050.70	57	173.02	3.035
कुल	59	1182.19	1251.65	1061.65	58	298.43	128.445

$$f = \frac{Ms'by}{Ms'wy} = \frac{125.41}{3.035} = 41.32$$

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बेस्ट जॉन डब्ल्यू. (1995) : 'शिक्षा अनुसंधान विधि एवं विश्लेषण', विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
2. ढौंढियाल, सच्चिदानंद एवं फाटक, अरविन्द (1972) : 'शैक्षिक अनुसंधान का विधिशास्त्र' राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
3. गैरिट, हेनरी ई. (1996) : 'शिक्षा और मनोविज्ञान में साख्यिकी के प्रयोग', कल्याणी पब्लिशर्स लुधियाना।
4. कपिल, एच.के. (1995) 'सांख्यिकी के मूल तत्व' आगरा : विनोद पुस्तक मन्दिर।
5. नागर, कैलाशनाथ (1983) : 'सांख्यिकी के मूल तत्व' मीनाक्षी प्रकाशन बेगम ब्रिज मेरठ।
6. ओड, एल. के. (1991) : 'शैक्षिक प्रशासन' राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर,
7. रायजादा, बी.एस. (1997). 'शिक्षा में अनुसंधान के आवश्यक तत्व' जयपुर : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
8. शर्मा आर.ए. (2001) : 'शिक्षा अनुसंधान', लायल बुक डिपों, मेरठ।
9. सुखिया, एस. पी. मेहरोत्रो, पी. वी. मेहरोत्रो, आर. एन. (1984): 'शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व' विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा,
10. सिन्हा, एच. सी. (1979): शैक्षिक अनुसंधान नई दिल्ली, विकास पब्लिसिंग हाउस प्रा. लि.।
11. http://www.lib.uni/thesis/dissertation.com
12. http://www.lib.uni.com
13. http://www.education.dissertation.abstract.com

****

परम्परागत एवं अन्य प्रायोगिक शिक्षण विधियों पर किये गए शोध कार्य

सज्जन लोढ़ा *

प्रस्तावना – परम्परागत विधि, शिक्षण विधियों के प्राप्त इतिहास के प्रारम्भ में ही सम्भाषण विचारों के आदान-प्रदान का प्रमुख माध्यम रहा है। आज इस तकनीक का उपयोग विस्तृत है। यह विधि आर्थिक दृष्टि से अच्छी है क्योंकि एक शिक्षक एक ही समय में कितने ही छात्रों को एक साथ पढ़ा सकता है, इसमें किसी उपकरण, प्रयोगशाला आदि की विशेष व्यवस्था की कोई आवश्यकता नहीं होती है। कम्प्यूटर सहाय अधिगम ऐसी विधि है, जिसके अन्तर्गत विद्यार्थी तथा कम्प्यूटर संयत्र के मध्य एक ऐसी प्रयोजनापूर्ण अन्त:क्रिया चलती है, जिसके फलस्वरूप विद्यार्थी विशेष को अपनी क्षमताओं तथा अधिगम गति का अनुसरण करते हुए वांछित उद्देश्यों की प्राप्ति में समुचित सहायता प्राप्त होती रहती है। पाठ्यक्रम में सुधार, शिक्षा में परिवर्तन को सामान्य जन समूह के लिए उपलब्ध कराने सम्बन्धित प्रयास, नई शिक्षा नीति के अन्तर्गत शिक्षक अभिनव कार्यक्रम, ऑपरेशन ब्लेकबोर्ड योजना, उत्कृष्ट साहित्य का सृजन आदि। लेकिन शिक्षण विधियों के क्षेत्र में प्रयास बहुत कम हो पाये हैं। फलत: परम्परागत शिक्षण विधियाँ वर्तमान बदलते हुए परिप्रेक्ष्य में अप्रभावी सिद्ध होती जा रही है। नया हमेशा सबको भाता है, फिर वह चाहे पहनने-खाने की बात हो या जानने समझने की। नयापन जीवन को गति प्रदान करता है। आज की शिक्षा में भी नवीन शिक्षण विधियों की आवश्यकता है, जो बच्चों में स्वयं सोचने एवं करने की क्षमता को विकसित कर सके।

परम्परागत एवं अन्य शिक्षण विधियों पर किए गए शोध कार्य

1. **गोस्वामी, रमा (1988) –** " इतिहास शिक्षण मं बहुआयामी शिक्षण विधि एवं परम्परागत शिक्षण विधियों की प्रभावोत्पादकता का तुलनात्मक अध्ययन।" उपरोक्त शोध का उद्देश्य था परम्परागत विधि से पढ़ाए गए समूह के एवं बहुआयामी शिक्षण विधि से पढ़ाए गए समूह के मध्य निष्पत्ति में अन्तर देखना तथा उसके आधार पर विधि की प्रभावशीलता ज्ञात करना। प्रस्तुत शोध से यह निष्कर्ष निकल कर आया कि परम्परागत विधि से पढ़ाए जाने वाले समूह की निष्पत्ति तथा बहुआयामी शिक्षण विधि द्वारा पढ़ाए जाने वाले छात्रों के समूह की निष्पत्ति में .01 स्तर पर सार्थक अन्तर आया है। अत: इतिहास शिक्षण में बहुआयामी शिक्षण विधि अधिक प्रभावशाली है।

2. **गुप्ता, शालिनी (1990) –** " सामान्य विज्ञान शिक्षण में परम्परागत एवं प्रायोजना विधि का तुलनात्मक अध्ययन। " प्रस्तुत शोध का उद्देश्य था प्रायोजना एवं परम्परागत विधि द्वारा विद्यार्थियों के अलग-अलग समूहों को सामान्य विज्ञान में अनुदेशन प्रदान करना तथा विद्यार्थियों की निष्पत्ति का मापन करना एवं उसके मध्य अन्तर देखना। दत्तों का विश्लेषण करने पर यह निष्कर्ष निकाला गया कि प्रायोजना विधि, परम्परागत विधि की अपेक्षा अधिक प्रभावपूर्ण है।

3. **अनिल कुमार डैला (1994)** ने भूगोल शिक्षण में प्रचलित परम्परागत कक्षा-कक्ष अध्यापन विधि और क्षेत्रीय अध्यापन विधि की प्रभावित का अध्ययन करना इस विषय पर लघु शोधकार्य किया।इस शोधकार्य का उद्देश्य कक्षा-कक्ष अध्यापन विधि की प्रभावशीलता अध्यापन विधि की प्रभावशीलता का अध्ययन करना।निष्कर्ष के रूप में पाया गया निष्पत्ति में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है कि इन दोनों विधियाँ (प्रचलित परम्परागत विधि एवं क्षेत्रीय अध्यापन विधि) समान रूप में प्रभावी है।

4. **दोसी, पी.सी. (2003) –** " प्राथमिक स्तर पर गणित शिक्षण में बाल-केन्द्रित एवं विषय-वस्तु केन्द्रित विधि का तुलनात्मक अध्ययन।"उपरोक्त शोध का उद्देश्य था प्राथमिक स्तर पर पांचवी कक्षा के दो समूहों को अलग-अलग बाल केन्द्रित एवं विषय-वस्तु केन्द्रित विधि से शिक्षण प्रदान करने के उपरान्त छात्रों की निष्पत्ति में अन्तर देखना तथा उसके आधार पर यह पता लगाना कि कौनसी विधि प्रभावी रही। प्रस्तुत शोधकार्य में प्राप्त दत्तों के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकला कि गणित शिक्षण में विषय-वस्तु केन्द्रित विधि से पढ़ाये जाने वाले छात्रों के समूह की निष्पत्ति तथा बाल केन्द्रित विधि द्वारा पढ़ाये जाने वाले छात्रों के समूह की निष्पत्ति में .01 स्तर पर सार्थक अन्तर पाया गया।

5. **शोकत अली (2009)** ने शोधकार्य व्याख्यान अनुदेशन और परम्परागत विधि द्वारा अधिगम उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन पीएच.डी. शोधकार्य किया गया है।इस शोध का मुख्य उद्देश्य अंग्रेजी विषय में व्याख्यान अनुदेशन और परम्परागत विधि द्वारा अधिगम उपलब्धि का अध्ययन करना व्याख्यान अनुदेशन और परम्परागत विधि में तुलनात्मक अध्ययन करना।इस शोधकार्य के रूप में पाया गया है कि वर्तमान शोध यह दर्शाता है कि आधुनिक अनुदेशन तकनीकी एवं लेपडर शैली विद्यालय में उपयोग की जाती है। अंग्रेजी विषय में लेपरडर अनुदेशन शैली परम्परागत विधि से अधिक श्रेष्ठ है। व्याख्यान अनुदेशन और परम्परागत विधि में लिखने के कौशल व्याख्यान अनुदेशन अधिक प्रभावशाली है।

6. **रामानारोय, बी.वी. (2010) –** " परम्परागत विधि एवं पैनल ग्रुप डिस्कशन मेथड की प्रभावशीलता का अध्ययन। "प्रस्तुत शोध कार्य का उद्देश्य परम्परागत विधि एवं पैनल ग्रुप डिस्कशन मेथड की प्रभावशीलता का पता लगाना था। इस शोध में शोधकर्त्ता द्वारा नियंत्रित समूह को परम्परागत विधि एवं प्रायोगिक समूह को पैनल ग्रुप डिस्कशन मेथड से अनुदेशन दिया गया। निष्कर्ष में पैनल ग्रुप डिस्केशन मेथड की प्रभाव शीलता परम्परागत विधि से अधिक पायी गई।

7. **शर्मा, रमा (2011) –** "पूछताछ प्रशिक्षण प्रतिमान एवं पारम्परिक विधि का तुलनात्मक अध्ययन।"उपरोक्त शोध का उद्देश्य था पूछताछ प्रशिक्षण प्रतिमान एवं पारम्परिक विधि में अधिक प्रभावी विधि का पता लगाना। शोधकर्त्ता द्वारा निष्कर्ष निकाला गया कि पूछताछ प्रशिक्षण प्रतिमान की प्रभावशीलता परम्परागत विधि से अधिक है। नियंत्रित समूह

* व्याख्याता , ज्योति सी.से. स्कूल, फतहपुरा उदयपुर (राज.) भारत

एवं प्रायोगिक समूह की निष्पत्ति में सार्थक अन्तर पाया गया।

8. मोची, धर्मेन्द्र (2013) – "उच्च प्राथमिक स्तर पर इतिहास शिक्षण में मानचित्र आधारित शिक्षण पैकेज का विद्यार्थियों की निष्पत्ति पर प्रभाव।"प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य कक्षा 7 के विद्यार्थियों पर इतिहास में स्वनिर्मित मानचित्र आधारित शिक्षण पैकेज का उनकी निष्पत्ति पर प्रभाव ज्ञात करना था। शोधकर्त्ता ने न्यादर्श के रूप में कक्षा 7 के 48 विद्यार्थियों का चयन किया। नियंत्रित समूह के 24 विद्यार्थियों को परम्परागत विधि एवं प्रायोगिक समूह के 24 विद्यार्थियों को मानचित्र आधारित शिक्षण पैकेज द्वारा शिक्षण दिया गया। निष्कर्ष यह निकला कि मानचित्र आधारित शिक्षण पैकेज की प्रभावशीलता परम्परागत विधि द्वारा शिक्षण से अधिक पायी गई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Best, J.W. (1982), 'Research in Education', New Delhi : Prentice hall of India.
2. Borg W.R. : "Education Researches on Introduction", New York, Longman Green & Co. Ltd.
3. C.V. Good : "The Methodology of Education Research" A Appleton centaury crofts", Inc. New York.
4. Cocher, W.G. : "Sampling Technique", Bombay, Publishing House.
5. Garrette H.E. (1969). Statistics on Psychology and Education. Bombay: Allied pacific Pvt. Ltd.
6. Kothari C.R. (2005). Research Methodology: Methods and Techniques. New Delhi : New Aye, International (p) Ltd. Publishers.
7. Koul Lokesh (2004). Methodology of Education Research. New Delhi: Vikas Publishing house pvt. Ltd.
8. Sharma, R.A.(1984-85) "Fundamentals of Education Research", International Publishing House, Delhi.
9. Sukhia, S.P., Mehrotra, P.V., Mehrotra, R.N. (1983) "Elements of Educational Research" Allied Publishers Private Ltd., New Delhi
10. http://www.education.thesis.abstract.com.
11. http://www.psychologydissertation/thesis/abstract.com

****

बुनियादी और सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों में मूल्यों का एक अध्ययन

अमित शर्मा *

प्रस्तावना – एक व्यक्ति के विकास और सम्पूर्ण समाज के विकास हेतु शिक्षा महत्तवपूर्ण है। शिक्षा द्वारा मानव का समग्र एवं सम्पूर्ण विकास होता है। वृहत्त् स्तर पर शिक्षा उच्च कौशल युक्त सुप्रशिक्षित मनुष्यों का निर्माण करती हैं, जिससे वे समाज के आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक विकास में महत्तवपूर्ण भूमिका अदा कर सकें।

प्राचीन भारत के प्रारम्भिक युग में शिक्षा सभी के लिए खुली थी यद्यपि इसमें जाति व्यवस्था का प्रावधान था। मध्यकाल में भी यह प्रथा कुछ परिवर्तनों के साथ चलती रही। ब्रिटिश यद्यपि हिंदुस्तान में व्यापारी बनकर आये किंतु यहाँ के शासक बन गये। ब्रिटिशों ने अपने शासन की आवश्यकता को ध्यान रखकर 1835 में मैकाले का शिक्षा कमीशन लागू किया। मैकाले कमीशन ने ब्रिटिश पद्धति पर आधारित नवीन अंग्रेजी शिक्षण पद्धति लागू की जिसके अत्यधिक दुष्परिणाम हुए।

अत: समस्त भारतवर्ष में चल रही तत्कालीन गतिहीन शिक्षा पद्धति को परिवर्तित कर एक गतिक एवं जीवंत शिक्षा की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। इस उद्देश्य से महात्मा गाँधी ने 1937 में वर्धास्कीम के माध्यम से बुनियादी शिक्षा (नई तालीम) पेश की।

बुनियादी तालीम के मूल में उद्योग केन्द्रित शिक्षा की बात की गई थी। उद्यम अर्थात् हाथ से कुछ कार्य करना। बुनियादी शिक्षा के अनुसार विद्यार्थियों द्वारा शाला में ज्ञानार्जन उद्यम आधारित हो। बुनियादी शिक्षा के मुख्य सिद्धांत निम्नलिखित थे:–7 वर्ष के लिये मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा, एवं निर्देशन का माध्यम मातृभाषा।

बुनियादी शिक्षा का निम्नलिखित पाठ्यक्रम तैयार किया गया था :– आधारभूत शिल्प, मातृभाषा का अध्ययन, व्यवहारिक गणित, सामान्य विज्ञान कला, हिंदुस्तानी (राष्ट्रभाषा हिन्दी) जहाँ यह मातृभाषा न हो, सामाजिक अध्ययन, शारीरिक शिक्षा आचरण शिक्षा आदि।

बुनियादी शिक्षा से तुलना करें तो हमारी वर्तमान शिक्षा प्रणाली (सामान्य शिक्षा) व्यवहारिक नहीं है। इसके उद्देश्य सीमित हैं। यह जीवन से दूर हैं। महँगी हैं। इसमें कहीं न कहीं मनोवैज्ञानिक तत्वों की अवहेलना हुई है। जब कि बुनियादी शिक्षा द्वारा महात्मा गाँधी ने स्वावलम्बन का सिद्धांत दिया था। यह देश के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक परिवेश हेतु उपर्युक्त था। स्वावलम्बन में सत्य, अहिंसा, शांति सहकार, सृजन, नैतिकता आदि के वैयक्तिक और सामाजिक मूल्य गूँथे हुए हैं। ढवे. एसे.के. (1980) 'बुनियादी शिक्षा के नए आयामों का अन्वेषण' (पी.एच.डी. शिक्षा, गुजरात वि.वि.) शोध के अनुसार बुनियादी शिक्षा को पुनर्जीवित करने की नई विधियों का पता लगाना आवश्यक हैं जिससे यह आधुनिक सामाजिक संदर्भो में अर्थपूर्ण व क्रियात्मक बन सकें एवं शिल्प के रुप में इन्होंने केवल कताई बुनाई पर ध्यान दिये जाने की आवश्यकता पर बल दिया।

Value (वेल्यू) शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के 'Valere' शब्द से मानी जाती हैं। जो किसी वस्तु की कीमत या उपयोगिता को व्यक्त करता हैं। भारतीय धर्म ग्रंथों में मूल्य के लिये 'शील' शब्द अनेक स्थानों पर प्रयुक्त हुआ है। यह शब्द मूल्य का पर्याय नहीं अपितु समीपी है। वस्तुत: मूल्य एक प्रकार का मानक है। मनुष्य किसी वस्तु, क्रिया, विचार को अपनाने से पूर्व यह निर्णय करता है कि वह उसे अपनाये या त्याग दें। जब ऐसा विचार व्यक्ति के मन में निर्णयात्मक ढंग से आता है तो वह मूल्य कहलाता है।

शिक्षा तथा अनुभव द्वारा बालक अधिकाधिक सीखते हुए ऐसे अनुबंध प्राप्त करता है, जो उसके व्यवहारों को निर्देशित करते है। इन्हें मूल्य कहते है। मूल्यों को निम्नलिखित शीर्षकों में विभक्त किया गया है :–शैक्षिक मूल्य,नैतिक मूल्य, सामाजिक एवं राजनैतिक मूल्य, वैश्विक मूल्य, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, पर्यावरणीय मूल्य। **मिल्टन (1986)** 'मानव मूल्यों की प्रकृति का अध्ययन' शोध के द्वारा निष्कर्ष दिया कि उत्प्रेरित करने एवं उचित मार्गदर्शन द्वारा व्यक्तियों के मूल्यों एवं अभिवृत्ति को परिवर्तित किया जा सकता है। इसी तरह **अग्रवाल रेखा (1987)** 'मूल्यों के विकास पर न्यायिक पृच्छा शिक्षण प्रतिमान द्वारा शिक्षण के प्रभाव को जानने के लिए एक अनुसंधान' कर निष्कर्ष दिया कि सामाजिक तथा भ्रातृत्व मूल्यों के विकास हेतु न्यायिक पृच्छा शिक्षण प्रतिमान प्रभावशाली है।

बुनियादी शिक्षा एवं सामान्य शिक्षा से सम्बन्धित देश में पूर्व में अनेक शोध हुए है। शोधकर्त्ता ने बुनियादी एवं सामान्य शिक्षा विषय का चयन विद्याभवन शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय में अगस्त माह (वर्ष–2007) के अंतिम सप्ताह में बुनियादी शिक्षा पर आयोजित कार्यगोष्ठि में भाग लेने के बाद किया। दो दिवसीय कार्यक्रमों, समूह चर्चा के साथ विद्याभवन बुनियादी माध्यमिक विद्यालय, रामगिरी का समूह के सदस्यों ने अवलोकन भी किया। विद्यालय में विद्यार्थियों को उद्यम आधारित ज्ञान प्राप्ति को देखकर शोधार्थी ने वहाँ के विद्यार्थियों के मूल्यों को परखने की इच्छा जाग्रत हुई।

अत: अनुसंधान हेतु शोधार्थी ने **'बुनियादी और सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों में मूल्यों का एक अध्ययन'** अपने लघु शोध विषय के लिए चुनाव किया।

शोध प्रश्न – शोध अध्ययन करने से पूर्व शोधार्थी ने उपर्युक्त समस्या से सम्बन्धित निम्नलिखित प्रमुख शोध प्रश्न का निर्माण किया –

1. क्या बुनियादी शिक्षा विद्यालय, रामगिरी और सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों के मूल्यों में कोई अन्तर है?

समस्या के उद्देश्य – प्रस्तुत शोधकार्य के निम्नलिखित उद्देश्य शोधार्थी द्वारा निर्धारित किए गए–

1. बुनियादी शिक्षा विद्यालय, रामगिरी के विद्यार्थियों में मूल्यों का पता लगाना।

* शोधार्थी, विद्याभवन जी.एस. शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

2. सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों में मूल्यों का पता लगाना।
3. बुनियादी शिक्षा विद्यालय, रामगिरी तथा सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों में मूल्यों की तुलना करना।

पारिभाषिक शब्दावली – प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्रयुक्त होने वाली महत्वपूर्ण शाब्दिक परिभाषाएँ निम्नलिखित है–

1. सामान्य शिक्षा–सामान्य शिक्षा से तात्पर्य वर्तमान समय में विद्यालयों में चल रही शिक्षा से है। जबकी गाँधी जी के अनुसार शिक्षा से अभिप्राय बालक और मनुष्य के शरीर, मन और आत्मा के उच्चतर विकास से है।

2. बुनियादी शिक्षा–बुनियादी शिक्षा से तात्पर्य ऐसी शिक्षा से हैं, जिसमें विद्यार्थी के मन, मस्तिष्क व हाथ का समन्वय हों।

3. मूल्य–सी.वी.गुड – 'मूल्य वह चारित्रिक विशेषता हैं, जो मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और सौंदर्यबोध की दृष्टि से महत्वपूर्ण होती है। सभी विचार मूल्यों के अभिष्ट चरित्र को स्वीकार करते है।'

समस्या की परिकल्पना–प्रस्तुत लघु शोधकार्य में शोधार्थी द्वारा निम्नलिखीत शून्य परिकल्पनाओं का निर्माण किया गया–

1. बुनियादी विद्यालय रामगिरी तथा सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों के मूल्यों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

समस्या का परिसीमन–प्रस्तुत अध्ययन हेतु उदयपुर नगर के अर्ध शहरी क्षेत्र के दो माध्यमिक विद्यालयों का चयन किया गया – 1.विद्या भवन माध्यमिक विद्यालय रामगिरी। 2. विद्या भवन माध्यमिक शिक्षा विद्यालय, झामरकोटड़ा।

न्यादर्श का चयन–दो माध्यमिक विद्यालयों में 80 (40+40) विद्यार्थियों का न्यादर्श के रूप में चयन यादृच्छिक प्रतिचयन विधि से किया गया।

शोध विधि–प्रस्तुत शोध में अध्ययन हेतु सर्वेक्षण विधि का चयन किया गया।

शोध उपकरण–प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु डॉ. आर. के. ओझा कृत मानकीकृत मूल्य परीक्षण उपकरण का प्रयोग किया गया।

प्रविधि–प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु मध्यमान, मानक विचलन एवं टी अनुपात सांख्यकी प्रविधियों को दत्तों के विश्लेषण में प्रयुक्त किया गया।

शोध अध्ययन की व्याख्या एवं निष्कर्ष– मूल्य परीक्षण की श्रेणियों के आधार पर अध्ययनरत विद्यार्थियों के विभिन्न मूल्यों का मध्यमान, मानक विचलन तथा टी मूल्य को ज्ञात किया गया, एवं उससे निम्नलिखीत व्याख्या एवं निष्कर्ष प्राप्त हुए–

सारणी संख्या 1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

व्याख्या एवं निष्कर्ष – सारणी 1 की `t' अनुपात की तालिका में `t' का मान 0.01 विश्वास स्तर पर 2.64 है जबकि गणना द्वारा प्राप्त `t' का मान 2.91 प्राप्त हुआ, जो कि टेबल के मान से अधिक है। अत: निष्कर्ष निकलता है कि बुनियादी विद्यालय रामगिरी तथा सामान्य शिक्षा के विद्यालय के विद्यार्थियों के सैद्धांतिक मूल्य में सार्थक अंतर है, इसलिए शून्य परिकल्पना प्रथम अस्वीकृत की जाती है, एवं सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों का मध्यमान 45 है जो बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों के मध्यमान 41.37 पर प्रभावी है। अत: प्राप्त आँकड़ों से यह निष्कर्ष ज्ञात होता है कि सामान्य शिक्षा के विद्यालय के विद्यार्थियों में बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों की तुलना में सैद्धांतिक मूल्य अधिक है।

सारणी संख्या 2 – (देखे अगले पृष्ठ पर)

व्याख्या एवं निष्कर्ष – सारणी 2 की `t' अनुपात की तालिका में `t' का मान 0.01 विश्वास स्तर पर 2.64 है, जबकि गणना द्वारा प्राप्त `t' का मान 2.98 पाया गया हैं जो कि टेबल के मान से अधिक है। अत: निष्कर्ष निकलता हैं कि बुनियादी विद्यालय रामगिरी तथा सामान्य शिक्षा के विद्यालय के विद्यार्थियों के आर्थिक मूल्य में सार्थक अंतर है इसलिए शून्य परिकल्पना प्रथम अस्वीकृत की जाती है, एवं बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों के आर्थिक मूल्य का मध्यमान 39.77 सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों के आर्थिक मूल्य 35.77 पर प्रभावी है। अत: प्राप्त आँकड़ों से यह निष्कर्ष ज्ञात होता है कि बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों के आर्थिक मूल्य सामान्य शिक्षा के विद्यालय के विद्यार्थियों के आर्थिक मूल्य से अधिक है।

सारणी संख्या 3 – (देखे अगले पृष्ठ पर)

व्याख्या एवं निष्कर्ष – सारणी 3 की `t' अनुपात की तालिका में `t' का मान 0.01 विश्वास स्तर पर 2.64 है, जबकि गणना द्वारा प्राप्त `t' का मान 3.29 पाया गया हैं जो कि टेबल के मान से अधिक है। अत: निष्कर्ष निकलता हैं कि बुनियादी विद्यालय रामगिरी तथा सामान्य शिक्षा के विद्यालय के विद्यार्थियों के कलात्मक मूल्य में सार्थक अंतर है इसलिए शून्य परिकल्पना प्रथम अस्वीकृत की जाती है, एवं सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों के कलात्मक मूल्य का मध्यमान 34.65 हैं, जो बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों के कलात्मक मूल्य के मध्यमान 28.32 पर प्रभावी है। अत: प्राप्त आँकड़ों से यह निष्कर्ष ज्ञात होता है कि सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों के कलात्मक मूल्य बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों के कलात्मक मूल्य से अधिक है।

सारणी संख्या 4 (देखे अगले पृष्ठ पर)

व्याख्या एवं निष्कर्ष – सारणी 4 की `t' अनुपात की तालिका में `t' का मान 0.01 विश्वास स्तर पर 2.64 है, जबकि गणना द्वारा प्राप्त `t' का मान 2.72 हैं, जो कि टेबल के मान से अधिक है। अत: निष्कर्ष निकलता हैं कि बुनियादी विद्यालय रामगिरी तथा सामान्य शिक्षा के विद्यालय के विद्यार्थियों के सामाजिक मूल्यों में सार्थक अंतर है इसलिए शून्य परिकल्पना प्रथम अस्वीकृत की जाती है, एवं सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों के सामाजिक मूल्य का मध्यमान 43.75 है जो बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों के सामाजिक मूल्य के मध्यमान 40.37 पर प्रभावी है। अत: प्राप्त आँकड़ों से यह निष्कर्ष ज्ञात होता है कि सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों के सामाजिक मूल्य बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों के सामाजिक मूल्य से अधिक है।

सारणी संख्या 5 (देखे अगले पृष्ठ पर)

व्याख्या एवं निष्कर्ष सारणी 5 की `t' अनुपात की तालिका में `t' का मान 0.01 विश्वास स्तर पर 2.64 है, जबकि गणना द्वारा प्राप्त `t' का मान 2.90 हैं, जो कि टेबल के मान से अधिक है। अत: निष्कर्ष निकलता हैं कि बुनियादी विद्यालय रामगिरी तथा सामान्य शिक्षा के विद्यालय के विद्यार्थियों के राजकीय मूल्यों में सार्थक अंतर है इसलिए शून्य परिकल्पना प्रथम अस्वीकृत की जाती है एवं सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों के राजकीय मूल्य का मध्यमान 42.70 है जो बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों के राजकीय मूल्य के मध्यमान 39.62 पर प्रभावी है। अत: आँकड़ों से यह निष्कर्ष ज्ञात होता है कि सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों के राजकीय मूल्य बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों के राजकीय मूल्य से अधिक है।

सारणी संख्या 6 (देखे अगले पृष्ठ पर)

व्याख्या एवं निष्कर्ष – सारणी 6 की `t' अनुपात की तालिका में `t' का मान 0.01 विश्वास स्तर पर 2.64 है, जबकि गणना द्वारा प्राप्त `t' का मान 2.72 हैं, जो कि टेबल के मान से अधिक है। अत: निष्कर्ष निकलता हैं कि बुनियादी विद्यालय रामगिरी तथा सामान्य शिक्षा के विद्यालय के विद्यार्थियों के धार्मिक मूल्यों में सार्थक अंतर है इसलिए शून्य परिकल्पना प्रथम अस्वीकृत की जाती है, एवं सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों के धार्मिक मूल्यों का मध्यमान 42.42 है जो बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों के धार्मिक मूल्यों

के मध्यमान 39.62 पर प्रभावी है। अत: प्राप्त आँकड़ों से यह निष्कर्ष ज्ञात होता है कि सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों के धार्मिक मूल्य बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों के धार्मिक मूल्यों से अधिक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल जे.सी. (1964) शैक्षिक अनुसंधान, न्यू देहली-11005
2. Buch M.B. Fourth Survey of research in education N.C.E.R.T. Published
3. सच्चिदानंद ढौंढ़ियाल और शैक्षिक अनुसंधान का विधि शास्त्र, जयपुर अरविन्द फाटक (2003) राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी
4. एम.एल. मित्ताल (2001) 'शिक्षा सिद्धांत' लॉयत बुक डिपो, मेरठ।
5. डॉ. आर. ए. शर्मा (1995) शिक्षा अनुसंधान, आर लाल बुक डिपों मेरठ।
6. रायजदा बी.एस. (1997) शिक्षा मे अनुसंधान के आवश्यक तत्व,जयपुर राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी
7. शर्मा आर.के. (2007) बुनियादी शिक्षा एक नई कोशिश- अंक 14, उदयपुर, विद्याभवन शिक्षा संदर्भ केन्द्र, फतहपुरा, मोहन सिंह मेहता मार्ग।
8. शर्मा आर.के. (2007)बुनियादी शिक्षा एक नई कोशिश-अंक 11, उदयपुर-विद्याभवन शिक्षा संदर्भ केन्द्र, फतहपुरा, मोहन सिंह मेहता मार्ग।
9. एस.सी. गुप्ता (2003) सांख्यिकी विधियों, शारदा पुस्तक भवन इलाहाबाद।
10. सक्सेना स्वरुप एन.आर. (2004)शिक्षा के दार्शनिक एवं समाज शास्त्रिय सिद्धान्त, मेरठ, आर. लाल बुक डिपो।
11. श्रीमाली के. एल. (1960) वर्धा स्कीम, उदयपुर, विद्याभवन सोसायटी।
12. वर्मा रामपाल सिंह शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व, आगरा और अरविन्द फाटक (2003) विनोद पुस्तक मंदिर

लघु शोध ग्रन्थ -

1. चौधरी वर्षा.एम. (2004-05)'गुजरात और राजस्थान के शिक्षक महाविद्यालयों में अध्ययनरत भावी शिक्षकों के समायोजन तथा मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन।' (एम.एल.एस.यू. उदयपुर)
2. ओडेदरा हिना (2006-07)'राजकोट जिले में संचालित जीवनशाला का केस अध्ययन' (एम.एल.एस.यू. उदयपुर)

सारणी संख्या 1 - बुनियादी एवं सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों के सैद्धांतिक मूल्य में अन्तर

विद्यार्थी	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान की मानक त्रुटी	टी अनुपात	Level of significant
बुनियादी विद्यालय	41.37	5.12	1.33	2.91	0.01
सामान्य विद्यालय	45	6.71			

सारणी संख्या 2 - बुनियादी एवं सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों के आर्थिक मूल्य में अन्तर

विद्यार्थी	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान की मानक त्रुटी	टी अनुपात	Level of significant
बुनियादी विद्यालय	39.77	5.86	1.34	2.98	0.01
सामान्य विद्यालय	35.77	6.22			

सारणी संख्या 3 - बुनियादी एवं सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों के कलात्मक मूल्य में अन्तर

विद्यार्थी	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान की मानक त्रुटी	टी अनुपात	Level of significant
बुनियादी विद्यालय	28.32	7.34	1.92	3.29	0.01
सामान्य विद्यालय	34.65	9.78			

सारणी संख्या 4 - बुनियादी एवं सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों के सामाजिक मूल्य में अन्तर

विद्यार्थी	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान की मानक त्रुटी	टी अनुपात	Level of significant
बुनियादी विद्यालय	40.37	5.62	1.24	2.72	0.01
सामान्य विद्यालय	43.75	5.58			

सारणी संख्या 5 - बुनियादी एवं सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों के राजकीय मूल्य में अन्तर

विद्यार्थी	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान की मानक त्रुटी	टी अनुपात	Level of significant
बुनियादी विद्यालय	39.62	4.02	1.06	2.90	0.01
सामान्य विद्यालय	42.70	5.52			

सारणी संख्या 6 - बुनियादी एवं सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों के धार्मिक मूल्य में अन्तर

विद्यार्थी	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान की मानक त्रुटी	टी अनुपात	Level of significant
बुनियादी विद्यालय	38.77	6.32	1.34	2.72	0.01
सामान्य विद्यालय	42.42	5.79			

बुनियादी और सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों में वैज्ञानिक अभिक्षमता का एक अध्ययन

अमित शर्मा *

प्रस्तावना – एक व्यक्ति और सम्पूर्ण समाज के विकास में शिक्षा की महत्तवपूर्ण भूमिका है। शिक्षा के द्वारा मानव का सम्पूर्ण विकास होता है। शिक्षा के द्वारा उच्च कौशल युक्त मनुष्यों का निर्माण किया जा सकता हैं, जिससे वे समाज का आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक विकास कर सके।

प्राचीन भारत में शिक्षा सभी के लिए खुली थी। मध्यकाल में भी शिक्षा कुछ परिवर्तनों के साथ चलती रही। किंतु ब्रिटिशों ने अपने शासन की आवश्यकता को ध्यान में रखकर 1835 में मैकाले का शिक्षा कमीशन के द्वारा अंग्रेजी शिक्षण पद्धति को भारत में लागू किया, जिसके फलस्वरूप– हिंदुस्तानी बालक सामाजिक व भौतिक परिवेश से कट गया, गुरु शिष्य रिश्ते में दरार पड़ गयी, शिक्षा में विज्ञान, तथा तकनीक की अनदेखी की गई, एवं भारतीयों में नागरिकता की भावना व सामाजिक क्षमता का विकास अवरुद्ध हो गया।

अत: तत्कालीन भारतवर्ष की शिक्षा पद्धति में सुधार लाने के उद्देश्य से महात्मा गाँधी ने 1937 में वर्धास्कीम के माध्यम से बुनियादी शिक्षा (नई तालीम) पेश की। बुनियादी तालीम के अंतर्गत उद्योग केन्द्रित शिक्षा की बात की गई थी। बुनियादी शिक्षा के मुख्य सिद्धांत निम्नलिखित थे:–शिक्षकों के खर्च चलाने हेतु आत्मनिर्भर विद्यालय, 7 वर्ष के लिये मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा, आदि। बुनियादी शिक्षा के पाठ्यक्रम में विषयों का समावेश इस तरह किया जिससे भारतीय स्वावलम्बी बन सके।

बुनियादी शिक्षा के व्यक्गित उद्देश्यों में बालकों को सभी सम्मिलित विषयों की शिक्षा देना भी सम्मिलित था। इसमें वैज्ञानिक अभिक्षमता का विकास करना भी सम्मिलित था। बुनियादी शिक्षा मनोविज्ञान पर आधारित है। क्रिया द्वारा सीखना, भूल और प्रयास द्वारा सीखना, अनुकरण द्वारा सीखना आदि इसमें सम्मिलित है। इसमें वैज्ञानिक अभिक्षमता विकसित होती हैं।

अभिक्षमता शब्द को विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने विभिन्न तरीकों से परिभाषित किया किन्तु कुछ क्षेत्रों में ये परिभाषाएं एक मान्य हैं, जैसे– 'वर्तमान क्षमता, प्रशिक्षण की भूमिका, ग्रहण करना, प्रवीणता' तथा क्रिया में रुचि आदि।

वैज्ञानिक अभिक्षमता का शिक्षा में अपना स्थान है। वैज्ञानिक अभिक्षमता के विकास में शिक्षा एक सशक्त व्यवस्था है। विद्यालयों में देश का भावी भविष्य अर्थात् बालकों को तैयार करने के लिए उनमें वैज्ञानिक अभिक्षमता होना अनिवार्य है। वर्तमान आधुनिक सभ्यता व संस्कृति की दौड़ में शिक्षा में वैज्ञानिक अभिक्षमता को बनाए रखना हैं तो वैज्ञानिक अभिक्षमता का अध्ययन करना जरुरी है। इसी प्रेरणा से शोधार्थी ने अनुसंधान उपाधि की आंशिक पूर्ति हेतु समस्या चयन करते समय **'बुनियादी और सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों में वैज्ञानिक अभिक्षमता का एक अध्ययन'** करना अपना मूल उद्देश्य रखा। **नायक पी.के. (1965)** 'मनोवैज्ञानिक बुनियादी आवश्यकताओं एवं सामाजिक ढाँचे के संदर्भ में बुनियादी सिद्धांत व व्यवहार और भारतीय संविधान का समालोचनात्मक अध्ययन'(पी.एच.डी. शिक्षा,मद्रास वि.वि.) के अनुसार बुनियादी विद्यालय ने बच्चे की सुरक्षा में अपना योगदान दिया।

बुनियादी शिक्षा के व्यक्गित उद्देश्यों में बालकों की वैज्ञानिक अभिक्षमता को विकास करना भी सम्मिलित था। वैज्ञानिक अभिक्षमता दो शब्दों से मिलकर बना है–

वैज्ञानिक + अभिक्षमता = वैज्ञानिक अभिक्षमता।

लैटिन भाषा में Science का उद्भव Scientia शब्द से हुआ, जिसका तात्पर्य है जानना। अभिक्षमता अर्थात् अभिरुचि अथवा कौशल से है। अत: वैज्ञानिक अभिक्षमता से तात्पर्य विज्ञान के प्रति अभिरुचि से है।

प्राय: आनुवांशिक पृष्ठभूमि तथा विज्ञान को सीखना जैसे कुछ कारक वैज्ञानिक अभिक्षमता को निर्धारित करते है। कुछ कारक जैसे शारीरिक विकास, सामाजिक और भावात्मक परिपक्वता, नैतिक लक्षण, रुचि आदि भी वैज्ञानिक अभिक्षमता के विकास के लिए आवश्यक माने जा सकते है। **मूर तथा सटमान (1989)** ने एक माल सूची वैज्ञानिक अभिक्षमता का निर्माण करते हुए 109 व्यक्तियों पर सर्वेक्षण विधि से शोध करते हुए व्यक्तियों को धनात्मक बौद्धिक तथा नकारात्मक बौद्धिक में विभाजित किया।

बुनियादी शिक्षा एवं सामान्य शिक्षा से सम्बन्धित देश में पूर्व में अनेक शोध हुए है। शोधकर्त्ता ने बुनियादी एवं सामान्य शिक्षा विषय का चयन विद्याभवन शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय में अगस्त माह (वर्ष–2007) के अंतिम सप्ताह में बुनियादी शिक्षा पर आयोजित दो दिवसीय कार्यगोष्ठि में भाग लेने के बाद किया। विद्यालय में विद्यार्थियों को उद्यम आधारित ज्ञान प्राप्ति को देखकर शोधार्थी ने वहाँ के विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिक्षमता को परखने की इच्छा जाग्रत हुई।

अत: अनुसंधान हेतु शोधार्थी ने '**बुनियादी और सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों में वैज्ञानिक अभिक्षमता का एक अध्ययन'** हेतु अपने लघु शोध विषय के लिए चुनाव किया।

शोध प्रश्न – शोध अध्ययन करने से पूर्व शोधार्थी ने उपर्युक्त समस्या से सम्बन्धित निम्नलिखित प्रमुख शोध प्रश्न का निर्माण किया –

1. क्या बुनियादी शिक्षा विद्यालय, रामगिरी और सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिक्षमता में कोई अन्तर है?

समस्या के उद्देश्य – प्रस्तुत शोधकार्य के निम्नलिखित उद्देश्य शोधार्थी द्वारा निर्धारित किए गए –

* शोधार्थी ,विद्याभवन जी.एस. शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

1. बुनियादी शिक्षा विद्यालय, रामगिरी के विद्यार्थियों में वैज्ञानिक अभिक्षमता का पता लगाना।
2. सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों में वैज्ञानिक अभिक्षमता का पता लगाना।
3. बुनियादी शिक्षा विद्यालय, रामगिरी तथा सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिक्षमता की तुलना करना।

पारिभाषिक शब्दावली – प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्रयुक्त होने वाली महत्वपूर्ण शाब्दिक परिभाषाएँ निम्नलिखित है–

1. सामान्य शिक्षा– स्वामी विवेकानन्द के अनुसार 'हमें उस शिक्षा की आवश्यकता हैं, जिसके द्धारा चरित्र का निर्माण होता है। मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है, बुद्धि का विकास होता है, और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है।'

2. बुनियादी शिक्षा–ऐसी शिक्षा जो उद्यम आधारित हो ।

3. वैज्ञानिक अभिक्षमता Dressel (1963) "Scientific Aptitude as potentiality for future accomplishment in science without regard to past training and achievement"

समस्या की परिकल्पना–प्रस्तुत लघु शोधकार्य में शोधार्थी द्धारा निम्नलिखीत शून्य परिकल्पनाओं का निर्माण किया गया–

1. बुनियादी विद्यालय रामगिरी तथा सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिक्षमता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

समस्या का परिसीमन–प्रस्तुत अध्ययन हेतु उदयपुर नगर के अर्ध शहरी क्षेत्र के दो माध्यमिक विद्यालयों का चयन किया गया –

1. विद्या भवन माध्यमिक विद्यालय रामगिरी।
2. विद्या भवन माध्यमिक शिक्षा विद्यालय, झामरकोटड़ा।

न्यादर्श का चयन–दो माध्यमिक विद्यालयों में 80 (40+40) विद्यार्थियों का न्यादर्श के रूप में चयन यादृच्छिक प्रतिचयन विधि से किया गया।

शोध विधि–प्रस्तुत शोध में अध्ययन हेतु सर्वेक्षण विधि का चयन किया गया।

शोध उपकरण–प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु डॉ. के. के. अग्रवाल कृत वैज्ञानिक अभिक्षमता मानकीकृत परीक्षण का प्रयोग किया गया।

प्रविधि–प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु मध्यमान, मानक विचलन एवं टी अनुपात सांख्यिकी प्रविधियों को दत्तों के विश्लेषण में प्रयुक्त किया गया।

शोध अध्ययन की व्याख्या एवं निष्कर्ष– वैज्ञानिक अभिक्षमता की श्रेणियों के आधार पर अध्ययनरत विद्यार्थियों के विभिन्न वैज्ञानिक अभिक्षमता के उप परीक्षणों का मध्यमान, मानक विचलन तथा टी मूल्य को ज्ञात किया गया, एवं उससे निम्नलिखीत व्याख्या एवं निष्कर्ष प्राप्त हुए–

सारणी संख्या – 1 **(देखे अगले पृष्ठ पर)**

व्याख्या एवं निष्कर्ष – सारणी 1 की `t' अनुपात की तालिका में `t' का मान 0.01 विश्वास स्तर पर 2.64 है, जबकि गणना द्धारा प्राप्त `t' का मान 3.69 हैं, जो कि टेबल के मान से अधिक है। अत: निष्कर्ष निकलता हैं कि बुनियादी विद्यालय रामगिरी तथा सामान्य शिक्षा के विद्यालय के विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिक्षमता में अंतर है, इसलिए शून्य परिकल्पना द्धितीय अस्वीकृत की जाती है, एवं बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिक्षमता का मध्यमान 92.80 है, जो सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिक्षमता के मध्यमान 70.10 पर प्रभावी है। अत: प्राप्त आँकड़ों से यह निष्कर्ष ज्ञात होता है, कि बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों में वैज्ञानिक अभिक्षमता सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिक्षमता से अधिक है।

बुनियादी एवं सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिक्षमता के उप परीक्षणों के मध्यमानों का तुलनात्मक अध्ययन–

सारणी संख्या 2 – बुनियादी एवं सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों की तार्किक क्षमता के प्राप्तांकों के मध्यमानों में अंतर

क्रम संख्या	विद्यालय	मध्यमान
1	बुनियादी विद्यालय	23.2
2	सामान्य विद्यालय	17.17

व्याख्या एवं निष्कर्ष – सारणी संख्या 2 का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों की तार्किक क्षमता का मध्यमान 23.2 हैं जो सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों का मध्यमान 17.17 पर प्रभावी है। अत: बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों की तार्किक क्षमता सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों की तार्किक क्षमता पर प्रभावी हैं।

सारणी संख्या 3 – बुनियादी एवं सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों की गणितीय क्षमता के प्राप्तांकों के मध्यमानों में अंतर

क्रम संख्या	विद्यालय	मध्यमान
1	बुनियादी विद्यालय	22.95
2	सामान्य विद्यालय	16.55

व्याख्या एवं निष्कर्ष – सारणी संख्या 3 का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों की गणितीय क्षमता का मध्यमान 22.95 हैं जो सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों का मध्यमान 16.55 पर प्रभावी है। अत: बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों की गणितीय क्षमता सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों की गणितीय क्षमता पर प्रभावी हैं।

सारणी संख्या 4 बुनियादी एवं सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों की विज्ञान सूचना परीक्षण के प्राप्तांकों के मध्यमानों में अंतर

क्रम संख्या	विद्यालय	मध्यमान
1	बुनियादी विद्यालय	22.25
2	सामान्य विद्यालय	17.55

व्याख्या एवं निष्कर्ष – सारणी संख्या 4 का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों की विज्ञान सूचना परीक्षण का मध्यमान 22.25 हैं जो सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों का मध्यमान 17.55 पर प्रभावी है। अत: बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों की विज्ञान सूचना क्षमता सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों की विज्ञान सूचना क्षमता पर प्रभावी हैं।

सारणी संख्या 5 – बुनियादी एवं सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों की विज्ञान शब्द कोष परीक्षण के प्राप्तांकों के मध्यमानों में अंतर

क्रम संख्या	विद्यालय	मध्यमान
1	बुनियादी विद्यालय	25.82
2	सामान्य विद्यालय	18.82

व्याख्या एवं निष्कर्ष – सारणी संख्या 5 का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों की विज्ञान शब्द कोष परीक्षण का मध्यमान 25.82 हैं जो सामान्य विद्यालय के विज्ञान शब्द कोष परीक्षण के मध्यमान 18.82 पर प्रभावी है। अत: बुनियादी विद्यालय के विद्यार्थियों की

विज्ञान शब्द कोष क्षमता सामान्य विद्यालय के विद्यार्थियों की विज्ञान शब्द कोष क्षमता पर प्रभावी हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1. अग्रवाल जे.सी. (1964), शैक्षिक अनुसंधान, न्यू देहली–11005
2. Buch M.B. Fourth Survey of research in education N.C.E.R.T. Published
3. D. Baskara Rao (1996), Scientific Attitude Vis-à-vis : Scientific Aptitude Discovery Publishin House New Delhi.
4. सच्चिदानंद ढौंढ़ियाल और शैक्षिक अनुसंधान का विधि शास्त्र, जयपुर अरविन्द फाटक (2003) राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी
5. Good C.V. (1957) Methodology of education Research New York M.C. Cara Whaleboat Co.
6. एम.एल. मित्ताल (2001)'शिक्षा सिद्धांत' लॉयत बुक डिपो, मेरठ।
7. डॉ. आर. ए. शर्मा (1995) शिक्षा अनुसंधान, आर लाल बुक डिपों मेरठ।
8. रायजदा बी.एस. (1997)शिक्षा मे अनुसंधान के आवश्यक तत्व,जयपुर राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी
9. शर्मा आर.के. (2007)बुनियादी शिक्षा एक नई कोशिश– अंक 14, उदयपुर, विद्याभवन शिक्षा संदर्भ केन्द्र, फतहपुरा, मोहन सिंह मेहता मार्ग।
10. शर्मा आर.के. (2007)बुनियादी शिक्षा एक नई कोशिश–अंक 11, उदयपुर–विद्याभवन शिक्षा संदर्भ केन्द्र, फतहपुरा, मोहन सिंह मेहता मार्ग।
11. एस.सी. गुप्ता (2003) सांख्यिकी विधियों, शारदा पुस्तक भवन इलाहाबाद।
12. सक्सेना स्वरुप एन.आर. (2004) शिक्षा के दार्शनिक एवं समाज शास्त्रिय सिद्धान्त, मेरठ, आर. लाल बुक डिपो।
13. श्रीमाली के. एल. (1960)वर्धा स्कीम, उदयपुर, विद्याभवन सोसायटी।
14. वर्मा रामपाल सिंह शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व, आगरा और अरविन्द फाटक (2003) विनोद पुस्तक मंदिर

लघु शोध ग्रन्थ –

1. ओडेदरा हिना (2006–07) 'राजकोट जिले में संचालित जीवनशाला का केस अध्ययन' (एम.एल.एस.यू. उदयपुर)

सारणी संख्या – 1

बुनियादी शिक्षा विद्यालय रामगिरी तथा सामान्य शिक्षा के विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिक्षमता में अंतर

विद्यार्थी	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान की मानक त्रुटी	टी अनुपात	Level of significant
बुनियादी विद्यालय	92.80	30.02	6.15	3.69	0.01
सामान्य विद्यालय	70.10	24.80			

****

उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यालयों की कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी की तुलना

डॉ. अर्चना श्रीवास्तव * सोनाली सूर्ये * *

प्रस्तावना – पर्यावरण प्राणी जगत के जीवन,प्रकृति, व्यवहार,वृद्धि विकास और परिपक्वता को प्रभावित करने वाली बाहरी शक्तियों और प्रभावों का वर्णन करता है। पर्यावरण एक व्यापक शब्द है जो उन संपूर्ण शक्तियों,परिस्थितियों और वस्तुओं का योग है जो मानव को प्रभावित करती है तथा उसके क्रियाकलापों को अनुशासित करती है। लैण्डिस ने पर्यावरण के तीन प्रमुख भाग बतलाये हैं प्राकृतिक पर्यावरण, सामाजिक पर्यावरण तथा सांस्कृतिक पर्यावरण। प्राकृतिक ,सामाजिक और सांस्कृतिक पर्यावरण की संपूर्णता को ही संपूर्ण पर्यावरण कहा जाता है। पर्यावरण इसके घटकों तथा मानव द्वारा विकसित आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक संगठनों से ही एक प्रदेश के 'पारिस्थितिक तंत्र' का निर्माण होता है और इसके संतुलन पर मानव प्रगति निर्भर करती है।

'पारिस्थितिकी' एक व्यवस्थित पर्यावरण विज्ञान है जो मानव, अन्य जीवों एवं पर्यावरण के परस्पर प्रभाव का अध्ययन एवं विश्लेषण करता है। संक्षेप में पारिस्थितिकी पर्यावरण एवं जीवों के अंतर्संबंधों का अध्ययन है। पारिस्थितिकी का प्रारंभिक स्वरूप मात्र वनस्पति तथा जीव जंतुओं तक ही सीमित था किंतु वर्तमान में इसकी बहुमुखी शाखाओं का विकास हुआ है क्योंकि अब यह एक व्यावहारिक विज्ञान के रूप में प्रतिष्ठित है। इसका सर्वाधिक उपयोग मानवीय क्रियाओं के अध्ययन में किया जा रहा है। इसी कारण अनेक समस्याओं के समाधान हेतु 'मानव पारिस्थितिकी तथा सामाजिक पारिस्थतिकी' जैसी संकल्पनाओं का विकास हुआ ।

सामाजिक पारिस्थितिकी किसी समुदाय में मनुष्यों और मानवीय संस्थाओं और उनसे बनने वाले क्षेत्रीय प्रतिमानों के सबंधों का अध्ययन है। इसका संबंध एक क्षेत्र की उन सभी भौगोलिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक विशेषताओं से है तो समुदाय को एक विशेष चरित्र प्रदान करती है। वहीं व्यक्ति भी अपनी बुद्धि और कुशलता से इन दशाओं में इस प्रकार परिवर्तन करने की कोशिश करता है जिससें वह इन्हें अपने अनुकूल बना सके। इसी कारण सामाजिक पारिस्थितिकी को पर्यावरण तथा समुदाय की अंतर्क्रिया को स्पष्ट करने वाली दशा कहा जाता है। समाज का ही लघुरूप विद्यालय है। बालक पर परिवार के बाद विद्यालय का प्रभाव देखा जाता है। इसलिये विद्यालय पारिस्थितिकी तथा उसके अंतर्गत कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी का अध्ययन किया जाता है।

वर्तमान में शिक्षा पारिस्थितिकी को 'कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी' के रूप में जाना जाता है। कक्षा के वातावरण में दो जीवंत शक्तियॉ है जो परस्पर क्रियारत रहती हैं। वे है ' विद्यार्थी और 'शिक्षक'। इनमें निरंतर परस्पर क्रिया चलती रहती है। इस प्रणाली का प्रत्येक पक्ष अन्य पक्षों को प्रभावित करता रहता है। कक्षाकक्ष की विशेषतायें, शिक्षण कार्य,विद्यार्थियों की आवश्यकतायें ये सभी कक्षाकक्ष के वातावरण को प्रभावित करते हैं। विद्यालय की कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी से अभिप्राय शिक्षक विद्यार्थी अंत:क्रिया, भौतिक स्थिति तथा मनोसामाजिक वातावरण का संगठन है।

कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी एक व्यापक प्रत्यय है। संकल्पना के आधार पर इसके प्रमुख घटक इस प्रकार है – 1. शिक्षक विद्यार्थी अन्त:क्रिया – (i) शिक्षक (ii) विद्यार्थी (iii) शिक्षक विद्यार्थी अंत:क्रिया। 2. भौतिक परिस्थितियाँ – (i) विद्यालय परिसर (ii) कक्षा में प्रकाश एवं वायु प्रसरण व्यवस्था (iii) कक्षा की बैठक व्यवस्था (iv) कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या (v) कक्षा का आकार (vi) श्यामपट की स्थिति (vii) शैक्षिक सामग्री को रखने की व्यवस्था आदि। 3. मनोसामाजिक वातावरण (i) अभिभावक संबंध (ii) निर्देशन कार्यक्रम (iii) स्वास्थ्य शिक्षा कार्यक्रम(iv) शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम

कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी का प्रत्येक घटक विद्यार्थी पर अपना प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्क्ष प्रभाव डालता है। कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी शैक्षिक गुणवत्ता को प्रभावित करती है। एक शिक्षक कक्षा का वातावरण जिस प्रकार का निर्मित करता है, उसी के अनुरूप विद्यार्थियों को अनुभव प्राप्त होते है। उचित एवं अनुकूल वातावरण विद्यार्थियों हेतु प्रेरणादायक बनकर उनके अधिगम में तीव्रता लाता है। उसके विपरीत कक्षाकक्ष का वातावरण अनुकूल ना होने पर विद्यार्थियों में शिक्षण के प्रति अरूचि उत्पन्न होती है। कक्षाकक्ष में उपलब्ध परिस्थितियाँ, वातावरण तथा संसाधनों का शिक्षण प्रक्रिया एवं उसके परिणामों को उपयुक्त अथवा अनुपयुक्त दिशा प्रदान करने में बहुत बड़ा योगदान होता है। इन सभी तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए शोधकर्ता द्वारा 'उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यालयों की कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी की तुलना' का शोधकार्य हेतु चयन किया गया है।

उद्देश्य –उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न विद्यालयों की कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी की तुलना करना।

परिकल्पना – उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न विद्यालयों की कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी में सार्थक अंतर नहीं है।

प्रविधि – प्रस्तुत अध्ययन सर्वेक्षण विधि पर आधारित है। इस अध्ययन में न्यादर्श के रूप में देवास शहर के तीन उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के कक्षा 10 के कुल 90 विद्यार्थियों का चयन किया गया । एक शासकीय विद्यालय महारानी राधाबाई उच्चतर माध्यमिक कन्या शाला (बालिका शिक्षा तथा हिन्दी माध्यम) एवं दो अशासकीय विद्यालयों,विद्या भारती द्वारा संचालित सरस्वती विद्या मंदिर (सहशिक्षा एवं अंग्रेजी माध्यम) एवं मिशनरी द्वारा संचालित सैंट मैरीज कॉन्वेंट विद्यालय सहशिक्षा एवं अंग्रेजी माध्यम। इन विद्यालयों से क्रमश: 30 बालिकाओं, 20बालकों तथा 10 बालिकाओं,15

* शोध निर्देशक, बी.सी.जी. शिक्षा महाविद्यालय, देवास (म.प्र.) भारत ** शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

बालकों तथा 15 बालिकाओं को न्यादर्श के रूप में सम्मिलित किया गया। कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी के अध्ययन के लिए क्षीरसागर (2012) द्वारा निर्मित 'कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी' परीक्षण का उपयोग किया गया। इस परीक्षण की सहायता से कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी से संबंधित 03 आयामों का अध्ययन किया गया छात्र–छात्रा अंत:क्रिया,शिक्षक–छात्र अंत:क्रिया तथा मनोसामाजिक वातावरण। कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी का मापन प्रमाणित विवरण पुस्तिका की सहायता से परीक्षण की जॉच करके किया गया। प्रत्येक विद्यार्थी द्वारा प्राप्त किये गये कुल अंकों के रूप में कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी का मापन किया गया। प्राप्त प्रदत्तों का विश्लेषण "Analysis of Variance (ANOVA)' द्वारा किया गया। प्राप्त परिणाम तालिका क्रमांक – 01 में दिये गये हैं।

तालिका क्रमांक 01

उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न विद्यालयों की कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी

Sr. No	Sources of Variance	df	SS(Capital)	MSS	F-Value
01.	Among Group	02	30476.06	15238.03	569.475**
02.	Within Group	87	2327.96	26.758	
	Total	89			

0.01 स्तर पर सार्थक

तालिका क्र.01 के अनुसार F का मान 569.475 पाया गया जो 0.01 स्तर पर 2/89 के लिये सार्थक पाया गया। यह मान प्रदर्शित करता है कि विभिन्न विद्यालयों की कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी में सार्थक अंतर पाया गया। इस संदर्भ में अध्ययन की शून्य परिकल्पना 'उच्च माध्यमिक स्तर के विभिन्न विद्यालयों की कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी में सार्थक अंतर नहीं है, स्वीकृत नहीं की जाती है। विभिन्न विद्यालयों की कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी के मध्य मध्यमानों के अंतर के लिये 'टी–परीक्षण' लगाया गया तथा परिणाम तालिका क्रमांक –02 में दिये गये हैं –

तालिका क्रमांक – 02

विभिन्न विद्यालयों की कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी की तुलना के लिये M,S,D,N एवं t के मान का विवरण –

क्र.	विद्यालय का नाम	M	SD	N	का मान
01.	महारानी राधाबाई उच्चतर माध्यमिक कन्या शाला, सरस्वती विद्या मंदिर	88.63 116.4	9.47 10.08	30 30	11.66
02.	सरस्वती विद्या मंदिर, सैंट मैरीज कॉन्वेंट	116.4 133.26	10.08 5.42	30 30	8.55
03.	सैंट मैरीज कॉन्वेंट, महारानी राधाबाई उच्चतर माध्यमिक कन्या शाला	133.26 88.63	5.42 9.47	30 30	

0.01 स्तर पर सार्थक –

प्राप्त परिणामों से स्पष्ट होता है कि उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न विद्यालयों की कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी में पर्याप्त अंतर है। अत: विभिन्न विद्यालयों में उपयुक्त कक्षाकक्ष पारिस्थितिकी का निर्माण किया जाना चाहिये,कक्षाकक्ष के वातावरण में सुधारात्मक परिवर्तन किये जाने चाहिये। जिससे विद्यार्थियों को उचित वातावरण प्रदान कर शिक्षण को अधिक प्रभावशाली बनाया जा सकता है। विद्यार्थियों की अधिगम में रूचि उत्पन्न की जा सकती है,तथा उन्हें उचित अधिगम अनुभव प्रदान करके उनके सर्वांगीण विकास को सुनिश्चित किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सक्सेना, हरिमोहन (1999), 'पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी भूगोल',जयपुर, राजस्थान : हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
2. सक्सेना ,निर्मल (2006), शैक्षिक प्रोद्योगिकी एवं कक्षा कक्ष प्रबंधन, जयपुर : आस्था प्रकाशन।
3. सक्सेना,विनोद बिहारी (1995), ' पर्यावरण पारिस्थितिकी एवं स्वास्थ्य, भोपाल,मध्यप्रदेश : हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
4. शर्मा,आर.ए. (2006) 'शिक्षा अनुसंधान' मेरठ : आर.लाल बुक डिपो।

****

शारीरिक शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न समस्याओं से जुझता एक अध्यापक की सोच

युवराज श्रीवास्तव * जय शंकर यादव * *

प्रस्तावना – शारीरिक शिक्षा एक व्यापक क्षेत्र है। जिसमें विभिन्न कर्तव्यों को अध्यापन के समय उसे कक्षा में व मैदानों में कार्य करना एवं प्रशिक्षण की जानकारी देकर विभिन्न क्रियाओं का अभ्यास कराना होता है। समस्त विद्यार्थियों को एक साथ इकठ्ठा कर विषय अथवा खेल से संबंधित जानकारियों को समझाना अथवा ड्रिल का अभ्यास भी कराना पड़ता है। विद्यालयों में अनेकों प्रकार के कार्यक्रमों समारोह का आयोजन कर सफलता पूर्वक खेल आयोजन तथा अनेकों कार्यक्रमों में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करना पड़ता है। इसके साथ–साथ वार्षिक परीक्षा की तैयारी भी करनी पड़ती है। खेलों के विभिन्न उपकरणों को भी व्यवस्थित करना पड़ता है। लोग इसे आसान कार्य समझते है वह इतना आसान नहीं होता। इन कार्यक्रमों को पूरा करने अथवा पूरा करवाने में शारीरिक शिक्षा के अध्यापकों को अनेको प्रकार के समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

1. **संस्थाओं में अनुशासन से निपटता अध्यापक –** किसी भी शिक्षण संस्थानों में अनुशासन की आवश्यकता को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। यह आवश्यक है कि संस्थाओं में अनुशासन को सर्वप्रथम प्राथमिकता दी जाती है। परन्तु अध्यापक तो कक्षा में विषय पढ़ाने वाले अध्यापक विद्यार्थियों को अनुशासन में तो रखता ही है परन्तु कक्षा का तो अध्यापक होता है उसकी क्लास बदलते ही उसका दायित्व बदल जाता है। लेकिन पूरे संस्थाओं में अनुशासन का दायित्व केवल शारीरिक शिक्षण विभाग के अध्यापक का ही होता है। ये केवल व्यक्ति विशेष के लिए नहीं होता, पर शारीरिक शिक्षा के अध्यापक ही इस अनुशासन को संभाल कर उसे एक संस्था के विशेष कर्तव्यों के सबसे महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। किसी भी प्रकार के आयोजन/सभाओं एवं अनेकों कार्यक्रमों के सफल आयोजन कर शारीरिक षिक्षण के अध्यापक का दायित्व अधिक होता है।

2. **मैदानों की समस्या खेल में प्रभाव** – हम देखते हैं कि अनेकों समस्याओं में यह भी एक बड़ी समस्या है कि संस्थाओं में शारीरिक शिक्षा की जितनी भी क्रियाओं का विषय है एवं सफल आयोजन संचालन के लिए पर्याप्त खेलों का मैदान नहीं होता है। जबकि शारीरिक शिक्षा में मैदान एक क्रिया करने का एक महत्वपूर्ण स्थान है। शारीरिक शिक्षा के क्षेत्र में मैदान एक अंग स्वरूप माना गया है जिस संस्थाओं में मैदानों की कमी नहीं होता तो उस शारीरिक शिक्षण विभागों से जुडे .या कार्य करने वाले अध्यापकों को खेलों के संबंधित क्रिया करने व करवाने में समस्याओं का सामना कर ग्लानी महसूस करना पड़ता है। हमें देखने को अक्सर मिलता है कि अनेकों संस्थाओं में मैदानों की कमी/पर्याप्त मैदान नहीं होता है। वहां शारीरिक क्रियाओं को कराने में भी कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। जिससे सफल संचालन कियात्मक रूप–रेखा के नहीं हो पाते है। ऐसे विद्यालय जहां मैदानों की पर्याप्त पाते है। ऐसे विद्यालय जहां मैदानों की पर्याप्त व्यवस्था है। वहां सफल संचालन क्रिया होते है। शारीरिक शिक्षा के क्षेत्र में अध्यापक को किसी प्रकार की क्रिया से संबंधित मुश्किल भी नहीं होती है।

3. **सुसज्जित योजना –** शारीरिक शिक्षण विभाग द्वारा उपकरणों की देख रेख व उसे सुसज्जित कर व्यवस्थित रख रखाव की आवश्यकता एक जिम्मेदारी होती है जिसमें अध्यापक अध्यापन के साथ–साथ अपने सक्रिय दायित्व में क्रियाओं एवं प्रशिक्षण अभ्यास करने के साथ–साथ उपकरणों की व्यवस्था भी करता है। इन समानों के रख रखाव उचित देखभाल एक बड़ी समस्या है अनेकों संस्थाओं के एक आर्थिक समस्या बड़ी समस्या होती है। जिस संस्थाओं में पर्याप्त पैसा होता है उपकरण को खरीदने के लिए उनके फंड में इतने पैसे नहीं होते कि सामान या उपकरण को बार–बार खरीद सके। कुछ संस्था में यह भी देखने को मिलता है कि खेल उपकरण तो उपलब्ध है पर व्यवस्थित कर एवं उसे सुसज्जित कर रखनें की व्यवस्था पर्याप्त नहीं होती। पर्याप्त उपकरण के रहते हुए भी शारीरिक शिक्षक को खेल से संबंधित सभी सामग्रीयों को व्यवस्थित रखने के बारे में अनेकों समस्याओं से जुझता है।

4. **समस्याओं से जुझता अध्यापक –** शारीरिक शिक्षा के क्षेत्र में कई योग्यताओ से भरे रूचिकर्ता, विभिन्न क्षमताओं के स्तरों के साथ अध्यापक को संबंध रखना होता है। सभी विद्यार्थियों की शारीरिक रूपरेखा, क्रिया करनें की क्षमता एक जैसी नहीं होती विद्यार्थियों में अलग अलग क्षमता एवं योग्यताऐ पाई जाती है और अध्यापक विद्यार्थियों को परख कर उसे अनुशासन में रखता है। शारीरिक शिक्षण पद्धति में शारीरिक शिक्षा के क्रियात्मक ढंग से परखने व सीखाने के लिए विद्यार्थियों में सुयोग्य छात्रों की पहचान करना होता है। इस चयन प्रकिया में अधिक समस्या होती है क्योंकि उसकी पहचान न केवल किसी कक्षा में व पूरे संस्थाओं से परिचित होता है।

5. **पुस्तको की कमियां संस्थाओं की खामी** – हम देखते है कि संस्थाओं में एक पुस्तकालय होता है। जिसमें विभिन्न विभागों के पुस्तक शामिल होती है। एवं संस्थाओं में बच्चों/विद्यार्थियों को अधिक ज्ञान अर्जित हो एवं अध्ययन के समय किसी विषय की चूक हो तो लाइब्रेरी जाकर उसे पूर्ण कर सकें। शारीरिक शिक्षा सभी विषयों से एक अनोखा विषय है जिसमें लगातार शिक्षा के क्षेत्र विकास होता रहता है। कुछ न कुछ और विकास होने की संभावना लगातार बनी होती है। शारीरिक शिक्षा में लगातार टेक्निकल परिवर्तन/बदलाव समय–समय पर होते रहते है। लगातार उसे विकसित करने की योजना ज्ञान या कुछ सीखने के लिये अति आवश्यक है। पर्याप्त मात्रा में शारीरिक शिक्षा से जुड़े अनेकों किताबों एवं नई–नई पुस्तकें का ज्ञान प्राप्त हो। यह अभाव है कि शारीरिक शिक्षा से जुड़े विभिन्न प्रकार की पुस्तकों को प्राप्त करने की जिज्ञासा नहीं होती है।इसलिये संस्था में शारीरिक शिक्षा से

* सहायक प्राध्यापक (शारीरिक शिक्षा) डॉ. सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कारगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (शारीरिक शिक्षा) डॉ. सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कारगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

जुड़ी पुस्तको की कमी, समय पर किताबो की उपलब्धता नहीं हो पाती जिससे आध्यापक को समस्यों से जुझना पड़ता है।

6. संस्था में कार्य एवं अनेकों कार्यक्रमों में भागीदारी – किसी शिक्षण संस्थाओं में व्यायाम शिक्षक स्कूल में अनुशासन बनाये रखने उसको नियंत्रण रूप रेखा प्रदान करने हेतु शारीरिक शिक्षक की नियुक्ति की जाती है। अध्यापन को अपने कार्य के साथ–साथ और भी अनेकों प्रकार के कार्य करने पड़ते है। इतना भार होता है कि किसी कार्य को सफलतापूर्व एवं कुशलता पूर्ण आयोजन नहीं कर सकता जिससे उसको शर्मिंदगी सी प्रतीत होती है।

7. शारीरिक शिक्षा में सफल अध्यापक का योगदान – बीते समय को अगर हम देखें कि जो पहले अध्यापन कार्य पाठशालाओं स्कूल एवं कालेजों का अध्यापन हुआ करता था वह कोई विशेष स्थान ग्रहण नहीं कर पाते थे। परन्तु आज के इस बदलते समय के अनुसार लोगों का नजरीया सोच–विचार शारीरिक शिक्षा के प्रति बदल चुका है। कुछ समय पूर्व प्रतियोगिता के समय पर कुछ–कुछ प्लेयर (खिलाड़ी) का चयन कर दल बनायी जाती थी। जो प्रतियोगिता में भेज दी जाती थी। पर आज के इस वर्तमान युग में हर एक विद्यार्थी के समक्ष शारीरिक शिक्षा एक महत्वपूर्ण और सराहनीय विषय बन गया है। शारीरिक शिक्षा का विषय अगर किसी स्कूल में नहीं है या कालेज में नहीं है तो उस संस्था को अपंगता स्वरूप माना जाता है। आज के समय विद्यार्थियों के पूरे विकास के क्षेत्र को नजर में रखते हुए स्कूलों एवं कॉलेजों में अनिवार्य विषय बना दिया है। किसी कार्यक्रमों को सफल संचालन के लिए अधिक ध्यान दिया जाता है। शारीरिक शिक्षा के क्षेत्र को इतना अधिक महत्व दिया गया है जो आज के शारीरिक शिक्षा में तेज गति से बढ़ते जा रहा है। शारीरिक शिक्षण में अध्यापक द्वारा जो अध्यापन कार्य किया जा रहे है। वह केवल अध्ययन ही नहीं बल्कि शारीरिक योग्यताएं, सहनशीलता क्षमताओं के विकास के लिए अनेकों कार्यक्रमों को भी शामिल किया जाता है। साथ ही अनुशासन, व्यवहार, सोच विचार मनोरंजनात्मक वातावरण का अनुभव भी प्रदान की जाती है। जो शारीरिक शिक्षा में अध्यापकों द्वारा विद्यार्थियों को एक मानवीय व्यवहार से अच्छे व्यक्तित्व का धनी बने। अध्यापक इस कार्य के लिए विशेष विषय का अध्ययन करके आता है। जो एक विशिष्ठ प्रशिक्षण होता है।

8. शारीरिक शिक्षा का समय एक अनमोल पल – अध्यापन कार्य करने के साथ उसके समय पर विशेष ध्यान दिया जाये जो शारीरिक शिक्षा के प्रति विद्यार्थियों में एक जागरूकता और जिज्ञासा उत्पन्न होगी जो उसके बौद्धिक और मानसिक विकास में सहायक सिद्ध हो सकता है। जैसा कि कहा जाता है कि खेलों का संबंध स्वास्थ्य के साथ जुड़ा होता है। हमारे वेद पुराणों में प्रात: काल उठ कर प्रणायाम ध्यान तथा अनुरूप शारीरिक क्रिया करने पर जोर दिया गया है। वर्तमान में किसी भी खेल में शारीरिक क्रियाओं के साथ ध्यान एवं एकाग्रता कि आवश्यकता होती है जो कि वर्तमान परिवेश में विद्यालयीन खेल के समय को सही बनाकर पूरा किया जा सकता है। जैसा कि वर्तमान समय में विद्यार्थियों में शारीरिक शिक्षा को दरकिनार कर दिया गया है। जो मात्र बच्चों को बस्ते का बोझ ढोनें और गृहकार्य की अधिकता छात्र व छात्राओं को मनोरोगी बना रहा है। जिसे बदलना चाहिये।

निष्कर्ष – शारीरिक शिक्षा के क्षेत्र में अगर शारीरिक शिक्षकों की समस्याओं का निराकरण/समाधान करना सर्वप्रथम प्राथमिकता होनी चाहिए जो सरकार को इस ओर ध्यान देना चाहिए जिससे की शिक्षकों को निराशा हासिल न हों। शारीरिक शिक्षकों को उनके प्रयत्नों को सराहनीय रूप दे कर उसे प्रोत्साहित करना चाहिए। किसी भी कार्यों को अनुशासन शिक्षकों के सहयोग से उनका समाधान हो सकता है। शारीरिक शिक्षकों का उद्देश्य पीछे हटने का नही होना चाहिए, बल्कि उसमें सहनशीलता होना चाहिए। आगे बढ़ने की चाहत होनी चाहिए और विभिन्न समस्याओं से शारीरिक शिक्षक को हमेशा समाधान का हल करनें के लिए प्रयासरत रहना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शारीरिक शिक्षा की व्याख्या तथा खेल मनोरंजन, श्रीमती आर. के. शर्मा, ए. एस. तोमर, श्री कृश्ण दुबे, आर. के. दीक्षित,
2. शारीरिक शिक्षा का संगठन, प्रशासन पर्यवेक्षण एवं व्यवस्था, श्रीमती आर. के. शर्मा, ए. एस. तोमर, श्री कृष्ण दुबे, आर. के. दीक्षित।

****

A Comparative Study Of Personality Characteristics Between Sports Person And Non-Sports Person Of Degree College Of Physical Education

Prashant Kumar *

Abstract - The aim of the study was to find out the difference between the personality characteristics of sports person and non-sports person of D.C.P.E. Amravati. To fulfill the purpose of the study 20 sports person and 20 non sports person were selected as the subjects. The age was ranging from 18-28 years. The data were collected on entire selected subject through H.J Eysenck's Maudesly Personality Inventory questionnaire. For the purpose of comparison t test was employed at certain level of degree of freedom with 0.05 level of confidence. The result of the study revealed the obtained t values i.e. t=0.29 and t=0.40 of personality characteristics with respect to Extraversion and Neuroticism respectively was not significantly differing between the sports person and non sports person and hence the hypothesis was rejected.

Introduction - The word personality is derived from Latin word 'persona' meaning 'the mask'. The human personality is a marvelously intricate structure, delicately woven of motives, emotions, habits, and thoughts into a pattern that balances, however precariously, the pulls and pushes of the world outside. Personality is the total sum of his 'being' and includes physical, mental, social, emotional, and intellectual aspects. One's personality reflects his perception, imagination, attitude, instincts, habits, values, interests, and sentiments about himself and his self-worth. The term personality refers to a peculiar blend of characteristics that make a person unique. Personality is sometimes confused with character and we often find people treating these two terms as synonymous. The Normal Personality, Reiss argues that human beings are naturally intolerant of people who express values significantly different from their own personal troubles, and mental illnesses. Another thing that throws some people about personality theories is that they come into it thinking it's the easiest topic of all, and that everyone — especially they themselves — already knows all the answers. Well, it's true that personality theories don't involve all the higher math and symbolic systems that physics and chemistry (the famously "tough" courses!) involve. And it's true that we all have pretty direct access to our own thoughts and feelings, and plenty of experience dealing with people. But we are mistaking familiarity with knowledge, and in much of what we think we know turns out to be prejudices and biases we've picked up over the years. For this purpose the researcher decided to initiate some research for clarifying term personality in its own terms.

Statement of Problem - "A comparative study of Personality characteristics between sports person and non-sports person of Degree College of Physical Education Amravati".

Significance of the Study -

1. The study will help to know about personality characteristics between sports person and non-sports person.
2. The study will be helpful to the teachers, students to take preventive measures to minimize psychological stress.
3. This study will give information about how to extraversion and neuroticism influence the performances.
4. This would be helpful to detach the misunderstanding about the personality.
5. This study would help also be help to spread the aim and objectives of the physical education programme in schools.

Objectives -

The primary objective was:

1. To measure the personality characteristics between sports person and non-sports person students of Degree College of Physical Education Amravati.
2. The study would be helpful to determine the student's personality profile.
3 The study would help to measure the personality profile.
4. The study will help to measure the characteristic difference of students.

Delimitations -

1. This study was delimited to 20 sports person and 20 non-sports person of Degree College of Physical Education Amravati.
2. The study was delimited to non-sports person students studying from P.G courses of Degree College of Physical Education Amravati.
3. The study was further delimited to the student age ranged between 18-28 years.

* Research Scholar, Amravati (Maharashtra) INDIA

Limitations -

1. This study was limited to certain factors like habits, diet and routine activities were not taken in to consideration.
2. The atmosphere changes were not taking in to consideration during the period.
3. There was no control daily routine.

Hypothesis -

1. It was hypothesized that there might be would be no significant differences of extraversion between sports person and non-sports person of D.C.P.E, Amravati.
2. It was further hypothesized that there might be no significant differences of Nerotisicim between sports person and non-sports person of D.C.P.E., Amravati.

Methodology - For the purpose of this study 20 sports person and 20 non sports person were selected as the subjects. The age was ranging from 18-28 years.

Selection of Tests and Criterion Measure -

- **Selection of Tests -** For the purpose of comparison between sports person and non sports person H.J Eysenck's Maudesly Personality Inventory questionnaire was instrumented as a test. The selection of this test was based on availability of subjects.
- **Criterion Measure -** The following tables show the personality Characteristics of sports person and non-sports person with respect to Neuroticism, and Extraversion of D.C.P.E. Amravati.

Table No-1 : Shows the mean difference of sports person and non-Sports Person in Extraversion

Test	Means	S.D.	t- value
Sports Person	12	3.27	**0.29**
Non Sports Person	12.25	2.77	

N=20

N.S.= Not significant

The Table no-1 shows that personality characteristics of sports person and non-Sports person with respect to Extraversion. The means of sports and non sports person are 12 and 12.25 respectively. Since the t value in above table is t = 0.29 which is insignificant at 0.05 level of confidence and hence there is no significant difference in personality characteristics of sports person and non-sports person with respect to extraversion.

Table No-2 : Shows the mean difference of sports person and non-sports person students in Neuroticism

Test	Means	S.D.	t- value
Sports person	12.25	3.83	**0.40**
Non - Sports Person	11.55	5.29	

N=20

N.S.= Not significant

The Table no-1 shows that personality characteristics of sports person and non-Sports person with respect to Neuroticism. The means of sports and non sports person are 12.25 and 11.55respectively. Since the t value in above table is t = 0.40 which is insignificant at 0.05 level of confidence and hence there is no significant difference in personality characteristics of sports person and non-sports person with respect to neuroticism.

Discussion of Finding -

1. With respect to personality characteristics of sports person and non-sports person in considering with extraversion the mean values are obtained as of 12 and 12.25 respectively which are given in Table -01 and it reveals that there was no significant difference of personality profile between sports person and non-sports person. Hence the hypothesis was rejected.
2. With respect to personality profile of sports person and non-sports person in considering with Neuroticism the mean values are obtained as of 12.25 and 11.55 respectively which are given in Table -02 and it reveals that there was no significant difference of personality characteristics between sports person and non-sports person. Hence also the hypothesis was rejected.

Conclusion -

1. There was no significant difference of personality characteristics between sports person and non - sports person of Degree college of Physical Education, Amravati with respect to Neroticism.
2. There was no significant difference of personality characteristics between sports person and non-sports person of Degree College of Physical Education, Amravati with respect to Extraversion.

References -

1. Bellino S, et all(2008)Efficacy and tolerability of pharmacotherapies for borderline personality disorder.Department of Neurosciences, Service for Personality Disorders, University of Turin, Turin, Italy.
2. Fullana MA, et. All (2004 Nov) Personality characteristics in obsessive-compulsive disorder and individuals with subclinical obsessive-c-ompulsive problems. Department of Psychiatry and Forensic Medicine, Autonomous University of Barcelona, Spain.
3. Fernandes L, et. All (2005 Jan) Personality characteristics of asthma patients.Psiquiatra. Serviço de Psiquiatria, Hospital de S. Joã
4. Furnham A. (2012Mar) :The role of personality traits and gender a Department of Psychology , University College London , London , UK.
5. Hatemi PK. Et.all(2012)Correlation not causation: the relationship between personality traits and political ideologies Virginia Commonwealth University
6. Hashimoto R. et al (2012 Mar) Personality traits and schizophrenia: evidence from a case-control study and meta-analysis.Department of Psychiatry, Osaka University Graduate School of Medicine, Osaka, Japan.

Resistance In Achieving Good Mental Health: (A Comparative Study Of College Athletes And Non Athletes)

Dr. Hitesh Chandra Rawal *

Abstract - Resent data indicate disturbing trends in health problems in college students in this country. In addition, there is concern that athletes may be more at risk for certain health problems then are other student populations. We surveyed male and female athletes and non athletes to compare the prevalence rates of alcohol behaviors, smoking and smokeless tobacco use, and disordered eating behaviors and body image dissatisfaction. We found that these behaviors differed by both gender and athletic status. However, the patterns are not consistent, with athletes being more vulnerable for others. Furthermore, these patterns also differ by gender. College administrators need to be aware of the different vulnerabilities that various populations face and be prepared to address different issues and treatment plans for male and female athletes and non athletes.

Introduction - Resent indicate disturbing trends in health problems in college students in this country. (Douglas et al., 1997; O' Connor, 2001). In addition, there is concern that certain subgroups in the college population (e.g., athletes) may be more at risk for certain health problems then are other student populations. Because athletes may experience greater levels of stress then do non athletes due to the dual demands of athletes and academics (Kimball & freysinger, 2003; Papanikolaou, Nikoladis, Patsiaouras, Alexopulos, 2003), the combination of these stressors can have a negative effect on athletes' physical and mental health. For example, a resent investigation found that almost half of the male athletes and slightly more than half female athletes interviewed indicated that stresses associated with sport participation that significantly affected their mental or emotional health (Humphery, Yow, &Bowden, 2000).

More ever studies have suggested that college athletes who experience high levels of stress are more likely to practice bad health habits (Hudd et al., 2000. In addition, athletes may be more likely to experience psychological problems (Shirka, 1997). Including low self-esteem (Hudd et al., 2000, Papanikolaou et al., 2003). In addition to mental health concerns, many athletes report physical health concerns as well, such as lack of sleep, continuous tension, fatigue, headaches, and digestive problems (Humphery, et al., 2000)

It is clear that further investigations need to be conducted to determine the potential negative and positive influences that participation in athletics may have on student health. Furthermore, few studies have examined the interaction between gender and athletic status (athletes v. non athletes) on health behaviors and those that have examined body, factors have found conflicting results. Only when we understand how these factors play a role in predicting health behaviors we will be able to design interventions appropriate for these populations. The following paragraphs review the literature for several health behaviors (alcohol consumption, smoking, disordered eating and body image dissatisfaction) posited to differ based on athletic status (athletes v. non athletes) and gender, Because few studies have examined the effect of gender. athletic status, and their interaction on alcohol consumption, smoking disordered eating and body image dissatisfaction, after examining the extent literature, the present study will discuss the effect of gender, athletic status, and their interaction on alcohol consumption, smoking disordered eating and body image dissatisfaction.

Alcohol Consumption - The use of alcohol among college students is well documented and a recurrent finding from these studies is that male college students drink alcohol more frequently and in greater quantities then do female students (capraro, 2000; Werner, walker, & green, 1994). In comparisons of alcohol consumption behaviors, men have been shown to drink greater quantities of alcohol, drink more frequently and drink until intoxication more frequently then do women (McCreary, Newcomb, & Sadave, 1999: Nelson & Wechsler, 2000). In fact, alcohol is the most widely used drug among male and female college athletes and 80% of NCAA athletes use alcohol and one quarter binge drink at least once weekly, with the majority of these being men (National collegiate Athletic Association,1997).

Researchers have compared the drinking frequencies and quantities of alcohol consumed between athletes non athletes, but results have been mixed and may vary by gender. Some researchers suggest that athletes drink more frequently. And consume greater quantities of alcohol then do non- athletes (Lileichliter, Meilman, Presley, & Cashin, 1998: Nattive, Puffer, & Green, 1997). In fact, researchers have learned that both male and female athletes engage in binge drinking and drinking to intoxication more so then non athlete counterparts (Wechsler & Davenport, 1997). However, gutgesell, Moreau, and Thompson (2003) found that there

* Associate Professor (Physical Education) B.N.C.P.E., Udaipur (Raj.) INDIA

are no differences between female athletes and non athletes in quantity of alcohol consumed or in binge drinking, and if anything, female non- athletes may drink more often than do athletes. In addition, Koss and Gaines (1993) found that alcohol use in both male and female college students is lower in athletes than in non- athletes. Thus, it is unclear whether there are differences in the drinking patterns of athletes and non athletes. The present study will attempt to shed light on this question by examining drinking patterns in both male and female athletes and non athletes to determine the separate effects of gender and athletic status, as well as their interaction.

Smoking - Similar to mixed findings regarding the influence of athletic status on college student drinking, research concerning the influence of athletic status on smoking in college students is also mixed. For example, some researchers have found that being involved in athletics decreases smoking (Rigotti, Regan, Majchrzak, Knight, &Wechsler, 2002; Wechsler and Davenport, 1997). However, others researchers have suggested that there is no difference in smoking behaviors between athletes and non athletes and that athletes actually use more smokeless tobacco (35%) than do non athletes (14%; Hiderbrand, Johnson, & Bogle, 2001; see also Nattiv et al., 1997). Finley, some studies have suggested that this may vary by gender. With male athletes using more smokeless tobacco than male non athletes, but no differences in female athletes and non athletes. (Wechsler and Davenport, 1997).

Disordered Eating and Body Image Dissatisfaction - In 1994, the American Psychological Association estimated that 90% of people with eating disordered were women. In fact, a recent study of high school and college students found that women reported higher body dissatisfaction and eating disordered than did men (Hausenblas & McNally, 2004). However, studies are now suggesting that more males are being diagnosed with eating disordered (Braun, Sunday, Huang, & Halmi, 1998), and the amount of eating disordered behavior is increasing in both genders (Taub & Blinde, 1992). Thus although researchers have found that women are more vulnerable to body image dissatisfaction and eating disordered behavior than are men, the gender gap appears to be closing. One purpose of the present study is to re examine the question of whether they are still gender differences in eating disordered behavior and body image dissatisfaction.

There is also concern for athletes, in particular female athletes, being more vulnerable to developing an eating disordered (Kirk, Singh,& Getz, 2001). However, not all studies find that athletes are at risk. A recent study of female athletes found that where as athletes have lower scores in body dissatisfaction than do non-athletes, there are no differences in eating disorders between the two groups (Reinking & Alexander, 2005; see also Gutgesell et al., 2003; Hausenblas & McNally, 2004; Thompson & Gabriel, 2004 for report of equivalent rates of eating disordered behavior in both athletes and non athletes). Thus, it is currently unclear whether athletic status influences the presence of body image dissatisfaction and disordered eating and whether this might vary by gender. The present study will examine both body image dissatisfaction and disordered eating in male and female college athletes and non athletes to better ascertain the influences of gender, athletic status, and their interaction on the presence of body image dissatisfaction and disordered eating in college students.

Present Study - Because of conflicting results in previous research and the fact that not all studies examined both males and females or both athletes and non athletes. We surveyed males and females athletes and non athletes to compare the prevalence rates of alcohol behaviors, smoking and smokeless tobacco use, disordered eating behaviors and body image dissatisfaction. We hypothesized that there would be an interaction between gender and athletic status (athlete v. non athlete) for all variables, with alcohol consumption patterns and smokeless tobacco use being highest in male athletes and eating disordered behaviors and body image dissatisfaction being highest in female non-athletes.

Methods -

Participants - We surveyed 506 students at large, university students from Delhi& Haryana, 206 female varsity athletes, and 88 male varsity athletes. Approximately 90% of participants were Hindus, with an average of 21.36 (SD=5093). Non-athlete participants were all student of Arts faculty. Athletes were surveyed in team meetings or practices to assure that we could get all students on the teams.

Materials -

Alcohol consumption - Alcohol use was assessed with four items from cooper, Russell, Skinner, and Windle (1992).In response to each question, participants were asked to indicate the frequency of drinking (1 =never/rarely, 2=once a month, 3== once week, 4= 23 times a week, 5= daily or almost daily). The frequency of drinking until intoxication, and how much they drink per drinking occasion on both an average weekday and an average weekend day (e.g., number of drinks, where one drink = 12 oz beer, 4oz wine,1oz spirits).

Smoking - Participants were asked to indicate how many cigarettes on average they smoked per day and whether or not they have used smokeless tobacco in the last year. Questions were adopted from Pritchard and Wilson (2005). Disordered eating and body image dissatisfaction. Eating disturbance were assessed using questions from the eating Attitudes test (EAT-26) related to a preoccupation with food, eating, and weight (Garner & Garfunkel, 1979, a=.93). Twenty six questions (e.g., “I am terrified about being overweight”) were scored on a six point likert scale (1=never, 6= always). The EAT -26 uses three subscales, dieting, bulimia, and oral control, which comprise the total score for the test. The EAT -26 uses a cutoff score of 20 to determine if a person is at risk for a clinical eating disorder. Thus in over study in addition to using raw scores on the EAT -26; we classified students as at risk or not at risk for an eating disorder based on their cutoff score. The EAT -26 used in this study because

of its wide use and accuracy in self – reported testing for non clinical populations (Mintz & O 'Halloran, 2000)

Body image was assessed using the Body shape Questionnaire (Cooper, & Fairburn, 1987: see authors for discussion on validity and reliability) which contained various questions on how participants feel about certain aspects of their body (e.g., Have you pinched areas of your body to see how much fat there is?) Responses were rated on a 6-point scale (1= never, 6= always). With higher scores indicate greater body dissatisfaction (a= .90).

Finally, students were asked about their dieting habits, including whether they had tried to gain weight or lose weight over the last year, and whether they were satisfied with their eat in habits.

Results -

Alcohol Consumption - Students were asked to report the average quantity of alcohol they drank on an average week day. In addition, Students were asked to report the frequency of drinking and frequency of intoxication. A 2 (gender) x 2 (athlete v. non athlete) ANOVA revealed that quantity of alcohol consumed on an average weekday greater in male then in females, F (1,481) =9.36, p <.01, as well as in non-athletes then in athletes, F (1, 481) = 19.13, p, .001. In addition, there was an interaction between gender and athletic status on quantity of alcohol consumed during the average weekday, F (1, 481) = 6.23, p < .05, with female athletes drinking the least and male non-athletes drinking the most (see table 1). We next examined the effect of gender and athletic status on average quantity consumed on a weekend day. A 2 x 2 ANOVA revealed that quantity of alcohol consumed on an average weekend day was greater in mails then in females. F (1.479) = 9.36, p <.001, but there was no effect of athletic status, F (1. 479) =.67 or any interaction between gender and athletic status on the average quantity of alcohol consumed on the average weekend day, F (1.479) = .07,an examination of frequency of drinking during an average week revealed that non- athletes drank more frequently then did athletes, F (1.493) =41.88, p <.001, but there was no effect of gender, F (1.493) =1.83, or an interaction between gender and athletic status on frequency of drinking F(1.493)= 0.01. Finally, males drank to intoxication more often than did females. F (1.493)= 4.26, p<.05, and non- athletes drank to intoxications, more often than did athlete F (1.493)= 77.92, p<.001, but there was no effect of the interaction of gender and athletic status on frequency of intoxication. F (1.493)=.31.

Table 1.(See the last page)

Smoking - Students were asked to report the number of cigarettes they smoked on an average day and whether they used smokeless tobacco. A 2(gender) x 2 (athletes v. non athletes) ANOVA revealed that not athletes smoked a greater number of cigarettes per day than did athletes, F(1, 502)= 24.04, p< .001, but that there was no effect of gender, F(1, 502) = .09, 0r an interaction between gender and athletic status on number of cigarettes smoked per day, F(1, 502)= .11 (see table 1). Because use of spit tobacco was a nominal variable, we used a 2 (gender) x 2 (athletes v. non athletes) x 2 (used spit tobacco v. did not use spit tobacco) x2 male were more likely to use spit tobacco than were females for both athletes, x2 (1,N=186)=24.68, p < .001, as well as non-athletes x2 (1.N=311) =9.33, p<.01 number of spit tobacco user: FA = 2 FNA=7, Ma=22, MNA=13). For females, there was no difference in spit tobacco use between athletes and non athletes x2 (1.N=309) = .52, but for males, athletes proportionally used more spit tobacco than did non athletes, x2 (1.N=188) = 6.10, p< .05.

Disordered Eating and Body Image Dissatisfaction - Students were asked to report their level of body dissatisfaction, as well as disordered eating habits. A 2 (gender) x2 (athletes and non athletes) ANOVA revealed that women reported greater body dissatisfaction than did men F(1, 501) =142.66, p< 00.1, but that there was no effect athletic status, F(1, 501) =1.41,or an interaction between gender and athletic status on Body Image Dissatisfaction, F(1, 501) =1.88 (see table 1). There was also effect of gender on disordered eating, with women displayed more disordered eating than did men, F(1, 501) =68.92, p< 00.1. In addition, athletes displayed more disordered eating than did non athletes, F(1, 501) =40.78, p< 00.1.and There was an interaction between gender and athletic status on disordered eating behavior, F(1, 501) =11.48, p< 00.1. Whereas all athletes displayed more disordered eating than did non athletes, the gap was much greater between female athletes and non athletes than between male athletes and non athletes.

In addition to examining differences in the overall scores, we also classified students as eating disordered or not eating disordered based on the established cutoff score for the EAT-26. For females, 13% of non athletes had eating disorders, whereas 36% of athletes had eating disordered, resulting in a significant difference, x2 (1.N=312) 21.95, p, < 001. For males, 1% of non athletes had eating disorders, whereas 9% of athletes had an eating disorder, x2 (1.N=194) 7.22, p, < 001.

Discussion - The purpose of this study was to examine the influence of gender and athletic status on alcohol consumption patterns, use of cigarettes and smokeless tobacco, and disordered eating and body image dissatisfaction. We hypothesized that there would be an interaction between gender and athletic status (athletes v. non athletes) for all variables, with alcohol consumption patterns, and smokeless tobacco use being highest in male athletes and dieting and disordered behaviors being highest in female non athletes. As will be discussed below, some of our findings were consistent with over prediction and with the literature, and some were not.

Alcohol Consumption - Similar to previous studies (Capraro, 2000; Werner et al., 1994), we found that males drank greater quantities of alcohol both during the week and on the weekend than did females and males drank to intoxication more often than did female but unlike previous research we found no gender differences in frequency of

alcohol consumption. Thus it appears that in recent years, females have increased their frequency of alcohol consumption, but not the quantity of alcohol consumed per drinking occasion. This may have to do with the recent increase in the use of alcohol as a coping mechanism among college students, especially females (Wilson, Pritchard, & Schaefer, 2004). Researchers have found that young adults view drinking with peers as an appropriate coping mechanism in response to stress, boredom loneliness, and lack of other recreational activities (Ames , Baraban, Cunradi, & Moore, 2004).

Country to most previous research (Leichliter et al., 1998; Wechler & Devanport, 1997). The differences alcohol consumption patterns between athletes and non athletes indicated that greater quantities of alcohol were being consumed on an average weekday by non-athletes then by athletes, but no differences in the quantities of alcohol consumed on an average weekend day This may be due to the fact that most athletes have practice during week day afternoon and evening and thus do not have time drink or may not wish to "mess up" their performance during practice. Non athletes also drank more frequently and to intoxication more frequently than did athletes. This is similar to the findings of Koss and Gaines (1993). It is unclear why so many studies have indicated conflicting evidence regarding the influence of athletic status on alcohol consumption patterns – it may have to do with whether athletes are in season or out of season or the type of team (e.g., Division I) or type of school or school size. Future studies should investigate the impact of such factor on alcohol consumption patterns.

Most importantly, we examined the effect of the interaction between gender and athletic status on alcohol consumption patterns. We found an interaction between gender and athletic status on quantity of alcohol consumed during the average weekday, with female athletes drinking the least and male non-athletes drinking most. This confirms the finding of koss and Gines (1993). However, there was no interaction between gender and athletic status on the average quantity of alcohol consumed on the average weekend day, frequency of drinking, frequency of intoxication. This was surprising and contrary to over hypothesis. This again may have something to do with the fact that we tested athletes who were in season and thus may have been drinking less, thus matching the patterns of non athlete's alcohol consumption.

Smoking - Similar to previous studies (Rigotti et al., 200; Wechsler & dav0enport, 1997), we found that non-athletes smoked a greater number of cigarettes per day then did athletes. However, smoked Wechsler & dav0enport, (1997) there appeared to be an interaction between gender and athletic status on spit tobacco use, with no difference in spit tobacco use between female athletes and non athletes, but male athletes proportionally used more spit tobacco then did male non athletes.

Disordered Eating and Body Image Dissatisfaction - Similar to previous research (Hausenblas & McNally, 2004). Women in our study reported greater body dissatisfaction and disordered eating then did men. Although there was no effect of athletic status Body on Image Dissatisfaction, similar to kirk et al. (2001), athletes displayed more disordered eating then did non athletes. Most importantly, in line with our hypothesis we found an interaction between gender and athletic status on body image dissatisfaction as well as disordered eating behavior. For body image dissatisfaction, female athletes displayed more dissatisfaction than did female non athletes, but male non athletes displayed more dissatisfaction than did male athletes. For disordered eating, whereas all athletes displayed more disordered eating then did non athletes, the gap was much greater between female athletes and non athletes.

Limitations - Although our study attempted to shed light on conflicting result in previous research concerning the prevalence rates of alcohol behaviors, smoking and smokeless tobacco use, and disordered eating behaviors and body image dissatisfaction in college students, several limitations to the present study should be noted. First, nearly all of our participants were Hindus. Future studies should examine the influence of gender and athletic status on health behaviors in a more diverse population of college students. Second, all our participant were recruited from an introductory level course. Although this course is required for all majors, there may be differences between students in this course and other college courses. Fourth, all of our data was self- report data. Students may not be honest about their behavior – either underreporting or over reporting certain behaviors. Future researchers may with to use other types of data collection, such as individual interviews, interviews with athletic terms or peers, etc. to shed more light on this topic.

Conclusion - In sum, health risk behaviors, such as alcohol consumption patterns, tobacco use, and body image dissatisfaction and eating disorders do appear to differ by both gender and athletic status. However, the patterns are not consistent, with athletes being more vulnerable for certain risky behaviors and non –athletes being more vulnerable for others. Furthermore, these patterns also differ by gender, adding yet another variable in to the equation.

Recommendations for practice

When designing and prevention programs for health risk behaviors in college students, college administrators need to be aware of the different vulnerabilities that various populations face and be prepared to address different issue and treatment plans for different populations. In addition, for student's athletes coaches and trainers need to be aware of the unhealthy behaviors practiced by their athletes and develop prevention programs to help cope with these unhealthy behaviors. For example, coaches may wish to bring in a health or sports psychologist to discuss body image with their female athletes. Regardless of a student's

gender or athletic status, college administrators need to make sure that students have the resources they need to maintain healthy, happy college careers.

References -

1. Ames, G.M., Baraban, E.A., cunradi, C.B., & Moore, R.S.(2004,June). A longitudinal study of drinking behavior among young adults in the military. Paper presented at the Research Society on Alcoholism annual Scientific Meeting, Vancouver, BC.
2. Capraro R.L. (2000).why college men drink: alcohol, adventure, and the paradox of masculinity. Journal of American College Health, 48, 307-315.
3. Cooper, M.L., Russell, M., Skinner, J.B., & Windle, M. (1992). Development and validation of a three-dimensional measure of drinking motives. Psychological Assessment, 4, 123-132.
4. Cooper, P. J., Taylor, M.J., Cooper, Z., & Fairburn, C.G. (1997).The Development and validation of the body shape questionnaire. International Journal of Eating Disorders, 6, 485-494.
5. Douglas, K.A., Collins, J.L., Warren, C., Kann, L., Gold, R., Clayton, S., Ross, J.G., & Kolbe, L.J.(1997). Results from the 1995 National College Health Risk Behavior Survey. Journal of American College Health College Health, 46, 55-66.
6. Garner, D.M., Garfinkel, P. E. (1979). The eating attitudes test: An index to the symptoms of anorexia nervosa. Psychological Medicine, 9, 273-279.
7. Gutgesell,M., Moreau, K.L., & Thompson, D.L. (2003). Weight concerns, problem eating behaviors, and problem drinking behaviors in female collegiate athletes. Journal of Athletic Training, 38, 62-66.
8. Hausenblas, H.A., & McNally, K.D. (2004). Eating disorder prevalence and symptoms for track and field athletes and non athletes. Journal of Applied Sports Psychology, 16(3), 274-276.
9. Hildebrand, K.M., Johnson, D.J., & Bogle, K. (2001). Comparison of patterns of tobacco use between high school and college athletes and non- athletes. American Journal of Health Education, 32, 75-80.
10. Hudd, S., Dumlao, J Erdmann-sager, D., Murray, D., Phan, E., Soukas, N., Yokozuka, N. (2000). Stress at college: Effects on health habits, health status and self- esteem. College Students Journal, 34, 217-227.
11. Humphrey, J.H., Yow, D. A., & Bowden,W,W. (2000). Stress in college athletics: Causes, consequences, coping. Binghamton, NY: The Haworth Half-Court Press.
12. Kimball, A., & Freysinger, V.J.(2003). Leisure, stress, and coping: The sport participation of collegiate Students-athletes. Leisure Sciences, 25, 115-141.
13. Kirk, G., Singh, K., & Getz, H. (2001). Risk of eating disorders among female college athletes and non athletes. Journal of College Counseling, 4, 122-133.
14. Koss, M.P., & Gaines, J.A. (1993). The prediction of sexual violence patterns among college populations. Journal of College Students Personnel, 8, 94-108.
15. Leichliter, J.S., Meilman, P.W., Prresley, C.A., & Cashin, J.R. (1998). Alcohol use and related consequences among students with varying levels of involvement in college athletics. . Journal of American College Health, 46, 257-262.
16. McCreary, D.R., Newcomb, M.D., & Sadave, S. (1999). The male role, alcohol use, and alcohol problems. Journal of Counseling Psychology, 6(1), 109-124.
17. Minttz, L.B., & O' Halloran, M.S. (2000). The eating attitudes test: Validation with DSM-IV criteria. Journal of Personality Assessment, 74, 489-503.
18. National Collegiate Athletic Association (NCAA) Research Staff (1997). NCAA study of substance use and abuse habits of college students- athletes. Overland Park, KS: author.
19. Nattiv, A., Puffer, J., & Green, G.S. (1997).Lifestyles and health risk of collegiate athletes: A multi center study. Clinical Journal of Sports Medicine, 7, 262-272.
20. Nelson, T.F., & Wechsler, H.(2000). Alcohol and college athletes Medicine and Science in Sports and Exercise, 33, 43-47.
21. O'Connor, E.M.(2001). Students mental health: Secondary Education no more. Monitor on Psychology, 32, 44-47.
22. Papanikolaou, Z., Nikolaidis, D., Patsiaouras, A., & QAlexopoulos, P. (2003). The freshman experience: High stress –low grades. Athletic Insight: The On-Line Journal of Sports Psychology, 5,
23. Pritchard, M.E., & Wilson, G.L. (2005). Factor influencing body image in female adolescent athletes. Women in Sports and Physical Activity Journal, 14 72-78.
24. Reinking, M.F.,&Alexander, L.E.(2005). Prevalence of disordered-eating behaviors in undergraduate female collegiate athletes and non athletes. Journal of Athletic Training, 40, 47-51.
25. Rigotti, N.A. Ragan, S., Majchrzak. N.E., Knight, J.R & Wechsler, H.(2002). Tobacco use by Massachusetts public college students: Long term effect of the Massachusetts Tobacco Control Program. Tobacco Control, 11 (Supp.2), 20-24.
26. Skirka, N. (1997). The relationship of hardiness, sense of coherence, sports participation, and gender to perceived stress and psychological symptoms among college students. Dissertation Abstracts International section A: Humanities and Social Sciences, 58, 120.
27. Thompson, S.H., & Gabriel, M. (2004). Risk factors for the female athlete's triad among female collegiate and non-collegiate athletes. Physical Educator, 61, 200-201—212.
28. Wechsler, H. & Davenport, A.E. (1997). Binge drinking, tobacco, and illicit drug use and involvement in college athletics. Journal of American College Health, 45, 195-200.
29. Werner, M.J., Walker, L.S., & Greene, J.W.(1994). Screening for problem drinking among college freshmen. Journal of Adolescent Health, 15, 303-310.
30. Wilson, G.S. Pritchard, M.E., &Schaffer, J. (2004). Athletic status and drinking behavior in college students: The influence of gender and coping styles. Journal of American College Health, 52,269-273.

Table 1. : Means and standard Deviation of alcohol consumption patterns in undergraduates by gender and athletic status

	FNA		FA		MNA		MA	
Quantity weekday	.95	(1.71)	.58	(1.36)	2.06	(3.27)	.68	(1.39)
Quantity weekday	2.31	(3.11)	2.12	(2.30)	3.92	(4.67)	3.54	(4.49)
frequency of drinking	1.00	(1.13)	1.66	(.88)	1.13	(1.21)	1.79	(.99)
frequency intoxication	0.53	(.87)	1.29	(.71)	.74	(1.00)	1.42	(.79)
Cigarettes per day	1.84	(5.02)	.01	(.10)	2.08	(6.12)	0.00	(0.00)
Body image dissatisfaction	3.05	(1.00)	3.07	(.99)	2.09	(.80)	1.86	(1.02)
Disordered eating	9.63	(9.47)	20.07	(19.65)	4.38	(4.07)	7.58	(7.38)

Where, FNA: Female Non Athlete; FA: Female Athlete; FNA: Female Non Athlete; & FA: Female Athlete;

****

A Comparative Study Of Cardiovascular Fitness Between Sportswomen And Non Sportswomen

Dr. Gajender Singh Saroha *

Abstract - The research paper carried out to assess the cardiovascular abilities between sports person and non sportsperson. The sample of the study is 100. The sample has been selected using purposive sample technique consist of 50 sports women and 50 non sports women of Pacific Academy of Higher Education and Research University, among students. To get the appropriate data Harvard cardiovascular test was conducted. It is concluded due to regular participation in sports and training there will be improvement in cardiovascular fitness.
Key Words: cardiovascular fitness, speed, skill, strength and stamina.

Introduction - Sport is purely a physiological phenomenon but a complex interplay of the mind and body. It is now becoming more and more competitive and has also become a career with an emphasis on monetary gains and the desire to win at any cost. Therefore, it is important to find solutions to the changing sports scene of today. A sports person need four basic qualities: speed, skill, strength and stamina. To achieve these in professional sports, the daily life of the sports person calls for discipline in training, a balanced diet, a balanced lifestyle and an inner determination and focus. Sport training is a planned and controlled process in which, achieving a goal, change in complete motor performance, ability to act are emphasised.

Objectives of the Study - To assess the influence of sports participation on cardiovascular fitness abilities among the sports person and non sports person.

Research Hypothesis - There is no significant difference of sports participation on cardiovascular fitness.

Research Methodology - The present paper made an attempt "To assess the influence of sports participation on cardiovascular fitness abilities among the sports person and non sports person" is in framework of empirical research. The particulars of the sample, tools, collection of data and statistical techniques are given as under. The total sample consists 100 sportswomen and non sportswomen of Pacific Academy of Higher Education and Research University, Udaipur. The Sample selection is made randomly and the level ranging from 18 to 22 years.

Table 1 : Distribution of sample

Variables	Number
Sportswomen	50
Non- sportswomen	50
Total	**100**

Tools - Harvard bench step test was used to collect the pulse rate of sportswomen and non- sportswomen.

Discussion and Analysis of the Result - The main objective of the study is to measure the Cardio- Vascular endurance among the sportswomen and non sportswomen because participation and physical activities and sports brings significant changes in the cardiovascular and fitness among the participants.

To measure the general capacity of the body and especially heart and circulatory system to adopt and recover from hard work depends upon cardiovascular endurance. Various studies proved that regular practice and training of the sports develops cardiovascular fitness of the sportsperson.

Hence, researcher here made an attempt to assess the significant influence of participation in sports and non-participation on cardiovascular fitness.

Table-2 : Mean, SD, and "t" values of the resting pulse rate of the sportswomen and non sportswomen

Harvard steps test resting pulse rate per minute	Sportswomen	Non-Sportswomen
Mean	54.70	80.65
SD	5.40	6.34
"t" value	11.85	

*Significant at 0.05 level

After applying the collected data it was applied to the statistical techniques to find out the influence of the participation on the Mean, SD, score of sportswomen is 54.70 SD is 80.65and non- sportswomen mean is 80.65 and SD is 6.34 . the calculated "t" value is 11.85 it is greater than the table value, hence the formulated hypothesis is rejected.

* **Sports Officer, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA**

It can be concluded that it is due to regular participation in sports and training.

Table-3 : Mean, SD, and "t" values of sportswomen and non- sportswomen at conducting the Harvard step test for one minute

Harvard steps test resting pulse rate per minute	Sportswomen	Non-Sportswomen
Mean	62.66	35.86
SD	5.78	3.97
"t" value	13.88	

*significant at 0.05 levels

The table reveals that mean , SD, and "t" value of the sportswomen and non- sportswomen while recording pulse rate after the performance of 1.5 minute and collected data was applied to the statistical techniques to find out the influence of the participation. Mean score is 62.66 and SD is 5.78 of sportswomen while mean score and SD of non-sportswomen are 35.86 and 3.97 respectively and calculated "t" value is 13.88, it is greater than the table value. Hence the hypothesis is rejected and it was calculated that it is due to regular participation in sports and training. Sportswomen performed more steps than non-sportswomen.

Table-4 : Mean, SD, and "t" values of pulse rate recorded after 1 minute of sportswomen and non-sportswomen

After 1 minute pulse rate	Sportswomen	Non-sportswomen
Mean	86.53	115.3
SD	5.2	10.30
"t" value	9.66	

*significant at 0.05 levels

The table reveals that mean , SD, and "t" value of the sportswomen and non- sportswomen while recording pulse rate after the performance of 1 minute and collected data was applied to the statistical techniques to find out the influence of the participation. Mean score is 86.53 and SD is 5.2 of sportswomen while mean score and SD of non- sportswomen are 115.3 and 10.30 respectively and calculated "t" value is 9.66, it is greater than the table value. Hence the hypothesis is rejected and it was calculated that it is due to regular participation in sports and training.

Conclusion - Study clearly shows that participation of sports activities effects physical development and cardiovascular fitness among participants, hence study suggest that the course of physical education should be added in the curriculum of universities as compulsory subject.

References -

1. Kumarswamy, "A comparative study of physical fitness of rural and urban high school boys in Malur Taluk (unpublished maters thesis , Bangalore University, 2003).
2. Pujari,H. "Comparative study of cardiovascular and physical fitness between sportsperson and non sportsperson of Bijapur" vol. No. 14, pp 76-78, International journal of health, physical education and computer science in sports.
3. Surinder,N. (1993) Anthropometry – The measurement of body size, shape and form. Delhi: Friends Publication.
4. Carter,J.E.L, Ackland, T.R.,Kerr, D.A., and Stapff, A.B. (2005) Somatotype and size of elite female basketball players. Journal of sports sciences, 23, 1057-1063.

****

Relationship Between Upper Body Anthropomertic Parameteres And Throwing Performance Of Handball Players In Inter Collegiate Competition

Dr. Jogendra Singh * Amit Ganshyam Bhai Upadyay **

Abstract - Handball is basically a consecutively sport and can able to perform different moves like jumping, running, change of directions and technical movements in very short time and with an order resolute by the tactical situation. The objective of the study is to find out the relationship between upper body Anthrometric Parameters and Throwing Performance of Handball Players. 30 players are selected who are selected in inter collegiate handball competition within the age of 17to 25 years. Pearson Correlation test is applied for test anthropometric and throwing performance namely arm length, forearm girth, medicine ball put.

Keywords - Arm Length, Forearm Girth, Medicine Ball Put.

Introduction - Physical Education as an education of human movement where many of educational objectives are achieved by means of big muscle activities involving sports, games, gymnastic, dance, and exercise.

Handball is basically a consecutively sport and can able to perform different moves like jumping, running, change of directions and technical movements in very short time and with an order resolute by the tactical situation. It become popular throughout the world and along with that it is exclusive with a rapid and physical yet concurrently skillful and strategic style of play.

Anthropometry is the science of measuring human body, its parts and it is used as an aid to the study of human evaluation and variation. The study of human physical measurements is deal by another science anthropometry, which has wide application and it is as one of the mandatory parameters constituting the selective diagnostics of any game or sport. The study of "Body Type" has a significant place in the field of sports. The physical structure particularly the height and arm length have specific significant advantage in many games and sports. Similarly segmental length of individual body parts the arm length specifically is of considerable advantage in selected events in athletics and in certain games.

Objective of the Study - The objective of this study is to find out the relationship between upper body anthropometric parameters and throwing performance of handball players. For this study three variables are selected: arm length, for arm length and medicine ball put.

Methodology - Relationship between arm length, for arm length and medicine ball put are established by computing Pearson Product Moment Correlation. The data are collected from 30 handball players within the age group of 17 to 25 years from the department of sports and physical education in Mohan lal Sukhadia University. The level of significance is fixed at 0.05 level of confidence.

Findings and Analysis - For studying relationship data are collected from 30 handball players of Mohan Lal Sukhadia University. The data have been examined by applying correlation and the level of significance was fixed at 0.05 level confidence.

Table - 1
Mean, Standard Deviation, And Correlation on Arm Length, Forearm Girth and Medicine Ball Put of MLSU University Handball Players:

Groups	Mean	SD
Arm Length	70.83	3.79
Forearm Length	25.90	1.58
Medicine Ball Put	8.50	0.76

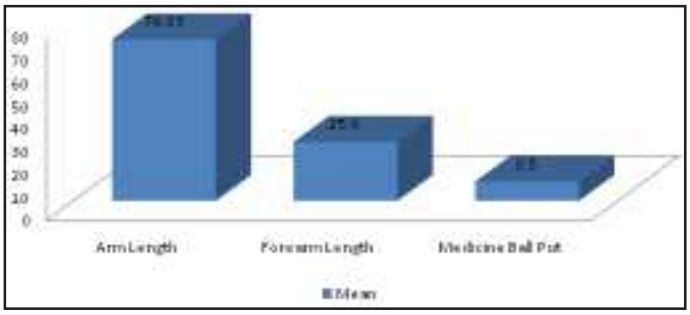

Mean Value of Arm Length, forearm length and Medicine ball Put of MLSU University of Handball Players.

(Table see the next page)

Conclusion - It was concluded from the above results and analysis that the handball players forearm girth anthropometric variables are affected the throwing

* Secretary, Sport Board, Pacific University, Paher, Udaipur (Raj.) INDIA
** Research Scholar, Pacific University, Paher, Udaipur (Raj.) INDIA

performance of handball game but the anthropometric variable arm length will not influence any skills in handball game and sports.

References -

1. Anthrakidis, N, Skoufas, D., Lazaridis, S., Zaggelidis, G. (2008). Relationship between Muscular Strength and Kicking Performance. Physical Training 2008;10:2-2
2. Wernstedt P, Sjostedt C, Ekman I, Du H, Thomas KA, Areskog NH, Nylander E (2002). Adaptation of cardiac morphology and function to endurance and strength training. A comparative study using MR imaging and echocardiography in males and females. Scandinavian J. Med. Sci. Sports, 12:17-25.
3. David H. Clarke and H. Harrison Clarke, Research Process in Physical Education (New Jersey: Prentice Hall, Inc., 1984), P. 226.
4. H. Harrison Clarke and David H. Clarke, Advanced Statistics (New Jersey: Prentice Hall, Inc., 1984), P. 84.
5. Barry L. Johnson and Jack K. Nelson, A Practical Measurement for Evaluation in Physical Education (3rd Ed.) (Delhi: Surjeet Publications, 1982), P. 155.
6. Donald K. Mathews, Measurement in Physical Education Philadelphia: W.B. Saunders Company, 1973), P. 63.
7. http://bodyfitnesshealth.com/meaning-and-definition-of-physical-education/

Correlation		Variable 001	Variable002	Variable 003
Variable 1	Pearson Correlation	1	0.215	.238
	Sign (2 Tailed)		.254	.205
	N	30	30	30
Correlation		Variable 001	V Variable	Variable 003
Variable 2	Pearson Correlation	0.215	1	.484**
	Sign (2 tailed)	.254		.007
	N	30	30	30
Correlation		Variable 001	Variable 002	Variable 003
Variable 3	Pearson Correlation	0.238	0.484**	1
	Sign (2 tailed)	.0.205	0.007	0
	N	30	30	30

Correlation is significant at the level of 0.05 level.

****

Grundnorm Theory Vis-A-Vis Basic Structure Doctrine

Poorva Jadhav *

Introduction - Basic norm (German: **Grundnorm**) is a concept in the Pure Theory of Law created by Hans Kelsen, a jurist and legal philosopher. Kelsen used this word to denote the basic norm, order, or rule that forms an underlying basis for a legal system. The theory is based on a need to find a point of origin for all law, on which basic law and the constitution can gain their legitimacy (akin to the concept of first principles). This "basic norm", however, is often ascribed as hypothetical. The reception of the term has fallen into three broad areas of discernment including (i) Kelsen's original introduction of the term, (ii) the Neo-Kantian reception of the term by Kelsen's critics and followers, and (iii) the hypothetical and symbolic use of the term through the history of its application. Kelsen will use the word "norm" in the prescriptive sense. When he uses the word "normative," he means something that is prescriptive, something that ought to be done. What Kelsen is trying to do in developing or identifying a basic norm is quite ambitious. In the tradition of Hegelian philosophy, which wanted to place all cultures in a grand overarching philosophy of history according to the principle of freedom, Kelsen wants to identify a basic legal principle which will ultimately include or define the legal structures of all cultures.

The Grundnorm or Basic Norm is a statement against which all other duty statements can, ultimately, be validated. The Basic Norm is ultimately a sort of act of faith—it is the belief in a principle beyond which one cannot go and which ends up being the foundational principle for all subsequent legal statements. Ultimately it appears that the Grundnorm for Kelsen is a belief that one's respective legal system ought to be complied with. Lots of other principles can then flow from this basic realization.

Functions of grundnorm theory - The function of the basic norm becomes particularly apparent if the Constitution is not changed by Constitutional means, but by revolution. Hans Kelsen says that it is irrelevant whether this change of the legal situation has been brought about by the application of force against the legitimate government or by the members of that government themselves, or by a small group of individuals. The requirement is that the existing Constitution must be changed or replaced in a manner not prescribed by the constitution valid until then. Usually a revolution abolishes only the old constitution and certain politically important statutes. A large part of the statutes created under the old constitution remains valid. The basic norm is a useful guide in countries where a revolution has occurred. In the aftermath of such unconstitutional change, lawyers have believed that Kelsen's theory of the change of the basic norm was the key to unlock the mystery of the validity of pre and post revolutionary laws.

Kelsen's grundnorm theory and it's constitutional validity - In his magnum opus The Pure Theory of Law, Kelsen starts defining the Grundnorm by asking a question: "why is a norm valid, what is the reason for its validity?" He answers this question by saying that the validity of a legal norm depends on a higher norm that has been established by a proper authority. However, the question of what makes the latter higher law valid needs to be posed unavoidably. He notes that the latter higher law is valid because it is generated from another higher law. At this point. Kelsen aptly determines that this hierarchy must stop somewhere, and the existence of a highest (supreme) norm must be taken for granted. In fact, his point of departure is that in order for the normative interpretation of legal rules to be possible, a highest norm, which is not within the positive law, must be presupposed.

He claims that "it must be presupposed, because it cannot be 'posited", that is to say: created, by an authority whose competence would have to rest on a still higher norm. It Is this highest norm - called the Grundnorm or the basic norm - which ascertains the unity of norms and makes them valid, thus makes up a legal system." Kelsen clearly uses the Grundnorm to explain the validity of the constitution of a legal system, but he does not mean that the Grundnorm per se is a constitution, although the basic norm refers directly to the validity-condition of a constitution in the positive-legal sense. He further explains that "the function of the basic norm becomes particularly apparent if the constitution is not changed by constitutional means, but by revolution. Through revolution, if it is successful, a new legal system is created, thus it is established on a new Grundnorm, but neither the legitimacy of that Grundnorm nor its validity is a matter of (legal) question; it is valid and legitimate as long as the legal system, to which it gives the validity, is, by and

* Batch 11, Hidayatullah National Law University, Raipur (C.G.) INDIA

large, effective. By the same token, according to Kelsen, the Grundnorm is free of content. This means that it does not require any specific content that the legal rules must have. Hence, he proposes that any kind of content can be law. However, in another piece of writing, he determines that there are some constraints which are binding on a legislature when it changes the constitution: the aim of such constraint is to lend the greatest possible stability to the authorization to create general legal norms i.e., to the form of the state. Occasionally a constitution - that Is, the document so named - constrains the provision that the norms regulating the procedure of legislation must not be altered at all, or not in such a way as to alter the form of the state.

Indian case analysis on kelsen's grundnorm theory vis-à-vis basic structure doctrine - Kelsen propounded "a hierarchy of norms and a procedural relationship between them where the validity of a particular legal norm determined by a higher order norm, with the latter norm representing the validity of the former one". In Kelsen's analysis the process of determination of a positive legal norm results in this sort of regression leading to the constitution as the source of validity of all the positive norms and the grundnorm as the source of validity of the constitution itself. This is the highest norm in the hierarchical legal system which derives its own validity from a direct appeal to the constitution. Thus the validity of the constitution can only be derived from a non-positive or non legal norm which is the grundnorm.Keshavanda Bharati's case introduced the doctrine of basic structure according to which the term "amendment" in Article 368 of the Indian Constitution means addition or change within the contour of the preamble or the constitution but not replacement of the constitution or its basic foundation and structure. Kelsen's Pure Theory provides the principle of judgement in Kesavananda Bharati, the Grund Norm cannot be replaced except by revolutionary methods. Basic structure is unamenable, limitless and indivisible like Austin's Sovereign. Kelsen's Grund Norm is alterable by changing the presupposition.

In Kesavananda Bharti when the basic features of the constitution were categorised as unamendable, the Court referred to a higher norm that limited the power under Article 368 of the Constitution. This norm thus validates the constitution and provides it with an identity, in the sense that if it is violated (i.e. basic structure is violated) the constitution would lose its identity and the change would be invalid. If a rule is framed under a parent act, the Court not only sees whether the rule is consistent with the policy in the enabling act but also determines whether it withstands the tests of fundamental rights of the constitution. Similarly when a legislation is made under the aegis of a right or value enshrined in the constitution it must also be tested against the basic rules which have actually led to the creation of the right or value, and have shaped its interpretation. This must be done irrespective of whether it is a constituent or legislative exercise of power to ensure that the hierarchy of norms is maintained. Neither exercise can violate the grundnorm. Hence when the constitutional limitations for an ordinary law fail, there is no reason why the basic structure doctrine cannot be extended to such statutes.

Conclusion - Notwithstanding the logical coherence of kelsen's structure, he provided no guidance in the actual application of law. Thus, he showed how, in the process of concretizing the general norms it may be necessary to make a choice either in decision or interpretation. The judge or the official concerned is always aware of that necessary ;his need is for some guidance as to how he should make his choice. The answer is not found in the kelsen techniques, but in value consideration of one sorts of another,which kelsen sedulously eschewed. Another more serious aspect is that a legal order is not merely the sum total of laws,but include doctrines, principles and standard, all of which are accepted as 'legal' and which operate by influencing the application of rules. Finally kelsen has been hailed as having provided the outstanding theory of the 20th century from a positivist point of view, it has to remembered that Bentham's of laws in general only saw daylight after kelsen had made his contribution. In Kelsen's analysis the process of determination of a positive legal norm results in this sort of regression leading to the constitution as the source of validity of all the positive norms and the grundnorm as the source of validity of the constitution itself. Thus the validity of the constitution can only be derived from a non-positive or non legal norm which is the grundnorm.

References -

1. Lloyd's Introduction to Jurisprudence, (7th Ed, 2001), Sweet and Maxwell Ltd.,London.
2. Jurisprudence, Roscoe Pound, vol-IV, The Lawbook Exchance, Ltd. Union, New Jersey 2000
3. Dias, Jurisprudence, 5th Edn. Aditya Books, Butterworths
4. Bodenheim Edgar, Jurisprudence- the Philosophy and the Method of law, (5th Ed, 1967), Harvard University Press
5. Friedman W., Legal Theory, (5th Ed, 1967), Sweet & Maxwell.

****

Jurisprudential Aspects Of Shareholders Agreement And Its Impact

Poorva Jadhav *

Introduction - A shareholders' agreement (sometimes referred to in the U.S. as a stockholders' agreement) is an agreement amongst the shareholders of a company. In strict legal theory, the relationships amongst the shareholders and those between the shareholders and the company are regulated by the constitutional documents of the company. however, where there are a relatively small number of shareholders it is quite common in practice for the shareholders to supplement the constitutional document. There are a number of reasons why the shareholders may wish to supplement (or supersede) the constitutional documents of the company in this way: a company's constitutional documents are normally available for public inspection, whereas the terms of a shareholders' agreement, as a private law contract, are normally confidential between the parties, contractual arrangements are generally cheaper and less formal to form, administer, revise or terminate, the shareholders might wish to provide for disputes to be resolved by arbitration, or in the courts of a foreign country (meaning a country other than the country in which the company is incorporated). In some countries, corporate law does not permit such dispute resolution clauses to be included in the constitutional documents, greater flexibility; the shareholders may anticipate that the company's business requires regular changes to their arrangements, and it may be unwieldy to repeatedly amend the corporate constitution.

Why adopt a shareholders agreement? - Establishing a new business or investing in an existing business, irrespective of its size, requires an assessment of the benefits and risks of ownership. Careful parties will want to put in place contractual arrangements to preserve those benefits and minimize those risks. An agreement between two or more shareholders of a corporation, or between a corporation and some or all of its shareholders, is a common tool used to manage these risks. Since the particular risks and the objectives of the parties will vary depending upon the situation, such an agreement is invariably a custom creation. For this reason, while many shareholder agreements have elements in common, there is less scope for reliance on precedents and more scope for creative negotiating and drafting.

Impact of shareholders agreement - Restrictions on Sale: A typical Shareholder Agreement will restrict a shareholder's right to sell his stock. A shareholder may be required to first offer his stock to the other shareholders and the company before he can sell his stock to a third party. This right of first refusal can grant any one or more of the other shareholders or the company the right to purchase the stock at the same price and on the same terms as contained in the third party offer. However, it could provide the other shareholders the right to purchase the stock at a different price or on different terms. Before deciding that such terms would benefit your company, you should consider that someday you may be a selling shareholder. If you are the majority shareholder and similar restrictions apply to you, you cannot sell your stock without first offering it to the other shareholders or the company, and depending on how the restrictions apply, you may be limited as to the price you receive and when you receive it.

Purchase Requirements: A Shareholder Agreement can have a mandatory or optional requirement that a shareholder sell and the remaining shareholders (or the company) buy the stock in the event of a shareholder's death, disability, retirement, termination of employment or bankruptcy. If it is mandatory, you are required to sell your stock upon a triggering event. As such, you cannot pass your stock on to a family member who wants to continue in the family business. This provision could apply differently to each shareholder and triggering event.

Valuation: A Shareholder Agreement should set forth a price, formula or method for determining a purchase price for the stock. The price or formula can be the same or different in the event of a shareholder's death, disability, retirement, termination of employment or bankruptcy, and can impact the selling shareholder's estate.

Buyout Payment Terms: A purchase at death or disability can be funded with insurance. For other triggering events, the price can be paid over time. However, if the terms of the buyout financially strap the company, the remaining shareholders may need to sell the company or some of its assets.

Functions of shareholders agreement: a way to solve tensions among shareholders - The central problem in the corporate governance structure of close corporations is how to find the most reasonable degree of adaptability and protection from the opportunism of either the majority or

* Batch 11, Hidayatullah National Law University, Raipur (C.G.) INDIA

minority shareholders. At the same time, shareholders in close corporations require flexibility for their business and personal interests. Shareholders' agreements are the most successful device to mitigate the application and effect of traditional corporate rules in the context of close corporations.

Protection for minority shareholders in close corporations - A close corporation is the perfect environment for majority opportunism. Majority opportunism is possible if the following aspects are combined together in a close corporation - i.)application of the majority rule ii) separation of functions among shareholders, directors and officers; iii) lack of guaranteed employment or dividend rights for shareholders; and iv) impossibility to apply the unilateral dissolution mechanism. In a close corporation, the traditional norms of corporate governance structure plus the lack of a public market for shares leaves the minority shareholder vulnerable to the majority. Under the majority rule, the relationship between majority-minority shareholders might finish in what is called a "freeze out/squeeze-out". In a squeeze out/freeze out, a majority shareholder uses his/her control over the corporation against a minority shareholder in a way that the latter could not participate in the management and earnings of the corporation. Therefore, a shareholder agreement may be a key instrument to protect minority shareholders from the majority. The agreement's primary goal is to give the minority shareholder participation in the management of the corporation or a more important role in the decision-making process. In this case, the majority is willing to share some of its control in order to encourage people who, under normal circumstances, would not buy a minority interest.

Balance among shareholders with similar power and interests - In a close corporation, two or more not controlling shareholders could constitute a majority whose primary objective is to assure that the parties in the agreement will make decisions concerning the corporation together. In fact, no shareholder has majority over the other shareholders by him/herself. The corporation has a control group composed by of a small number of shareholders instead of a controlling shareholder. In this case, the existence of equilibrium among shareholders is a feature of the business agreement.

Special cases involving shareholders agrement - Not all shareholder agreements are limited to the "usual matters" discussed previously such as management and control, share transfers and exit. Certain other contractual arrangements between shareholders, or between a corporation and certain of its shareholders, also raise interesting issues.

Pooling/Voting Agreements - Not every shareholder agreement deals with the full range of possible issues that can be covered by such an agreement. It is possible for two or more shareholders to enter into a more limited agreement dealing with solely how the shareholders are to vote in respect of some or all matters. A pooling agreement generally is one where two or more shareholders agree to vote their shares in a particular way. For example, two shareholders could agree to support each other's nominees in the election of the board of directors. A voting trust agreement goes the next step with the shares of the parties being deposited with the trustee and that trustee having the right to vote the shares. Neither a pooling agreement nor a voting trust agreement is a USA unless it otherwise meets the criteria for a USA.

Conclusion - Shareholders agreements are increasingly part of the commercial scene as shareholders, mainly in closely held corporations, attempt to plan in advance for contingencies that may occur in the corporation's management and also to protect and/or solidify existing corporate relations between shareholders. The difficulties of predicting the future or the types of situations that may arise in the future means that there is always the possibility of disputation, the shareholders agreement may seek itself to ameliorate or provide a governance mechanism to resolve such disputes. Nevertheless there is the fact that disputation may not be readily resolved so that the parties are likely to move into a second phase of enforcement of rights under the agreement. This may take place in the courts or commonly may take place under commercial arbitration as agreed between the parties in the shareholders agreement. It is likely however that such disputation may go beyond mere contractual disputation under the shareholders agreement and pick up the more traditional company law shareholders' remedies such as oppression, winding up or the derivative action. Even where the parties limit themselves to contractual disputation there is the possibility of extra contractual litigation in relation to precontractual misrepresentations, or misleading or deceptive conduct.

References -

1. Majumdar, A.K, Company Law, Taxmann, 15th Ed.
2. An analysis of Shareholders agreements by Gilles Chemla, Michel Antoine Habib, Alexander P. Ljungqvist, Centre for Economic Policy Research, 2002 - Stockholders - 38 page.
3. Shareholders agreements by Graham Muth, John Cadman, Sean FitzGerald, Sweet & Maxwell, Limited, 2009 - Articles of incorporation - 619 pages
4. Joint ventures and shareholders agreements by Chris Wilkinson, Bloomsbury Publishing Plc, 2009 - Law - 507 pages.

****

गुप्त सामराज्य में न्याय व्यवस्था

डॉ. गुलाब सिंह मेवाड़ा *

प्रस्तावना – हवेनसांग के अनुसार सातवीं शताब्दी में भारत में अपराधियों और राजद्रोहियों की संख्या स्वल्प थी। राजकीय नियमों के भंग होने पर अथवा राजद्रोह की परिस्थिति में पूरी छान–बीन की जाती थी। अभियुक्तों से अपराध को स्वीकार कराने में शारीरिक दण्ड का निषेध था। यदि अभियुक्त अपने को अपराधी स्वीकार करता था, तो उसकी दिव्य परीक्षाएँ होती थी। साधारण प्रचलित दिव्य परीक्षाएँ चार प्रकार की होती थी। जल परीक्षा के साथ अपराधी को बोरे में बंद किया जाता था ओर बोरे से एक बड़े पत्थर के बर्तन को बाध कर उसे गहरे पानी में फेक दिया जाता था। यदि इस परिस्थिति में अभियुक्त डूब जाता ओर पत्थर का बर्तन ऊपर तैरता दिखाई देता तो अभियुक्त को अपराधी माना जाता था। यदि कही वह व्यक्ति ऊपर तैरता दिखाई देता ओर पत्थर डूब जाता था तो वह निरपराध सिद्ध हो जाता था।

अग्नि परीक्षा में लोहे की पटिया तपायी जाती थी और अभियुक्त को उस पर बैठाया जाता था। उस पर अभियुक्त पैर रखता था उसे हाथ में लेता था ओर जीभ से चाटता था यदि ऐसा करने में उसे कही कोई जलन नहीं होती तो उसे निरपराध माना जाता था अन्यथा अपराध सिद्ध हो जाता था । दुर्बल ओर कायर लोगों के लिये इस परीक्षा में थोड़ी सुविधा मिल सकती थी। उनको किसी फुल की कली उस तपे लोहे की पटिया पर फेंकना पड़ता था यदि कली विकसित होने लगती तो वह निरपराध माना जाता था और यदि कही कली जलने लगती तो अभियुक्त अपराधी सिद्ध होता था। विष परीक्षा में मेढ़क की पिछली दायी टांग काटी जाती थी और उसे विषाक्त बनाकर अभियुक्त को खिलाया जाता था यदि विष का प्रभाव उस पर नहीं पडता था तो वह निरपराध माना जाता था अन्यथा उसका अपराध सिद्ध हो जाता था।[1]

शासक स्वयं सर्वोपरि न्याय करता था। कोई यह अनुभव करे की उसके साथसमुचित न्याय नहीं हुआ है तो वह राजा के सम्मुख अपील कर सकता था। उस पर राजा कम से कम तीन सभ्यो की सहायता से मामले की पूरी छान–बीन कर अपना निर्णय देता था। जो अन्तिम और सर्वमान्य होता था।उन दिनों राज्य को अपनी ओर से किसी अपराध के न्याय विचार का अधिकार न था न्यायालय तभी किसी मामले पर विचार करती थी जब जनता का कोई व्यक्ति उनके सम्मुख वाद उपस्थित करे। वाद उपस्थित होने के बाद प्रतिवादी को सूचना दी जाती थी ओर उसे न्यायालय के सम्मुख उपस्थित होकर अपनी निरपराधिता सिद्ध करनी पडती थी। प्रतिवादी द्वारा अपनी बात प्रस्तुत किये जाने के बाद साक्षी पर विचार किया जाता था। आवश्यक होने पर वैयक्तिक साक्षी न लेकर आलेख–साक्ष्य देखा जाता था। तदन्तर पक्ष–विपक्ष पर विचार कर न्यायाधीश अपना निर्णय देता था जो दोनो पक्ष पर लागू होता था। यदि उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर न्यायालय किसी उचित निष्कर्ष पर न पहुँच सके तो उस अवस्था में दिव्य का सहारा मिल जाता था। मनु ने दो प्रकार के दिव्यों का उल्लेख किया था। याज्ञवल्क्य और नारद ने पॉच और बृहस्पति ने नौ प्रकार के दिव्य बताये है। इनमें जल,अग्नि ओर विष प्रमुख है। कदाचित दिव्य प्रयोग का अवसर आने से पूर्व ही अपराधी अधिकांशत: अधीर हो उठते रहे होंगे। इस प्रकार न्याय का समाधान अपने आप हो जाता रहा होगा।

गुप्तकाल में न्याय की सीमा अपनी पराकष्ठा पर पहुँची हुई थी। नीति के अनुसार न्यायालयों में बडें विद्धान, पण्डित,न्यायाधीश के पद पर नियुक्त होते थे। ये विद्धान धर्मशास्त्रों के आधार पर न्याय करते थे। दो स्मृतियों के विरोध में समाज में प्रचलित व्यवहार के अनुसार ही न्याय करना श्रेष्ठ माना जाता था। समुद्रगुप्त के समय में कवि हरिशेण ने इस को सुशोभित किया था। डॉ. जायसवाल का मत है कि गुप्त सम्राट चन्द्रगुप्त द्वितीय का मंत्री शिखरस्वामी बहुत बड़ा न्याय का पण्डित था। इसी ने कामन्दक नीतिसार नामक नीतिग्रंथ की रचना की थी।

दीवानी कानून –प्राचीन काल से ही भारत में प्रजा विष्णु (अर्थात् राजा नहीं प्रजा ही सर्वोपरि है) की धारणा रही है अत: राजा को प्रजा के निमित विधि स्थापित करने का अधिकार नहीं था। वह केवल धर्म (ऋषि, मुनियों द्वारा निर्धारित नियम) व्यवहार (प्रजा के रीति रिवाज) और चरित्र (पूर्व के उदाहरण) के आधार पर प्रजा पर शासन करने का अधिकारी था। राजा इन तीनों के अभाव में ही अपना शासन प्रचलित कर सकता था।

फौजदारी कानून तथा दण्ड विधि – जो कृत्य अपराध की कोटि में आते थे, वे ही फौजदारी कानून के विषय थे। नारदस्मृति के अनुसार अपराध दस प्रकार के होते है नृपाज्ञा का अतिक्रमण, नारी वध, वर्ण शंकर, परस्त्रीगमन, चोरी,पति के बिना गर्भधारण, वाकपारूष्य, अश्लीलता, दण्डपारूष्य तथा गर्भपात। इससे ज्ञात होता है कि व्यक्ति की अनुशासनहीनता हिंसा या शांति भंग संबंधित कर्म अपराध की श्रेणी में आते है।

इस समय दण्ड का उद्देश्य चार प्रकार के माने जाते थे। इनमें प्रतिशोध प्रतिरोध पुनरावृत्ति की रोकथाम[2] तथा चरित्र सुधार का निर्देश मिलता है। स्मृतियों में फौजदारी अपराधी के लिये क्षतिपुर्ति की व्यवस्था नहीं है। सभी अपराधों के लिये निश्चित दण्ड लिखे है। सम्भवत: गुप्तकाल में कम अपराध होने के कारण अर्थदण्ड नहीं दिया जाता था।[3] इस युग के अपराधों को निम्नलिखित चार वर्गो में बांटा गया है।

साहस – साहस (हिंसा के कार्य) के अंतर्गत जिस व्यक्ति पर प्रहार करे उसे आत्मरक्षा के लिये प्रहारकर्त्ता पर प्रहार करने का अधिकार दिया गया है। वह आक्रमणकर्ता की हत्या भी कर सकता था।

वाक्पारूष्य – वाक्पारूष्य (गाली और मानहानि) के अंतर्गत बृहस्पति ने तीन स्तर बताये है– निम्नतम्, मध्य और उच्चतम। नारद और कात्यायन ने इन्हें निष्ठुर (निन्दनीय) अश्लील और तीव्र (निर्दयतापूर्ण) कहा है। इनके लियें अर्थदण्ड इनकी तीव्रता पर आधारित थे।

* अतिथि विद्वान (विधि) शासकीय जे. एन. एस. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शुजालपुर मण्डी (म.प्र.) भारत

दण्डपारूष्य – दण्ड पारूष्य (आक्रमण) में केवल प्रहार ही सम्मिलित नहीं था। इसमें किसी व्यक्ति पर गंदगी फेंकना भी सम्मिलित था। इसका दण्ड चोट अधिक या कम होने पर अधिक या कम होता था, किन्तु किसी व्यक्ति के पशु को मारने पर अपराधी को उस व्यक्ति को वैसा ही पशु देना पड़ता था।

स्तेय – स्तेय (चोरी) के दो वर्ग बतलाये गये है खुला और छिपकर किया हुआ। नारद और बृहस्पति ने उन व्यापारियों को जो कम तौलें, जुआरियों, झूठे वैद्यो, नकली वस्तु बेचने वालो जादूगरों, ज्योतिषियों की गणना भी खुले चोरों में की हैं। कात्यायन ने कार्य से अनभिज्ञ पुरोहितों और अयोग्य अध्यापकों की गणना भी खुले चोरों में की है। चोरी की अंगविच्छेद, बंदी बनाने, सम्पत्ति जब्त करने, देश निकाला देने और प्राणदण्ड तक की सजा दी जाती थी। राजा यदि चोर का पता न लगा सके तो उसे चोरी की हुई वस्तु का मूल्य स्वामी को देना होता था। फाह्यान का कहना है कि अपराधियों को शारीरिक दण्ड नहीं दिया जाता था। अपराध की गुरूता के अनुसार उन्हें आर्थिक दण्ड मिलता था। यहॉ तक कि राजद्रोह का अपराध दुहराने पर भी अपराधी का दाहिना हाथ मात्र काटा जाता था। स्कन्दगुप्त के जूनागढ अभिलेख से भी यातना दण्ड के प्रचलित होने की बात ज्ञात होती है। उसमें कहा गया है कि उनके शासनकाल में दण्ड के अधिकारी किसी भी व्यक्ति को आवश्यकता से अधिक यातना नहीं दी जाती थी।

नारद एवं बृहस्पति का मत है कि राजा को निर्णय अत्यंत युक्तिपूर्ण ढंग से करना चाहिये क्योंकि झूठ सत्य के अत्यंत निकट होता है सत्य, असत्य के समान होता है। ये ऊपर से भ्रान्तिपूर्ण एवं विविध भाव से युक्त दिखायी देते है। अत: ध्यानपूर्वक परीक्षण करना चाहियें।[4]

मनु एवं नारद का कथन है कि जैसे घने जंगल में घायल मृग को रक्त की बूंदों के माध्यम से शिकारी मृग के स्थान का पता लगा लेते है उसी प्रकार राजा को भी धर्मानुसार सत्य का पता लगा लेना चाहिये। निर्णयानुसार विजयीपक्ष को जयपत्र दिया जाता है नारद का कथन है कि जब एक पक्ष किसी भी प्रमाण से विजयी हो जाता है तथा द्वितीय पक्ष पराजित हो जाता है तो न्यायाधीश का कर्तव्य हो जाता है कि वह विधिवत लिखकर जयपत्र विजयी पक्ष को दें।[5]

निर्णय के आधार – गौतम के अनुसार वेद,धर्मशास्त्र, वेदांग, उपदेव, पुराण तथा इनके अनुकूल देश, जाति, कुल, धर्म के आधार पर न्याय होना चाहिये। मनु के अनुसार सज्जनों के द्वारा शास्त्रानुसार आचरण तथा देश, कुल और जाति के आचरण के आधार पर व्यवहार निर्णय करना चाहियें। याज्ञवल्क्य के अनुसार धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, एवं लोकव्यवहार के आधार पर निर्णय करते समय जब दो स्मृतियों मे परस्पर विरोध की स्थिति हो तो व्यवहार से दिया गया न्याय बलवान् होता है।

इस प्रकार हम देखते है कि यद्यपि समुद्रगुप्त और उसके यशस्वी उतराधिकारियों ने चन्द्रगुप्त मौर्य की तरह संपूर्ण भारत को एक केन्द्रीय सत्ता में ग्रंथिक नहीं प्रवेष्टित किया लेकिन उसकी निर्वाध दिग्विजय से यह सिद्ध हो गया कि समष्ठित भारतवर्ष की सार्वभौमिक प्रभुत्त सम्पन्न राजकीय सत्ता एक ही हो सकती है क्योंकि जैसा कि पुराणाकारों ने कहा है उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में समुद्र तक विस्तृत समस्त देश का ही नाम भारतवर्ष है। फलत: भारत के महान गुप्त राजवंश के उदात्त और उदार नृपतियों के अधिनायकत्व में विदेशी शासन से पूर्णतया मुक्त होकर तथा राजनैतिक एकता और स्वच्छन्दता प्राप्त करने पर भारतीय राष्ट्र के गुप्त शासन के दो सौ वर्षो में विद्या, कला, धर्म व व्यापार आदि, अनेक क्षेत्रो में जो अनुपम उन्नति की और आदर्श गुप्त नृपतियों के विमल चरित्र के प्रभाव में भारतीय नागरिक जीवन ने सांस्कृतिक और नैतिक दृष्टि से जो उच्चादर्श लाभ किया उस सबके कारण ही गुप्तो का युग हमारे इतिहास में भारत का महानतम युग अथवा स्वर्णयुग माना गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. अमरनाथ सिंह : प्राचीन भारत में न्याय व्यवस्था का इतिहास,पृ 222
2. मनुस्मृति 12/16-17: प्रकाशक- संस्कृति संस्थान (उ.प्र.),पृ. 456
3. मुरलीधर चतुर्वेदी: अपराधशास्त्र एवं अपराध प्रशासन, पृ. 62
4. डॉ. अमरनाथ सिंह : प्राचीन भारत में न्याय व्यवस्था का इतिहास,पृ 242
5. नारद स्मृति 2/41,43

****

सेमेस्टर पद्धति का मूल्यांकन

डॉ. मधुमती नामदेव *

शोध सारांश – शिक्षा मनुष्य का मौलिक अधिकार है, मानवीय गुण है। शिक्षा के बिना मनुष्य बर्बर, असभ्य और आदिम कहलाता है। शिक्षा से मनुष्य जीवन को जीने की कला सीखता है। मानव जीवन में सर्वोपरि स्थान शिक्षा का ही है। अशिक्षित मनुष्य की जिन्दगी अज्ञानता के कारण क्रूर समाज के दानवीय पंजों से दब कर बद से बद्तर हो जाती है। इसलिये शिक्षा और जीवन मनुष्य जीवन के दो महत्वपूर्ण पहलू हैं। एक के बिना दूसरे का कोई महत्व नहीं है। संस्कार, क्षमता और प्रतिभा ये तीनों ही शिक्षा से संभव है। ये तीनों तत्व मनुष्य को मानव बनाते हैं। आधुनिक शिक्षा पद्धति में सेमेस्टर शिक्षा पद्धति प्राय: सभी विश्वविद्यालयों में लागू की गई है कुछ कमियों को छोड़ दें तो आज के तीव्र गतिमान जीवन में सेमेस्टर पद्धति व्यवहारिक और उचित है।

प्रस्तावना – 'सेमेस्टर' शब्द आज अनबूझा या नवीन नहीं है। शिक्षित वर्ग का प्रत्येक व्यक्ति सेमेस्टर के तथाकथित अर्थ से परिचित है। उच्च शिक्षा और स्कूली शिक्षा दोनों में ही आज सेमेस्टर प्रणाली चल रही हैं उच्च शिक्षा में प्रत्यक्ष सेमेस्टर प्रणाली है, तो स्कूलों में अप्रत्यक्ष सेमेस्टर प्रणाली। सी.बी.एस.ई. पैटर्न में तिमाही एवं अर्द्धवार्षिक परीक्षा का पाठ्यक्रम वार्षिक परीक्षा में सम्मिलित न होना सेमेस्टर पद्धति नहीं तो और क्या है?

मैंने अपने इस शोध पत्र का विषय म.प्र. के महाविद्यालय में लागू 'सेमेस्टर' पद्धति को चुना है। मध्यप्रदेश के विश्वविद्यालयों में लागू सेमेस्टर पद्धति 'आधा-तीतर आधा-बटेर' की तरह प्रतीत होती है। शिक्षा का अर्थ है - सीखना और सिखाना न कि मस्तिष्क में ऐसी बातें ठूँस दी जायें जो मस्तिष्क में अर्न्तद्वंद्व पैदा करें। शिक्षा के दो पक्ष हैं प्रथम सीखना जिसका संबंध शिक्षार्थी (विद्यार्थी) से है और दूसरा सिखाना जिसका संबंध शिक्षक से है। शिक्षा का महत्वपूर्ण पक्ष शिक्षक है जो विद्यार्थियों में अपेक्षित योग्यताओं के विकास, उनके चरित्र निर्माण और अध्ययन हेतु प्रोत्साहित करते है, इसीलिये उच्च शिक्षा में अध्ययनरत् विद्यार्थियों के लिये उपयोगी एवं सम्पूर्ण जीवन को निरंतर सार्थक दिशा दर्शन करवाती शिक्षा प्रणाली की आवश्यकता महसूस हुई, जिससे विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास हो सके और राष्ट्र को सुसंस्कृत देशभक्त नागरिक प्राप्त हो सके जिससे हमारा भारत तृतीय विश्व के देशों में वैश्वीकरण के दौड़ में प्रथम स्थान प्राप्त कर सके। यह उद्देश्य तभी पूर्ण हो सकता है जब उच्च शिक्षा की आधारभूत संरचना, पाठ्यक्रम, अध्ययन व्यवस्था तथा मूल्यांकन व्यवस्था को सुव्यवस्थित रूप से लागू किया जाये। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु सन् 2008 से उच्च शिक्षा विभाग द्वारा म.प्र. में सेमेस्टर पद्धति प्रारंभ की गई।

स्नातक स्तर पर उपाधि प्राप्त करने के लिये सेमेस्टर पद्धति को प्रारंभ करने का निर्णय सर्वप्रथम दिल्ली वि.वि. (डीयू) द्वारा अपनाया गया। यू.जी.सी. का कहना है कि प्रारंभ में यह पद्धति 180 वि.वि. में से 64 वि.वि. में अपनाई गई। म.प्र. में जबलपुर वि.वि. ने सन् 2008 से स्नातक स्तर पर सेमेस्टर प्रणाली प्रारंभ की गई। यह देश का पहला राज्य है जिसने सेमेस्टर प्रणाली द्वारा उच्च शिक्षा में व्यापक परिवर्तन करने का निर्णय लिया है। 'उच्च शिक्षा विभाग में वार्षिक परीक्षा मूल्यांकन पद्धति को दो, तीन या चार भागों में विभाजित करके विद्यार्थियों की सम्पूर्ण गतिविधियों, सतत् व्यापक मूल्यांकन एवं परियोजना कार्य के आधार पर परीक्षा परिणाम की प्राप्ति होना ही **सेमेस्टर प्रणाली** कहलाता है।' सेमेस्टर प्रणाली के तीन चरण होते हैं।

सेमेस्टर पद्धति के चरण

सतत् व्यापक मूल्यांकन (CCE)	परियोजना कार्य	सेमेस्टर परीक्षा
C=Continuous(सतत्,लगातार)	(Project Work)	विषम सत्र-I, III, V
C=Comprehensive(व्यापक)		सम सत्र- II, IV, VI
E = Evaluation (मूल्यांकन)		

सेमेस्टर पद्धति के बदलते आयाम पर दृष्टि डालें तो हमें इसके दो रूप दिखाई देते हैं –

1. **2008 की सेमेस्टर प्रणाली** – जो दोहरे प्रश्नपत्र पर आधारित है।
2. **2011-12 की सेमेस्टर प्रणाली** – एकल प्रश्न पत्र पर आधारित और वर्तमान में चल रही है।

आज हमें जो सेमेस्टर पद्धति व्यावहारिक रूप में दिखाई देती है, उसका प्रारंभिक रूप दूसरा था इस दृष्टि से सन् 2008 में स्नातक स्तर पर सेमेस्टर प्रणाली प्रारंभ करते समय पाठ्यक्रम में प्रत्येक विषय में दो प्रश्न पत्र प्रणाली थी, प्रत्येक प्रश्नपत्र में 50 अंक निर्धारित थे जिसमें से 15 अंक का सतत् व्यापक मूल्यांकन रहा, आधार पाठ्यक्रम के अंतिम प्रश्नपत्र में सतत् व्यापक मूल्यांकन में 10 अंक रहे। सीसीई 13 विधाओं में से करवाना अनिवार्य है। प्रत्येक सेमेस्टर में 50 अंक का परियोजना का कार्य था, I, III एवं V सेमेस्टर में परियोजना कार्य का मूल्यांकन आंतरिक परीक्षकों द्वारा तथा II, IV एवं VI में बाह्य परीक्षकों द्वारा मूल्यांकन होता था। V सेमेस्टर में इंटर्नशिप में 100 अंक और रखे गये थे, अत: अंक विभाजन में विसंगति रही। इस पद्धति में विद्यार्थी को अधिक से अधिक 5 वर्ष में स्नातक परीक्षा उत्तीर्ण करना अनिवार्य है एक/दो विषय में ATKT का प्रावधान है, प्रथम एवं द्वितीय सेमेस्टर उत्तीर्ण को ही पंचम में प्रवेश मिल सकता था लेकिन बाद में इस नियम में शिथिलता कर दी गई। CCE और परियोजना कार्य में अलग से पास होना आवश्यक है।

सत्र 2011-12 से सेमेस्टर पद्धति में परिवर्तन किया गया एकल प्रश्नपत्र के साथ ही साथ परियोजना कार्य का प्रावधान अंतिम सेमेस्टर में है जिसमें इंटर्नशिप के माध्यम से परियोजना कार्य सम्पन्न होना है, अंक 100 निर्धारित हैं 50 अंक बाह्य परीक्षक एवं 50 अंक आंतरिक परीक्षक के निर्धारित

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय ओ. एफ. के. महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

हैं। सतत् व्यापक मूल्यांकन 15 अंक का एवं लिखित परीक्षा 85 अंक की है, आधार पाठ्यक्रम का द्वितीय प्रश्नपत्र 50 अंकों का कर दिया गया है, जिसमें 10 अंक CCE व 40 अंक की लिखित परीक्षा निर्धारित है। सत्र 2011-12 में सेमेस्टर पद्धति को गुणवत्ता से जोड़कर दिया गया जिससे इसे और अधिक बेहतर बनाया जा सके। सत्र 2014-15 में सेमेस्टर पद्धति में आधार पाठ्यक्रम में दो प्रश्न पत्र हैं। प्रथम प्रश्न पत्र में नैतिक शिक्षा, हिन्दी भाषा और अंग्रेजी भाषा का पेपर होगा। प्रश्न पत्र 85 अंक का होगा 15 अंक का CCE होना निर्धारित है। द्वितीय प्रश्न पत्र 35 अंको का होगा एवं 15 अंक CCE होना निर्धारित है। इस सेमेस्टर पद्धति की विशेषता यह है कि प्रत्येक सेमेस्टर में विद्यार्थी दोनों भाषाओं का अध्ययन कर सकेंगे जो प्रासंगिक युग के लिये अतिआवश्यक है।

उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास एवं उनके रोजगार की उचित स्थितियों के निर्माण के उच्च उद्देश्य से लागू की गई, यह शिक्षा प्रणाली कुछ आधारभूत संसाधनों एवं योजनाओं की परिपूर्णता के अभाव में वांछित परिणाम प्रदर्शित नहीं कर सकी सेमेस्टर प्रणाली में व्यवहारिक रूप को देखने से उसमें कुछ लाभ और कुछ दोष दिखाई देते हैं, इन दोषों में थोड़े बहुत सुधार करके इसे उच्च शिक्षा की बेहतर पद्धति में परिवर्तित किया जा सकता है।

किसी भी शिक्षा पद्धति का प्रमुख तत्व **पाठ्यक्रम** है मौजूदा सेमेस्टर पद्धति में संक्षिप्त पाठ्यक्रम है, वार्षिक पद्धति के पूरा पाठ्यक्रम दो सेमेस्टर में विभाजित कर दिया गया है, जिससे पाठ्यक्रम सरल और सहज हो गया है। पाठ्यक्रम कम होने से विद्यार्थियों में पढ़ाई का बोझ कम है, पाठ्यक्रम कम होने से विद्यार्थी पाठ्यक्रम का विस्तृत अध्ययन करते हैं, जिससे उस विषय की प्रतियोगी परीक्षाओं हेतु तैयारी हो जाती है और विषय में विशेषज्ञता प्राप्त हो सकती है। कम मेहनत में अधिक अंक की प्राप्ति संभव है क्योंकि सतत् व्यापक मूल्यांकन के अंक आंतरिक परीक्षकों के द्वारा प्रदान किये जाते हैं, सतत् व्यापक मूल्यांकन और परियोजना कार्य के कारण शिक्षकों और विद्यार्थियों में पारस्परिक विचार-विनिमय अधिक होता है, जिससे गुरू-शिष्य संबंधों में निकटता बढ़ती है।

सेमेस्टर प्रणाली में अधिक अंक की संभावना होती है, क्योंकि CCE में 15% अंक हैं, परियोजना कार्य में 50 एवं 100 अंक निर्धारित हैं, जो महाविद्यालय के शिक्षकों के द्वारा प्रदान किये जाते हैं, जिससे विद्यार्थियों को अंक अधिक प्राप्त होते हैं, श्रेणी में सुधार की संभावना रहती है। परीक्षा परिणाम में सुधार संभव है।

छात्र पूरे वर्ष पढ़ाई में संलग्न रहते हैं क्रमश: शून्य सेतु कक्षायें, सतत् व्यापक मूल्यांकन, परियोजना कार्य, तत्पश्चात् सेमेस्टर परीक्षायें होती हैं, पूरा वर्ष कैसे निकल जाता है, पता ही नहीं चलता। समय का सार्थक प्रयोग होता है। रोजगारोन्मुखी पाठ्यक्रम होने के कारण तेजी से बदलते आर्थिक परिदृश्य में रोजगार के अवसरों में वृद्धि हो रही है। परियोजना कार्य रोजगारोन्मुख होने के कारण एवं गुणवत्ता के अंतर्गत अनेक शैक्षणेत्तर गतिविधियों से विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास संभव है, अध्ययन के प्रति रुचि जागृत होती है। विद्यार्थी स्नातक होते-होते जीविकोपार्जन हेतु सचेत व सजग हो जाता है।

अन्य तकनीकी स्नातक उपाधियों की अपेक्षाकृत कम खर्चीली है जिससे समाज का प्रत्येक वर्ग अपने बच्चों को सहजता से शिक्षा प्रदान करने हेतु सक्षम है। आर्थिक बोझ में कमी हुई है, निम्न वर्गीय समाज इस महंगाई में वर्ष भर की फीस एक साथ देने में अपने को असमर्थ पाता है, अत: एक वर्ष की फीस दो/तीन/चार सेमेस्टर में विभाजित हो जाती है। इस वर्ष स्नातक स्तर पर 2 लाख 75 हजार एवं स्नातकोत्तर स्तर पर 77 हजार प्रवेश हुए। इंजीनियरिंग एवं अन्य तकनीकी स्तर की डिग्री के प्रति मोह भंग हुआ है। सेमेस्टर पद्धति रोजगारोन्मुखी होने पर भी इसमें कई कमियाँ हैं, जिससे आज की यह प्रणाली विद्यार्थी को बेहतर रूप प्रदान नहीं कर पा रही है जिसमें सर्वप्रथम कारण है, कि विद्यार्थी को अध्ययन का तनाव वर्षभर रहता है, जून का माह जो विद्यार्थी के अवकाश का रहता है, विसंगतियों के कारण निर्धारित समय-सारिणी होने के बावजूद परीक्षायें जून माह में सम्पन्न होती है।

परीक्षा संचालन और परीक्षा परिणाम का कार्य विश्वविद्यालय के माध्यम से होने के कारण परीक्षा निर्धारित समय पर संचालित नहीं हो पाती है, और न ही परीक्षा परिणाम समयानुसार घोषित होता है, अत: उच्च शिक्षा ग्रहण करने में लेट लतीफी होने के कारण विद्यार्थी उच्च स्तरीय शिक्षा समय पर ग्रहण नहीं कर पाते हैं। प्रतियोगी परिक्षाओं के माध्यम से प्राप्त होने वाली नौकरियों में भी व्यवधान उपस्थित होता है।

उपाधि प्राप्त होने का समय स्नातक में अधिक से अधिक 5 वर्ष एवं स्नातकोत्तर में तीन वर्ष होने के कारण औसत बुद्धि के विद्यार्थी अध्ययन-अध्यापन में तो अधिक ध्यान नहीं देते हैं, जिससे उपाधि प्राप्त करके पढ़े लिखे कहलाते हैं, लेकिन उनका सर्वांगीण विकास संभव नहीं।

परीक्षा कार्यक्रम अनियमित है। पूरे सत्र परीक्षायें संचालित रहती हैं, प्रथम, तृतीय एवं पंचम सेमेस्टर की परीक्षायें दिसम्बर, जनवरी, वार्षिक परीक्षायें मार्च अप्रैल, द्वितीय, चतुर्थ एवं षष्ठम सेमेस्टर की मई, जून तथा ATKT एवं पूरक परीक्षायें सितम्बर और अक्टूबर में होती हैं, अर्थात् बारह माह में से आठ माह परीक्षायें संचालित होती हैं तथापि अब इस दिशा में परिवर्तन किये गये हैं, जिससे सेमेस्टर परीक्षा को निर्धारित समय पर संचालित करने की कोशिश की जा रही है। जबलपुर जिलाध्यक्ष विजय रजक ने 4 फरवरी 2014 को इस संबंध में कहा है कि 'सेमेस्टर प्रणाली को पटरी पर लाने के लिये प्रशासन लगातार परीक्षायें करवाकर छात्रों को सजा देने का कार्यकर रहा है।' मेरी दृष्टि में उनका यह कथन कुछ हद तक सही है क्योंकि आये दिन परीक्षायें होना अध्ययन-अध्यापन के लिए सेमेस्टर में 90 दिन की अवधि पूर्ण न होना एवं ATKT की परीक्षा वर्तमान सेमेस्टर के साथ-साथ देना विद्यार्थियों के साथ अन्याय नहीं तो क्या है। अत: सेमेस्टर पद्धति सैद्धांतिक अधिक और व्यवहारिक कम है। शैक्षणिक और शैक्षणेत्तर गतिविधियों में कोई तालमेल नहीं हो पाता है, क्योंकि जिन महाविद्यालयों में तीन संकाय एक साथ संचालित हो रहे हैं, वहाँ पर शैक्षणेत्तर गतिविधियों में सभी विद्यार्थियों की सहभागिता अनियंत्रित रहती है।

आधार पाठ्यक्रम विषय में I, III एवं V सेमेस्टर में अंग्रेजी भाषा का पाठ्यक्रम में न होना आज के समय की मांग को देखते हुए अनुचित है विद्यार्थियों को दोनों भाषाओं का ज्ञान सभी सेमेस्टर में दिया जाना चाहिये।

सेमेस्टर पद्धति में शिक्षा का व्यवसायीकरण हो गया है शिक्षा संस्थान दिनों दिन भ्रष्टाचार में लिप्त होते जा रहे निजीकरण ने कारण निजी वि.वि. एवं महाविद्यालय मनमानी करते हैं शिक्षकों की नियुक्ति से लेकर विद्यार्थियों के प्रवेश, पाठ्यक्रम की मान्यता आदि में घूसखोरी बढ़ती जा रही है। शिक्षा का पूर्णत: व्यवसायीकरण हो गया है।

सेमेस्टर शिक्षा पद्धति जो आज के युवा वर्ग की आवश्यकता है, में सुधार होना आवश्यक है, तभी युवा वर्ग (छात्र) का सर्वांगीण विकास संभव हो सकेगा। सेमेस्टर पद्धति का प्रमुख कारक पाठ्यक्रम में परिवर्तन होना चाहिये, सभी सेमेस्टर में हिन्दी अंग्रेजी दोनों को ही आधार पाठ्यक्रम

में सम्मिलित करना चाहिये। पाठ्यक्रम को रोजगार की नवीन संभावनाओं से जोड़कर तैयार करना चाहिये। पाठ्यक्रम की पुस्तकें निश्चित समय सीमा पर विद्यार्थी की पहुँच तक उपलब्ध होना चाहिये। नवीन पाठ्यक्रम की अधिकांश पुस्तकें बाजार में उपलब्ध ही नहीं रहती हैं, जिससे विद्यार्थियों को अध्ययन में असुविधा होती है।

मौजूदा परीक्षा प्रणाली जो सेमेस्टर के अंत में लिखित परीक्षा पर आधारित है, को बदलने की जरूरत है। छुट्टियों में या इंटर्नशिप में विद्यार्थियों को व्यावहारिक कार्यों में लगाया जाय व इसी आधार पर इनका मूल्यांकन भी हो। यह आज के समय की जरूरत है।

दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्रों में शासन द्वारा नवीन महाविद्यालय तो खोले जाते हैं, लेकिन उसमें नियमित शिक्षकों की कमी रहती है, जिसे समय सीमा में दूर करना आवश्यक है। विद्यार्थियों की संख्या की अपेक्षा शिक्षकों की संख्या का औसत कम है। अनेक विषयों में शिक्षकों की कमी है। असंतुलित स्थिति में अध्ययन-अध्यापन संभव नहीं है। इसीलिये शीघ्रतिशीघ्र शिक्षकों की नियुक्ति होना चाहिये।

शिक्षा का अर्थ सीखना और सिखाना है अत: शिक्षक और विद्यार्थी दोनों में तालमेल आवश्यक है। एक के न होने पर शिक्षा का कार्य असंभव है। अत: शिक्षकों की पर्याप्त संख्या होना अनिवार्य है और विद्यार्थियों की संख्या समुचित हो इसके लिये आज की मांग के अनुसार पाठ्यक्रम होना अनिवार्य है, तभी शिक्षा की सार्थकता है और प्रत्येक युवा शिक्षा प्राप्त करना अपना धर्म समझेगा।

विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास हेतु गुणवत्ता वर्ष और गुणवत्ता विस्तार वर्ष 2012-13 सभी योजनाओं का महाविद्यालयों द्वारा ईमानदारी पूर्वक प्रयोग किया जाना चाहिये जिससे स्नातक होते होते विद्यार्थी सामाजिक दायित्वों का भार उठाने में सक्षम हो सके।

उपसंहार - शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य केवल एक बार सीखना नहीं है, बल्कि जीवन भर सीखते रहना है, इस दृष्टि से वार्षिक शिक्षा पद्धति के स्थान पर सेमेस्टर पद्धति सुविचारित कार्य योजना है, जिससे विद्यार्थी और शिक्षक दोनों ही सतत् शोध के पथ पर अग्रसर हो सकते हैं। सेमेस्टर पद्धति का मुख्य उद्देश्य है विद्यार्थियों को विद्याध्ययन के साथ ही साथ उनकी रुचि के अनुसार दिशा-निर्देशन देना। उन्हें जीविकोपार्जन हेतु तैयार करना है। जिससे वे सामाजिक उत्तरदायित्वों को सरलता/सहजता से पूर्ण कर सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

1. राजीव मालवीय : शिक्षा के नूतन आयाम, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद ।
2. मदन मोहन : भारतीय शिक्षा की उदीयमान समस्यायें, न्यू कैलाश प्रकाशन, इलाहाबाद ।
3. NET
4. उच्च शिक्षा में प्रबंधन, उच्च शिक्षा विभाग मध्यप्रदेश शासन ।
5. उच्च शिक्षा विभाग द्वारा प्राप्त निर्देश ।

****

मीडिया और साहित्य के मध्य रिश्तों की पड़ताल

डॉ. शाजिया खान *

प्रस्तावना – मीडिया आज संचार साधनों, समाचारों एवं उनकी एजेंसियों का पर्याय बन गया है। प्रारंभ में प्रिंट मीडिया (पत्र-पत्रिकाएँ और इलेक्ट्रॉनिक मिडिया (रेडियो) तक की साहित्य की दखल सिमटी हुई थी। तब साहित्य के प्रकाशन और प्रचार के यही दो प्रमुख साधन थे। पत्र-पत्रिकाओं में प्राय: रविवार का दिन ही साहित्य विषयक प्रकाशन के लिए नियत होता था, रेडियो विषयक माध्यम से कतिपय कुछ अंशों में कहानियाँ, एकांकी अथवा कविताएँ इत्यादि प्रसारित हुआ करती थी। पाश्चात्य देशों में वैज्ञानिक प्रगति के साथ-साथ सर्वप्रथम सन् 1920 में चित्र को वाणी देने का उपक्रम हुआ। सन् 1937 में सर्वप्रथम दूरदर्शन के कार्यक्रम को 'बी.बी.सी.' ने प्रारम्भ किया। भारतवर्ष में 15 अगस्त 1965 से नियमित रूपसे एक घंटे का दूरदर्शन कार्यक्रम शुरू हुआ। इस प्रांरभिक समय में भी साहित्य मीडिया के समीप आता गया और मिडिया तथा साहित्य में पारस्परिक रिश्ते कायम होने लगे।

वर्तमान समय में मीडिया और साहित्य एक-दूसरे के पूरक बनते जा रहे है। दूरदर्शन के अनुप्रवेश के कारण एक तरफ जहाँ मीडिया की ताकत बढ़ी है, दूसरी तरफ़ दूरदर्शन में स्थापित विभिन्न चैनलों के नियमित संचालन में साहित्य की भी अहम् भूमिका नज़र आने लगी है। अब साहित्य लेखन के समानान्तर ही मीडिया लेखन का कार्य भी चल पड़ा है। साहित्य में जिस प्रकार अनेक सद्य:स्फुट धाराओं का प्रचलन बढ़ रहा है, उसी प्रकार वर्तमान में भी साहित्य लेखन में अनेक विधाएँ जी रही हैं। जैसे संस्मरण, रेखाचित्र, एकांकी, रिपोतार्ज, डायरी इत्यादि। प्राय: उक्त सभी विविध विधाएँ मीडिया में भी प्रवेश कर चुकी है। अतएव वर्तमान में मीडिया और साहित्य में प्रगाढ़ संबंध दृष्टिगोचर हो रहे हैं। फलस्वरूप साहित्य और मीडिया में आँखों पढ़ी बात को, आँखों देखी बात जैसा संबंध स्थापित हो गया हैं। मीडिया और साहित्य के मध्य रिश्तों की पड़ताल में और अधिक सार्थक बातें निम्न संदर्भो में जुटायी गयी हैं।

इंटरनेट की प्रवृत्तियों पर 'जनसत्ता' ने मार्च 1997 के अंक में सम्पादकीय टिप्पणी लिखी जो दृष्टव्य हैं। हमारी जिंदगियों में और हमारे समाज में इंटरनेट का लगातार बढ़ रहा यह दखल बताता है कि इंटरनेट की परिकल्पना के पीछे दुनिया के सारे ज्ञान को समाहित कर लेने की इच्छा है। यह हमारे देखते-देखते हो रहा है कि सारे पुस्तकालय, सारे संगीत के रेकॉर्ड, सारे महत्वपूर्ण चित्र और दुनियाभर के तमाम विषयों की न जाने कितनी स्थिर गतिशील सूचनाएँ कुछ लोगों की कम्प्यूटर स्क्रीन पर झिलमिलाती रहती है। इतना ही नहीं, ये लोग इंटरनेट के मार्फत सूचनाओं का आदान-प्रदान भी कर सकते हैं।

ये कुछ लोग इतनी सूचनाओं का क्या करते हैं? सूचनाओं की अपनी कोई नैतिकता नहीं होती है। उन्हें मनुष्य नैतिक या अनैतिक रचनात्मक या विध्वंसात्मक बनाता है। इस लिहाज से यह किन लोगों का दखल है जो इंटरनेट के मार्फ़त हमारी ज़िंदगियों में धीरे-धीरे दाख़िल होने की प्रक्रिया में हैं। क्या यह सांस्कृतिक हमले की कोई सुविचारित शैली है, जिसका पश्चिम के साम्राज्यवाद पर आरोप लगता रहा है और जिसकी कई नई शैलियाँ वृहद पूँजीवाद ने विकसित की है?, क्या यह उससे भी खतरनाक चीज़ है? कुछ कुंठित दिमागों का मनबहलाव या खिलदंडायन जो उन संरचनाओं से मनचाहे ढ़ंग से खेलता रहता है जिनसे हमारे मूल्य या मानक निर्धारित होते हैं। क्या यह एक अराजक विध्वंस नहीं? या यह भी मुमकिन है कि जो अराजक नज़र आता है वह उतना अराजक नहीं बल्कि बहुत हद तक किसी व्यवस्थित नियम का नतीज़ा हो। ऐसे में डर है कि कुछ ऐसे मनचलों की तकनीकी अय्याशी भर होकर न रहा जाय, जैसा कि अभी होता दिख रहा है। वैसे इस दिखने में यह संकेत भी निहित है कि सूचनाएँ अपने आप में पर्याप्त नहीं, उन्हें जीवन से जोड़ने वाला विवेक भी चाहिए।

वास्तव में यह कहना उचित होगा कि सृज़नात्मक लेखन आंतरिक संवेग से मुक्ति है जबकि संचार माध्यमों के लिए किया जाने वाला लेखन संवेगात्मक न होकर अर्थ पर आधारित है। सृज़नात्मक लेखन का आधार संवेदन और संवेदन की प्रमाणिकता है। यह अपने मनोलोक में अनुभूतियों की पुनर्रचना करता है। इसके विपरीत संचार माध्यमों के लिए किए जा रहे लेखन का अनुभूति की प्रमाणिकता से कोई लेना-देना नहीं है और न ही वहाँ पुनर्सृजन की आवश्यकता ही हैं।

हालाँकि दोनों मूलत: रचना संसार ही है। दोनों के माध्यम, उपकरण और प्रेरणाएँ भी भिन्न हैं, फिर भले कहीं न कहीं दोनों में एक अंत: संबंध भी है। इस बात में कोई संदेह नहीं कि साहित्य और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया दोनों ही अभिव्यक्ति के शक्तिशाली माध्यम है।

मुशर्रफ़ आलम ज़ौकी के शब्दों में – ''जहाँ तक साहित्य का संबंध है वहाँ विषय के साथ-साथ अहसास की तरंगे (Under Currents) भी चलती रहती हैं। जिसका सीधा संबंध साहित्य की अपनी विचारधारा (Ideology)से होता है। यह विचारधारा कभी किसी पात्र के सहारे, कभी परिवेश के चित्रण में रंग भरने के साथ, तो कभी उसकी यदर्शनवादी' सूझ-बूझ के साथ सामने आती रहती है। यानी यह अहसास की पूंजी ही वास्तव में वह हथियार है जिसके चित्रण के लिए लेखक हाथों में कलम उठाता है। अहसास की उन्हीं तरंगों को फिल्माना फिल्मकार के लिए कठिन होता है। सबसे बड़ी समस्या इन्हीं अहसासता को दृश्य (Visusal) की भाषा देने की होती है।''

साहित्य कृतियों का अध्ययन और अध्यापन एक विशेष संवेदना से संबद्ध है। संचार माध्यम के लिए किए जाने वाले लेखन मे न तो साहित्य कृतियों की सी संवेदनशीलता है, न विस्तृति है, न विवृत्ति है और न गहनता और तीव्रता है। वह हमारे भव संसार में वृद्धि नहीं करता बल्कि क्षणिक आस्वाद देता है। डॉ. शंभुनाथ चतुर्वेदी के अनुसार- 'संचार-माध्यम के लिए किए जाने वाले 'लेखन का संबंध रागात्मिका वृत्तियों की जागृति से नहीं है जबकि सृजनात्मक साहित्य का अविच्छिन्प्न रिश्ता है रागात्मक भाव-भूमियों के साथ। जीवन संसक्ति और संपृक्ति भी दोनों में असमान है। एक अनायास सृजन है और दूसरा सायास सृजन।' संचार माध्यम की प्रकृति व्यावसायिक होती है। इसीलिए वहाँ के कार्यक्रमों के लिए जो लेखन किया

*अतिथि विद्वान, शासकीय महाविद्यालय, पंधाना, खण्डवा (म.प्र.) भारत

जाता है, उस पर एक अंकुश होता है। वह बाह्य अनुशासन वहाँ आरोपित रहता है। वहाँ रचनात्मकता को इसके आगे नतमस्तक होना पड़ता है।

'फिल्म' की एक निश्चित प्रक्रिया है जहाँ दृश्य, गानों, हँसी-मज़ाक इन सभी छोटी-छोटी बातों को रिलीज़ के हिसाब से तय करना पड़ता है। व्यावसायिकता भी वहाँ हावी रहती है। जिसका प्रभाव रचना के कथ्य पर पड़ता है।

ऐसा भी हुआ है कि प्रकाश (Light), छाया (Shades) और माहौल की बारीकियाँ दिखाते हुए (Sound) ध्वनि प्रभावों के द्वारा भी कैमरे की भाषा कलम की भाषा पर बाज़ी मार गई, यानी लेखक की भाषा से आगे दृश्य बढ़ गया है। जो लोग फिल्म या दृश्य की भाषा समझते हैं, वे ही अहसासों के चित्रण में सफल हो सकते हैं।

परिणामस्वरूप साहित्यिक रचनाओं और साहित्यकारों के विचारों, भावों तथा कल्पनाओं के साथ यथासंभव न्याय हो पाना सुलभ हो पाता है हाँलाकि पूरा न्याय वहाँ भी नहीं हो पाता है। लेकिन इस बात से भी इंकार नहीं किया जा सकता है कि संचार-माध्यमों ने साहित्य की बहुआयामिता में वृद्धि की हैं। 'रामायण', 'महाभारत', 'टीपू सुल्तान की तलवार', 'मृगनयनी', 'गोदान', 'तीसरी कसम', 'सूरज का सातवाँ घोड़ा', 'चाणक्य', 'श्रीकांत', 'चरित्रहीन', 'देवदास', 'कब तक पुकारूँ', 'शेष प्रश्न', 'मिट्टी के रंग', 'चन्द्रकांता', आदि रचनाओं का दृश्यात्मक रूपांतरण इस बात का प्रमाण है कि संचार माध्यमों ने उन्हें अधिक प्रभावी बनाया हैं।

श्रव्य दृश्य रूप में सृजनात्मक लेखन ढ़लकर समाज के बहुलांश तक पहुँचता है और श्रोताओं -दर्शकों के अंतस् को अधिक गहराई से संस्पर्श करता है।

प्रश्न यह उठता है कि साहित्य की प्रस्तुति संचार-माध्यमों पर क्यों की जाए? जब संचार-माध्यम व्यावसायिक प्रतिबद्धता से जुड़ा है और साहित्य का वहाँ क्षरण होता है तो साहित्य को धारावाहिकों और फिल्मों का क्यों आधार बनाया जाए? वास्तव में आज व्यावसायिकता जीवन के प्रत्येक अंग में प्रवेश कर गई है। आज सृजनात्मक साहित्य व्यावसायिक हो गया है। रचनाकार पाठक की माँग को ध्यान में रखकर साहित्य-सृजन करता है और प्रकाशक से अधिक रॉयल्टी की माँग करता है। इसलिए आज रचनाओं में ईर्ष्या, प्रतिस्पर्धा, अश्लीलता आदि की भरमार हो गई है।

रचना की लोकप्रियता रचना के मूल्य को कम करने के बजाय उसमें वृद्धि कर देती है जिसका पूरा लाभ प्रकाशक उठाता है, पाठक नहीं। सृजनात्मक लेखन आज पुस्तकालयों की शोभा बनकर रह गया है। ऐसी स्थिति में यदि संचार माध्यम व्यावसायिकता की आड़ लेकर इन रचनाओं को जनसमुदाय के सम्मुख प्रकट कर रहे है तो इसमें अनुचित क्या है? कहना तो यह चाहिए कि संचार माध्यमों के जरिए ही सृजनात्मक लेखन आज सुरक्षित है और बहुआयामी स्वरूप धारण कर सका है।

निस्संदेह संचार-माध्यम और सृजनात्मक लेखन एक-दूसरे के पूरक है। विरोधी नहीं। इसका प्रभाव तब देखने को मिलता है जब पाठक/श्रोता/दर्शक किसी रचना को रेडियो/दूरदर्शन पर सुनता/देखता है। आज का व्यक्ति केवल एक ही भाषा समझता है- माध्यम भाषा। आँख की भाषा ही उसे बखूबी समझ में आती है। इसी आँख की भाषा के माध्यम से वह रचनात्मक लेखन को देखता है, परखता है और जाँचता है लेकिन विज्ञापनों की भरमार और अंतराल सृजनात्मक लेखन के रस को बाधित करता है। इसलिए संचार माध्यम में होने वाले लेखन को उचित प्रकार से समझने और नियंत्रित रूप में व्यवहृत करने की आवश्यकता है। संचार माध्यम रचना का विस्तार करते हैं, उन्हें विशाल श्रोता व दर्शक वर्ग प्रदान करते हैं और उसे सार्वभौमिक बनाते हैं। परिणामत: जो रचना एक सीमित वर्ग को ही ज्ञात होती है, उसके विषय में बहुत से लोग जान जाते हैं। संचार-माध्यम रचनात्मक कृति के लेखन में परिवर्तन कर उसे प्रसारण योग्य बनाता है। 'चन्द्रकांता' इसका सशक्त और सटीक प्रमाण है जो रचनात्मकता और संचार माध्यमों के अंत: संबंधों की नवीन व्याख्या करता हैं। संचार माध्यम के लिए रचनात्मक लेखन करते समय संवादों की क्लिष्टता और उनकी भाषा पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता हैं।

निष्कर्ष - वर्तमान समय में मीडिया और साहित्य एक-दूसरे के पूरक बनते जा रहे हैं। पत्रकारिता साहित्यकार की पहली सीढ़ी रही है। साहित्य की विविध विधाएँ पत्रकारिता से ही पल्लवित हुई है। प्रसिद्ध साहित्यकार बालकृष्णराव के शब्दों में 'समसामयिक परिवेश से किसी न किसी रूप में, प्रत्येक लेखक प्रेरणा ग्रहण करता है,चाहे वह साहित्यकार हो या पत्रकार। दोनों ही लेखक है, दोनों ही सर्जनकार हैं, दोनों के कार्य किन्हीं ऐसे गुणों की अपेक्षा करते है, जो दोनों के लिए अपरिहार्य हैं - 'अनावित दृष्टि, चिंतन, लेखन में प्रेरणा की शक्ति। दोनों देश और काल के आयामों पर अपनी-अपनी विशिष्ट परम्पराओं के अतिरिक्त उस संश्लिष्ट सांस्कृतिक परम्परा, उस सामाजिक चेतना से सम्बद्ध हैं, जिसमें उन्हें अपनी बात औरों के प्रति निवेदित करने की प्रेरणा और शक्ति मिलती है अर्थात साहित्य और पत्रकारिता दोनों की मूल चेतना भूमि एक ही है। किन्तु दोनों के कार्यक्षेत्र भिन्न-भिन्न हैं, फिर भी दोनों एक ही काम को अलग-अलग ढंग से करते है। प्रत्येक पत्रकार अंशत: साहित्यकार भी है, प्रत्येक साहित्यकार अनिवार्यत: पत्रकार भी।'

1920 से प्रारम्भ 'सरस्वती' से लेकर आद्यतन अनेक साहित्यिक पत्रिकाएँ निकली हैं, जिन्होंने हिन्दी को बड़े-बड़े साहित्यकार प्रदान किये हैं। 'समालोचक' (1902), 'माधुरी' (1923), 'चाँद' (1922), 'सुधा' (1927), 'हंस' (1930), 'कल्याण' (1926) आदि पत्र पत्रिकाओं के माध्यम से प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी वर्मा, जैनेन्द्र कुमार, सुभद्राकुमारी चौहान, भगवतीचरण वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, पांडेय बैचेन शर्मा 'उग्र', अज्ञेय आदि अनेक साहित्यकार प्रकाश में आए हैं।

आज के युग में संचार माध्यम सबसे बड़ा माध्यम है, जिसके द्वारा आज मानवीय संवेदनाएँ एकदम संसार के एक कोने से दूसरे कोने में प्रकट हो जाती है और भावनाओं के इस समुद्र को उजागर करने में शायद आज का सबसे बड़ा सशक्त माध्यम है -दूरदर्शन। मीडिया के क्षेत्र में एक नया आयाम तब जुड़ा जब टेलीविजन का आविष्कार हुआ। दूरदर्शन- मीलों दूर बैठे किसी दृश्य, घटना या वस्तु का हूबहू दर्शन। पहले प्रेस, फिर रेडियो और फिर दूरदर्शन। आज दूरदर्शन में स्थापित विभिन्न चैनलों के नियमित संचालन ने साहित्यिक रचनाओं का दृश्यात्मक रूपांतरणकर इस बात का प्रमाण दिया है कि संचार माध्यमों ने उन्हें अधिक प्रभावी बनाकर मीडिया और साहित्य के मध्य रिश्तों के पड़ताल में अहम् भूमिका निभायी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. संपा, डॉ.रमेशचन्द्र त्रिपाठी, डॉ. पवन अग्रवाल, मीडिया लेखन पृ.-32।
2. अक्षर पर्व अंक-10 पूर्णांक (49) वर्ष 5 मई, 2002 पृ.-16।
3. संपा. डॉ. रमेशचन्द्र त्रिपाठी, डॉ पवन अग्रवाल, मीडिया लेखन, पृ.-32।
4. अक्षर पर्वद्ध अंक-10 पूर्णांक (49) वर्ष 5 मई, 2002 पृ.-17।
5. अक्षर पर्वद्ध अंक-10 पूर्णांक (49) वर्ष 5 मई, 2002 पृ.-17।
6. संपा. डॉ. रमेशचन्द्र त्रिपाठी, डॉ. पवन अग्रवाल मीडिया लेखन पृ.33।

****

To Identify The Uses Of Quality Cantrol In Readymade Garment Manufacturing Units In Indore Region

Dr. Sonal Bhati *

Abstract - In the readymade garment manufacturing unit, quality control is practiced right from the initial stage of sourcing raw materials to the stage of final finished garment. For this quality control practices, every readymade garment manufacturing industry develops their self formulated methods, to insure their procedure and product as per standard quality parameters. This study is an empirical study. The objective of the study is to identify the uses of quality control as per quality assurance in readymade garment manufacturing units in Indore region. Primary and secondary data were collected from previous researches, books, magazines and by interview scheduling methods from readymade garment manufacturing units, these industries are already manufacturing their goods for domestic market. 30 Small, medium and large scale garment manufacturing units have been taken as a sample, after statistical analysis results were found that there are significant difference between small, medium and large garment manufacturing units in terms of uses of quality control in Indore region.

Introduction - Quality control in garment industry is very complex and lengthy task. Quality means customer needs is to be satisfied but maintaining an adequate standard of quality also costs effort. There are a number of factors on which quality fitness of garment industry is based such as - performance, reliability, durability, visual and perceived quality of the garment. Quality needs to be defined in terms of a particular framework of cost. As producers of apparel there must be a constant endeavor to produce work of good quality. There are several stages to control quality in garment manufacturing. They are given below: Pre-production quality control, Quality control during production, Final inspection, Quality control to developing a sampling plan, Post-production quality evaluation. Quality assurance and quality control is a complex area of the apparel industry. First off, quality assurance is not quality control, but quality control is an aspect of quality assurance. Quality assurance builds quality into each step of the manufacturing process including designing, production, and beyond. Quality control is generally understood as assessing for quality after products have already been manufactured and sorted into acceptable and unacceptable categories. Apparel garments, accessories, and other textile products are assessed for quality in the preproduction phase, during production, and with a final inspection after the product has been completed. Readymade garment manufacturers believe that the desired output largely depends on the core elements in manufacturing, such as skill of labour, machines, materials, methods, and environment, but the importance of quality in meeting and exceeding customer expectation, many companies have installed their own process control approaches as a mechanism to monitor and to control the quality of manufactured garments. In other words, process control in mass-produced garments seems to be a compulsory activity that has to be planned and conducted to ensure the garment with a variety of designs, styles, materials, and quantities can be produced based on buyer requirements with acceptable variations.

Review Of Literature - Safa Tuna, 2014 has researched that the, tracking the process and analyzing with certain quality improvement tools has been examined, analyzed and problems are detected. Pareto analysis, flowcharting, fishbone analysis and SPC methods are used to get results. The results say a lot about company's problems such as out of nearly 20% of the company's production faults cause nearly 80% of their problems and statistically it is proven that those mistakes carry the process out of control. By the side, instability and great variations are detected in the process which is not wanted in any kind of mass production. Amit Kumar studied in September 2009, on the subject of "Profiting through Quality: Improving 'Right First Time' Learning from systematic and collaborative implementation of Quality Improvement Program in 10 apparel firms" It was concluded that the cost of quality in the Indian apparel industry was too high to be neglected. There was an urgent need for investment in prevention of defect generation, improvement in effectiveness of inspection and testing in apparel industry. In a Study by Mr. Roger Thomas, "Industries Performance Assessment Of Apparel Industries: Process And Tools For Enhancing Competitiveness", in association with Okhla Garment and Textiles Cluster (OGTC)October 2008 explore that the Roving quality control procedures are either non-existent or done incorrectly. Wherever roving quality procedures are being used the quality levels indicate

* H.O.D. (Fashion Technology Department) Govt. Women's Polytechnic College, Indore (M.P.) INDIA

a reduced repair level. If this system is followed, the outgoing quality of production will be improved and the high level of repairs and rejections in finishing room can be reduced. Mohammad Faizur Rahman**,** RAHMAN, Lal Mohan Baral**,** Ayub Nabi Khan**, "**QUALITY MANAGEMENT IN GARMENT INDUSTRY OF BANGLADESH", June 2009. As per the study held In Bangladesh most of the garment factories use different tools for quality management but not in organized way. When needs, They use these tools haphazardly. In Bangladesh most of the garments factories use 4-point system for inspecting fabrics of garments. Most of the buyers are importing garments from Bangladesh with AQL (acceptable level) Most of the garments manufacturers are doing inspection during the manufacturing process of garments. Other tests such as shrinkage tests, colour fastness tests, azo free tests are done according to the buyers' requirement. In a study by Pinky, Afroza Sultana, 2012, On "Quality Control In Knit Garments Production", Now a days Textile field become very competitive and the buyer wants 100 % export quality product. For this reason, it is very important to know about the latest technologies in textile sector. To produce a quality Product the performance of a quality control department can be evaluated in financial terms and it can be determined how much cost is involved in achieving a certain level of quality and whether the quality control department is paying its way or not.

Methodology - In this chapter furnishes the various methodological details used in the present study. The details are organized under the following section: The Objective of the study is to identify the uses of quality control as per quality assurance in readymade garment manufacturing units in Indore region. The research Hypothesis is formulated that there will be no significant identification in the uses of quality control as per quality assurance in readymade garment manufacturing units in Indore region. Research process has been defined, review of literature were discussed, primary and secondary data were collected and interview schedule questionnaire was prepared, data was processed by editing, coding and tabulation using percentage, mean SD, frequency. Hypothesis were tested with the technique of statistical test. Mean and chi-square were applied and in the end, result were discussed. As a sample, 30 readymade garment manufacturing industries were selected by purposive random sampling method, on the basis of synchro system and unit synchro system. Registered under 1722 (E) notification.

Working definitions- ***Small manufacturing enterprises*** **(SE):-** Enterprises engaged in the manufacturers apparel products and whose investment in machinery (original cost excluding land and items specified by the Ministry of small scale notification no S.O.1722(E) Dated October. Rs. 25 lacs to Rs.5 cr.

Medium manufacturing enterprises **(ME)-** Enterprises engaged in the manufacturers apparel products and whose investment in machinery (original cost excluding land and items specified by the Ministry of small scale notification no S.O.1722(E) Dated October). 5 cr to10 cr.

Large manufacturing enterprises **(LE):-** Enterprises engaged in the manufacturers apparel products and whose investment in machinery original cost excluding land in the case of imported machinery, import duty, the shipping charges, custom clearance charges and sale tax or value added tax under AEPC Act-2006, it is classified by pollution control, research and industrial safety and such other should be specified by notification. 10 cr and above.

Results And Discution

TABLE 01

To identify the process of quality control as per quality assurance in readymade garment manufacturing units

S.	Particulars	SE	ME	LE	Chi-value	df	Asymp. sign
1.	Quality control in raw material	-	70	10	159.709	2	0.000
2	Quality control in cutting dept.	-	12	81			
3	Quality control in fabrication dept.	81	9	5			
4	Quality control in finishing and packaging	19	9	4			

Chi-value to identify the process of quality control as per quality assurance in readymade garment manufacturing units in Indore region obtained 159.709 which is significant.

Graph 01 (See in next page)

In the graphical presentation, Total number of respondents found in the criteria of raw material inspection or inspection in cutting section SE found 0 , because of limited working hands and no availability of quality checking equipments. The thinking of maximum small scale enterprises have that checking of raw material is not mandatory part of the garment manufacturing process where as for the quality control in fabrication section got 81% and quality control in finishing and packaging section got 19%. The reason behind these figures are, maximum small scale manufacturing unites are running on the basis of contract and some of them work on job basis, so the main part of the industry is to do fabrication rather than cutting. To get approval from ranting industry they try to control and focus on the quality of this section. 70%ME do quality control from the starting of the raw material store. 12% ME apply quality control measures during cutting the fabric, 9% ME apply quality control in fabrication section, and 9% ME apply quality checking in finishing and fabrication section. These percentages state that maximum medium scale manufacturing units produce their own brand and for the credibility of their brand in domestic as well as export market they try to maintain their quality according to customer or buyer demand. 10% LE, apply quality measures during raw material inspection, they are having all machines, equipments and work force for this work, 81% apply strict quality measures during cutting because maximum of them fabricate full garment as par buyers demand, all of them manufacture the product on the basis of buyers specification

sheet. To follow the measures according to buyer, they check each and every part of cutting, manually or mechanically according to buyer choice. 5% LE apply regular quality inspection in fabrication department and only 4% LE of them apply quality control measures during finishing and packaging department.

Conclusion And Recomandations - The quality control in garment manufacturing is influence by the objectives of the manufacturing, product range and the practices specify to the manufacturing unit. Therefore the quality control measures vary from one unit to the other. It is batter to make quality team for every day inspection in different departments of the industry. Quality Teams are not completely independent of the production department, it is important to have clear reporting procedures and to keep the quality team independent of production management. Checkers in the line are also a part of the quality team. The Supervisor is responsible for the output but quality decisions must be made by the quality management team.

Recommendations-

1. Properly organized roving quality procedures must be implemented,
2. Regular quality meetings with all concerned and its reports should be shared and analysed,
3. Quality team should be independent of production department,
4. Investigations must be made into the amount of repairs found in finishing department,
5. A co-ordinate effort must be made to reduce repair rates,
6. The cost of quality must become a major management information tool.

References :-

1. Amit Kumar September 2009, "Profiting through Quality: Improving 'Right First Time' Learning from systematic and collaborative implementation of Quality Improvement Program in 10 apparel firms", German Technical Cooperation , SME Financing and Development Project , B-5/1, Safdarjung Enclave, New Delhi - 110 029, India.
2. Mr. Roger Thomas, Performance Assessment Of Apparel Industries: Process And Tools For Enhancing Competitiveness Study by Methods Apparel Consultancy Pvt. Ltd. Commissioned by German Technical Cooperation, SME Financing and Development Project, New Delhi, in association with Okhla Garment and Textiles Cluster (OGTC)October 2008.
3. Mohammad Faizur, Rahman, Lal Mohan Baral, Ahsanullah University of Science & Tech. and Ayub Nabi Khan, BGMEA University of Fashion and Technology.QUALITY MANAGEMENT IN GARMENT INDUSTRY OF BANGLADESH, **Article ,** June 2009
4. Pinky, Afroza Sultana, Daffodil International University Institutional Repository Textile Engineering Project Report 2012-02.
5. Safa Tuna, International University of Sarajevo, Hrasnicka cesta 15, 71210 Sarajevo, Bosnia and Herzegovina,

Graph 01 (See in next page)

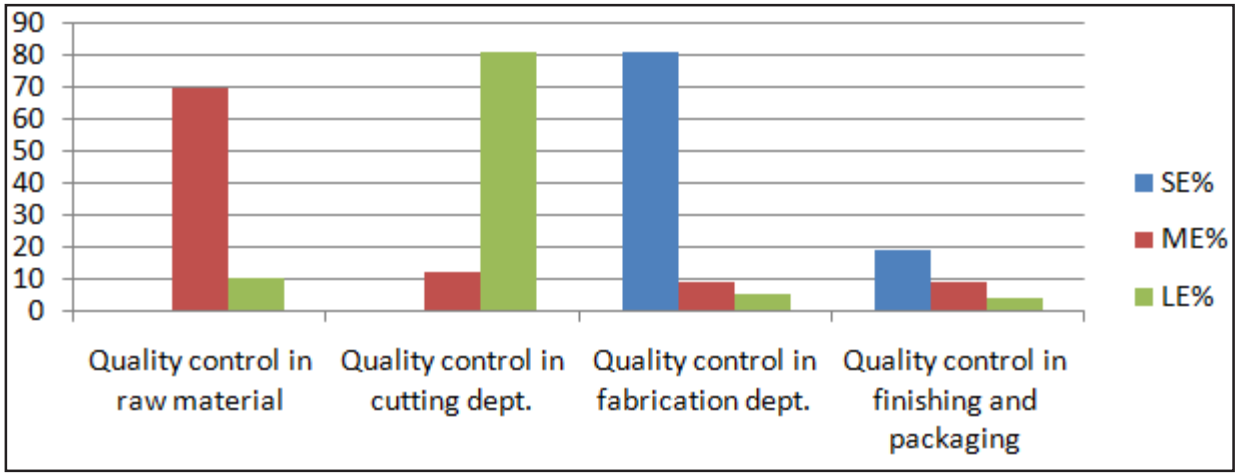

****

Economic Growth and Its Impact on Environment

Dr. Pushpanjali Arya* Dr. Ashok Kumar**

Introduction - Today most of the economies of the world are aiming towards economic growth. Economic growth however being a quantitative phenomenon measures the output produced in an economy. This calls for an active participation of industries to utilize their maximum capabilities to produce more. The production process depends upon the regular flow of natural resources and the presence of these resources in sufficient quantities determines the pace of economic growth.

Whether it is a process of utilization of input or production of output in both there is waste generation. In the initial stages of growth it was presumed that nature would provide all the resources and the aspect of resource overutilization and eventually resource crisis was ignored. It was assumed that the natural forces of earth would decompose the waste generated on its own. But with the increasing pace of progress, urbanization, industrialization the exploitation of natural resources has been so rapid, that it resulted in the reduction of natural resources on one hand and releasing enormous quantities of waste into the environment on the other. Economic growth has resulted in many undesirable effects on the environment.

Adverse Affects of Economic Growth on Environment - Economics progress in any form is destroying the authenticity of this unique eco-system and is becoming the cause of slow death of the environment. The World Development Report 1992, explores the link between economic growth and environment. The report focuses on the environmental issues analyzing the key linkages been natural environment and economic growth.

Various ecological conflicts caused by developmental activities :

(I) Environmental Pollution - Today, environmental pollution is one of the most serious problem the world is facing. With the increasing pace of economic growth the environment is getting more degraded. Environmental pollution is an undesirable change in the physical ,chemical or biological characterstics of the air, land and water that negatively affect the human life or the other species. Industrialization, agricultural chemicals, use of fuels, smoke, oil spills, etc. are the various causes of pollution. Various types of environmental pollution are ;

1. Air pollution
2. River pollution
3. Ground water pollution
4. Light pollution
5. Noise pollution
6. Thermal pollution
7. Mining pollution
8. Plastic pollution
9. Municipal Solid Waste pollution
10. Soil pollution

- The Bhopal Disaster in 1984 was an industrial disaster caused by the accidental release of 40 tones of methyl isocyanate (MIC) from Union Carbide India Limited in the heart of the city Bhopal.
- The Exxon Valdez Oil Spills was the largest oil spills to occur in the world .The oil spills took place on March 23, 1989 in Alaska. Because the tanker hit the shallow land it leaked 11 gallons of oil into the ocean. The spills greatly affected the sea otters and sea birds.
- On July 14, 2010, chlorine gas leaked from the Sewri Industrial Area on land by the Mumbai Port Trust and nearly 76 people were treated in the hospital.

(II) Disrupting bio-geo-chemical cycles.

a) Climate changes: Worldwide industrialization, urbanization, population expansion has led to the increasing demand for the energy, which has adversely affected the climate conditions. Climate being the most important environment indicator of habitable Earth is getting warmer day by day. The global warming is becoming noticeable in countries which are known to have a cold climate.

b) Green House Effect: The Green house Effect is a natural process in which certain gases, known as “Green House Gases” trap the heat that radiates from the earth’s surface. It is these gases who regulate the radiant energy balance on earth, thus making it habitable, but its increase i.e. enhanced green house effect as is actually taking place is feared to cause global climate changes of irreversible and highly destructive type. Most of the climate warming green

*Assistant Professor (Economics) Government P.G. College, Kotdwara Garhwal (Uttarakhand) INDIA
** Assistant Professor (Economics) Government Degree College, Devprayag (Uttarakhand) INDIA

house emissions are due to deforestation that releases stored carbon back into the atmosphere .

c) Ozone layer depletion: On the earth's surface ozone is a pollutant but in the stratosphere it forms a protective layer that reflect radiations back into the space, protecting us from the damaging ultra-violet rays. Several pollutants attack the ozone layer but chief among them is the chlorofluorocarbons (CFCs). Nitrous oxide from the fertilizers and pesticides methyl bromide. Scientists find that the protective ozone layer is the stratosphere is thinning. In the Antarctic Region it vanishes almost entirely for a few weeks every year.

(III) Depletion of Natural Resources - Mankind has consumed more natural resources over the past century. Rapid economic growth has led to depletion of non-renewable resources. The tension with the non renewable resources is this that once finished it will take millions of years to regenerate. Resources such as fossil fuel, forest, fishes, healthy soil, minerals are rapidly depleted and are in the danger of disappearing from the planet. Majority of the forests worldwide have been depleted. Another depleted resource is the fishes as many people rely on fish as a major food source. Three quarter of all our energy comes from fossil fuel so fossil fuel is also a depleted resource. The overuse and misuse of the soil has destroyed the fertility of the soil. Human's are using up plants as raw material at a much faster than they are being replenished.

(iv) Loss of Bio-diversity - Bio-diversity is the variety of life on earth and it is a myraid of processes. It includes large variety of flora and fauna on this planet. Wild plants, animals and micro-organisms have provided essential products since human first walked on earth. Many flora and fauna have productive, medicinal, consumption, commercial value for centuries. Coastal communities have used plants and animals of the coral reefs for their medicinal properties. Coral reefs provide an environment for more than a quarter of all marine life and close to one third of the coral reefs have been damaged by human kind (Alliance). Mining of ocean beds for petroleum, natural gas, magnesium etc. causes disruption of the ocean floor leading to loss of bio-diversity. Many species of plants and animals have been reduced to a critical number and are on the edge of extinction .

(**v) Deforestation –** Forests are an important natural resource. Besides enhancing the quality of environment and life support system forest plays a vital role in Forest Economy. Forests provide rubber, fruits, nuts, medicinal herbs, floral, greens, etc. Many pharmaceutical companies obtain raw material from tropical forest for making drugs. But the reckless felling of tress by humans for their ultimate ends has resulted in deforestation. Forests are burned, cut down for various seasons like clearing of land for agriculture, harvesting of timber, for industries, for expansion of cities and many more.

Karnataka's National parks have highest percentages of encroachment is South India as private industry and official bodies have together stripped the state off its green cover. Mining quarrying, irrigation and industrial projects also result in deforestation.

(VI) Soil Erosion - Soil is a renewable natural resource it plays an important role in the determination of quality and composition of the biosphere. In fact the biosphere develops over the soil and is not only a home for microbes but is also a source of nutrition for plants. All the growth activities are having a direct impact on land. It has resulted in land degradation i.e. loss of fertility, loss productive capacity of the soil. No doubt soil erosion is a natural process but it becomes a problem when developmental and human activities cause it to occur at a much faster rate. Today, soil erosion has become a major global environmental problem. Due to large scale illegal mining is India and the Aravalli Hill Range in Rajasthan and Haryana the forest cover has been depleted 90% and drying up wells are affecting agriculture.

Concept of Sustainable Development - If underdevelopment is the greatest curse to humanity then environmental degradation is the greatest threat to human race. But untamed economic growth at the expense of the environmental cannot go on forever. There should be economic growth in a healthy environment, an environment in which one is not a threat to the other. A middle path can always be adopted where economic growth and ecological system co-exists. Today, this problem has attracted economists, environmentalists and other persons and an answer to the problem is found in the Concept of Sustainable Development. The concept is of very recent origin. It appeared in 1970's and was widely disseminated in the early 1980's by the World Conservation Strategy. (IUCN, UNEP AND WWF 1980) which called for the maintenance of essential ecological process, the preservation of bio- diversity and sustainable use of resource. In 1983, United Nations set up the World Commission on Environment and Development (Brundtland Commission) to examine the problems of Environment and Economic Development. World Commission on Environment and Development 1987, the Brundtland Report entitled, "Our Common Future," placed in on the world's political agenda and helped to re kindle public interest in the environment. This report defines Sustainable Development as, "Development that meets the needs of the present without compromising the ability of the future generations to meet their own needs." Sustainable Development assigns equal emphasis on development, environment preservation and conservation. As a matter of fact, environmental degradation has to be stopped at all costs so as to preserve health and to promote welfare of the community.

Objectivities of Sustainable Development:

1. Respect and care for all forms of life.
2. Improve the quality of human life
3. Minimize the depletion of natural resources
4. Change personal attitude and practices towards the environment.
5. Meeting the basic needs

6. Lifting the living standards
7. Maximizing the net effort of economic growth
8. Preservation, conservation and enhancement of environment, human and physical capital
9. Free the environment from all types of pollution
10. Strict control on gross exploitation of natural resources

Ways to achieve sustainable Development:

1. Wise use of resources with minimum wastages.
2. Uses of eco-friendly technology
3. Preserving resources that have been reduced to small amount
4. Regenerate resources where ever possible

Measure for Environmental Restoration and Conservation - Considering the extent of environment deterioration that has already taken place greater efforts need to be made for the ecological restoration and conservation. Various measures of ecological restoration and conservation are being taken in different countries of the world .In India the various laws and voluntary codes of environmental protection are:

1. Directive Principles in The Constitution of India.
2. Fundamental Duties in The Constitution of India.
3. The Environment (Protection) Act ,1986.
4. The Wildlife (Protection) Act,1972 (amended in 1986).
5. The Environment Impact Assessment (EIA) Notification,2006
6. ISO 14000.
7. The Ozone Depleting Substances(Regulations) Rules 2000.
8. The Recycled Plastic(Manufacture and Usage) Rules 1999.
9. Water (Prevention and Control of Pollution) Act 1974
10. Air (Prevention and Control of Pollution) Act1981
11. Bio- diversity Act 2002.
12. Forest Right Act 2006.
13. PESA 1996.
14. Bio-diversity Rule 2004

Other Measures:

(A) Encouraging compulsory Environmental Education at the school level onwards.
(B) Adoption of eco-friendly ways of production and consumption like solar power, wind energy etc.
(C) Regenerate renewable resources when ever and where ever possible like forests.
(D) To set up pollution control devices which reduce the pollution.
(E) Strength investment on environmental conservation in the country's Annual Budget.
(F) Proper sewage and wastage treatment techniques should be adopted.
(G) Reduce the consumption of natural renewable and non-renewable resources by adopting alternate resources.
(H) Community participation and public awareness like:

1. Social forestry
2. Joint Forest Management (JFM)
3. Eco-clubs, also known as green clubs, Anandalaya Prithvipala Environmental Clubs is the famous eco club.
4. Beej Bachao Andolan to save the trees
5. Van Mahotsava, celebration of plantation of trees
6. Ganga Action Plan (1985)
7. Relevance of indigenous practices.
8. International ban on ozone-destroying chemicals lake CFC's cholоflurocarbons have helped to reduce the loss of protective ozone
9. In the Taj Mahal case a very strong step was taken by the Supreme Court of India to save the Taj Mahal from being polluted by fumes and more than 200 factories were closed down.

Conclusion and Suggestions:

1. Economic growth however important is a process which goes against the ecological balance and in the process of economic growth environmental degradation is inevitable.
2. Natural resources whether exhaustible or inexhaustible are an important component of economic growth. But these resources are likely to get exhausted in the near future leading to shortage of resources, so resource conservation is also important.
3. The Concept of Sustainable Development is an effort to minimize the environmental degradation and preserve the resources by economical use of resources.
4. Sustainable development is the immediate cure and not the ultimate one. Sustainable use of resources gives enough time to the society to find ways out of the problem of depleting natural resource.
5. Minimize the wastages and not to leave the wastages the entire responsibility of the nature to decompose. Proper methods should be devised for decomposition and disposal of wastage. It should be done by human efforts.
6. To introduce the concept of "Wastage Management".
7. To introduce the concept of 3 R's- i.e. 'Reduce' and 'Reuse' and 'Recycle'. This should be followed by both producers and consumers.
8. Here the question is not of survival of economic growth or environment alone, but of sustainability of both, an atmosphere in which both co exist.
9. The environment needs to be conserved and restored for its rich biological diversity, natural resources and aesthetic value . The future generations should receive a quality environment with a fair share of earth's resources.
10. It should be realized that environment is neither a free gift of nature where resources freely flow for economic growth nor it is a sink for the deposition of waste products from the industries, houses and other sources. In fact, the environment needs to be viewed as a 'Capital' that is to be nurtured carefully.

References :-

1. Aggarwal, R.C (2002), "Economics of Development and Planning," Lakshmi Narain Aggarwal.

2. Bhatia, A.L (2007), "Sustainable Environment and Impact Assessment," Avishkar Publishers Distributors.
3. Deswal, S.S and Deswal, S. (2003), "Environment Engineering." Dhanpat Rai & Co.(P) Ltd. Delhi.
4. Deswal, S, and Deswal, A (2005) ," A Basic Course in Environment Studies," Dhanpat Rai & Co.(P) Ltd Delhi.
5. Gupta, P.K. (2000) ," Elements of Biotechnology," Himalaya Publication House, Delhi.
6. Jhingan, M.L., " The Economics of Development and Planning," Shiba Offset Printers Press, Delhi 26th edition.
7. Kumar, Arvind. (2009), "Environment and Sustainable Development," Shree Publishers and Distributors.
8. Kulshestha, U.C. (1996) "Economic Development and Planning." Laxmi Aggrawal Publications.
9. Mishia and Puri (2011) "Indian Economy",Himalayan Publishing House.
10. Purang,Y.P. and JaiSingh,S.(2006), "Environmental Education."Arya Publishing Company, Pg 82.
11. Rai, A.N. (2007) "Environment Education", Goyal Brothers Prakashan, New Delhi Pg. 55,60,138.

****

Preliminary study on environmental awareness of students with the implementation of the environmental education in schools in district Rudraprayag, Uttarakhand: A case study

Dr. Mahendra Singh Panwar *

Abstract - Environmental education in India is implemented by infusing various environmental concern through different subject area in all stages of school education. It was felt that students in general had different notions about what constitutes 'environment'. Correct understanding of term environment in inevitable to achieve the objectives of environmental education. It is must to make students familiar with the local environmental problem and provide necessary skill to address such problems. Thus this study was undertaken as a preliminary research to find out students basic understanding about environment, their local environmental problems and their outlook towards such problem. The study revealed some basic issues such as in their understanding about the term environment and their inability to connect their school curriculum and the environment outside their classroom.

Introduction - Environmental education is a process aimed at developing the world population that is aware of and concerned about the total environment and its associated problems and which has the knowledge, attitudes, motivation, commitment, skills to work individually and collectively towards the solution of current problems and the prevention of the new ones. It is a lifelong process, inter-disciplinary and holistic in nature and application. It is about the inter-relationship and inter-connectedness between human and natural system. Environmental education should consider the environment in its totality- natural and built, technological and social.

Proper understanding of the notion of the human environment is essential for the attainment of the objectives of environmental education. This study was undertaken as a preliminary research to find out students basic understanding about the environment with the implementation of environmental education in school. If we want to manage our planet earth we have to make all the persons environmentally educated.

Methodology - For this study some components of above mentioned elements of environmental were considered such as students understanding about the term environment itself and their awareness and understanding about local environmental concerns. To this end a set of question about the environment were prepared for students so as to obtain impromptu response which would reflect their understanding about environment and its related problem with honesty and sincerity data was collected through structured interview and written test from students who represented their block of district Rudraprayag of Uttarakhand state.

Result & Discussion - A total of 1800 students of various intermediate school of all the three block of district Rudraprayag (Uttarakhand) were interviewed and tested for this study (table 1 &2). Students were in high school and higher secondary classes the result of the study are provided below.

Table 1 District Rudraprayag, Uttarakhand

S.	Name of Blocks	Number of schools included
1	Agastyamuni	17
2	Jakholi	13
3	Okhimath	15
Total schools included		45
Total students		1800(40 from each school)

Table 2 (see in last page)

Students understanding of the environment - Environmental education includes human component in the exploration of the environmental problem and solution which implies that the environment includes not only and animals and also buildings, highways and ocean tankers. Some would call these human created environment as technological environments. In order to find out how much students have an understanding of the environment students were asked to name any five component of the environment.

The study revealed that barring 1688(93.7%) all included the bio-physical as they have studied in science or ecology chapters such as biotic and abiotic factors. However it was surprising that only 311(17.3%)students mentioned buildings houses, roads etc. in their its further only 39.7% students Mentioned people of human being as component of environment (figure1). Another interesting observation of the study was that though the students rare very familiar with

*Department of Chemistry, Government Post Graduate College, Agastyamuni, Rudraprayag (U.K.)INDIA

the term environment many of the find it difficult to name just five components (figure 2). This indicates that the effective of inclusion of chapters on environment related concern is still doubtful.

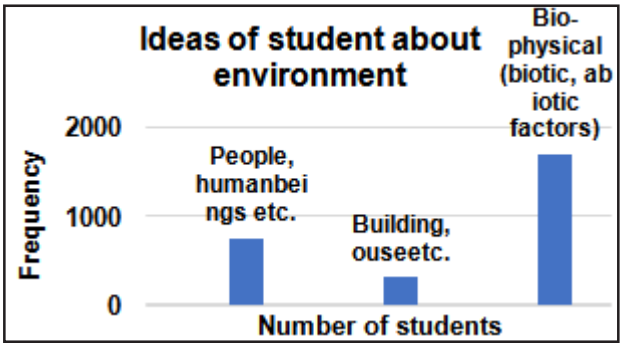

Figure 1 Ideas of student about the environment

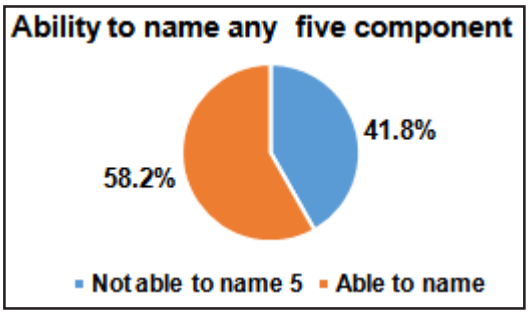

Figure 2 whether the students were able to name any five components or not

Students understanding of environmental problems - During this study an attempt was able to find out how far the students connect to their local environmental problems for this they were asked to name two environmental problems facing them. It was found that 741 (41.2%) mentioned global warming or ozone layer depletion while 1596 (88.7%) mentioned problems related to the pollution. While 791(43.9%) students mentioned problem, related to the resources, it was interesting to find that 315 (17.5%) students mentioned population related problems (figure3). More than half of the students mentioned pollution related problems the number is quite than the expected as this problem is invariably faced by every student in their daily life a good number of student mentioned the ozone layer depletion a sort of disconnect with their daily life and more of a bookish knowledge. An attempt was also made to find out if the students knew the reasons for the environmental problems they had mentioned? It was found that almost 93.5% knew the reason while there were a few students who were not sure of the reasons or who did not respond (figure 4).

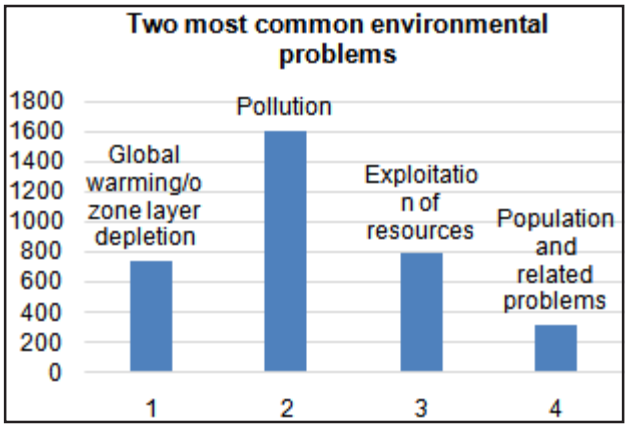

Figure 3 Two most common problems mentioned by the students

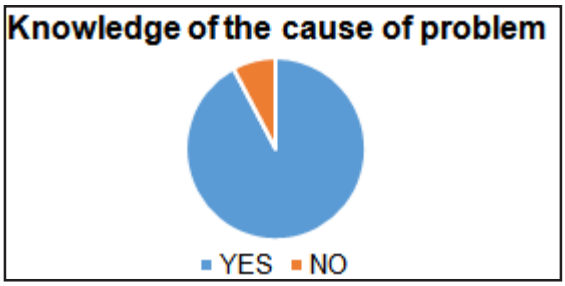

Figure 4 The knowledge of the actual cause of the problem by the students

Students' knowledge of impact of human activities on the environment - In order to find out students' knowledge of the impact of human activities in the environment, the reason cited by the students for the environmental problem were analysed. It was found that 1606 (89.2%) mentioned industrialisation and related problems 963 (53.5%) mentioned deforestation and 5-6 (29.2%) students mentioned improper disposal of the waste as the reasons for environmental problems (figure 5).

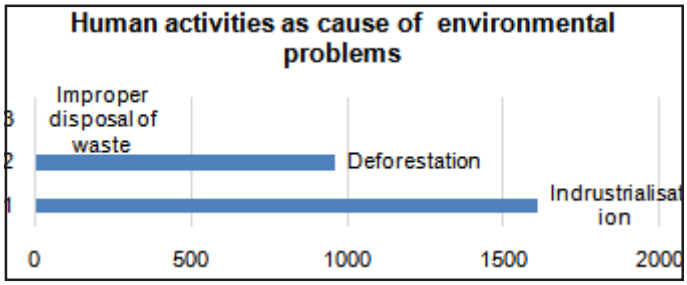

Figure 5 Human activities as a cause of environmental problems as mentioned by students

Solution to solve environmental problems - Knowledge of action is a critical component for an individual to act on a particular environmental problem an attempt was therefore made through this study to find out the solutions that students think which could solve the environmental problems.

It was found that 1719(95.5%) students mentioned education and awareness to be a good way to solve environmental problems. While 1138 (63.2%) students mentioned proper and scientific use of resources , 394 (21.9%) students mentioned other solutions such as use of solar energy , biodiesel, reuse of plastic etc. and 315 (17.5%) students mentioned enactment of laws would solve environmental problems (figure 6)

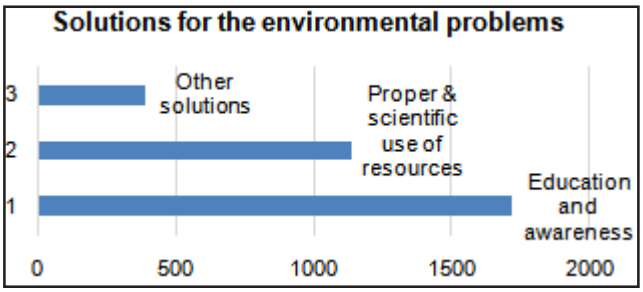

Figure 6 Solutions for environmental problems as mentioned by the students

Conclusion - The study can be conclude with the following observations:

1. Though the students are familiar with the biotic and the abiotic components as they have been taught in different textbooks, student seem not to be very clear with the term environment in totality. They are not able to deal environmental problems effectively.
2. Lack of understanding of the term environment is also evident from the fat that a good number of the students' found it difficult to name even 5 components of environment.
3. Many students are not able to relate to the immediate environmental problems that they face in their daily life
4. Student seem to lack adequate knowledge as to how they themselves can be active participants in solving the environmental problems
5. Serious efforts need to be made in the teaching – learning of environment and its related concerns so as to bridge the gap between school curriculum and the environment outside the classroom. This will serve as the first step in our efforts to achieve the goals of environmental education.

References :-

1. Marcinkowski, T. J. 1989. An analysis of correlates and predictors of responsible environmental behavior. Dissenation Abstracts Inter-national 49(12): 3677- A .
2. Peters-Grant, Y. M. 1987. The influence of life experiences in the vocational interests of volunteer environmental workers. Disserta-tion Abstracts international47(10)
3. Ramsey, J., et al. 1981. The effects of environmental action and envi-ronmental case study instruction on the overt environmental behavior of eighth-grade students. Journal of Environmental Education 13(1): 24-3
4. T. Volk, 1990, the journal of environmental education, vol. 21, no.3, 8-21
5. Tanner, T. 1980. Significant life experiences: A new research area in environmental education. Journal of Environmental Education 11(4): 20-4.
6. VandeVisse, E., and W. B. Stapp. 1975. Developing a K-12 environ-mental education program. In What makes education environmental?, edited by N . Mcinnis and D. Y. Albrecht. Louisville, KY.: Data Courier, Inc
7. W. B. Stapp,1969, the journal of environmental education, vol. 1, no. 3, 30-31
8. Wilson, T. 1988. A study into the attainment of goals for environmental education t hrough the inservice teacher education efforts of a university-based network of centers for environmental education. Paper presented at the annual meeting of the North American Association for Environmental Education, Orlando, Florida.

Table 2 Name of schools undertaken for the study

S.	Schools In AgastyamuniBlock	Schools In Jakholi Block	Schools In JakholiBlock
1	Govt. Inter College Agastyamuni	Govt. Inter College, Tilwara	Govt. Inter College, Bhiri
2	Govt. Girls College Agastyamuni	Govt. Inter College, Ramashram	Govt. Inter College, Guptakashi
3	Children Academy , Agastyamuni College	Govt. Inter College, Budna	Govt. Inter College, Narayankoti
4	Agastya Public ChoolgovtInter College	Govt. Inter College, Sidhasaur	Govt. Inter College, Phata
5	Govt. Girls College, Rudraprayag	Govt. Inter College, Basukedar	Govt. Inter College, Okhimath
6	Govt. Inter College, Rudraprayag	Govt. Inter College, Pandarali	Govt. Inter College, Mansoona
7	Govt. Inter College, Ratura	Govt. Inter College, Manipur	Govt. Inter College, Daira
8	Govt. Inter College,Chopta	Govt. Inter College, Bajeera	Govt. Inter College, Raulank
9	Govt. Inter College, Chopra	Govt. Inter College, Syur	Govt. Inter College, Lwara
10	Govt. Inter College,Khankara	Govt. Inter College, Baksheer	Govt. Inter College, Parkamdi
11	Govt. Inter College,Ganeshnagar	Govt. Inter College, Bamgu	Govt. Inter College, Makku
12	Govt. Inter College, Chandrapuri	Govt. Inter College, Kimana	Govt. Inter College, Kotma
13	Govt. Inter College, Kandara	Govt. Inter College, Pathalidhar	Govt. Inter College, Lamgondi
14	Govt. Inter College, Chandranagar		Govt. Inter College, Paldwari
15	Govt. Inter College, Kyunja		Govt. Inter College, Gondaar
16	Govt. Inter College, Maltoli		
17	Govt. Inter College, Kandai		

****

Congruence in Celebrity and Product Attributes and Its Impact Upon Consumer Perception of Quality

Sharad Maheshwari *

Abstract -Given how frequently commercials feature famous endorsers, the extent to which this information influences consumers' judgement must be correlated with the veracity of the endorsers as presented in the advertising. Therefore, the goal of this Paper is to investigate how brand endorsers influence consumers' perceptions of quality.
Keywords- Product quality, Consumer Perception, Celebrity Endorsement.

Introduction - There is marketing literature that has established a set of models called Persuasive Hierarchy Models that foretell the opposite consequence. These theories suggest that in order for advertising to increase sales, it must first educate customers before persuading them. These models' fundamental tenet is that advertisements have an impact on customer behaviour in the form of purchasing intentions.

It is generally recognized, however, that consumers rely on various information "cues" or characteristics of product in their evaluations of product quality (Richardson, P. S., Dick, A. S., & Jain, A. K). In fact a considerable amount of research in consumer behavior has been devoted to examining what information cues consumers used most often when evaluating products.

Zeithaml, Valarie A., provides a good definition of the concept of perceived quality. Author points out that if superiority or excellence may be generally defined as a metric of quality, then perceived quality can be defined as the consumer's assessment of the product's overall superiority or excellence. This indicates that consumers must base their decisions on the knowledge they have at hand. A lot of this data frequently comes from advertising. Given how frequently well-known endorsers appear in advertisements, the credibility of the endorsers as they are represented in the advertising must be associated with the degree to which this information affects customers' judgement. In order to better understand how brand advocates affect consumers' perceptions of quality, this is the objective of this paper.

An endorser effect: The concept of credibility has been and will continue to be of interest to marketing scholars. Endorser credibility has received considerable attention in the academic literature (Aaronnson, Turner and Smith, 1963; Bergin, 1962; Bochner and Insko, 1966; Goldberg and Hartwick, 1990).The endorser's credibility certainly can be enhanced by properly matching with the products being endorsed. Indeed there have been a number of studies that have examined whether and under what conditions celebrities make appropriate endorsers for products (Agriwall and Kamakura, 1995; Atkin and Block, 1983; Freiden, 1983, 1984; Caymans, 1989).

Information must be gathered by consumer to build a sense of the product's quality for experience goods, because buyers cannot assess quality prior to purchase. Advertising, which offers both direct and indirect information, is one way to get information. The endorser who is included in the commercial affects the information's veracity and applicability. This paper will therefore make an effort to illustrate how the use of a suitably suited endorser in an advertisement will impact the consumer's opinion of the quality of the product. I'll also make an effort to demonstrate how a properly matched endorser will offer customers information that is more reliable and pertinent.

Data collection: Consumers from the Kota district make up the research universe. Sampling was chosen based on convenience for Pre test 1 on determining celebrity and attributes and Pre test 2 on choosing the product pool. They were graduates and post-graduates of different programs. For each Pre test, the sample size was 120.

A second convenient sampling for main research was conducted. In total, there were six different 100 samples from each of six distinct questionnaires, totaling 600 samples, were chosen for each advertisement. They had once again been graduate and postgraduate students.100 advertisements made up the sample, but every effort was made to ensure that it was representative.

Hypothesis Development:

H(1):*An appropriately matched endorser should indicate a better level of perceived product quality..*

Advertising can positively influence the consumer by providing both direct and indirect information since it has

*Associate Professor, Government Engineering College, Jhalawar (Raj.) INDIA

the capacity to be both persuasive and instructional. According to Thomas et al.(1998) persuasive advertising, which is common with experiential commodities, provides oblique information on the quality of imperceptible product features .A good fit must exist between the product and the endorser for the indirect information regarding product performance and quality to be considered credible and pertinent.

As a result, the effect of an endorser (on perceived quality and performance) who doesn't match the features of the product should be much less than that of an endorser who is appropriately matched. This can also be examined in H. (2).

H(2):*It is anticipated that an endorser whose qualities do not align with those of the product will have less of an impact on consumers' perceptions of quality than an endorser whose qualities coincide*.

It is possible to identify endorsers known for particular qualities through pre-testing. As a result, an endorsement can be determined based on whether or not they share the qualities that consumers use to evaluate the value and effectiveness of the two items under evaluation. There may also be an endorser who possesses qualities unrelated to those of the product (mismatched).

This claim will be put to the test to see if consumers' perceptions of quality alter depending on the advertisement's endorsement. It is anticipated that the matched endorser will significantly increase the perception of quality than mismatched endorser.

Findings

Hypothesis 1: When the information in the advertisement is given with the usage of an appropriately matched celebrity endorser, it is expected that the quality perception will rise dramatically. On a scale of one to nine, the average Quality Perception for the Revita hair shampoo commercial without an endorser was 5.41, while it was 7.56 when Hrithik Roshan was featured. this difference was significant.Similarly the quality perception for Brain @ Grain Breakfast cereal was 5.22 without an endorser in the ad and 7.45 with Vishwanath Anand. This difference was significant.

Table I:- Mean, t-test and Man-Whitney test:

	Revita Hair Shampoo		Brain @ Grain Breakfast Cereal	
	None	H.Roshan	None	V.Anand
Mean	5.41	7.56	5.22	7.45
t-test	-13.6461		-13.3198	
P-value	0.00		0.00	
Median	5.33	7.66	5.33	7.67
Man-Whitney W	4233.0		4183.0	
P value	0.00		0.00	

The evidence backs up the hypothesis. The consumer's opinion of product quality will be greatly increased by the usage of a suitably matched endorser. The findings also show that if the endorser is seen more favorably and as being more appropriate, the difference becomes more noticeable.

Quality Perception: Revita Hair Shampoo

Sample 1: C quality Revita Hair Shampoo with No Celebrity

Sample 2: D quality Revita Hair Shampoo with Hrithik Roshan

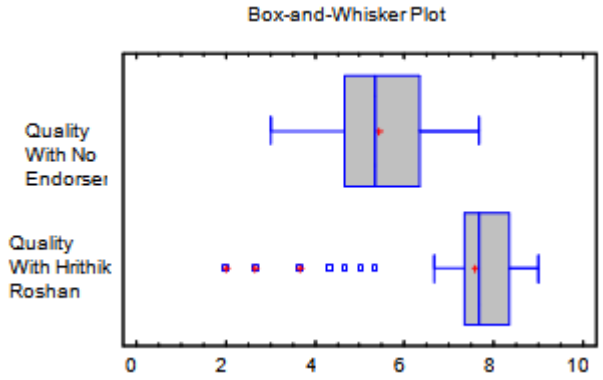

Quality Perception: Brain @ Grain Breakfast Cereal

Sample 1: F quality Brain@Grain Breakfast Cereal with No Celebrity

Sample 2: H qualityBrain@Grain Breakfast Cereal withVishwanathan Anand

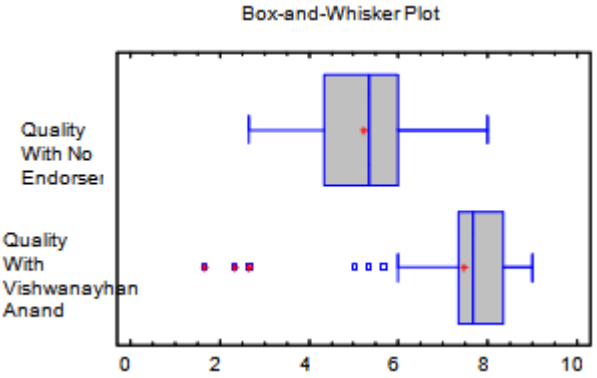

Hypothesis 2 : According to this hypothesis, an endorser who is well-matched to the product will have a higher impact on the consumer's perception of quality than one who is not. In order to verify this theory, participants were asked to judge the quality of Revita hair shampoo that featured the inappropriate Vishwanath Anand as the spokesperson. Other participants were instructed to review the quality of the Brain@grain Breakfast cereal using the inappropriate Hrithik Roshan as the spokesperson.

Table 1 : Quality Perception Rating with Mismatched Endorser:

	Revita Hair shampoo		Brain @ Grain Breakfast cereal	
	H.Roshan	V.Anand	H.Roshan	V.Anand
Mean Quality	7.56	6.45	6.8.	7.45
ANOVA Fratio	37.61		10.83	
P value	0.0000		0.0012	
Median Quality	7.66	6.33	7.0	7.66667
Moods Median Test	43.4319		13.6478	

Between the two endorsers, there was a considerable difference in the quality perception rating. The hypothesis will be confirmed if the endorser and the product are a good

fit. Consumers will consider the product quality as being higher when the attributes of the endorser and the attributes of the product are correctly matched.

Quality Perception Rating With Mismatched Endorserbrain @ Grain Breakfast Cereal

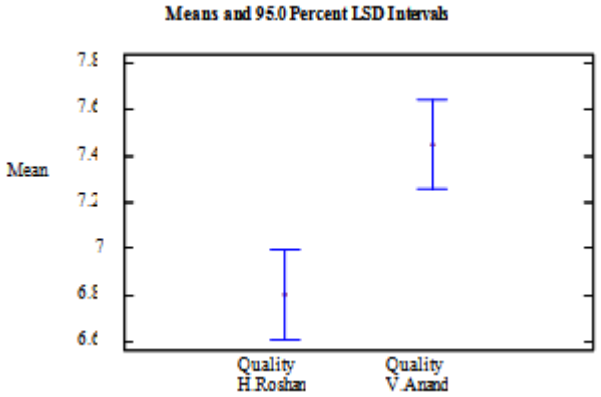

Quality Perception Rating With Mismatch Endorsersrevita Hair Shampoo

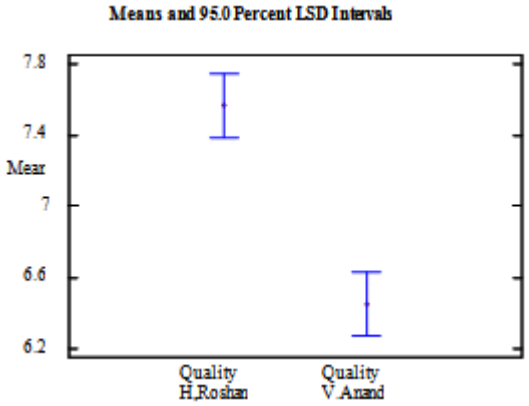

Conclusion: The first hypothesis specifically looked at how the endorsement affected the perception of quality.It was discovered that using a perfectly matched and well-regarded endorser in the advertisement to communicate the indirect information considerably boosts the consumer's perception of quality.

The next hypothesis looked at the impact of an unfit endorser. The findings showed that consumers will perceive a product's quality as being higher if its features match those of its endorser. There will be a much poorer assessment of the product's quality if the endorser's attributes do not coincide with those of the product.

In order for the indirect information to have a major impact on the consumer's impression, it would seem to be essential to choose an endorser who is well-liked by customers and who is well-known for possessing qualities that correspond to those of the product. Consumers will be far less influenced by mismatched endorsers or unfavorably viewed endorsers.

References:-

1. Richardson, P. S., Dick, A. S., & Jain, A. K. (1994). Extrinsic and Intrinsic Cue Effects on Perceptions of Store Brand Quality. *Journal of Marketing*, *58*(4), 28–36.
2. Zeithaml, Valarie A. "Consumer Perceptions of Price, Quality, and Value: A Means-End Model and Synthesis of Evidence." *Journal of Marketing*, vol. 52, no. 3, 1988, pp. 2–22. *JSTOR*
3. Goldberg, M. E., Hartwick, J. (1990). The effects of advertiser reputation and extremity of advertising claim on advertising effectiveness. *Journal of Consumer Research, 17*(2), 172– 179
4. Agrawal, J. and Kamakura, W.A. (1995) The Economic Worth of Celebrity Endorsers: An Event Study Analysis. Journal of Marketing, 59, 56-62.
5. Atkin, C., & Block, M. (1983). Effectiveness of celebrity endorsers. *Journal of Advertising Research, 23*(1), 57–61.
6. Ohanian, R. (1991). The impact of celebrity spokespersons' perceived image on consumers' intention to purchase. *Journal of Advertising Research, 31*(1), 46–54

****

Emotional and Psychological Trauma: A Lone Journey

Dr. Sarita Mathur*

Introduction - Barring a very less percentage of the privileged class, every individual, goes through stresses and conflicts which affects the psychological state in moderate to high levels.

Emotional and psychological trauma is the result of extraordinarily stressful events that shatter your sense of security, making you feel helpless in a dangerous world. Psychological trauma can leave you struggling with upsetting emotions, memories, and anxiety that won't go away. It can also leave you feeling numb, disconnected, and unable to trust other people.

Imagine, a severely injured/impaired soldier or his unfortunate widow if he has sacrificed his life or a victim of an accident. Imagine a child whose parents are separated or a child who has lost one of his/her parents. These are only a very few situations where the victim goes through high levels of insecurity and stress. A situation where the ability to think and respond is completely impaired, permanently or temporarily.

Traumatic experiences often involve a threat to life or safety, but any situation that leaves you feeling overwhelmed and isolated can result in trauma, even if it doesn't involve physical harm. It's not the objective circumstances that determine whether an event is traumatic, but your subjective emotional experience of the event. The more frightened and helpless you feel, the more likely you are to be traumatized. Emotional and psychological trauma can be caused by:

- **One-time events,** such as an accident, injury, or a violent attack, especially if it was unexpected or happened in childhood.
- **Ongoing, relentless stress,** such as living in a crime-ridden neighbourhood, battling a life-threatening illness or experiencing traumatic events that occur repeatedly, such as bullying, domestic violence, or childhood neglect.
- **Commonly overlooked causes,** such as surgery (especially in the first 3 years of life), the sudden death of someone close, the breakup of a significant relationship, or a humiliating or deeply disappointing experience, especially if someone was deliberately cruel.

Symptoms of psychological trauma - We all react to trauma in different ways, experiencing a wide range of physical and emotional reactions. There is no "right" or "wrong" way to think, feel, or respond, so don't judge your own reactions or those of other people. **Your responses are NORMAL reactions to ABNORMAL events.**

Emotional and psychological symptoms:

1. Shock, denial, or disbelief.
2. Confusion, difficulty concentrating.
3. Anger, irritability, mood swings.
4. Anxiety and fear.
5. Guilt, shame, self-blame.
6. Withdrawing from others.
7. Feeling sad or hopeless.
8. Feeling disconnected or numb.

Physical symptoms:

1. Insomnia or nightmares.
2. Fatigue.
3. Being startled easily.
4. Difficulty concentrating.
5. Racing heartbeat.
6. Edginess and agitation.
7. Aches and pains.
8. Muscle tension.

Healing from trauma - Trauma symptoms typically last from a few days to a few months, gradually fading as you process the unsettling event. But even when you're feeling better, you may be troubled from time to time by painful memories or emotions—especially in response to triggers such as an anniversary of the event or something that reminds you of the trauma.

If your psychological trauma symptoms don't ease up—or if they become even worse—and you find that you're unable to move on from the event for a prolonged period of time, you may be experiencing Post-Traumatic Stress Disorder (PTSD). While emotional trauma is a normal response to a disturbing event, it becomes PTSD when your nervous system gets "stuck" and you remain in psychological shock, unable to make sense of what

*Lecturer (Psychology) Govt SMM College, Bhilwara (Raj.) INDIA

happened or process your emotions.

Whether or not a traumatic event involves death, you as a survivor must cope with the loss, at least temporarily, of your sense of safety. The natural reaction to this loss is grief. Like people who have lost a loved one, you need to go through a grieving process.

The following tips can help the trauma victims to cope with the sense of grief, heal from the trauma, and move on with your life.

1. Solacing and comforting the victim, giving more than sufficient time to calm the tense nerves. Time is a healer
2. Positive conversations, especially to bring the self-blame down
3. Facilitating interactions with somebody who has gone through similar trauma
4. Regular counselling, especially, to develop an attitude of asking for help, support and togetherness. Most of the victims do more damage by being alone and not asking for help
5. Monitor the environment that he/she is not alone for long periods
6. Helping them with a routine, a daily routine of regular things
7. Reorient them to redefine oneself into hobbies, interests and new priorities

Reference:-

1. https://www.apa.org >topics >trauma

****

शिक्षा के विकास हेतु संवैधानिक प्रावधान

डॉ. सोनम शर्मा *

शोध सारांश – स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत को एक जनतंत्रात्मक, कल्याणकारी राज्य के रूप में 'प्रारंभिक शिक्षा के सार्वभौमिकीकरण' तथा 'सभी के लिए समान शैक्षिक अवसर' को अपनी सांविधानिक प्रतिबद्धता के रूप में स्वीकार किया। जिसका एकमात्र उद्देश्य शिक्षा सभी तक पहुँचे और समाज का विकास एवं परिवर्तन हो सके। भारतीय संविधान के भाग-4 में राज्य के नीति निदेशक तत्तव के तहत अनुच्छेद-45 में बच्चों के लिए नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का उपबंध किया गया। वही अनुच्छेद-46 में अनुसूचित जातियाँ, अनुसूचित जनजातियाँ ओर अन्य दुर्बल वर्गों की शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की अभिवृद्धि का संवैधानिक प्रावधान किया गया।

शब्द कुंजी – कल्याणकारी, प्राथमिक विद्यालय,सामाजिक परिवर्तन, राष्ट्रीय शिक्षा नीति, सामुदायिक छात्रावास।

प्रस्तावना – 86वें संविधान संशोधन के द्वारा अनुच्छेद-21(क) को जोड़कर दिसम्बर 2003 में मूल अधिकार के रूप में शामिल किया गया। अब राज्य ने इस उत्तरदायित्व को स्वीकार किया है कि वह प्रत्येक बच्चे को शिक्षित करेगा, चाहे वह किसी भी जाति, धर्म या सामाजिक-आर्थिक स्तर का हो। तभी से पूरे देश में प्रारंभिक शिक्षा के सार्वभौमिकीकरण को उच्च प्राथमिकता दी जा रही है तथा अनेक योजनाएँ कार्यान्वित की जा रही है। शिक्षा के विकास हेतु चलाये जा रहे कुछ प्रमुख कार्यक्रम इस प्रकार हैं :-

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम- राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 तथा उसकी कार्य योजना 1992 ने इस राष्ट्रीय प्रतिबद्धता को पुन: दोहराया की 21वीं सदी में प्रवेश से पहले ही 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को नि:शुल्क एवं गुणवत्तायुक्त शिक्षा दी जानी चाहिए। लोगों ने विचार किया कि चूँकि योजनाएँ केन्द्र एवं राज्य स्तर पर बनती हैं अतएव इसका अपेक्षित परिणाम प्राप्त नहीं होता क्योंकि क्षेत्रीय असमानताएँ यहाँ ज्यादा है। परिस्थितियों की माँग है कि योजना निर्माण की प्रक्रिया को विकेन्द्रित किया जाए तथा लड़कियाँ तथा सुविधावंचित टोलों की पहुँच बनाने के लिए इसमें लोगों का सहयोग लिया जाए।

इस पृष्ठभूमि को ध्यान में रखकर केन्द्र सरकार द्वारा 1993 में 'जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम' शुरू किया गया जिसका उद्देश्य था- प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमिकीकरण। इस कार्यक्रम का प्रमुख लक्ष्य विभिन्न योजनाओं को टुकड़ों में लागू करने के बजाए कुछ चुने हुए जिलों में प्राथमिक षिक्षा को संपूर्ण रूप से पुनर्गठित करना था। इसके तहत प्रत्येक जिला परियोजना की रूपरेखा जिले की विशिष्ट आवश्यकताओं और उसकी संभाव्यताओं के अनुसार बनाई जाती थी तथा लक्ष्य निर्धारित किया जाता था। इस प्रकार शैक्षिक विकास हेतु कार्यकलाप निश्चित होते थे तथा निश्चित समय में निभाए जाने वाले उत्तरदायित्व भी स्पष्ट होते थे। इस कार्यक्रम के विशिष्ट उद्देश्य थे, सभी बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा तक पहुँच का प्रावधान करना, विद्यालय बीच में ही छोड़ जाने वाले छात्र/छात्राओं की दर 10 प्रतिशत से कम करना, प्राथमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की उपलब्धि स्तर को 25 प्रतिशत तक बढ़ाना तथा लड़के/लड़कियाँ एवं सामाजिक टोलों के बीच के अंतर को 5 प्रतिशत से कम करना। इस कार्यक्रम ने सन् 1998 तक 15 राज्यों में 163 जिलों में कार्य किया। बिहार में यह कार्यक्रम तृतीय चरण में लागू किया गया। इसलिए इसे जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (तृतीय) के रूप में जाना जाता है। यह बिहार के 27 जिलों में लागू हुआ।

इस कार्यक्रम के तहत सर्वव्यापी पहुँच, शत प्रतिशत नामांकन, शत प्रतिशत ठहराव एवं शत् प्रतिशत उपलब्धि का काफी बल दिया गया। विद्यालय विहीन टोलों की पहचान कर नए विद्यालय सृजित किए गए तथा विद्यालय को समुदाय से जोड़कर विद्यालय विकास हेतु योजना निर्माण एवं उसके कार्यान्वयन की महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी भी सौंपी गई। शिक्षकों को बच्चों के मनोविज्ञान को समझकर गतिविधि आधारित एवं खेल-खेल में शिक्षा देने हेतु प्रशिक्षित किया गया। अभिवंचित के साथ-साथ विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को सहायता एवं उपकरण उपलब्ध कराने के साथ-साथ एकीकृत शिक्षा पर बल दिया गया। 6 साल से कम आयु के बच्चों में विद्यालय तत्परता का विकास हो सके इसके लिए बाल वर्ग अपना एवं अंगना विद्यालय खोले गए। इसके फलस्वरूप विद्यालय एवं बच्चों की स्थिति में काफी सुधार आया।

ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड – अनावर्षण विद्यालय परिवेश, भवनों की असंतोषजनक स्थिति, अपर्याप्त अनुदेशात्मक सामग्री प्राथमिक विद्यालय में बच्चों के नामांकन एवं ठहराव में बड़ी बाधाएँ हैं। प्राथमिक स्तर पर संरचना संबंधी सुविधाओं में सुधार के लिए 1987-88 में '*आपरेशन ब्लैकबोर्ड*' अभियान चलाया गया। इसका उद्देश्य विद्यालयों में 30 सितंबर 1986 तक उपलब्ध मानव एवं भौतिक संसाधनों का विकास करना था। इसके तहत देश में सभी प्राथमिक विद्यालयों में अपेक्षित न्यूनतम आवश्यक सुविधाओं का प्रावधान किया गया। इस योजना के मुख्यत: तीन घटक है-

1. एक शिक्षक वाले प्राथमिक विद्यालय में अतिरिक्त शिक्षक का प्रावधान;
2. प्रत्येक प्राथमिक विद्यालय में कम-से-कम दो कक्षा कक्ष उपलब्ध कराना;
3. योजना के अंतर्गत आए सभी विद्यालयों में शिक्षण-अधिगम उपकरण उपलब्ध कराना।

आठवीं पंचवर्षीय योजन के दौरान 1993-94 में इसमें संशोधन कर 100 से अधिक बच्चों वाले प्राथमिक विद्यालय में तीन कमरे तथा तीन

* सविंदा प्रवक्ता (शिक्षाशास्त्र) कु. मायावती राजकीय महिला स्ना. महाविद्यालय, बादलपुर, गौतमबुद्धनगर(उत्तर प्रदेश) भारत

शिक्षक का प्रावधान किया गया तथा इसके दायरे में उच्च प्राथमिक विद्यालय को भी लाया गया।

इस प्रकार यह योजना प्राथमिक शिक्षा के परिणामस्वरूप एवं गुणात्मक दोनों प्रकार के सुधार के लिए है। विभिन्न राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेश द्वारा प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षण-अधिगम सामग्री जैसे- मानचित्र, शैक्षिक चार्ट, संदर्भ पुस्तकें, बाल पुस्तकें, श्यामपट्ट, चॉक, डस्टर, विद्यार्थियों एवं शिक्षकों के लिए दरी और फर्नीचर, खेल सामग्री, प्राथमिक विज्ञान किट, गणित किट, पुस्तकें, वाद्ययंत्र और सामग्रियों की सूची बनाने में अपनी विशिष्ट आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर बनाने की छूट राज्यों एवं केन्द्र शासित को दी गई। इसके अतिरिक्त प्राथमिक विद्यालयों के बच्चों के लिए आनंददायक स्थल बनाने, शिक्षकों को बाल केन्द्रित एवं गतिविधि आधारित शिक्षा शिक्षण-अधिगम रणनीति अपनाने हेतु प्रोत्साहित करने एवं विद्यालय की सुविधाओं में सुधार के लिए कदम उठाने की सिफारिश की गई। आठवीं योजना के भौतिक लक्ष्य उल्लेखनीय ढंग से कम समय में ही प्राप्त कर लिए गए थे। शिक्षक कमरों की व्यवस्था के अतिरिक्त शैक्षिक सामग्रियों की आपूर्त्ति का लक्ष्य भी प्राप्त कर लिया गया था।

वैकल्पिक एवं नवाचारी शिक्षा- वैसे टोलें जहाँ विद्यालय की व्यवस्था नहीं थी वहाँ विद्यालय के विकल्प के तौर पर शिक्षा केन्द्र खोले गए। इस केन्द्र पर शिक्षा देने के लिए एक स्वयंसेवक रखा गया। कालांतर में इन बच्चों को या तो विद्यालयों से जोड़ दिया गया था या केन्द्र स्थल पर ही नए विद्यालय सृजित कर दिए गए थे। नवाचारी शिक्षा एक विविधतापूर्ण एवं बहुआयामी पहल है, जिसका संबंध विविध कार्यों एवं विषम परिस्थितियों से जुड़े 6 से 14 वर्ष की आयु वर्ग के विद्यालय नहीं जा पाने वाले लड़के/लड़कियों से है, जिनमें बाल श्रमिक और प्रवासी बच्चे प्रमुख है। इस संबंध में निम्नवत पहल की जा सकती है-

1. प्रवासी लड़के/लड़कियों के लिए मौसमी सामुदायिक छात्रावास की व्यवस्था;
2. भ्रमणशील शिक्षक की व्यवस्था;
3. प्रवास के दौरान प्रवास स्थल पर ही विद्यालय की व्यवस्था;
4. प्रवासी बच्चों के लौटने पर प्रवास के दौरान पढ़ाई में हुई क्षति की भरपाई के लिए सघन शिक्षण व्यवस्था अर्थात् सेतु पाठ्यक्रम, आवासीय क्रेच, फ्रैसर पाठ्यक्रम आदि द्वारा इन्हें लाभान्वित करना।

शिक्षा गारन्टी योजना- इस योजना के अन्तर्गत उन गाँवों/टोलों/बस्तियों में शिक्षा गारंटी योजना केन्द्र खोले जा सकते हैं जहाँ एक कि.मी. के दायरे में प्राथमिक विद्यालय नहीं हैं और 6 से 14 वर्ष तक के आयु वर्ग के 20-25 लड़के/लड़कियाँ उपलब्ध हो सके और जो विद्यालय नहीं जाते हैं। इसके लिए 300 की आबादी की बाध्यता नहीं है बल्कि विद्यालय नहीं जाने वाले कम-से-कम 20-25 बच्चों की उपलब्धता आवश्यक है। इस केन्द्र की कार्यावधि कम-से-कम 4 घण्टों की होगी लेकिन यहाँ कार्यरत लोक शिक्षक को 5 घण्टे का समय देना होगा। इसके प्रबन्धन की जिम्मेवारी ग्राम पंचायत की होगी। इन केन्द्रों के प्रोत्साहन हेतु केन्द्रवार टी.एल.ई. के लिए 10,000 रू., शिक्षक एवं कक्षाएँ, केन्द्र को नियमित विद्यालय के रूप में स्तरोन्नयन की सुविधा बशर्ते उसका संचालन कम-से-कम 2 वर्ष तक सफलतापूर्वक हुआ हो, इत्यादि का प्रावधान किया गया है।

प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वभौमिकीकरण के केन्द्रीय प्रयास- प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमिकीकरण हेतु संवैधानिक प्रावधान करने के पश्चात् केन्द्र सरकार ने अनवरत प्रयास किए है जिसके तहत नई शिक्षा नीति 1986 एवं संशोधित नीति 1992 में अनेक प्रावधान किए गए। ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड, कई अन्य केन्द्रीय परियोजनाओं के अतिरिक्त जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम जैसे महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकीकरण हेतु चलाए गए। इन्हें एक अभियान के रूप में लिया गया जिसका अपेक्षित सकारात्मक परिणाम नजर आया।

सर्वशिक्षा अभियान- 'सर्वशिक्षा अभियान' प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमिकीकरण एवं गुणवत्ता विकास की केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित एक महत्वाकांक्षी योजना है। यह प्रारंभिक शिक्षा के सार्वभौमिकीकरण के संदर्भ में आयोजित शिक्षा मंत्रियों की राष्ट्रीय समिति 1999 की अनुशंसाओं/संस्तुतियों का परिणाम है। इस अभियान को संक्षेप में सर्वशिक्षा अभियान की संज्ञा दी गई है। इस अभियान का लक्ष्य अलग ढाँचा खड़ा करना नहीं था, परन्तु प्रारंभिक शिक्षा के विकास हेतु किए जा रहे सारे प्रयासों को मिलान करना था। इसके तहत सभी बस्तियों को स्कूली सुविधा या असेवित बस्तियों में शिक्षा गारन्टी योजना केन्द्र की सुविधा प्रदान करना, शत्-प्रतिशत नामांकन, ठहराव एवं संतोषप्रद स्तर की उपलब्धि स्तर सुनिश्चित करना है।

अत: स्पष्ट है कि शिक्षा, सामाजिक परिवर्तन का एक महत्त्वपूर्ण साधन है। जो समाज स्वयं को बदलना या आधुनिक बनाना चाहता है वह अपने वांछित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अनेक साधनों, उपकरणों, संस्थाओं, अभिकर्त्ताओं एवं अभिकरणों का प्रयोग करता है। इन साधनों में सम्भवत: शिक्षा ही सबसे प्रमुख साधन है। शिक्षा कौशलों एवं व्यवसायों का आवश्यक प्रशिक्षण प्रदान करती हैं और इस प्रकार आधुनिक उद्योग व्यापार, शिक्षण और शोध संस्थानों तथा अन्य संस्थाओं में विभिन्न प्रकार की विशिष्ट नौकरियों के लिए आवश्यक दक्षताओं से युक्त कर्मचारी प्रदान करती है। इतना ही नहीं, शिक्षा से यह अपेक्षा भी है कि वह लोगों के मूल्यों और अभिवृत्तियों में बदलाव लाए।सामाजिक परिवर्तन और आधुनिकीकरण में शिक्षा की महती भूमिका है। विकासशील देशों के नेताओं और योजना निर्माताओं ने अपने लोगों को शैक्षिक सुविधाएँ प्रदान करने के लिए बड़े पैमाने पर प्रावधान किए हैं। भारत में हमने देखा है कि पिछले कई सालों की राष्ट्रीय पंचवर्षीय योजनाओं में हमारे शैक्षिक योजनाकारों ने सभी स्तरों पर तथा देश के सभी क्षेत्रों तक शैक्षिक सुविधाएँ पहुंचाने का बहुल प्रयास किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ0 एस0 एस0 बाघेला, भारतीय शिक्षा तथा समाज, पुस्तक भण्डार, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, 2006
2. पी0 एन0 मलहान, कम्युनिकेशन मीडिया : येसटर्डे, टुडे एण्ड टुमारो, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, 1985
3. जी0 गवर्नर, क्वॉटेड वाई0 बी0 के0 राय वर्मन, मास कम्युनिकेशन इन चेंजिंग वर्ल्ड, इन मेनस्ट्रीम वाल्यूम, नवम्बर 17, दिसम्बर 26, 1985
4. कुरूक्षेत्र (विभिन्न महीनों के अंक), ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार।
5. योजना (विभिन्न महीनों के अंक), ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार।
6. C. L. Anand, "Modernization and Tradition" in P. R. Nayar, P. N. Dave and Kamla Arora (eds.), The Teacher and Education in Emerging Indian Society, 2000.
7. Suma Chitnis, "Sociology of Education" in A Survey of Research in Sociology and Social Anthropology, Vol. 2, ICSSR, New Delhi.

अलवर के प्रसिद्ध स्थल

सुमित मेहता *

प्रस्तावना – अलवर नगर दिल्ली से 86 मील दक्षिण पश्चिम तथा जयपुर से लगभग 100 मील उत्तर पूर्व में स्थित है। कई विद्धानों के मतानुसार अलवर का नाम पहले अलपुर था। आमेर नरेश काकिल के द्वितिय पुत्र अलधराय के नाम पर ही इस नगर का नाम अलपुर पड़ा और बाद में यह अलवर कहलाया। एक मत यह भी है कि अरावली की पहाड़ियों के बीच में स्थित होने के कारण इसका नाम अर्वलपुर पड़ा था। जनरल कनिगंळम के अनुसार सालज जाति के यहाँ बसे होने के कारण इसका नाम सावलपुर था जो धीरे-धीरे सालवर, हलवर और अन्त में अलवर हो गया।[1] लेकिन सबसे अधिक प्रचलित यही है कि अलधरराय के द्धारा बसाये जाने के कारण इस नगर का नाम अलवर पड़ा। फरिश्ता ने सन् 1163 में इस नगर के बारे में लिखा है।[2]

यह प्राचीन नगर चारों ओर से परकोटे और खाई से घिरा हुआ है। नगर में प्रवेश करने के लिए 5 दरवाजें है तथा नगर के एक ओर खाई है। यहां के प्रमुख दर्शनीय स्थलों में विजय मन्दिर महल, जगदीश मन्दिर, मोती डूँगरी महल, तरंग सुल्तान की कब्र, महाराव बख्तावर सिंह की समाधि, महाराजा के महल आदि हैं। नगर के मध्य में त्रिपोलिया स्थित है।

दुर्ग – भूमि से लगभग 1000 फुट ऊँची पहाड़ी पर नगर के उत्तर पश्चिम में किला स्थित है। इसका निर्माण निकुम्भ राजाओं के शासन काल में माना जाता है। इस दुर्ग की चारदीवारी लगभग 2 मील के घेरे में फैली हुई है। यह किला अत्यन्त विशाल है तथा प्रवेश के लिए इसमें अनेक दरवाजे हैं। इस किले में 15 बड़ी और 15 छोटी बुर्जे तथा तोपों के लिए 446 द्धारों से युक्त सुदृढ़ प्राचीर बनी हुई है।[3] 3356 कंगूरें इस किले की विशालता को बताते हैं। निकुम्भ राजपूतों को परास्त कर अलावल खां खानजादा ने इस किले पर अधिकार कर लिया था। हसनखां मेवाती ने किले का जिर्णोद्धार करवाया। बाबर इस किले में 8 दिनों तक रहा और यहीं पर उसने मेवात का खजाना हुमायूं को सौंपा था। हकीम हाजीखां ने यहां सलीमसागर तालाब का निर्माण करवाया। बाद में हाजीखां के स्वतन्त्र शासक बन जाने के बाद, अकबर ने पानीपत के युद्ध में विजय प्राप्त कर अलवर की ओर चढ़ाई की तो हाजीखां यहां से अजमेर चला गया। अकबर ने इस दुर्ग पर कब्जा कर लिया और फिर यह दुर्ग मुगलों के पास ही रहा। इस किले के पीछे लगभग 800 वर्ष पुराने खण्डहर हैं। सन् 1261 में इसे गयासुद्दीन बलबन ने लूट लिया था।

संग्रहालय – विविध वस्तुओं से युक्त अलवर के संग्रहालय का निर्माण नवम्बर, 1640 ई. में किया गया था। यह पुराने राजभवन के सबसे ऊपर के भाग में स्थापित है तथा चार भागों - पुस्तकालय, चित्रशाला, शस्त्रागार और संग्रहालय में विभक्त है। पुस्तकालय में लगभग 10000 पुस्तकें है जिनमें से अनेक पुस्तकें चित्रित है तथा अरबी और फारसी भाषा की हैं। लगभग 1000 पुस्तकें हस्तलिखित है।

यहां की प्रमुख पुस्तकों में 'वाकयात बाबरी' है जो अकबर द्धारा सन् 1530 ई. में तुर्की भाषा में लिखी गई तथा बाद में हूमायूं ने इसका अनुवाद फारसी भाषा में करवाया। पुस्तक का चित्रकार सादुल्ला तथा जिल्दसाज अब्दुलरहमानकारी और लिपिकार अली उन कातिब हिराती था। इस पुस्तकालय में ही अरबी भाषा में लिखी चित्रमय कुरान भी है। जिसके अक्षर गोलाई में हैं और इसे बहुत ही सुन्दर लिपि में लिखा हुआ है। महाराजा बन्नेसिंह ने इसे 3000 रूपये में खरीदा था। बन्नेसिंह द्धारा ही तैयार करवायी गयी फिरदौसी के शाहनामे की सचित्र अनुकृति भी यहां पर है। अलवर शैली के 35 चित्रों से युक्त जयदेव की गीत गोविन्द भी यहां पर रखी हुई है। अलवर शैली के ही 61 चित्रों से सुसज्जित एक महाभारत भी यहां पर है जिसे 1 फुट चौडे व 80 गज लम्बे कागज पर लिखा गया है।

इन पुस्तकों के अतिरिक्त शेखशादी की गुलिस्तां, अकबर के समय, फारसी में लिखी गई नलदमन, सिकन्दरनामा, लुकमान का सदमन्द, युसुफ जुलेखां आदि पुस्तकें भी यहां हैं। इन पुस्तकों की जिल्दे चमड़े की हैं जिन पर मीनाकारी की गई है और फुल-पत्तों के सुन्दर चित्र बनाये गये हैं। दिल्ली के प्रसिद्ध जिल्दसाज अब्दुल रहमान कारी ने इन पुस्तकों की जिल्दे बनायी थी और इसी जिल्दसाज के कारण अलवर जिल्दसाजी के लिए प्रसिद्ध हुआ था।

चित्रो के संग्रह में अधिकांश चित्र मुगल व राजस्थान शैली के हैं। चित्रों का मुख्य विषय पौराणिक गाथा है। अधिकांश चित्र तिजारा के चित्रकार बलदेव सिंह के हैं। अन्य चित्रकारों में मूलचन्द व रामप्रसाद के नामों का भी उल्लेख मिलता है। मुगल शैली के प्रमुख चित्रों में युद्ध में पहने जाने वाले कपड़ों में बाबर और हुमायूं के चित्र, मौलाना अलीअहमद देहलवी द्धारा निर्मित जहांगीर की तीरंदाजी और न्यायतुला का चित्र, आलम द्धारा चित्रित तैमूल का तुर्की के सुल्तान बैजाद के साथ चित्र और शाहजंहा का अण्डाकार चित्र जो कि अब्दुल हसन का बनाया हुआ है आदि। अलवर शैली के प्रमुख चित्रों में सजीव सदृश्य महाभारत के कथानक चित्र (चित्रकार बख्शीराम), दुर्गा का चित्र (चित्रकार जमनालाल), अलवर के महाराजा सवाई जससिंह की सवारी का 27 फुट लम्बा चित्र (चित्रकार रामसहाय) आदि। ये सभी चित्र पुस्तकों के कमरे में ही रखे गये हैं।

दूसरे कमरे में तलवारें, बन्दुकें, तीर कमान, कटारें, भाले, ढालें आदि अस्त्र-शस्त्र रखे गये हैं। तलवारों की संख्या 2186 है। प्रसिद्ध तलवारों में हजरत अली की तलवार जिस पर अरबी में, 25 वर्ष की आयु में मिश्रियों द्धारा हजरत अली को भेट की गई, लिखा है, लख्खी तलवार (कीमत

* व्याख्याता (इतिहास) राजकीय डूंगर महाविद्यालय, बीकानेर (राज.) भारत

लगभग 1 लाख) जो कि जौहरदार फौलाद की बनी है। दाराशिकोह की तलवार जिस पर फारसी में लिखा है। सुनहरी मीने का काम की हुई पेश कब्ज और धीरखान आदि प्रसिद्ध कटारें यहां है। कटारों की संख्या 677 है। ढालों की संख्या 404 है तथा प्रत्येक ढाल पर मीनाकारी का काम किया गया है। ढालों में प्रसिद्ध गंगा जमना, सिपर फौलादी आदि हैं। 2161 बन्दूकें हैं जिनमें अधिकतर पेच लहरिया, पेच चौकडऋी और मरोड़ी की हैं। बन्दूकों की नाल पर धनुष भी लगा है। इसके अतिरिक्त यशवन्त राव होल्कर की मूर्ति को पहने हुए दिखाया हुआ एक कवच तथा कई अन्य कवच भी यहाँ पर रखे हुए हैं।

तीसरे कमरे में राजाओं द्वारा पहने जाने वाले मखमल, मलमल, साटन, रेशम आदि के परिधान हैं जिन पर जरदोजी, सलमा सितारे, गंगाजमनी, कलाबत्तू आदि का काम किया हुआ है।

विविध स्थानों से एकत्रित की गई वस्तुऐं यहां रखी गयी है। जिनमें भारतीय बर्तन और शिल्प कला के नमूने, भारतीय जवाहरातों के नमूने, अलवर की प्रसिद्ध छपाई, कसीदे का काम तथा रंगसाजी के नमूने यहां रखे गये हैं। अनेक पत्थर की बनी वस्तुऐं भी यहां पर रखी गई हैं जिनमें पत्थर का सितार, पत्थर के बर्तन आदि हैं।

संग्रहालय में हांथी-दांत की बनी अनेक वस्तुऐं भी हैं। हांथी-दांत का बना एक 2 फुट लम्बा चंवर है जो कि दूर से देखने पर सफेद बालों का बना दिखाई देता है। इसके अतिरिक्त हाथी-दांत की बहुत ही बारीक तीलियों से बनी एक पंखी भी यहां पर है। एक चंदन का बना चंवर भी यहां है। महाराजा बन्नेसिंह के दरबार में रहने वाला, अलवर का प्रसिद्ध कारीगर, नन्दकिशोर की बहुत की कलात्मक तरीके से बनायी हुई चांदी की खाना खाने की मेज भी यहां पर है। मेज में दो नहरे बनाई गई है जो मेज के मध्य में आपस में चीरती हुई हैं तथा नहरों के संगम पर ही एक पिंजरा भी बनाया गया है। मेज के यंत्र को चलाने पर नहरों में से पानी बहने लगता है तथा पिंजरे में से पक्षियों की आवाज आती है।

मूसी महारानी की छतरी – महाराजा विजयसिंह ने सन् 1843 में इस स्मारक को बनवाया था। महराबदार शैली की यह छतरी संगमरमर एवं टेढी रेखाओं से बनी है तथा इसका चबुतरा लाल पत्थर का बना है। यह स्मारक राज महल के पीछे स्थित है।

विजय मन्दिर महल – विजय मन्दिर महल यहाँ का राजमहल है और महाराजा का निवास स्थान रहा है। महल में अनेक बडे-बडे कमरे हैं जहाँ दरबार लगाया जाता था। कमरों की दीवारों पर अनेकों पौराणिक तथा युद्ध से संबंधित चित्र बनाये गये हैं। यहां का बाग भी बहुत ही सुन्दर तरीके से बनाया गया है।

सिलीसेढ़ झील व पैलेस होटल – यह झील लगीभग 13 किमी लम्बी है। इसके तट पर वृक्षयुक्त पहाड़िया और सुंदर छतरियां निर्मित है। जो इसे एक उत्कृष्ट पिकनिक स्थल बनाते हैं। सन् 1845 में महाराजा विनय सिंह ने अपनी रानी शीला के लिए एक अद्भुत शाही महल बनवाया था।[4] जहाँ से इस झील को देखा जा सकता है।

सरिस्का – 765 वर्ग किमी में फैला यह घना अभयारण्य, अरावली की सुरम्य घाटी में बसा है। इसकी स्थापना 1955 में हुई थी। यह नीलगाय, सांभर, बाघ, सांगा, चीतल, जंगली भालू आदि की प्रचूरता के लिए प्रसिद्ध है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रिपोर्ट ऑफ ए टूर इन इस्टर्न राजपूताना इन 1982-83, जिल्द 20, पृष्ठ 120
2. ब्रिग्स कृत फरिश्ता जिल्द 1, पृ 163
3. डॉ. प्रदीप श्रीवास्तव, राजस्थान : कला, संस्कृति, साहित्य, पुरातत्व एवं पर्यटन, पृ. 8
4. डॉ. प्रदीप श्रीवास्तव, राजस्थान : कला, संस्कृति, साहित्य, पुरातत्व एवं पर्यटन, पृ. 9

****

Impact of Krishi Darshan Programme Telecast Among Viewers in Knowledge and Adoption Gain of Agricultural Technology

Dr. Govind Prakash Acharya*

Introduction - Doordarshan as an important media of communication has greater role to play in the forth coming years in order to disseminate agricultural education to the farming community. Today in the age of modern technology television were considered to be effective in communicating the agricultural technology to needy and remote area farmers in quick time and help to bridge the gap between the scientist and farmers and also increasing the knowledge level of farmers. One of the important objectives of doordarshan is to provide essential knowledge and information in order to stimulate greater agricultural production. Agricultural information is disseminated to the farmers through krishi darshan programme. The value of any programme can only be judged through audience participation and response. IT was therefore, felt necessary to study the perception and usefulness of televiewers of Krishi Darshan Programme of Doordarshan. Medium levels of perception of the tribal farmers viewing Krishi Darshan Programme of Doordarshan were expressed by majority of respondents. In detail the overall result of level of perception revealed that majority (45.33 %) of the tribal farmers had medium level of perception towards overall agricultural practices through Krishi Darshan Programme of Doordarshan followed by low level of perception (31.33%) respondents and high level of perception (23.34%) respondents, respectively.

Communication is an essential dimension of human life. Among mass media, Television is the most effective media in changing the attitude of the televiewers. It plays an important role in the field of agricultural development.

The basic objective of "Krishi Darshan programme" is to familiarise rural viewers with technical developments infarming, agricultural implements, fertilizers, good quality seeds, cottage industries, rural development, weather forecast etc. Looking to the importance of Farm Telecast in the dissemination of the improved agriculture technology it was felt necessary to conduct a study with the following objectives:-

Objective Of Study :

1. To know the extent of knowledge and adoption of viewers and non-viewers.
2. To study the relationship of selected independent variables of viewers with their adoption.

Today is the era of science and technology. The indian rural women are required to make many decisions regarding the use of new technology in the area of Farm and home but because of lack of knowledge and illiteracy, they are not able to take wise decisions to use new technologies. Among various mass media, T.V. has been considered as the most powerful medium to impart knowledge and information to rural people. A number of T.V. programmes specially addressed to the farming community are telecasted by Doordarshan.

Methodology : The study was carried out in Ajmer District of Rajasthan. Out of 07 block only Pisagan Panchayat Samiti block was selected purposively for the study on the basis of having more number of Television sets in the block. Piragan block 15 villages were identified having more number of T.V. Sets. A list of TV owner of the villages was prepared. The names of TV owners were arranged alphabetically and five viewers who actually view the Krishi Darshan Programme and five non-viewers were selected, from each village. In all 150 respondents (75 viewers and 75 non-viewers) were finally selected for this study. The data were collected through pre-tested structured interview schedule. Statistical analysis of the data was carried out into frequency, percentage and average. The "Z" Test was used to know the significance difference. The relationship between dependent and independent variables was assessed through correlation Coefficient.

Findings And Discussion :

A. Knowledge and adoption of respondents

Table 1 Extent of knowledge and adoption of viewers and non-viewers (N=150)

*Lecturer (Agricultural-Extension) Govt. College, Uniara, Distt. Tonk (Raj.) INDIA

Respondent	N	Knowledge			Adoption		
		Mean	S.D.	Z-Value	Mean	S.D.	Z-Value
Viewers	75	44.10	3.43	-	42.77	3.23	-
Non-Viewers	75	42.53	2.97	3.003**	41.04	3.24	3.270**

** Significance at 1 Per cent level of probability

The Table-1 depicts the level of knowledge ground and adoption of viewers and non-viewers with reference to improved agricultural practices of groundnut production technology through the farm telecast. The calculated 'Z' values was 3.003 which was found to be significant at 1 per cent level of probability. This shows that there was significant difference in knowledge between viewers and non-viewers. The viewers of farm telecast had more knowledge of groundnut technology then non-viewers.

The mean adoption of viewers was 42.77 and non-viewers 41.04 . The calculated 'Z' value was 3.270, which was found to be significant at 1 per cent level of probability. This shows that there was significant difference between viewers and non-viewers of farm telecast with respect to adoption of groundnut technology. However, the viewers of farm telecast had higher adoption of groundnut technology than the non-viewers as shown by 'Z' test.

B. Reletionship between adoption and socio-personal characteristics of respondents.

Table-2 indicated the socio-personal variables viz. caste, education and knowledge of ground nut technology were significantly and positively correlated with the adoption of groundnut production technology at 1 per cent level of probability. While material possession and contact with development agency had the negative but significant relationship at 5 per cent level of probability.

Table 2 Relationship between adoption and socio-personal characteristics of the viewers.

S.	Independent variables	Dependent variables'r'
1.	Age	0.071
2.	Caste	0.380**
3.	Education	0.525**
4.	Land holding	-0.001
5.	Family type	-0.065
6.	Family size	0.028
7.	Farm Power	-0.019
8.	Material possession	-0.257*
9.	House	-0.023
10.	Social participation	-0.138
11.	Contact with development agency	-0.257*
12.	Urban Contact	-0.125
13.	Knowledge	0.928**

* significance at 5 per cent level of probability.

** Significant at 1 per cent level of probability.

Conclusion And Implication : The study shows that the viewrs of the Krishi Darshan telecast programme had higher knowledge and adoption of groundnut production technology. This programme has created impact among tele-viewers farmers. Higher caste and higher education level of the respondents had significant correlation with the adoption of groundnut production technology. This shows that educated and higher caste respondents had television sets who saw it regularly and through it inspired to adopt the technology.

References :-

1. Jha, R.C. and Singh B.P. (1980). T.V. Broadcast in Delhi, A retrospective views, Indian Jour of Ext. Edu Vol. XVI (3 and 4) PP 32-35
2. Sharma, S.K. and Mishra A.N. (1967) Impact of T.V. on Farmers, Indian jour of Ext. Edu. Vol III (192), PP 249-256
3. Awasthi, H.K. and Dugwekar, S. (1990), Response of rural televiewer towards Krishi Darshan programme. Maha. Jour of Ext. Edu. Vol IX, IX, PP. 256-258.
4. Khare, N.K. (1990), New dimension of farm telecast in modernizing agriculture. Unpublished Ph. D. Thesis, C.S.A. University of Agriculture and Technology, Kanpur (UP)
5. Fonseca, L. and Kearl (1960), "Comprehension of Pictorial symbols". An Experiment in Rural Brazil, Department of Agricultural Journalism, University of Wisconsin, Bulletin, 30.
6. Panday and Roy (1978), "Factors associated with effectiveness of Farm. "Broadcast" Indian Journal of Ext. Edu. Vol 14, p. 55

****

Unchallengeable Authority of Mirza Ghalib as the Greatest Urdu Poet

Dr. Arshad Siraj*

Abstract - Some people become so larger than life than their very names become the definition of their areas of expertise. For example, when one hears the word "Scientist", first name that crosses mind is of Albert Einstein. Similarly, when one thinks about poetry, the thought is immediately followed by the name "Shakespeare". Another such larger than life figure whose persona became the very definition of the word "Shayri" was MirzaGhalib.

Faiz Ahmad Faiz (1911-1984) - A poet, journalist, and political activist, Faiz was one of the leading figures of the Progressive Writers' Movement in South Asia; AllamaIqbal (1877-1938) - A philosopher, poet, and politician, Iqbal is considered one of the most important figures in Urdu literature and a major influence on the independence movement in India; Josh Malihabadi (1898-1982) - A poet, journalist, and political activist, Josh was known for his progressive and secular views, as well as his powerful and moving poetry; DaaghDehlvi (1831-1905) - A poet, journalist, and reformer, Daagh was known for his innovative use of language and his socially conscious poetry; Mir Taqi Mir (1722-1810) - Considered one of the pioneers of Urdu poetry, Mir was a prolific writer of ghazals and poems etc. are among many others who have left a lasting impact on Urdu literature and continue to be widely read and appreciated to this day.

Keywords-Poet, Shayri, Literature, Poetry, Ghazals, Genres, Trends.

Introduction - The Urdu literature is one of the most popular literatures in the world. The credit for its being so popular goes to all those poets, dramatists, short story writers and others who through their conspicuous work, brought to it such a status.

There are many writers who are the authority in Urdu Litrature. There is a long list of Urdu authors who contributed to poetry, prose, short stories and plays. Some of the Urdu poets and prose writers are as follows-

Poetry: Ghalib, Mir, Mir Dard, Ghalib, Zauq,Daagh, Maumin, Hasrat Mauhani, Faiz Ahmad Faiz, Ahmad Fraz, Akhtarul Raghupati Sahay Firaq Gorakhpuri, Eman, Sardar Jafari, Jaan Nisar Akhtar, Ali Sardar Jafari, Pandit Aanand Narain Mulla, Kaifi, Majrooh, Aanand Mohan Zutshi Gulzar Dehalvi, Kirshan Chandr, Chakbast, Basheer Badr, Rahat Indori, Manzar Bhopali. Each of them is important in himself or herself, but the following Urdu poets have left a long lasting impression on the minds and hearts of the readers through their poetry and shayaris. Here, let us discuss the worth of Mirza Ghalib as the greatest Urdu poet whose shayaris are still quoted despite the lapse of years.

Mirza Ghalib as the Greatest Urdu Poet

Mirza Ghalib (1797-1869) – A poet of paramount importance, Mirza Ghalib is considered one of the greatest Urdu poets of all time. Ghalib was a prolific writer of ghazals, poems, and letters. "Shayri" was his passion ever since he was a teenager. The word "Ghalib" means winner and there is an interesting story behind why he decided to write under this pen name. He earlier wrote using his actual name "Asad" but when he was still a teenager, he learnt that there was already a poet who was using "Asad" as his pen name.

"Asad is jafa par, buton se wafa ki,
Mere sher shabash, rehmat khuda ki …."

Ghalib read this sher somewhere and absolutely hated it. It got him to worry that if he continued to write as Asad, all these bad couplets will be accredited in his name and someone else will take credit for his couplets. Hence he decided to change his pen-name and started writing as "Ghalib". Perhaps the most talked about aspect of life apart from "Shayri" is his marriage to Umrao Jaan. Some people believe that he was absolutely in love with his wife and adored her all his life. The following lines are believed to have been written by him for Umrao.

"Unke dekhe se jo aa jaati hai munh par raunak,
Vo samajhte hai ke beemar ka haal achha hai"
"Dekhana qismat ki aap apane pe rashk aa jaaye hai
main use dekhun bhalaa kab mujhse dekha jaaye hai
hoke aashiq vo parii_rukh aur naazuk ban gaya
rang khilta jaaye hai jitna ki udta jaaye hai"

He had great difficulty getting his earlier works published. Because of the difficulty people faced in understanding the meaning of his couplets, even all major publishers refused to publish his Ghazals.

"Zindagi Apni Jab Is Shakl Se Guzri Ghalib
Ham Bhi Kya Yaad Karenge Ke Khuda Rakhte The"
"Runj se khugar hua insaan to mit jaata hai runj

*Lecturer & HOD (Urdu) SK Govt. College, Sikar (Raj.) INDIA

Mushkilein mujh par padi itni ke aasaan ho gayi"

Because he used to drink, his wife stopped eating with him in the same plate. He didn't believe much in god which his wife always questioned because she was highly religious.. Even in his final days, when forced by his wife, he would walk to the gates of the mosque and return without going in.

Qarz ki peetay thay maay lekin samajhtay thay k haan
Rang laeygi hamari faka masti aik din
Malum na tha itna kuchh hai ghar mein bechne ke liye "Ghalib",
Zameen se lekar zameer tak, sab bik raha hai .....

He had an acute sense of humor. Someone once asked him if "Qalam" or the word "Pen" whether is male of female? Should it be called "Mera Qalam" or "Meri Qalam" to which he replied that if a man writes its "mera qalam" and if a woman writes than its "meri qalam". Similarly, someone asked him if Joota is correct or Jooti to which he replied, "Agar zor se pade toh joota aur agar halki pade toh jooti". He was very fond of Mangoes. On this habit of his, someone remarked that "Aam toh gadhe bhi nahi khaate" to which he replied saying, "Isi liye toh gadhe hain kyunki aam nahi khaate" His rivalry with Zauq is very well known. Once Zauq was passing throught when he remarked,

"Bana hai Shah ka Musahib, phire hai itrata"

What makes Ghalib stand above all others is definitely the truth and the pain that rang in his ghazals and couplets. Unlike other noted poets, he never tried to revolve his writings around great philosophy or ideas of an ideal world but wrote what he saw, what he felt. His mastery however is in his selection of words and the way he presented them.

"Hain aur bhI duniya mein sukhanwar bahut achchhe,
kehte hain ke 'GHalib' ka hai andaaz-e-bayaan aur…"

And these words are true. His lifelong struggle over sorrow and financial matters reflects in almost all his works.

" Ghalib-e-khasta ke bagair kaun se kaam band hain
Roiye zaar-zaar kya, kijiye haaye-haaye kyun"
"Qaid-e-hayat, band-e-gham, asal mein dono ek hain,
Maut se pehle aadmi gham se nijaat paaye kyun…."

He died in Delhi on 15 February 1869. The house where he lived in Gali Qasim Jaan, Ballimaran, Chandni Chowk, in Old Delhi known as the Ghalib ki Haweli has now been turned into 'Ghalib Memorial' and houses a permanent Ghalib exhibition.

"ye masaail-e-tasawwuf, ye tera bayaaN 'GHalib' !
tujhe ham walee samajhate, jo na baada_ KHwaar hota
hue mar ke ham jo ruswa, hue kyoN na GHarq-e-dariya
na kabhee janaaza uThata, na kaheeN mazaar hota".

A living proof that Mirza Ghalib poetry was a kaleidoscope of diverse and rich Indian culture, and he was a liberal genius who weaved the "felt thought" like a magician. Not just emotion, not just thought. But the "felt thought". Expressing felt thought is the hallmark of a great poet. He was hence the greatest poet of the 19th Century and could have only been possible in India. Not anywhere else.

Objectives of the Study:

1. To reflect the major trends and genres in Urdu literature
2. To enlist and mention the famous Urdu poets
3. To concentrate and discuss in detail the worth of Mirza Ghalib as a poet
4. To prove the depth of Ghalib's poetry through the citation of his shayaris
5. To take the details of Mirza Ghalib to the reader for the sake of reading and undertake research

Related Literature & Its Review

'Writers' are many but only few are most prominent and have immensely touched one's heart with feelings of pain, pleasure, romance, hatred, aggression, welfare, security and everything happening around us. Urdu Literature is an ocean of beautiful expressions – this art has been bestowed to the famous Urdu poet of all time Mirza Asadullah Khan Ghalib. His times are of the mughals era, which then forced out by the Brits and then the Indian rebels in 1857(British Colonial rule)'[1].

'Perhaps no other poet in history can claim such abiding popularity for such a slender work. This is not surprising; rarely there has been a book in the world literature which contained such breadth and depth of human emotions, from utter despair to the height of ecstasy; such wit and humour; such wisdom and insight expressed in unmatched lyricism and poetry'[2].

'Mirza Ghalib, the greatest Urdu poet, has an envied place in the entire range of Urdu literature. The Urdu literature brought popularity, name and fame to many of its contributors, but Mirza Ghalib stands above all. Through his ghazals and shayris he has reached the hearts of all the readers irrespective of religion, caste and nationality. Such a genius is born once in millions and billions of centuries and ages. No language can describe the real worth of Mirza Ghalib who rules over the Urdu poetry with a lasting impression.'[3]

'Few South Asian poets have been the subject of a more robust and voluminous corpus of writing than Mirza Ghalib (1797–1869). Living as he did in the politically volatile milieu of nineteenth-century North India, Ghalib witnessed a series of crises, precipitated by the decline of Mogul power and the onset of British colonialism. On a personal level, he suffered the loss of all his children. He seems to have retained his gusto through good wine, a great sense of humor, and his beloved pen that helped him undermine cherished conventions of his time and hence avenge his own suffering. His popularity hinges not only on his poetry but also on the images projected by his readers/audiences after his death. His influence permeates South Asian literature but also music, religion, and politics. The significance of Ghalib's extraordinary impact on South Asia is suggested by a frequently quoted remark of Abdul Rahman Bijnauri, a prominent literary critic of South Asia: "India is home to two divinely inspired works: the Holy Vedas and the corpus of Ghalib's Verse." Such an attitude toward Ghalib testifies to the almost unearthly beauty of his verses'[4].

'Urdu poetry gained immense popularity in the

eighteenth century when Urdu replaced Persian as the major language of the Indian sub-continent. It is during this time that Urdu language emerged out of an interaction between Persian and Khadi Boli which was being used between Delhi and Agra. Urdu became a means of literary expression by the end of the seventeenth century. During the eighteenth century Urdu flourished well but it was in the nineteenth century that Urdu came to its perfection in the works of Mir, Sauda, Zauq, Momin and Ghalib. Among these poets it was Ghalib in particular whose work had a huge impact and led a drastic revolution in Urdu poetry. Ghalib is a classical Urdu and Persian poet from India during British colonial rule. He is considered, in South Asia, to be one of the most popular and influential poets of the Urdu language.

Ghalib today remains popular not only in India but also amongst various communities across the globe. Many of his well-known 'Ghazals' have been sung and recorded by numerous performers in India and Pakistan. Poetry was his passion and his work revolves around wanting to create the perfect form and structure. He is one of the founders of the modern Urdu short lyric known as the "Ghazal". Although he wrote in several genres, his Ghazals have been generally been the best received of his works. He received little recognition in his lifetime, but with the passage of time he has been acknowledged as an absolute master of his art! His poetry has an irrresistable charm and beauty. It has wit, irony and a wealth of human experience. His diction is sweet and simple but pregnant with meaning that it lends itself to multiple interpretations! This is the hallmark of a true genius.

Adept at expressing highly subtle and complex thoughts and emotions within the space of two lines, Ghalib's poetry has the rare virtue of appealing directly to the heart as well as providing much food for thought. He was a poet whose sole aim was to give aesthetic satisfaction. Unlike Allama Iqbal and many Sufi and Bhakti poets, he was not a poet with a message. Reading his poetry is a journey whose destination is not already known. Besides the Ghazal (ode), he wrote with a facile pen: Marsiya (elegy), Qaseedah (encomium), Tehniyat-namah (epithalamium) and Epistles. He also wrote poetry that was sometimes lyrical, sometimes argumentative'[5].

Hypothesis:

1. The Urdu literature is rich in poetry
2. The genres of Urdu literature are different from the genres of the other literatures of the world
3. The Urdu literature is rich due to the contribution of the Urdu poets, prose writers, playwrights and short story writers
4. Mirza Ghalib is the greatest Urdu poet
5. Mirza Ghalib's poetry is universal.

Methodology: The methodology adopted and used for making this study is all scientific, and the author took pains and had a serious concern for the steps of research prescribed by the eminent scientists. Selection of the title, study of the previously produced literature on the theme, formulation of hypothesis, research design, and objectively drawn generalization are some of the steps that were observed and abided by. No stone was unturned in maintaining the scientific spirit of the work. The author took much pains in going through the biography and comments of the various critics and lovers of Urdu poetry by Mirza Ghalib.

Findings, Suggestions & Conclusion: Ameer 'Khusro', Allama Muhammad Iqbal, Mirza Asadullah Begh Khan 'Ghalib', Meer Taqi 'Meer', Khawaja Meer 'Dard', Momin Khan 'Momin', Qateel Shifai, 'Insha' Allah Khan, Bahadur Shah 'Zafar', Ahmed Nadeem Qasmi, Faiz Ahmad 'Faiz', 'Mohsin' Naqwi, Khalil ur Rehman 'Qamar', 'John' Elia, 'Parveen' Shakir, Noshi Gillani, Ahmed 'Faraz', Anwar Masood are some of the Urdu poets who have enriched the Urdu poetry.

To conclude- Mirza Ghalib remains the greatest Urdu poet. The things that can be mentioned about his poetry include his style of writing which touches the most sensitive subjects of day to day life in a manner that the reader becomes immediately able to relate himself. It is his unique style(his clever use of metaphors to be mentioned specially) that differentiates his work from all others before or after him.

Mostly he has written about the tough and bitter reality of human life and about human predicament unlike other writers of that time who mostly wrote on romance, love and women. His writings if you read about his life you will get to know are nothing but an account of his own life very beautifully woven using the silk of Urdu and Persian into poetry that inspires us till date.

Another characteristic of his immortal work is his use of Persian origin words you will find a lot of Persian origin words in almost every work of him. Reading his shayri enables one to look at the world with a different vision (may often lead to depression and frustration sometimes) but yes his poetry is so powerful that once you dive in you will never be the you, you were earlier. He was great; he is great and he will be the greatest of all and we shall never see any Urdu poet like again.

References:-

1. Hasan, Syed Akif and Subhani, Muhammad Imtiaz and Osman, Ms. Amber- Contribution of Ghalib in Urdu Literature, European Journal of Social Sciences (EJSS), Vol. 31, No. 2, pp. 219 – 222, (2012)
2. N. N. Wig- A New Evaluation of Ghalib and His Poetry, Indian Literature, Vol. 11, No. 1 (January-March 1968), pp. 36-48 (13 pages)
3. David Matthews-Natalia Prigarina Mirza Ghalib: A Creative Biography (Oxford: Oxford University Press, 2000), Journal of Islamic Studies, Volume 12, Issue 3, September 2001, Pages 385–387 pp.
4. Syed Akbar Hyder- Ghalib and His Interlocutors, Comparative Studies of South Asia, Africa and the Middle East, Duke University Press, Volume 26, Number 3, 2006, pp. 462-475
5. Bilal Ahmad Dar- Mirza Ghalib's Poetry, Art and Philosophy, International Recognized Multidisciplinary Research Journal, Volume : III, Issue : IV, May – 2013

Comparative Study of Data Mining and MRDM

Rajesh Soni*

Abstract - Data mining a look for patterns in data. Existing data mining approaches look for patterns in a single data table. But multi-relational data mining (MRDM) approaches look for patterns that involve multiple tables (relations) from a relational database. This paper study the differences between Data Mining and MRDM.
Keywords: relational data mining, multi-relational data mining, inductive logic programming, relational association rules, relational decision trees, relational distance-based methods.

Introduction - Data mining algorithms looking patterns in data. Most existing data mining approaches are looking for patterns in a single data table. These single table having variety of data having various properties. The objective of any Data Mining exercise on the database. A database is an organised and typically large collection data about specific domain. These data may be about Customers, supermarket, website visit etc.The aim of Data Mining is to examine this database to find the pattern among data. [2]
Multi Relational data mining (MRDM)[1] is newer approach having multiple tables having try to find relation between various tables. Relational data base normally used in today's database scenario [5]. To emphasize this fact, Relational Data Mining (RDM) is often referred to as multirelational data mining (MRDM).

Need of Data Mining and MRDM : Data mining tools & methods, organizion can discover hidden patterns and relationship in their data. With the help of Data mining raw data transforms into ionn knowledge. Companies use this knowledge to solve problems, analyze the future impact of can business decisions, and increase their profit margins. Multi-relational data mining (MRDM) methods useful in finding patterns among several tables (relations) from a relational database. Each table or relation represents an entity or a relationship, described by a set of attributes. Links between relations show the relationship between them. Largely organizations arranged their data into RDBMS.

Methods which are used in data mining are classification, regression, clustering, association rule mining, anomaly detection, time series analysis, neural networks, decision trees, ensemble methods, and text mining. tools used for data mining are WEKA[7] ,decision Tree[3] etc

In MRDM methods used are inductive logic programming, relational association rules, relational decision trees, relational distance-based methods [6].

Comparisons of Data Mining and MRDM

S.	Data Mining	MRDM
1	Single Table	Multiple relaed table
2	RDBMS not Used	RDBMS Used
3	Data are not stored structurally	Data are stored structually
4	Data redundancy	No Data redundancy
5	Data are specially stored for this	No need
6	Easy to Understand	Hard to Understand
7	Easy to Implement	Lot of Efforts required

Conclusion: In this paper brief introduction of data mining and MRDM provided various techniques and tooL are also given. As MRDM technology improved due to based on RDBMS , It will be very useful compare to Data Mining.

References:-

1. R. Agrawal and R. Srikant. Mining sequential patterns. In Proceedings of the Eleventh International Conference on Data Engineering, pages 3–14. IEEE Computer Society Press, Los Alamitos, CA, 1995.
2. R. Agrawal, H. Mannila, R. Srikant, H. Toivonen, and A. I. Verkamo. Fast discovery of association rules. In U. Fayyad, G. Piatetsky-Shapiro, P. Smyth, and R. Uthurusamy, editors, Advances in Knowledge Discovery and Data Mining, pages 307–328. AAAI Press, Menlo Park, CA, 1996
3. H. Blockeel and L. De Raedt. Top-down induction of first order logical decision trees. Artificial Intelligence, 101: 285–297, 1998.
4. I. Bratko. Prolog Programming for Artificial Intelligence, 3rd edition. Addison-Wesley, Harlow, England, 2001.
5. L. Breiman, J. H. Friedman, R. A. Olshen, and C. J. Stone. Classification and Regression Trees. Wadsworth, Belmont, 1984. [6] W. Buntine. General-

*Lecturer, B.N.P.G. Girls' College, Udaipur (Raj.) INDIA

ized subsumption and its applications to induction and redundancy. Artificial Intelligence, 36(2): 149–176, 1988.

6. S. Dzeroski and N. Lavra¡c, editors. Relational Data Mining. Springer, Berlin, 2001.
7. https://www.weka.io/

****